अनवर होजा

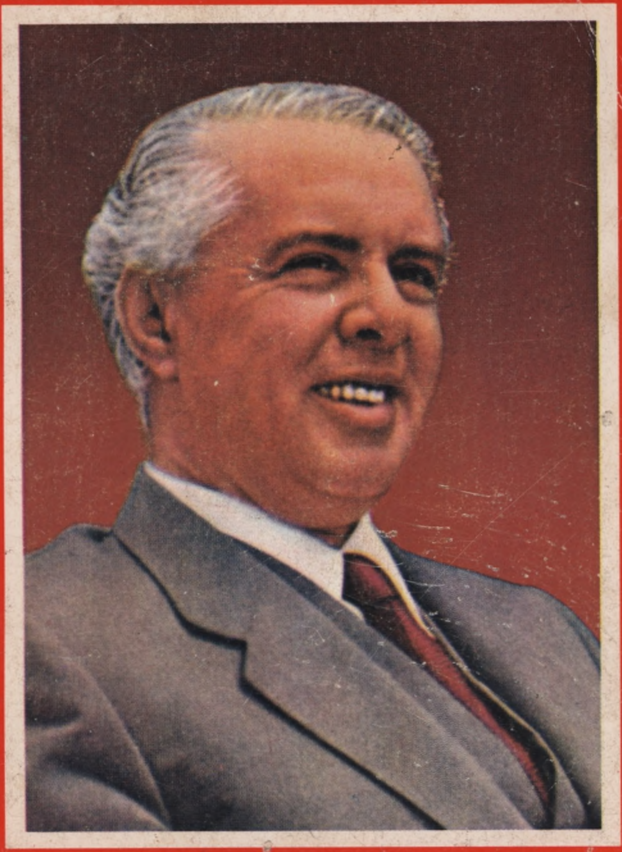

साम्राज्यवाद और क्रान्ति

The electronic version of the book
is created by
http://www.enverhoxha.ru

दुनिया के सर्वहारा, एक हो !

अनवर होजा

साम्राज्यवाद और क्रान्ति

नार्मन बेथ्यून इंस्टिट्यूट
टरान्टो १९७९

प्रकाशक की टिप्पणी

नार्मन बेथ्यून इन्स्टिट्यूट द्वारा प्रकाशित "साम्राज्यवाद और क्रान्ति" का यह संस्करण, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया की केन्द्रीय कमेटी के मार्क्सवादी-लेनिनवादी अध्ययन इन्स्टिट्यूट द्वारा "८ नेण्टोरी" पब्लिशिंग हाउस, तिराना, १९७९, में प्रकाशित अंग्रेज़ी संस्करण के नार्मन बेथ्यून इन्स्टिट्यूट द्वारा प्रकाशित पुनःमुद्रण का अनुवाद है ।

THE HINDI EDITION OF
IMPERIALISM AND THE REVOLUTION

Translated and Published by:
NORMAN BETHUNE INSTITUTE
Printed by:
PEOPLE S CANADA PUBLISHING HOUSE
Distributed by:
NATIONAL PUBLICATIONS CENTRE
Distributors of Progressive Books & Periodicals
Box 727, Adelaide Stn., Toronto, Ontario, Canada
ISBN 0 88803 082 7
NBI-82h

पहले संस्करण का प्राक्कथन •

१८४८ में प्रकाशित किये गये मार्क्स व एंगेल्स के "कम्यूनिस्ट पार्टी के घोषणा-पत्र" के समय से लेकर इस समय तक, राजनीतिक व विचारधारात्मक दोनों ही क्षेत्रों में क्रान्तिकारी मार्क्सवाद व मौकापरस्ती के बीच संघर्ष एक ही समस्या पर केन्द्रित रहा है : एक समाजवादी आधार की ओर समाज के रूपपरिवर्तन के लिये क्या क्रान्ति आवश्यक है या नहीं, क्रान्ति को कार्यान्वित करने के लिये हालात मौजूद हैं या नहीं, क्या इसे शान्तिपूर्ण रास्ते से कार्यान्वित किया जा सकता है, या क्या क्रान्तिकारी हिंसा अनिवार्य है ?

सरमायदारों व मौकापरस्तों ने अपने सभी सिद्धान्तों से, जिनकी संख्या अगर सैकड़ों में नहीं तो बीसियों में ज़रूर है, हमेशा ही इस निर्विवाद सत्य, कि पूंजीवादी समाज का मूलभूत अन्तर्विरोध शोषकों व शोषितों के बीच का अन्तर्विरोध है, से इनकार करने, इतिहास में मज़दूर वर्ग के स्थान व कार्य-भाग से इनकार करने, और मानवसमाज के विकास व प्रगति के निश्चयात्मक कारक के रूप में वर्ग संघर्ष से ही इनकार करने की कोशिश की है। उनका लक्ष्य हमेशा सर्वहारा को विचारधारात्मक तौर से दिशाभ्रमित करना, क्रान्ति में बाधा डालना, पूंजीवादी शोषण को कायम रखना, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद, जो क्रान्ति व समाजवाद के निर्माण का विजयी विज्ञान है, को नष्ट करना रहा है ।

सर्वहारा व क्रान्ति के इन सभी विरोधियों व दुश्मनों ने

• अल्बेनियन भाषा में

मार्क्सवाद-लेनिनवाद को असामयिक घोषित करने,और अभिकथित रूप से,नयी ऐतिहासिक हालतों के,पूंजीवाद व साम्राज्यवाद में हुये परिवर्तनों के,और आमतौर से मानवसमाज के उद्विकास के,अनुकूल विभिन्न "सिद्धान्तों" को बनाने की कोशिश की है ।

इस प्रकार बर्नस्टाइन ने मार्क्स को असामयिक घोषित किया था,और काउट्स्की ने जानबूझ कर पूंजीवाद के साम्राज्यवाद में अवस्थापरिवर्तन की गलत व्याख्या करते हुये,क्रान्ति से इनकार किया था । उनके उदाहरण व तरीकों का अनुसरण, ब्राउडर व टीटो,क्रुश्चेव व "यूरोकम्यूनिस्टों" से लेकर "तीन दुनियाओं" के चीनी "सिद्धान्तकारों" तक, सभी आधुनिक संशोधनवादियों ने भी किया है ।

इस झूठे बहाने से, कि वे विश्व में इस समय मौजूद नयी हालतों के अनुकूल,मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक "सृजनात्मक तरीके" से कार्यान्वित व विकसित कर रहे हैं,ये सभी मार्क्सवाद-विरोधी मज़दूर वर्ग की वैज्ञानिक विचारधारा से इनकार करने और उसकी जगह सरमायदारी मौकापरस्ती को देने की कोशिश कर रहे हैं ।

सर्वहारा,क्रान्तिकारियों व उनकी सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों ने हमेशा ही आधुनिक संशोधनवाद व उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों के खिलाफ़ एक निरन्तर कठोर संघर्ष किया है,और यह संघर्ष कभी भी खत्म नहीं होगा ।

संशोधनवादी, प्रतिक्रियावादी सरमायदार व उसकी पार्टियाँ हमारे सिद्धान्त,मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक रूढ़ि, एक अनम्य व निर्जीव सिद्धान्त का नाम देने की कोशिश करती हैं,जो सिद्धान्त अभिकथित रूप से अपने आपको गतिशीलता व सजीवता से भरी वर्तमान वास्तविकताओं के अनुकूल नहीं कर सकता है । लेकिन जहाँ तक गतिशीलता व सजीवता का

सवाल है, मार्क्सवाद-लेनिनवाद ही इन गुणों वाला एकमात्र सिद्धान्त है, क्योंकि यह समाज के सबसे उन्नत वर्ग, सबसे क्रान्तिकारी वर्ग, मज़दूर वर्ग, का सिद्धान्त है, जो सही ढंग से सोचता है, जो भौतिक सम्पदाओं का उत्पादन करता और जो हमेशा सक्रिय रहता है ।

सरमायदारों व उनके सिद्धान्तवादियों, जो मानवजाति को यह विश्वास दिलाने की कोशिश कर रहे हैं कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद अभिकथित रूप से असामयिक है और "आधुनिक समय" के अनुकूल नहीं है, की कोशिशों का लक्ष्य है सर्वहारा की वैज्ञानिक विचारधारा के खिलाफ़ लड़ाई करना और उसकी जगह ऐसे सिद्धान्तों को देना, जो एक पतित जीवन, एक लुम्पन• का जीवन, और बेरोक पतन के एक समाज, एक तथा-कथित उपभोगी समाज का उपदेश देते हैं । ऐसे सिद्धान्त, जो यह दावा करते हैं कि क्रमशः गति व उन्नति में चल रहे एक नये समाज के रूपों को अभिकथित रूप से खोज लिया गया है, भी सर्वहारा के प्रगतिशील क्रान्तिकारी विचारों पर व उसकी मार्गप्रदर्शक विचारधारा पर एक प्रहार करने और इसके साथ-साथ पूंजीवादी अत्याचार व शोषण को जारी रखने का लक्ष्य रखते हैं ।

हमारा सिद्धान्त, जैसा लेनिन हमें सिखाते हैं, वर्ग संघर्ष के रूपों व तरीकों को सही तौर से आंकता व निश्चित करता है । यह जीवन की व युग की आभ्यासिक समस्याओं से नज़दीकी के साथ जुड़ा रहता है । यह शस्त्र हमें हर समय मानव समाज के विकास के रास्ते का सही तरह से विश्लेषण करने व इसे समझने में, समाज के हर ऐतिहासिक मोड़ का सही तरह

• जो लोग अपने वर्ग की विशेषताओं को खो बैठते हैं (अनुवादक)

से विश्लेषण करने व इसे समझने में,और समाज का क्रान्तिकारी रूपपरिवर्तन करने में मदद देता है ।

अपनी ७वीं कांग्रेस में,हमारी पार्टी ने सभी भिन्न संशोधनवादी धाराओं,जिसमें "तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त भी शामिल है,का पर्दाफाश किया था । क्रान्ति,समाजवाद व लोगों की मुक्ति के लिये मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अत्यधिक महत्व पर जोर देते हुये,उसने विश्व ऐतिहासिक क्रियाविधि की वर्तमान कार्यविस्था के बारे में दिये गये सरमायदारी-मौकापरस्त दावों व विचारों,जो क्रान्ति का तिरस्कार व पूंजीवादी शोषण की रक्षा करते हैं,को दृढ़तापूर्वक अस्वीकार किया और दृढ़ता से जोर दिया,कि पूंजीवाद व साम्राज्यवाद के उद्विकास में कोई भी परिवर्तन, संशोधनवादी "खोजों" व मिथ्यारचनाओं को उचित नहीं ठहराता है । क्रान्तिकारी विरोधी व कम्यूनिस्ट-विरोधी सिद्धान्तों की सिद्धान्ती आलोचना व इनका निरन्तर पर्दाफाश,मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा करने के लिये,क्रान्ति व लोगों के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिये,और यह सिद्ध करने के लिये नितान्त आवश्यक है,कि मार्क्स,एंगेल्स,लेनिन व स्टालिन का सिद्धान्त हमेशा सजीव है और भावी विजयों के लिये अचूक मार्गप्रदर्शक है ।

अप्रैल १९७८

दूसरे संस्करण के लिये टिप्पणी

यह पुस्तक "साम्राज्यवाद और क्रान्ति", सबसे पहले पार्टी के अन्दर वितरण के लिये अप्रैल १९७८ में (अल्बेनियन भाषा में) प्रकाशित की गयी थी ।

जिन कम्यूनिस्टों ने इस पुस्तक को पढ़ा है, उनकी इच्छाओं के अनुसार इसे अब आम लोगों के लिये उपलब्ध किया गया है । पहले प्रकाशन से अब तक की अवधि में हुई कुछ घटनाओं को भी इसमें शामिल किया गया है ।

दिसम्बर १९७८

विषय सूची

पृष्ठ

पहले संस्करण का प्राक्कथन.................... ३

दूसरे संस्करण के लिये टिप्पणी................ ७

भाग एक

१

साम्राज्यवाद और आधुनिक संशोधनवाद की नीति.................................. १३–७१

— विश्व साम्राज्यवाद की नीति............ २५

— सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की नीति.............................. ३५

— चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद की नीति... ४१

— साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद की विश्वव्यापी नीति में टीटोवाद व दूसरी संशोधनवादी प्रवृत्तियों का कार्यभाग............................ ५३

— क्रान्ति — सर्वहारा व लोगों के दुश्मनों की नीति को हराने का एकमात्र शस्त्र..... ६७

२

साम्राज्यवाद के बारे में लेनिनवादी सिद्धान्त अपनी पूरी सत्यता को बनाये हुये है........... ७२–१३९

३

क्रान्ति और लोग.................... १४०–२४६

— हमें क्रान्ति की मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षाओं की रक्षा करनी चाहिये व उनको कार्यान्वित करना चाहिये......... १४४

— लोगों का मुक्ति संघर्ष — विश्व क्रान्ति
का एक अंशभूत भाग.................... १७१
— सच्चे क्रान्तिकारी, सर्वहारा व लोगों
से नई दुनिया, समाजवादी दुनिया, के
लिये उठ खड़े होने की मांग करते हैं....... २०८

भाग दो

१

"तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त — एक प्रति-
क्रान्तिकारी शोवींवादी सिद्धान्त.............२४७-३३०
— "तीन दुनियाओं" की धारणा —
मार्क्सवाद-लेनिनवाद से इनकार
करना है........................... २४८
— अन्तर्विरोधों के प्रति चीनी संशोधन-
वादियों का रुख एक अध्यात्मवादी,
संशोधनवादी, व आत्मसमर्पणवादी
रुख है............................ २७०
— "तीसरी दुनिया" की एकता के बारे
में चीनी धारणा प्रतिक्रियावादी है....... ३०६
— "तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त
और "तटस्थ दुनिया" का यूगोस्लाव
सिद्धान्त लोगों के क्रान्तिकारी संघर्ष
का अन्तर्ध्वंस करते हैं.................. ३१५

२

चीन की एक महाशक्ति बनने की योजना.......३३१-३७३

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" — एक मार्क्स-
वाद-विरोधी सिद्धान्त.......................३७४-४४४

मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा — सभी
सच्चे क्रान्तिकारियों का एक मुख्य कर्तव्य....... ४४५

भाग एक

१

साम्राज्यवाद और आधुनिक संशोधनवाद की नीति

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन की स्थिति का विश्लेषण करते हुये, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया की ७वीं काँग्रेस ने, क्रान्ति और लोगों की मुक्ति को साम्राज्यवाद और आधुनिक संशोधनवाद से होने वाले खतरों के बारे में बताया, और इनके खिलाफ़ कठोर लड़ाई की ज़रूरत, और विश्व में मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन को दिये जाने वाले सक्रिय समर्थन की ज़रूरत पर ज़ोर दिया ।

ये सवाल बहुत महत्व रखते हैं, क्योंकि समाजवाद का निर्माण, सर्वहारा अधिनायकत्व को मज़बूत करने के लिये संघर्ष, और जन्मभूमि की रक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और विश्व विकास की आम क्रियाविधि से अलग नहीं किये जा सकते हैं।

इस समय बड़ी शक्तियाँ, अन्धकार, और सर्वहारा व लोगों की गुलामी और शोषण के प्रतिनिधि — अमरीकी साम्राज्यवाद और इसकी एजेंसियाँ, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद, बड़े सरमायदार और प्रतिक्रिया, मार्क्सवाद-लेनिनवाद के खिलाफ़ उठ खड़े हुये हैं और इससे लड़

रहे हैं । सामाजिक-लोकतन्त्र और आधुनिक संशोधनवाद जैसी प्रतिक्रान्तिकारी विचारधारात्मक प्रवृत्तियां, और अनेक दूसरी प्रतिक्रान्तिकारी प्रवृत्तियां भी, हमारी क्रान्तिकारी विचारधारा के खिलाफ़ उठ खड़ी हुई हैं ।

इन सभी दुश्मनों के खिलाफ़ हमारे संघर्ष में, हमें अपने आपको मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त और विश्व सर्वहारा पर दृढ़ता के साथ आधारित करना चाहिये । सैद्धान्तिक स्तर पर किये गये हमारे संघर्ष को सफलता तभी मिलेगी, जब हम अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति, विकसित हो रही घटनाओं, और सभी गतिमान सामाजिक शक्तियों, जिनके बीच अन्तर्विरोध हैं और जो एक दूसरे से संघर्ष कर रही हैं, के उद्देश्यों व लक्ष्यों का एक सही द्वन्द्ववादी विश्लेषण करें । अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति का वैज्ञानिक विश्लेषण, और क्रान्तिकारी संघर्ष की नीति का स्पष्टीकरण, हमें भिन्न हो रही स्थितियों में सही युक्तियां निश्चित करने में मदद देता है ताकि हम एक के बाद एक लड़ाई जीत सकें । हमारी पार्टी ने हमेशा ही इसी प्रकार काम किया है ।

समाजवाद और पूंजीवाद के बीच संघर्ष है, विश्व सर्वहारा पूंजीवादी सरमायदारों के खिलाफ़ कठोर और निरन्तर संघर्ष में जुटा हुआ है, और दुनिया के लोग अपने विदेशी और आन्तरिक अत्याचारियों के खिलाफ़ संघर्ष में लगे हुये हैं । इस संघर्ष में विश्व सर्वहारा का मार्गप्रदर्शन इसकी मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा करती है, जो कि इस संघर्ष की ज़रूरत का, स्पष्टीकरण करती है, और इन शक्तियों को लड़ाई के लिये गतिमान करती है । इसी कारण पूंजीवाद और साम्राज्यवाद ने हमेशा ही मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के सिद्धान्त के खिलाफ़ कठोर संघर्ष आयोजित किया है ।

कार्ल मार्क्स ने सामाजिक विकास के, क्रान्तिकारी रूप-परिवर्तनों के,और एक निचली सामाजिक प्रणाली से ऊंची सामाजिक प्रणाली में अवस्थापरिवर्तन के नियमों को ढूंढ़ निकाला । उन्होंने उत्पादक साधनों की निजी मिलकियत, वितरण के पूँजीवादी तरीके,और अधिशेष मूल्य, जिसे पूँजीवादी हड़प लेते हैं, का वैज्ञानिक विश्लेषण किया । उन्होंने वर्गों और वर्ग संघर्ष के वैज्ञानिक सिद्धान्त को बनाया,और सरमायदारी का अन्तर्ध्वंस करने,पूँजीवादी प्रणाली को नष्ट करने,सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना करने,और समाजवादी समाज का निर्माण करने के लिये सर्वहारा के संघर्ष के तरीकों को निश्चित किया ।

दुनिया के सभी देशों में विभिन्न प्रतिक्रियावादी सिद्धान्तकारों ने मार्क्स के सिद्धान्त को बदनाम करने,उस पर कीचड़ उछालने,उसको विकृत करने व उसका मुकाबला करने के लिये सभी तरह से कोशिश की है । लेकिन इस सिद्धान्त ने,जो कि एक सच्चा विज्ञान है,प्रगतिशील मानव विचार में प्रमुख स्थान पाने में सफलता पायी है, और दुश्मनों के खिलाफ़ लड़ाई में सर्वहारा व लोगों के हाथों में एक शक्तिशाली शस्त्र बन गया है ।

मार्क्सवादी सिद्धान्त का इस्तेमाल करके,और इसका और भी विकास करके,लेनिन ने सर्वहारा व इसकी अग्रगामी,मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी को साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तियों की स्थितियों का वैज्ञानिक सिद्धान्त दिया । लेनिन ने मार्क्सवाद का विकास सिर्फ़ सिद्धान्त में ही नहीं बल्कि अभ्यास में भी किया । कार्ल मार्क्स के सिद्धान्त का इस्तेमाल करके,उन्होंने बोलशेविक क्रान्ति का नेतृत्व किया और उसको विजय तक ले गये । लेनिन के काम को स्टालिन

ने और भी आगे बढ़ाया ।

महान अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति की विजय ने साम्राज्यवाद, व सम्पूर्ण विश्व पूंजीवादी प्रणाली पर सबसे पहला विध्वंसकारी प्रहार किया । यह पूंजीवाद के आम संकट की शुरूआत थी, जो कि गहरे से गहरा होता गया है ।

सोवियट राज का निर्माण और दृढ़ीकरण एक महान विजय थी, जिसने सर्वहारा व लोगों को दिखा दिया कि उनके दुश्मन, साम्राज्यवाद और पूंजीवाद, पर विजय प्राप्त की जा सकती है और उसे नष्ट किया जा सकता है । सोवियट संघ इसका जीता जागता सबूत था ।

रूस की अक्टूबर क्रान्ति द्वारा पहुंचाये गये नुकसान से क्रोधित होकर, साम्राज्यवादी व पूंजीवादी विश्व गठबंधन ने सर्वहारा के नये राज, और दुनिया भर में मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा के फैलाव के खिलाफ़ अपने राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक संघर्ष के साधनों को बलयुक्त किया । साम्राज्यवादियों, प्रतिक्रियावादी सरमायदारों, यूरोपीय व विश्व सामाजिक-लोकतन्त्र, और इसके साथ-साथ पूंजी की दूसरी पार्टियों ने सोवियट संघ के खिलाफ़ युद्ध की तैयारी की । हिटलरवादियों, और इटली व जापान के तानाशाहों के साथ-साथ उन्होंने भी दूसरे विश्वयुद्ध की तैयारी की ।

लेकिन इस युद्ध में, समाजवाद और मार्क्सवाद-लेनिनवाद, जो कि विजयी हुये, की सजीवता की और भी स्पष्ट रूप से पुष्टि हुई ।

तानाशाही पर विजय के बाद, दुनिया में समाजवाद के पक्ष में बड़े परिवर्तन हुये । यूरोप और एशिया में नये समाजवादी राज्य स्थापित किये गये । समाजवादी कैम्प का निर्माण हुआ, जिसका नेतृत्व सोवियट संघ के हाथों में था ।

यह समाजवाद और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के लिये एक नयी महान विजय थी, और पूंजीवाद व साम्राज्यवाद की एक और भारी हार थी ।

दूसरे विश्वयुद्ध ने पूंजीवादी प्रणाली को बुरी तरह हिला दिया और उसका संतुलन पूरी तरह से बिगड़ गया । जर्मनी, जापान और इटली युद्ध के बाद पराजित शक्तियां थीं और उनकी अर्थव्यवस्थायें नष्ट हो चुकी थीं । उनका वह राजनीतिक और सैनिक महत्व, जो युद्ध से पहले था, खत्म हो गया । हालांकि, दूसरे साम्राज्यवादी राज्य, जैसे कि बर्तानिया और फ्रांस, युद्ध में विजयी हुये, लेकिन आर्थिक व सैनिक तौर पर वे इतने ज़्यादा कमज़ोर हो गये थे कि बड़ी शक्तियों के रूप में उनका कार्यभाग बहुत ही कम हो गया ।

उपनिवेशिक प्रणाली के पतन से पूंजीवाद का आम संकट और भी गहरा हो गया । इस पतन के परिणामस्वरूप अनेक नये राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना हुई, जब कि उन देशों में, जो उपनिवेश या अर्ध-उपनिवेश बने रहे, साम्राज्यवादी दासता के खिलाफ़ मुक्ति आन्दोलन और भी आगे बढ़ा ।

इन परिवर्तनों ने विश्व स्तर पर समाजवाद की विजय के लिये सबसे ज़्यादा अनुकूल स्थितियां पैदा कीं । गहरे आर्थिक व राजनीतिक संकट और जनसमुदाय के बढ़ते हुये असन्तोष के कारण, अनेक पूंजीवादी राज्यों में क्रान्तियां फूट पड़ने वाली थीं । इन अत्यधिक गम्भीर व संकटमय स्थितियों में अमरीकी साम्राज्यवाद ने उनकी मदद की ।

दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियों की तरह न होकर, संयुक्त राज्य अमरीका युद्ध से और भी शक्तिशाली हो गया । सिर्फ़ यही नहीं कि इसको कोई नुक्सान ही नहीं पहुंचा था, बल्कि इसने अत्यधिक मात्रा में सम्पत्ति एकत्रित कर ली थी, और

अपनी आर्थिक व सैनिक छमता और अपने तकनीकी-वैज्ञानिक आधार को बहुत ही ज़्यादा बढ़ा लिया था । लोगों के ख़ून पर मोटा होकर, यह साम्राज्यवाद सम्पूर्ण पूंजीवादी दुनिया का एकमात्र लीडरशिप* बन गया ।

अमरीकी साम्राज्यवाद ने, पुरानी पूंजीवादी पद्धति को बचाने और इसके लिये ख़तरा पैदा करने वाले सभी क्रान्तिकारी और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों को कुचलने के लिये, समाजवादी कैम्प का ध्वंस और सोवियट संघ व लोक जनतन्त्र के देशों में पूंजीवाद की पुनःस्थापना के लिये, और दुनिया में सभी जगह अपने आधिपत्य को जमाने के लिये पूंजीवादी दुनिया की सभी प्रतिक्रियावादी शक्तियों को गतिमान किया ।

अपने उद्देश्यों को हासिल करने के लिये, अमरीकी साम्राज्यवाद ने, विश्व पूंजी के साथ, अपने विशाल नौकरशाही-सैनिक राज उपकरण, अपनी बड़ी आर्थिक, तकनीकी व वित्तीय छमता, और अपनी सभी मानव-शक्तियों को काम में लगा दिया । अमरीकी साम्राज्यवाद ने, चूर-चूर हुये यूरोपीय व जापानी पूंजीवाद के राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक पुनरूज्जीवन में मदद दी, और पतन हुई उपनिवेशित प्रणाली की जगह, शोषण और लूट की एक नयी प्रणाली — नव-उपनिवेशवाद — को स्थापित किया ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के ख़िलाफ़, कम्यूनिज़्म के ख़िलाफ़ और सोवियट संघ और यूरोप व एशिया के दूसरे समाजवादी देशों के ख़िलाफ़ शुरू किये गये उन्मत्त अभियान में अमरीकी साम्राज्यवाद ने अपने अनेक प्रचार साधनों, अपने दर्शनशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों, लेखकों आदि को गतिमान किया।

इसके साथ-साथ अमरीकी साम्राज्यवाद ने एक खुलेआम

---

* मूलप्रति में अंग्रेज़ी में लिखा हुआ ।

हमलावर नीति को कार्यान्वित किया। संयुक्त राज्य अमरीका में, जीवन के हर क्षेत्र, अर्थव्यवस्था, राजनीति, विचारधारा, सेना और विज्ञान में, युद्ध उत्तेजना, सैनिकीकरण, और कम्यूनिज़्म-विरोध का आवेग फैल गया।

समाजवाद पर विजय पाने के लिये, क्रान्तिकारी मुक्ति आन्दोलनों का दमन करने के लिये, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के महान प्रभाव का मुकाबला करने के लिये और दुनिया में अपने आधिपत्य को जमाने के लिये, अमरीकी साम्राज्यवाद ने दो रास्ते अपनाये।

पहला रास्ता था हमला व सशस्त्र दखल का। अमरीकी साम्राज्यवादियों ने नेटो (उत्तर अतलांतिक संधि संगठन), सीटो (दक्षिण-पूर्वी एशिया संधि संगठन), आदि जैसे हमलावर सैनिक दलों को स्थापित किया, अनेक विदेशी देशों की सीमाओं के अन्दर अधिक संख्या में सशस्त्र शक्तियों को कायम किया, सभी महाद्वीपों पर सैनिक आस्थान स्थापित किये, और शक्तिशाली नौसैनिक बेड़ों को बनाया और उन्हें समुद्रों व महासागरों में सभी जगह भेजा। क्रान्ति को कुचलने व मिटा देने के लिये उन्होंने ग्रीस, कोरिया, वियतनाम व दूसरी जगहों पर सैनिक दखल डाला।

दूसरा रास्ता था, समाजवादी राज्यों, कम्यूनिस्ट व मज़दूर पार्टियों के खिलाफ़ विचारधारात्मक हमला व विध्वंस, और इन राज्यों व पार्टियों का सरमायदारी पतन करने की कोशिशें। इस काम में, अमरीकी साम्राज्यवाद और विश्व पूंजी ने एक होकर, प्रचार और विचारधारात्मक पथभ्रंश करने के शक्तिशाली साधनों को काम में लगाया।

लेकिन अमरीकी साम्राज्यवाद, व विश्व पूंजीवाद, जो कि युद्ध के बाद अपनी स्थिति सुधार रहा था, को एक शक्ति-

शाली दुश्मन, समाजवादी कैम्प, जिसका नेतृत्व सोवियट संघ के हाथों में था, और विश्व सर्वहारा, व स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों, का सामना करना पड़ा। इसलिये, इस महान शक्ति का सामना करने में उन्हें बहुत ही सावधान होना पड़ा, जिस शक्ति का मार्गप्रदर्शन एक सही व स्पष्ट नीति व एक ऐसी विजयी विचारधारा कर रही थी, जिसने मज़दूरों, क्रान्तिकारियों व प्रगतिशील लोगों के मन व दिल को जीत लिया था, व और भी ज़्यादा से ज़्यादा जीत रही थी।

सर्वहारा के क्रान्तिकारी आन्दोलन व लोगों के मुक्ति संघर्ष को कुचलने व मिटा देने की अमरीकी साम्राज्यवाद व विश्व प्रतिक्रिया की कोशिशों के बावजूद भी, ये आन्दोलन व संघर्ष बढ़ रहे थे व मज़बूत हो रहे थे। स्टालिन के नेतृत्व में, सोवियट संघ ने बहुत जल्दी ही युद्ध के घावों को भर लिया और वह तीव्र गति से सभी छेत्रों, अर्थव्यवस्था, विज्ञान, तकनालाजी, आदि, में उन्नति कर रहा था। लोक जनतन्त्रीय देशों में समाजवाद का दृढ़ीकरण किया जा रहा था। कम्यूनिस्ट पार्टियां, और साम्राज्यवाद-विरोधी लोकतन्त्रीय आन्दोलन जनसमुदाय के बीच अपने प्रभाव को विस्तृत कर रहे थे।

ऐसी स्थितियों में, विश्व साम्राज्यवाद और पूंजीवाद ने, समाजवाद व लोगों के मुक्ति आन्दोलनों के खिलाफ़ अपने संघर्ष में, आधुनिक संशोधनवादियों, और उनमें से सबसे पहले युगोस्लाव संशोधनवादियों का, इस्तेमाल किया।

लोक जनतन्त्र कहलाया जाने वाला एक देश, युगोस्लाविया का सोवियट संघ के विरुद्ध हो जाना और उसके खिलाफ़ खुले आम विचारधारात्मक व राजनीतिक मतभेद शुरू कर देना विश्व पूंजीवाद के लिये एक बहुत ही खुशकिस्मती की बात थी क्योंकि समाजवादी कैम्प की श्रेणियों में से एक सदस्य देश ने

विद्रोह कर दिया था । विश्व पूंजीवाद ने इस घटना का भारी प्रचार किया, जिस घटना ने समाजवाद व क्रान्ति के खिलाफ़ इसकी लड़ाई में मदद दी ।

हालांकि, इसने क्रान्ति और समाजवाद के उद्देश्य को भारी नुकसान पहुंचाया, फ़िर भी टीटोवादी विश्वासघात समाजवादी कैम्प और कम्यूनिस्ट आन्दोलन में फूट डालने में सफल नहीं हो पाया, जैसी कि सरमायदारी और प्रतिक्रिया ने उम्मीद की थी । दुनिया में सभी जगह कम्यूनिस्टों और क्रान्तिकारियों ने इस गद्दारी का दृढ़तापूर्वक तिरस्कार किया और कम्यूनिज़्म के खिलाफ़ साम्राज्यवाद की एक एजेंसी होने के नाते, टीटोवाद, से पैदा होने वाले खतरे को बताया ।

स्टालिन की मृत्यु के बाद सोवियट संघ में सत्ता हड़पने वाले ये क्रुश्चेव-अनुयायी संशोधनवादी ही थे, जिन्होंने समाजवाद, क्रान्ति और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के खिलाफ़ विश्व पूंजीवाद की लड़ाई में उसकी अधिकतम सेवा की । क्रुश्चेव के संशोधनवादी दल का उभर आना, साम्राज्यवाद की नीति के लिये दूसरे विश्व युद्ध के बाद की सबसे बड़ी राजनीतिक व विचारधारात्मक विजय थी ।

सोवियट संघ में प्रतिक्रान्तिकारी अन्तर्ध्वंस होने पर अमरीकी साम्राज्यवादियों और दूसरी सभी पूंजीवादी सत्ताओं ने अत्यधिक खुशी मनाई, क्योंकि सबसे शक्तिशाली समाजवादी राज, क्रान्ति और लोगों की मुक्ति का बुर्ज, समाजवाद और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के रास्ते को त्याग रहा था, और सिद्धान्त व अभ्यास में, इसे प्रतिक्रान्ति और पूंजीवाद के एक आस्थान में बदला जा रहा था ।

सोवियट संघ में होने वाले उलट-फेर ने समाजवादी कैम्प

और अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन में फूट डाल दी। यह अनेक कम्यूनिस्ट पार्टियों में आधुनिक संशोधनवाद के फैलाव को प्रभावित करने वाले मुख्य कारणों में से एक कारण था और इसने इस फैलाव के लिये अनुकूल स्थितियाँ बनाई। क्रुश्चेववादी संशोधनवादी प्रवृत्ति ने दुनिया भर में क्रान्ति और समाजवाद के उद्देश्य को भारी नुकसान पहुँचाया।

एक ओर सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी और क्रान्तिकारी शक्तियों, और दूसरी ओर क्रुश्चेववादी संशोधनवाद के बीच दृढ़ संघर्ष शुरू हो गया। बिल्कुल शुरू से ही, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने सोवियट संशोधनवाद व उसके अनुयायियों के खिलाफ़ कठोर व सिद्धान्ती संघर्ष की पताका को ऊँचा उठाया, हिम्मत के साथ मार्क्सवाद-लेनिनवाद की, और समाजवाद व लोगों के मुक्ति के उद्देश्य की, रक्षा की, ठीक उसी तरह जैसे यह युगोस्लाव संशोधनवाद के खिलाफ़ दृढ़तापूर्वक लड़ी थी और लड़ रही थी। दुनिया में सभी जगह, सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादी और क्रान्तिकारी भी क्रुश्चेववादी विश्वासघात के खिलाफ़ उठ खड़े हुये। विभिन्न देशों के क्रान्तिकारी सर्वहारा की श्रेणियों में से नयी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ पैदा हुईं, जिन्होंने सरमायदारी, साम्राज्यवाद और आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ मज़दूर वर्ग व लोगों के संघर्ष का नेतृत्व करने के भारी काम को उठाया।

समाजवाद को अन्ततः नष्ट करने, सच्चे अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन को मिटा देने और लोगों के संघर्ष को कुचल देने की साम्राज्यवाद और सँशोधनवाद की आशायें पूरी न हो पायीं। क्रुश्चेव-अनुयायी संशोधनवादियों ने शीघ्र ही अपनी मार्क्सवाद-विरोधी और प्रतिक्रान्तिकारी विशेषताओं को जाहिर किया। लोगों ने देखा कि सोवियट संघ एक

साम्राज्यवादी महाशक्ति में बदल दिया गया है, जो कि विश्व पर आधिपत्य जमाने के लिये संयुक्त राज्य अमरीका से स्पर्द्धा कर रहा है, और यह कि, अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ-साथ यह भी क्रान्ति, समाजवाद और दुनिया के लोगों का एक और बड़ा दुश्मन बन गया है ।

इसके दूसरी ओर, सम्पूर्ण पूंजीवादी व संशोधनवादी दुनिया को घेर लेने वाले गम्भीर आर्थिक, वित्तीय, विचारधारात्मक और राजनीतिक संकट ने सिर्फ़ पूंजीवादी प्रणाली के और भी अधिक पतन और इसके न बदलने वाले अत्याचारी व शोषणकारी स्वभाव को ही स्पष्ट रूप से नहीं दिखाया, बल्कि सभी आधुनिक संशोधनवादियों के बाज़ारूपन और पाखण्ड का भी पर्दाफ़ाश किया जो कि पूंजीवादी पद्धति को अच्छा बताने की कोशिश कर रहे थे ।

लेकिन ऐसे समय जब क्रान्तिकारी आन्दोलन दुनिया भर में बढ़ रहा और दृढ़ हो रहा था, जबकि संकट की जकड़ में पूंजीवाद और भी ज़्यादा दबोचा जा रहा था, और जब कि क्रुश्चेववादी संशोधनवाद और आधुनिक संशोधनवाद की दूसरी प्रवृत्तियों का सर्वहारा और लोगों की आँखों के सामने पर्दाफाश किया जा रहा था, उस समय चीनी संशोधनवाद खुले तौर पर विश्वमंच पर उतर आया । सर्वहारा और लोगों के क्रान्तिकारी संघर्षों का गला घोंटने और उनका विध्वंस करने के लिये चीनी संशोधनवाद अमरीकी साम्राज्यवाद और बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय सरमायदारी का निकट सहयोगी बन गया ।

इस समय दुनिया में एक बहुत ही जटिल स्थिति पैदा हो गयी है । अन्तर्राष्ट्रीय अखाड़े में इस समय काम कर रही हैं विभिन्न साम्राज्यवादी व सामाजिक-साम्राज्यवादी शक्तियाँ, जो कि, एक ओर तो, एक होकर क्रान्ति और लोगों

की स्वतन्त्रता के खिलाफ़ लड़ रही हैं, और दूसरी ओर, बाज़ारों, प्रभाव क्षेत्रों व आधिपत्य जमाने के लिये एक दूसरे से स्पर्द्धा कर रही हैं और टक्कर ले रही हैं। अब, विश्व में आधिपत्य जमाने के लिये सोवियट-अमरीकी प्रतिस्पर्धा के अलावा, चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद के प्रसारवादी दावे हैं, जापानी सैनिक-वाद की लुटेरी महत्वकांक्षायें हैं, महत्वपूर्ण स्थानों को पाने के लिये पश्चिम जर्मन साम्राज्यवाद की कोशिशें हैं, और यूरोपीय कामन मार्केट की तीव्र प्रतिद्वन्द्विता है, जो पुराने उप-निवेशों को हड़पना चाहता है।

इन सभी कारणों ने पूंजीवादी व संशोधनवादी दुनिया के अनेक अन्तर्विरोधों को और भी तीव्र कर दिया है। इसके साथ-साथ, क्रान्ति और लोगों की मुक्ति की आशायें, टीटो-वादी, सोवियट, चीनी व दूसरे संशोधनवादियों की गद्दारी के कारण मिट नहीं गयी हैं, बल्कि, इसके विपरीत, एक अस्थायी प्रगति-रोध के बाद, क्रान्ति इस समय फिर से तेज़ी के साथ आगे बढ़ने वाली है। यह अवश्य ही उस रास्ते पर आगे बढ़ेगी, जिसे इतिहास ने इसके लिये निश्चित किया है, और विश्व स्तर पर विजयी होगी।

साम्राज्यवाद, पूंजीवाद और संशोधनवाद को सर्वहारा और लोगों के कठोर प्रतिशोध से कोई नहीं बचा सकता है, कोई भी उन्हें गहरे शत्रुतापूर्ण अन्तर्विरोधों, कभी न खत्म होने वाले संकटों, क्रान्तियों, और उनके अवश्यम्भावी खात्मे से नहीं बचा सकता है।

ठीक यही स्थिति साम्राज्यवाद को अपने आने वाले विनाश से बचने के लिये नये रास्ते व तरीके ढूंढ़ने, और नयी नीतियां व युक्तियां बनाने के लिये बाध्य करती है।

विश्व साम्राज्यवाद की नीति

अमरीकी साम्राज्यवाद और दूसरे पूंजीवादी राज्यों ने कम से कम मुमकिन नुकसानों पर विश्व में अपने आधिपत्य को बनाये रखने, पूंजीवादी व नव-उपनिवेशवादी प्रणाली की रक्षा करने, और जिस भारी संकट ने इन्हें जकड़ रखा है उससे बच निकलने के लिये लड़ाई की है और कर रहे हैं। उन्होंने लोगों व सर्वहारा को मुक्ति के लिये अपनी क्रान्तिकारी आकांक्षाओं को पूरा करने से रोकने की कोशिश की है और कर रहे हैं। इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिये संघर्ष में अमरीकी साम्राज्यवाद का मुख्य कार्यभाग है, जिसका अपने सहयोगियों पर राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक आधिपत्य है।

क्रान्ति और लोगों के दुश्मन यह मत बनाना चाहते हैं कि दुनिया में हुये परिवर्तनों, और समाजवाद को पहुंचाये गये नुकसानों के परिणामस्वरूप पहले से एकदम भिन्न स्थितियां पैदा हो गई हैं। इसलिये, हालांकि उनके बीच तीव्र अन्तर-विरोध हैं फिर भी अमरीकी साम्राज्यवाद और विश्व पूंजी-वादी सरमायदार, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद और चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद, आधुनिक संशोधनवाद और सामाजिक-लोकतन्त्र, सरमायदारी-पूंजीवादी प्रणाली को बनाये रखने, क्रान्तियों को टालने और नये रूपों से व नये तरीकों के जरिये लोगों पर अपने अत्याचार व उनके शोषण को जारी रखने के लिये एक कार्य निर्वाहक, एक मिश्रज "नये समाज" को बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

साम्राज्यवाद व पूंजीवाद इस बात को समझ गये हैं कि अब वे दुनिया के लोगों का शोषण पुराने तरीकों से नहीं कर सकते हैं, इसलिये, बशर्ते उनकी प्रणाली को कोई खतरा न हो,

लोगों को बन्धन में रखने के लिये उन्हें कुछ न कुछ रियायतें देनी पड़ेंगी, जिनसे उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचेगा । यह वे या तो उन राज्यों व गुटों को विनियोजन व उधार देने के जरिये करना चाहते हैं जिन पर उन्होंने अपना प्रभाव कायम कर लिया है, या शस्त्रों के जरिये, यानि कि स्थानीय लड़ाइयों के जरिये, उनमें सीधे तौर पर भाग लेकर या एक राज्य को दूसरे के खिलाफ़ भड़का कर । स्थानीय लड़ाइयां उन देशों को, जो इसके जाल में फंस जाते हैं, विश्व पूंजी के और भी अधीन बना देती हैं ।

विश्व पूंजी की सेवा में, पश्चिम व पूर्व के सभी "सिद्धान्त-वादी" इस "नये समाज" के लिये फ़ार्मूले ढूंढने की कोशिश कर रहे हैं । इस समय उन्होंने यह "नया" रूप सोवियट संघ के पूंजीवादी-संशोधनवादी समाज में पाया है, जो कि एक पतित समाज के अलावा और कुछ नहीं है, उन्होंने इसे युगोस्लाव "आत्म-प्रशासन" की पूंजीवादी प्रणाली में, और "तीसरी दुनिया" के कुछ तथाकथित समाजवादी दिशा अपनाने वाली सत्ताओं में पाया है । वे चीनी किस्म में भी, जो कि अब स्पष्ट हो रही है, एक पूंजीवादी "नया समाज" पाने की कोशिश कर रहे हैं ।

मई २२, १९७७ को राष्ट्रपति कार्टर द्वारा दिये गये कार्य-क्रमीय बयानों, जिनमें उसने संयुक्त राज्य अमरीका की अभि-कथित रूप से एक नयी नीति की रूपरेखा पेश की थी, से यह स्पष्ट है कि वर्तमान हालतों में इस "नयी नीति" की आम व बुनियादी विशेषता, सर्वहारा क्रान्ति का, और बड़ी विश्व पूंजी, खासकर अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामा-जिक-साम्राज्यवाद, की दासता से अपने आपको मुक्त करने की आकांक्षा रखने वाले लोगों की राष्ट्रीय मुक्ति लड़ाइयों का,

सामना करने के लिये इस महाशक्ति का संघर्ष है ।

जैसा कि हमने ऊपर बताया है, पूंजीवादी दुनिया इस खाई से निकलने के लिये एक रास्ता ढूंढ़ रही है, चाहे ये थोड़े समय के लिये ही हो । स्वभावतः अमरीकी साम्राज्यवाद इस रास्ते को ढूंढ़ने की कोशिश कर रहा है, और अगर मुमकिन हो तो, इस रास्ते को सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के साथ, अपने नेटो सहयोगियों के साथ, चीन के साथ, और इसके अलावा दूसरे औद्योगिक पूंजीवादी देशों के साथ तालमेल में करने की कोशिश कर रहा है । कार्टर ने पूर्वीय, पश्चिमी और तेल निर्यात करने वाले देशों का संगठन (ओपेक) सदस्य देशों से अनुरोध किया और यह मांग की कि वे एक साथ मिल कर काम करें और "गरीब देशों को कारगर सहायता दें" । अमरीकी साम्राज्यवाद इस सहयोग को लड़ाइयों का एकमात्र अन्यतर उपाय, व लड़ाइयों को रोकने का एकमात्र रास्ता बताने की कोशिश करता है ।

अपने भाषण में, अमरीकी राष्ट्रपति ने कहा, आज "हम कम्यूनिज़्म के उस निरन्तर डर से मुक्त हो गये हैं, जिसने एक समय हमें हर उस तानाशाह को गले लगाने पर मजबूर किया जो इसी डर से ग्रस्त था" ।

निस्सन्देह, कार्टर, हमारे समय के सबसे खूनी साम्राज्यवाद का यह वफ़ादार प्रतिनिधि, जब "कम्यूनिज़्म के डर से मुक्त" होने की बात करता है, तो उसका मतलब युगोस्लाव, क्रुश्चेव व चीनी कम्यूनिज़्म से है, जिन्होंने सिर्फ़ कम्यूनिज़्म की नकाब ही पहनी हुई है, लेकिन पूंजीवादी सरमायदार सच्चे कम्यूनिज़्म के डर से कभी भी नहीं मुक्त हुये हैं और न कभी होंगे । इसके विपरीत, साम्राज्यवाद और सामाजिक-साम्राज्यवाद हमेशा ही सच्चे कम्यूनिज़्म से आतंकित रहे हैं और वे इससे और भी

आतंकित होंगे । यही डर और आतंक साम्राज्यवादियों व संशोधनवादियों को, अपनी योजनाओं में तालमेल बनाने, और अत्याचार व शोषण के अपने शासन काल को और भी बढ़ाने के वास्ते सबसे उपयुक्त रूपों को ढूंढ़ने के लिये, एक दूसरे का सहयोगी बना रहा है ।

गहरे आर्थिक, राजनीतिक व सैनिक संकट के इन छणों में संयुक्त राज्य अमरीका के साम्राज्यवादी, सोवियट संघ, भूतपूर्व लोक जनतन्त्रीय देशों व चीन में आधुनिक संशोधनवाद की गद्दारी के परिणामस्वरूप पायी गई विजयों का दृढ़ीकरण करने, और उनका, क्रान्ति और सर्वहारा व लोगों के क्रान्तिकारी मुक्ति संघर्ष के खिलाफ़ एक रुकावट के रूप में इस्तेमाल करने की कोशिश कर रहे हैं ।

अमरीकी राष्ट्रपति यह भी स्वीकार करता है कि, कम्यूनिज्म के डर के कारण, पिछले समय में पूंजीपतियों व साम्राज्यवादियों ने मुसोलिनी, हिटलर, हिरोहिटो, फ्रेन्को, आदि जैसे तानाशाहों को गले लगाया था और उन्हें समर्थन दिया था । इन देशों में, ये तानाशाही अधिनायकत्व, लेनिन व स्टालिन के समय के सोवियट संघ के खिलाफ़, और विश्व सर्वहारा क्रान्ति के खिलाफ़, पूंजीवादी सरमायदार व विश्व साम्राज्यवाद के आखरी शस्त्र थे ।

अमरीकी राष्ट्रपति बहुत ही भरोसे के साथ घोषणा करता है कि कम्यूनिस्ट (पढ़िये : संशोधनवादी) राज्यों ने अपना रूप बदल लिया है, और वह इसमें गलत नहीं है । वह कहता है कि, "यह प्रणाली हमेशा के लिये बिना परिवर्तन हुये नहीं रह सकती थी" । निस्सन्देह वह संशोधनवादी गद्दारी को सच्ची समाजवादी प्रणाली के साथ, कम्यूनिज्म के साथ, मिला रहा है । अमरीकी साम्राज्यवाद क्रुश्चेववादी सोवियट प्रणाली

को विश्व पूँजीवाद की एक जीत समझता है, और वह इससे यह अर्थ निकालता है कि सोवियट संघ के साथ मुठभेड़ का खतरा कम तीव्र हो गया है,हालाँकि यह इसके साथ अन्तर-विरोधों और आधिपत्य के लिये प्रतिद्वन्द्विता को इन्कार नहीं करता है ।

कार्टर के अनुसार, अमरीकी सरकार यथापूर्व स्थिति को कायम रखने के लिये सभी प्रयत्न करेगी । दूसरे शब्दों में,इसका मतलब है कि अमरीकी साम्राज्यवाद व दूसरे साम्राज्यवादी राज,दोनों ही,दुनिया में अपनी स्थितियों को बनाये रखने व उन्हें मज़बूत करने की कोशिश करेंगे,जब कि उन्हें उम्मीद है कि एक साथ मिलकर वे,इस यथापूर्व स्थिति में,मित्रतापूर्ण देशों और उनके सहयोगी-संघों के बीच जो मतभेद हो सकते हैं,और वास्तव में जो मतभेद होते हैं,उनका समाधान कर सकेंगे ।

अन्त में,कार्टर ने कहा,"अमरीकी नीति एक नये,विश्व-व्यापी, छेत्रीय व द्विपक्षी हितों के व्यापक मोज़ेक पर आधारित होनी चाहिये" । विश्वव्यापी,छेत्रीय व द्विपक्षीय हितों के इस नये,व्यापक "मोज़ेक" का विश्लेषण करने के बाद, वह इसकी पुनः पुष्टि करता है कि,"संयुक्त राज्य अमरीका नेटो को दिये गये अपने सभी वचनों को पूरा करेगा,जिसे कि एक मज़बूत संगठन होना चाहिये,क्योंकि बड़े औद्योगीकृत लोक-तन्त्रों के साथ संयुक्त राज्य अमरीका का सहयोगी-संघ अनि-वार्य है,क्योंकि यह भी समान मान्यताओं की रक्षा करता है,और इसलिये हम सभी को एक बेहतर जीवन के लिये लड़ना चाहिये" ।

जैसा कि देखा जा सकता है,संयुक्त राज्य अमरीका भी, एक "नयी वास्तविकता", एक "नयी दुनिया" बनाने की, सोवियट आधुनिक संशोधनवादियों, चीनी संशोधनवादियों,

और "बड़े औद्योगिक लोकतन्त्रों" की कोशिशों में शामिल हो रहा है । दूसरे शब्दों में, संयुक्त राज्य अमरीका बाज़ारू बातों के जरिये अपनी नीति को नयी परिस्थितियों के अनुसार बनाने की कोशिश कर रहा है । यथापूर्व स्थिति को बनाये रखने के लिये, सोवियट आधिपत्यवाद के आवेग को रोकने के लिये, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद को कमज़ोर करने के लिये, और चीन को अपनी ओर करने के लिये, ताकि ये साम्राज्यवादी कैम्प में और भी गहरे से गहरा फँस जायें, और सर्वहारा व लोगों के क्रान्तिकारी संघर्षों को कुचलने के लिये संयुक्त राज्य अमरीका को कुछ न कुछ झूठी राजनीतिक रियायतें देनी पड़ती हैं । लेकिन यह सैनिक मामलों में कोई भी रियायतें, राज्यों व लोगों को बन्धन व अपने कब्ज़े में रखने की नीति में, अपने ही लाभ के लिये व दूसरे औद्योगिकृत देशों के लाभ के लिये दूसरे देशों की राष्ट्रीय सम्पत्ति का शोषण करने की नीति में कोई भी रियायतें नहीं देता है ।

यही संयुक्त राज्य अमरीका की "नयी नीति" है । हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि यह किसी भी तरह से एक नयी नीति नहीं है, बल्कि लोगों और उनकी सम्पत्ति का क्रूरतापूर्ण शोषण करने की पुरानी लुटेरी साम्राज्यवादी, नव-उपनिवेशवादी, व गुलाम बनाने वाली नीति है, क्रान्तियों व राष्ट्रीय मुक्ति लड़ाइयों का दमन करने की नीति है । अमरीकी साम्राज्यवाद इस पुरानी, स्थायी नीति को, प्रतिक्रान्तिकारी लोगों, चाहे सत्ता में हों या नहीं, को, कम्यूनिज़्म, जो लोगों व सर्वहारा को मुक्ति लड़ाइयों व क्रान्ति के लिये प्रेरित करता है, के खिलाफ़ लड़ने के लिये, शस्त्रों से सशस्त्र करने के वास्ते अभिकथित रूप से नये, ताज़े रंग से पोतना चाहता है ।

चीन के "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त के विपरीत, जो

कि एक कपटपूर्ण पूंजीवादी व संशोधनवादी सिद्धान्त है,अमरीकी साम्राज्यवाद अभी भी आक्रमणकारी है । यह अपने ही फ़ायदे के लिये,और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद या दूसरा कोई भी जो अमरीकी साम्राज्यवादी शक्ति के लिये खतरा पैदा करता है,के नुकसान के लिये अपने पुराने सहयोगी-संघों को बनाये रखने और नये सहयोगी-संघों को बनाने की कोशिश कर रहा है । खास तौर से यह नेटो को मज़बूत करने की कोशिश कर रहा है जो कि एक आक्रमणकारी राजनीतिक व सैनिक संगठन रहा है और अभी भी है ।

अपनी सभी सामरिक चालबाज़ियों में संयुक्त राज्य अमरीका,सोवियट संघ के साथ अपने सम्बन्धों को,एक खास हद से ज़्यादा नहीं बिगाड़ रहा है,और इसके साथ साल्ट (सामरिक शस्त्र रोक सन्धि) समझौता-वार्ता जारी रखे हुये है, हालांकि कार्टर ने कहा है कि अमरीका न्यूट्रान बाम्ब का उत्पादन शुरू करने जा रहा है । इसके बावजूद भी, संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ के बीच यथापूर्व-स्थिति को बनाये रखने की स्पष्ट प्रवृत्ति है ।

निस्सन्देह, जब कि संयुक्त राज्य अमरीका और नेटो सोवियट संघ के साथ इस यथापूर्व-स्थिति को बनाये रखने की कोशिश कर रहे हैं,इसके साथ-साथ इनके बीच अन्तर्विरोध हैं, लेकिन ये अन्तर्विरोध अभी इस हद तक नहीं पहुंचे हैं जिससे चीनियों की यह रट कि यूरोप में युद्ध होने वाला है,को उचित ठहराया जा सके ।

इस समय,अमरीकी साम्राज्यवाद चीन का समर्थन कर रहा है ताकि यह सैनिक व आर्थिक तौर पर मज़बूत बन जाये । अमरीकी पूंजी चीन में बेतहाशा लगाई जा रही है,जहां कि सिर्फ़ मुख्य अमरीकी बैंक ही नहीं,बल्कि अमरीकी राज भी,

उधारों के जरिये बड़े विनियोजन कर रहा है ।

संयुक्त राज्य अमरीका, चीन के पत्ते पर बहुत दाँव लगा रहा है लेकिन अपनी शर्तों में सावधान है । इसके साथ-साथ, इसने जापान के पत्ते पर भी दाँव लगाना जारी रखा हुआ है । संयुक्त राज्य अमरीका अपने और जापान के बीच अच्छे सम्बन्ध चाहता है, उनके बीच सहायता को पारस्परिक रूप में चाहता है, ताकि, अमरीकी लक्ष्यों के अनुसार, जापान मज़बूत हो जाये, और सुदूर पूर्व एशिया, प्रशान्त, दक्षिण-पूर्व एशिया में इज़राइल जैसा बन जाये, और, कभी अन्त में ज़रूरत पड़ने पर व समय आने पर, क्यों न चीन के साथ अपने झगड़ों में इनका इस्तेमाल किया जाय ।

ऐसी ही स्थिति में चीन ने जापान के साथ मित्रता व सहयोग की सन्धि पर हस्ताक्षर किया है । लेकिन यह सन्धि दुनिया के भविष्य के लिये अनेक विषयों में बहुत ही खतरनाक व घृणास्पद हो गयी है, और भविष्य में भी होगी, क्योंकि जापान और चीन के बीच निकट आर्थिक व सैनिक सहयोग स्थापित किया जायेगा, जिसका उद्देश्य होगा, अलग-अलग व संयुक्त प्रभाव छेत्रों को बनाना, खास तौर से एशिया, आस्ट्रेलिया व सम्पूर्ण प्रशान्त घाटी में । स्वभावतः यह सहयोग, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ सहयोगी-संघ, और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ युद्ध के प्रचार की छत्र-छाया में बनाना शुरू किया जायेगा । इस चीनी-जापानी सहयोगी-संघ का मुख्य उद्देश्य, सोवियट संघ को सीमित करना व उसे कमज़ोर करना, साइबेरिया, मंगोलिया, व दूसरी जगहों से उनको निकाल बाहर करना, और सम्पूर्ण एशिया, ओसियाना, व सभी ए०एस०ई०ए०एन० (दक्षिण-पूर्वी एशियायी राष्ट्रों की संस्था) सदस्य देशों में उसके प्रभाव को खत्म करना है ।

यही अमरीकी साम्राज्यवाद की नीति है, लेकिन इसके साथ-साथ, चीनी साम्राज्यवाद और जापानी सैनिकवाद की भी यही नीति है । संयुक्त राज्य अमरीका, चीन व जापान को मदद देने और उनको अपने निर्देशन में रखने, उनके साथ अपने सहयोगी-संघ को मज़बूत करने और उनको सोवियट संघ के खिलाफ़ झोंकने की कोशिश करेगा । लेकिन ऐसी सम्भावना भी है कि एक दिन ऐसा आयेगा जब कि चीन व जापान द्वारा अपनायी गयी साम्राज्यवादी-सैन्यवादी भावना रखने वाली पैशाचिक, पाखण्डी, साम्राज्य-निर्माणकारी व सिद्धान्त-हीन नीति उस महाशक्ति के विरुद्ध हो जायेगी जिसने उन्हें पूर्वावस्था पाने में मदद दी थी, ठीक उसी तरह जैसे कि पहले जर्मनी ने किया था, जब हिटलर के समय वह एक आतंककारी तानाशाही शक्ति बन गया था, और जब उसने संयुक्त राज्य अमरीका के सहयोगियों पर हमला किया था, और उसके खिलाफ़ युद्ध भी किया था ।

संयुक्त राज्य अमरीका, चीनी शक्ति और उभरती हुई जापानी शक्ति के बीच संतुलन बनाये रखने की कोशिश करेगा । लेकिन अचानक एक दिन, यह संतुलन उसके हाथ से निकल जायेगा, और चीनी-जापानी साम्राज्यवादी-सैनिकवादी सहयोगी-संघ केवल सोवियट संघ के लिये ही खतरा नहीं बन जायेगा, बल्कि स्वयं संयुक्त राज्य अमरीका के लिये भी, क्योंकि, एशिया के इन दो बड़े साम्राज्यवादी देश, चीन और जापान, के हित एशिया और दूसरी जगह पर आधिपत्य जमाने, और अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद को कमज़ोर करने के उनके सामान्य लक्ष्यों में मिलते हैं ।

नेटो में संयुक्त राज्य अमरीका की एक आधिपत्य रखने वाली स्थिति, और उसका बड़ा सैनिक, राजनीतिक व आर्थिक

प्रभाव है । लेकिन, इसकी एकता के बावजूद भी, नेटो के अन्दर, विभिन्न सदस्य देशों के प्रभाव और एक राज्य के दूसरों पर हावी होने के कारण भेदभाव शुरू हो गये हैं ।

साल दर साल, जर्मन गणराज्य संघ इस संगठन के अन्दर मज़बूत होता जा रहा है । इसकी आर्थिक और राजनीतिक शक्ति, और शस्त्रों में इसका व्यापार यूरोपीयन कामन मार्केट की सीमाओं से कहीं आगे है । अब हम यह कह सकते हैं कि पश्चिम जर्मनी की नीति सर्वाधिकारी तानाशाही प्रसारवाद की विशेषतायें अपना रही है, और अपने ही प्रभाव छेत्रों को बनाने की कोशिश कर रही है । स्वभावतः, नेटो में संयुक्त राज्य अमरीका के शुरू के दो मुख्य सहयोगियों, बर्तानिया और फ्रांस, को यह पसन्द नहीं है ।

पश्चिम जर्मनी, दोनों जर्मन राज्यों के पुनःएकीकरण की कोशिश कर रहा है, ताकि बहुत बड़ी सैनिक छमता वाला एक शक्तिशाली राज बन जाये, जो कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के लिये खतरा होगा, और जो खुले आम जंग के समय, जापान व चीन के साथ सहयोग में, सम्पूर्ण दुनिया के लिये खतरा बन सकता है । यह, विशेषकर चीन के साथ, निकटतम सम्बन्ध बना रहा है । चीन के साथ व्यापार करने वाले यूरोपीय राज्यों में से इसका प्रथम स्थान है । पश्चिम जर्मनी, चीन को उधार, तकनालाजी और आधुनिक शस्त्र देने वालों में से यूरोप का सबसे शक्तिशाली देश है ।

बर्तानिया और फ्रांस भी चीन में बहुत रुचि रखते हैं, और इसलिये इसके साथ सम्बन्धों का विकास कर रहे हैं । लेकिन, चीन बान में ज़्यादा रुचि रखता है । इससे बर्तानिया और फ्रांस चिन्तित हैं, क्योंकि मज़बूत होने पर, जर्मन गणराज्य संघ का, नेटो और युरोपीयन कामन मार्केट के दूसरे साझेदारों पर

और भी ज़्यादा आधिपत्य हो जायेगा । इसलिये, हम देखते हैं कि बर्तानवी व फ्रान्सीसी, दोनों सरकारें, चीन के साथ मित्रता व सम्बन्धों की बात करते हैं, लेकिन वे इस पर जोर देना नहीं भूलते हैं कि वे सोवियट संघ के साथ भी अपने आर्थिक व मित्रतापूर्ण सम्बन्धों को और भी आगे बढ़ाना चाहते हैं । बान भी यही कहता है, लेकिन वह चीन, जो कि अपने आपको सोवियट संघ का मुख्य दुश्मन बताता है, के साथ अपने सम्बन्धों का बड़ी तेज़ी के साथ विकास कर रहा है । स्ट्रास के ताना-शाही दल, हिटलरवादी जनरल, बान के असली शक्तिशाली प्रसारवादी, अपने आपको खुले आम चीन का निकटतम सहयोगी बता रहे हैं । इसलिये चीन जर्मन गणराज्य संघ को फ्रांस और बर्तानिया के समान नहीं समझता है ।

सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की नीति

सोवियट संघ में राज सत्ता हड़पने के बाद, क्रुश्चेव-अनुयायिओं ने सर्वहारा अधिनायकत्व का विनाश, पूंजीवाद की पुन:स्थापना और सोवियट संघ को एक साम्राज्यवादी महा-शक्ति में बदलने का अपना मुख्य उद्देश्य बनाया ।

स्टालिन की मौत के बाद, अपनी स्थिति को मज़बूत बना चुकने पर, क्रुश्चेव और उसके दल ने सबसे पहले मार्क्सवादी - लेनिनवादी विचारधारा पर हमला शुरू किया, और स्टालिन पर हमला करके और उनके खिलाफ़ विश्व पूंजीवादी सरमाय-दारों के नीच प्रचार द्वारा बहुत अरसे से गढ़े गये सभी मिथ्या-पवादों को लगा कर, लेनिनवाद का ध्वंस करने के अपने संघर्ष को शुरू किया । इस प्रकार, क्रुश्चेव-अनुयायी, मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा और सोवियट संघ में क्रान्ति के

खिलाफ़ पूंजी की इच्छाओं के प्रवक्ता व निष्पादक बन गये । उन्होंने सोवियट संघ के सम्पूर्ण समाजवादी ढांचे का अन्त-र्ध्वंस करने के काम को नियमित रूप से शुरू किया, उन्होंने सोवियट प्रणाली का उदारीकरण करने के लिये, सर्वहारा अधि-नायकत्व के राज को सरमायदारी राज में बदलने के लिये, और समाजवादी अर्थवृयवस्था व संस्कृति को पूंजीवादी अर्थ-वृयवस्था व संस्कृति में बदलने के लिये संघर्ष किया ।

सोवियट संघ ने, जो कि एक संशोधनवादी देश में, व एक सामाजिक-साम्राज्यवादी राज में बदल गया था, अपनी ही नीति व युक्तियां बनायीं । क्रुश्चेव-अनुयायिओं ने ऐसी कार्य-विधि गढ़ी जिससे कि वे अपनी सभी क्रियाओं को लेनिन-वादी शब्दरचना में छिपा सकें । उन्होंने अपनी संशोधनवादी विचारधारा का विस्तरण इस तरह से किया जिससे कि वे इसे "नये समय का मार्क्सवाद-लेनिनवाद" बताकर सर्वहारा व लोगों को धोखा दे सकें, ताकि वे, देश के अन्दर व बाहर, कम्यूनिस्टों को बता सकें कि "विश्व विकास की नयी राज-नीतिक, विचारधारात्मक व आर्थिक स्थितियों में सोवियट संघ में क्रान्ति जारी है", और सिर्फ़ यही नहीं कि यह क्रान्ति वहां जारी है, बल्कि यह भी यह देश अभिकथित रूप से वर्ग-हीन कम्यूनिस्ट समाज के निर्माण की कार्यावस्था की ओर जा रहा है, जहां पार्टी व राज धीरे-धीरे खत्म हो रहे हैं ।

पार्टी की, मज़दूर वर्ग का अग्रगामी होने, और राज व समाज की एकमात्र राजनीतिक नेतृत्वदायी शक्ति होने, की विशेषताओं को मिटा दिया गया, और उसको अपराधिकी व के०जी०बी० के अधीन एक पार्टी में बदल दिया गया । सोवियट संशोधनवादियों ने अपनी पार्टी को "सम्पूर्ण लोगों की पार्टी" बताया और उसे एक ऐसी स्थिति में गिरा दिया

कि वह मज़दूर वर्ग की पार्टी न रही, बल्कि नये सोवियत सरमायदारों की पार्टी बन गयी ।

दूसरी ओर, सोवियत संशोधनवादियों ने ख्रुश्चेववादी शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व को अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन की आम कार्यदिशा बता कर उसका प्रचार किया, और "अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ शान्तिपूर्ण प्रतिस्पर्धा" को सोवियत संघ व दूसरे देशों के लिये समाजवाद की विजय का रास्ता घोषित किया । उन्होंने यह भी घोषित किया कि सर्वहारा क्रान्ति अभिकथित रूप से एक नयी कार्यावस्था में पहुंच गयी है, और कि यह क्रान्ति, हिंसा के जरिये सर्वहारा द्वारा राज सत्ता पर कब्ज़ा करने के रास्ते के बजाये, दूसरे रास्तों से भी विजयी हो सकती है । उनके अनुसार, राज सत्ता सुधारों के जरिये, शान्तिपूर्ण, संसदीय व लोकतन्त्रीय रास्तों से हासिल की जा सकती है ।

लेनिन और बोल्शेविक पार्टी के नाम का फ़ायदा उठा कर, ख्रुश्चेववादी संशोधनवादियों ने अपनी इस मार्क्सवाद-विरोधी कार्यदिशा, सभी क्षेत्रों में मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के इस संशोधन को दुनिया की सभी कम्यूनिस्ट पार्टियों पर थोपने की पूरी कोशिश की । वे चाहते थे कि दुनिया की कम्यूनिस्ट और मज़दूर पार्टियां इस संशोधनवादी कार्यदिशा को अपना लें, और पूंजीवाद की सेवा करने के लिये अपने आप को प्रतिक्रान्तिकारी पार्टियों में, और सरमायदारी अधिनायकत्व के अन्धे साधन में बदल लें ।

लेकिन वे इसमें सफल नहीं हो पाये, जैसी कि उनकी इच्छा थी, सबसे पहले, क्योंकि, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की दृढ़तापूर्वक कार्यान्विति व इसकी शुद्धता की रक्षा में अटल रही । उन दिनों, कुछ दूसरी और

पार्टियों ने,जो सिर्फ मार्क्सवादी-लेनिनवादी कारणों से नहीं बल्कि अपने ही कारणों से दोलायमान थीं,ख्रुश्चेववादी विचार-नीतियों को पूरी तरह से नहीं अपनाया,जब कि कुछ दूसरी पार्टियों ने शुरू में अनिच्छा से इन्हें स्वीकार किया, लेकिन बाद में पूरी तरह से उन्हें अपना लिया । उन दिनों,चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने भी ख्रुश्चेव-अनुयायिओं का विरोध किया, लेकिन जैसा कि तथ्य दिखाते हैं, ऐसा करने में इसके लक्ष्य व उद्देश्य उन लक्ष्य व उद्देश्यों से बिल्कुल विपरीत थे जिन्होंने पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया को ख्रुश्चेववादी संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष में अपने आपको लगा देने के लिये प्रेरित किया ।

ख्रुश्चेव अनुयायियों ने सत्ता में आने पर अपनी विदेश नीति के कार्यक्रम को भी बनाया । अमरीकी साम्राज्यवाद की तरह, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद ने भी,अपनी विदेश नीति को,सैनिक-शस्त्रों के लिये होड़,दबाव व ब्लैकमेल,और सैनिक, आर्थिक व विचारधारात्मक हमलों के जरिये प्रसारवाद व आधिपत्यवाद पर आधारित किया । इस नीति का लक्ष्य सारी दुनिया के ऊपर सामाजिक-साम्राज्यवादी आधिपत्य की स्थापना था ।

कामिकान देशों में सोवियट संघ एक प्रारूपिक नव-उप-निवेशवादी नीति को कार्यान्वित कर रहा है । इन देशों की अर्थ-व्यवस्थाओं को सोवियट अर्थव्यवस्था के प्रत्यँगों में बदल दिया गया है । वारसा ट्रीटी इन देशों को अपने अधीन रखने के लिये सोवियट संघ के काम आती है,जिसके जरिये सोवियट संघ वहाँ अधिसँख्या में सैनिक शक्तियों को कायम करता है,जो कि कब्ज़ादार सेनाओं से बिल्कुल भिन्न नहीं हैं । वारसा ट्रीटी एक हमलावर सैनिक सन्धि है,जो कि

सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की दबाव, ब्लैकमेल, व सशस्त्र दखल की नीतियों के काम आती है। "समाजवादी सम्प्रदाय", "श्रम का समाजवादी विभाजन", "सीमित अधिराज्य", "समाज-वादी आर्थिक समाकलन", आदि के संशोधनवादी-साम्राज्य-वादी "सिद्धान्त" भी इस नव-उपनिवेशवादी नीति के काम में हैं।

लेकिन सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद अधीनस्थ राज्यों पर जमाये गये अपने आधिपत्य से सन्तुष्ट नहीं है। दूसरे साम्राज्यवादी राज्यों की तरह, सोवियट संघ इस समय, नये बाज़ारों व प्रभाव छेत्रों के लिये, विभिन्न देशों में अपनी पूंजी का विनियोजन करने के लिये, कच्चे पदार्थों के प्राप्तिस्थानों पर एकाधिकार जमाने के लिये, और अफ़्रीका, एशिया, लैटिन अमरीका व दूसरी जगह पर अपने नव-उपनिवेशवाद का विस्तार करने के लिये, लड़ रहा है।

सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की एक सम्पूर्ण नीति-युक्त योजना है, जिसमें कि उसके प्रसार व आधिपत्यवाद का विस्तार करने के मतलब से कई आर्थिक, राजनीतिक, विचार-धारात्मक व सैनिक क्रियायें शामिल हैं।

इसके साथ-साथ, सोवियट संशोधनवादी, ठीक उन्हीं तरीकों व साधनों से जिनका अमरीकी साम्राज्यवादी इस्तेमाल करते हैं, लोगों की क्रान्तियों व मुक्ति युद्धों का अन्तर्ध्वंस करने में लगे हुये हैं। आम तौर पर, सामाजिक-साम्राज्यवादी अपने उपकरणों, संशोधनवादी पार्टियों, के जरिये काम करते हैं, लेकिन मौके व स्थितियों के अनुसार, वे अविकसित देशों में शासक गुटों को भ्रष्ट करने व घूस देने की भी कोशिश करते हैं, इन देशों में अपने पांव जमाने के लिये गुलाम बनाने वाली आर्थिक "सहायता" देते हैं, विभिन्न गुटों के बीच, एक या दूसरे का

पक्ष लेकर, सशस्त्र मुठभेड़ों को उकसाते हैं, सोवियट-पक्षी सत्ताओं को सत्ता में लाने के लिये षडयन्त्रों व विद्रोहों को आयोजित करते हैं,और यहाँ तक कि सीधे तौर पर सैनिक दखल भी देते हैं, जैसा कि उन्होंने क्यूबा के साथ मिलकर अंगोला, इथोपिया, व दूसरी जगहों पर किया था ।

सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी क्रान्तिकारी शक्तियों, क्रान्ति व समाजवाद के निर्माण के लिये सहायता व समर्थन देने की ओट में, दखल देते हैं और अपनी आधिपत्य जमाने वाली, व नव-उपनिवेशवादी क्रियाओं को करते हैं । वास्तव में वे प्रतिक्रान्ति को मदद देते हैं ।

संशोधनवादी सोवियट संघ, अपने आपको लेनिनवादी और अन्तर्राष्ट्रीयतावादी नीतियों का अनुसरण करने वाले एक देश के रूप में, और नये राष्ट्रीय देशों, व अविकसित देशों, आदि का सहयोगी, मित्र व रक्षक बताकर अपनी प्रसारवादी व नव-उपनिवेशवादी योजनाओं को पूरा करने के लिये रास्ते खोलने की कोशिश करता है । सोवियट संशोधनवादी यह प्रचार करते हैं कि, सोवियट संघ व तथाकथित समाजवादी सम्प्रदाय, जिसको वे "इस समय विश्व विकास की मुख्य प्रेरक शक्ति" घोषित करते हैं, के साथ मिलकर ये देश स्वतन्त्रता व आज़ादी, और समाजवाद के भी रास्ते पर सफलतापूर्वक बढ़ सकते हैं । इसी कारण उन्होंने "विकास के गैर-पूँजीवादी रास्ते", "समाजवादी दिशामान" के देश, आदि जैसे सिद्धान्तों को भी गढ़ा है ।

वे चाहे जो भी बहाना करें, सोवियट सामाजिक-साम्राज्य-वादियों की नीति, और समाजवाद व लेनिनवाद के बीच कोई समानता नहीं है । यह एक लुटेरे साम्राज्यवादी राज की नीति है जो अपने आधिपत्य व अधिकार को सभी महा-

द्वीपों के सभी देशों तक फैलाना चाहता है ।

यह आधिपत्य जमाने वाली व नव-उपनिवेशवादी नीति, जिसका संशोधनवादी सोवियट संघ अनुसरण कर रहा है, उस नीति के साथ टक्कर में है, और ऐसा ज़रूर होगा, जिसका संयुक्त राज्य अमरीका अनुसरण कर रहा है, और जिस पर चीन भी चल पड़ा है । यह दुनिया को फिर से बाँटने के लिये साम्राज्यवादियों के संघर्षों में, उनके स्वार्थों की टक्कर है । ठीक यही स्वार्थ व यही संघर्ष एक महाशक्ति को दूसरी महाशक्ति के मुकाबले में खड़े करते हैं, उनमें से हरएक को अपने प्रतिद्वन्द्वी या प्रतिद्वन्द्वियों को कमज़ोर करने के लिये सभी उपलब्ध शक्तियों व साधनों का इस्तेमाल करने के लिये बाध्य करते हैं, हालांकि ये टक्करें तीव्रता की उस हद तक नहीं पहुंची है जिसमें कि वे अपने आपको सशस्त्र लड़ाइयों में झोंक दें ।

चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद की नीति

घटनायें व तथ्य यह और भी स्पष्ट रूप से दिखा रहे हैं कि चीन संशोधनवाद, पूंजीवाद व साम्राज्यवाद में गहरे से गहरा डूबता जा रहा है । इस रास्ते पर चलते हुये, वह राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई नीति-युक्त उद्देश्यों को पाने के लिये काम कर रहा है ।

राष्ट्रीय स्तर पर, चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद ने समाजवादी स्वभाव के उन सभी उपायों को, जो मुक्ति के बाद लिये गये हों, मिटा देने, और देश में आधार व उपरिसंरचना में पूंजीवादी प्रणाली का निर्माण करने, और उद्योग, कृषि, सेना व विज्ञान के तथाकथित "चार आधुनिककरणों" की कार्यान्विति के जरिये इस शताब्दी के अन्त तक चीन को एक बड़ी

पूंजीवादी सत्ता बनाने के काम को उठा लिया है ।

यह देश के एक ऐसे आन्तरिक संगठन को बनाने की कोशिश कर रहा है जो चीन के लोगों पर पुराने व नये चीनी पूंजीवादी सरमायदारों के आधिपत्य को सुनिश्चित करेगा । चीनी संशोधनवाद इस संगठन और इस आधिपत्य को तानाशाही तरीके से, डंडे व अत्याचार के जरिये स्थापित करने की कोशिश कर रहा है । यह सेना और नागरिक आधार के बीच एकता बनाने के लिये काम कर रहा है, ताकि यह आधार इस अत्याचारी सेना के काम आये ।

जिन रूपों व तरीकों की ओर चीन का नेतृत्व सबसे अधिक आकर्षित हुआ है, और जिनका इस्तेमाल शायद चीन में किया जायेगा, वे हैं टीटो-अनुयायियों द्वारा इस्तेमाल किये गये रूप व तरीके, खास कर युगोस्लाव "आत्म-प्रशासन" की प्रणाली । सभी विभागों व स्तरों के अनेकों चीनी कमीशनों व प्रतिनिधि-मण्डलों से इस प्रणाली और आम तौर पर युगोस्लाव पूंजीवादी "समाजवाद" के अनुभव का वहां जाकर अध्ययन करने का काम सौंपा गया है ।

अभी से ही, चीन में इस प्रणाली व अनुभव का इस्तेमाल शुरू कर दिया गया है । लेकिन दूसरी ओर, चीन के संशोधनवादी नेताओं के लिये टीटोवादी "आत्म-प्रशासन" की असफलताओं को न देखना, और अपने देश की स्थितियों को, जो युगोस्लाविया की स्थितियों से बिल्कुल भिन्न हैं, ध्यान में न रखना नामुमकिन है । इसके अलावा, वे अनेकों पूंजीवादी रूपों व तरीकों को अपनाना भी आवश्यक समझते हैं, जो, उनके अनुसार, संयुक्त राज्य अमरीका, पश्चिमी जर्मनी, जापान व दूसरे सरमायदार देशों में "कारगर" साबित हुये हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि जो पूंजीवादी प्रणाली चीन में बनाई व विकसित

की जा रही है, वह विभिन्न संशोधनवादी, पूंजीवादी व परम्परागत चीनी रूपों व तरीकों की मिश्रण होगी ।

एक बड़ी पूंजीवादी शक्ति बनने के लिये, चीनी संशोधनवाद को एक शान्तिपूर्ण अवधि की ज़रूरत है । चीन की पार्टी की ११वीं कांग्रेस द्वारा दिया गया "महान सुव्यवस्था" का नारा इसी आवश्यकता से सम्बन्धित है । ऐसी "सुव्यवस्था" को सुनिश्चित करने के लिये ज़रूरी है, एक ओर तो तानाशाही अधिनायकत्व की किस्म की पूंजीवादी पद्धति, और दूसरी ओर, चीनी पार्टी व राज में हमेशा से मौजूद प्रतिद्वन्द्वी दलों के बीच शान्ति व समझौते को हर कीमत पर बनाये रखना । समय ही बतायेगा कि इस सुव्यवस्था व शान्ति को किस हद तक सुनिश्चित किया जा सकता है ।

चीन को एक महाशक्ति में बदलने की अपनी नीति में, चीन के नेता अमरीकी साम्राज्यवाद, और इसके साथ-साथ संयुक्त राज्य अमरीका के सहयोगी, विकसित पूंजीवादी देशों, से आर्थिक व सैनिक लाभ उठाना चाहते हैं ।

चीन द्वारा अनुसरण की गई इस नीति ने पूंजीवादी दुनिया में गहरी दिलचस्पी पैदा की है, खासकर अमरीकी साम्राज्यवाद के लिये, जो कि चीन की इस नीति में, पूंजीवाद व साम्राज्यवाद कायम रखने, नव-उपनिवेशवाद को मज़बूत करने, क्रान्तियों को दबाने व समाजवाद का गला घोंटने, और इसके साथ-साथ अपने प्रतिद्वन्द्वी, सोवियट संघ, को कमज़ोर करने की अपनी नीति के लिये बड़ा समर्थन पाता है ।

जैसा कि कार्टर ने घोषित किया है, अमरीकी साम्राज्यवाद "चीन के साथ निकट सहयोग रखना" चाहता है । उसने जोर दिया है :"हम अमरीकी-चीन सम्बन्धों को अपनी विश्व नीति का एक मुख्य विषय समझते हैं और हम चीन को शान्ति

के लिये एक मुख्य शक्ति के रूप में देखते हैं" । चीन संयुक्त राज्य अमरीका के साथ घनिष्ठतम शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व चाहता है ।

इन विचारों व विचारपद्धतियों से चीन उन सरमायदारी-पूंजीवादी राज्यों के साथ शामिल हो रहा है जो कि राज्यों के रूप में अपने अस्तित्व को अमरीकी साम्राज्यवाद पर आधारित करते हैं । साम्राज्यवाद की ओर चीन का यह झुकाव, इससे पहले सोवियट संघ और दूसरे देशों की तरह, हर दिन अधिक से अधिक एक वास्तविकता बनता जा रहा है । साम्राज्यवादी भी इस बात को समझ रहे हैं, जिन्होंने इस "नयी वास्तविकता" पर खुशी मनाते हुये यह घोषित किया है कि,"विचारधारात्मक मतभेद,जिन्होंने कि इस शताब्दी के पाँचवे दशक के दौरान संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियट संघ और चीन को विभाजित किया हुया था, इस समय कम हो गये हैं,और महाशक्तियों के बीच सहयोग की ज़रूरत और भी बढ़ती जा रही है ..." ।

अमरीकी साम्राज्यवादी, व राष्ट्रपति कार्टर, चीन को उसकी अर्थव्यवस्था व सेना मज़बूत करने के वास्ते सहायता देने के लिये तैयार हैं,लेकिन उतनी ही सहायता जितनी उनके हित में हो । वे चीन के संशोधनवादी नेताओं की पीठ ठोक रहे हैं क्योंकि चीन की नीति अमरीकी साम्राज्यवाद के आधिपत्य जमाने के लक्ष्यों के लिये एक महत्वपूर्ण सहायता है ।

संशोधनवादी सोवियट संघ के खिलाफ़ अमरीकी विचारों व क्रियाओं की चीन प्रशंसा करता है क्योंकि वह दिखाना चाहता है कि ये विचार व क्रियायें अभिकथित रूप से क्रान्ति के,और दुनिया की सबसे खतरनाक महान शक्ति, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद को कमज़ोर करने के काम आते हैं ।

अपनी ओर से,अमरीकी साम्राज्यवाद संशोधनवादी सोवियट संघ के खिलाफ़ चीन के विचारों व क्रियाओं की प्रशंसा करता है,क्योंकि,जैसा कि कार्टर के घनिष्ठतम सहकर्मियों में से एक ने कहा है,"चीनी-सोवियट प्रतिद्वन्द्विता एक बहुवादी किस्म की विश्वव्यापी संरचना बनाती है",जिसे अमरीकी साम्राज्य-वाद श्रेयस्कर समझता है,और "दुनिया का संगठन कैसा होना चाहिये",या,दूसरे शब्दों में,संयुक्त राज्य अमरीका के लिये दुनिया पर आधिपत्य जमाने को आसान बनाने के लिये दूसरे देशों को,एक दूसरे का खात्मा करने के लिये कैसे भड़काया जाये,इसके बारे में अपने मत के अनुकूल समझता है ।

चीन की उपयोगितावादी व सिद्धान्त त्यागने वाली नीति के परिणामस्वरूप यह अमरीकी साम्राज्यवाद का सह-योगी बन गया है और इसने सोवियट सामाजिक-साम्राज्य-वाद को मुख्य दुश्मन व खतरा घोषित किया है । कल,जब चीन यह देखेगा कि उसने सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद को कमजोर करने का अपना उद्देश्य पूरा कर लिया है,जब, वह अपने तर्क के अनुसार,यह देखेगा कि अमरीकी साम्राज्यवाद मज़बूत हो रहा है,तब वह दूसरे पक्ष से लड़ाई जारी रख सकता है क्योंकि वह एक साम्राज्यवाद से लड़ने के लिये दूसरे पर निर्भर करता है । ऐसी हालत में,अमरीकी साम्राज्यवाद ज़्यादा खतरनाक बन जायेगा, और तब इसके परिणामस्वरूप चीन को अपनी पुरानी विचारपद्धति बदलनी पड़ेगी ।

यह एक वास्तविक सम्भावना है । १९५६ में अपनी ८वीं कांग्रेस में चीनी संशोधनवादियों ने अमरीकी साम्राज्यवाद को मुख्य खतरा समझा था,। बाद में,अप्रैल १९६९ में अपनी ९वीं कांग्रेस में उन्होंने घोषित किया कि दोनों महाशक्तियां, अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद,

मुख्य खतरा हैं । बाद में, अगस्त १९७३ में हुई १०वीं काँग्रेस के बाद, और ११वीं काँग्रेस के समय, उन्होंने घोषित किया कि सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद ही मुख्य दुश्मन है । ऐसी दोलायमानता से, ऐसी उपयोगितावादी नीति से यह नामुमकिन नहीं है कि १२वीं या १३वीं काँग्रेस सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का समर्थन करे और अमरीकी साम्राज्य-वाद को मुख्य दुश्मन घोषित करे, और ऐसा ही चलता रहेगा जब तक चीन, भी, एक बड़ी पूंजीवादी विश्व शक्ति बनने के अपने उद्देश्य को पूरा नहीं कर लेगा । ऐसी स्थिति में चीन अन्तर्राष्ट्रीय छेत्र में कैसा कार्यभाग अदा करेगा ? इसका कार्य-भाग कभी भी क्रान्तिकारी नहीं होगा, बल्कि प्रतिगामी व प्रतिक्रान्तिकारी होगा ।

चीनी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण पहलू जापान के साथ उसका सहयोगी संघ है । जैसा कि हमने ऊपर बताया है, इन दोनों राज्यों के बीच इस जातिवादी सहयोगी संघ, जो कि हाल ही में चीनी-जापानी संधि से पक्का किया गया था, का उद्देश्य, एशिया, ए०एस०ई०ए०एन० देशों और ओशियाना पर अपने संयुक्त आधिपत्य को जमाने की चीन व जापान की नीति-युक्त योजनाओं को पूरा करना है । चीन के संशोधन-वादियों को जापान के साथ इस सन्धि व मित्रता की ज़रूरत है, ताकि जापानी सैनिकवादियों के साथ मिलकर वे सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद को धमका सकें, और अगर सम्भव हो तो, इसका व एशिया में इसके प्रभाव का ध्वंस कर सकें ।

लेकिन चीन अपनी महाशक्ति बनने की महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिये जापान के साथ अपने सम्बन्धों से फ़ायदा उठाकर जापान से उधार पाना, और सामान, तकनालाजी व युद्ध सामग्री का आयात करना चाहता है । चीन जापान के

साथ अपने हर-तरफ़ा आर्थिक सहयोग को इतना मतत्व देता है कि आधे से ज़्यादा उसका विदेशी व्यापार इस देश के साथ है ।

अपनी प्रसारवादी नीतियों को कार्यान्वित करने के लिये सामाजिक-साम्राज्यवादी चीन एशिया में अपने प्रभाव को जितना हो सके उतना बढ़ाने की कोशिश कर रहा है । इस समय चीन का हिन्दुस्तान में बिल्कुल भी प्रभाव नहीं है, जहाँ पर कि भविष्य में हो सकने वाले परिवर्तनों व सहयोगी संघों के सिलसिले में, संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ दोनों के अलग-अलग व सामान्य स्वार्थ हैं । इस समय चीन हिन्दुस्तान के साथ पहले से अच्छे राजनीतिक सम्बन्ध बनाना चाहता है । लेकिन हिन्दुस्तान के, तिब्बत पर अपने ही बड़े दावे हैं । पाकिस्तान पर चीन का जितना थोड़ा भी प्रभाव है, हिन्दु-स्तान उसको ख़त्म करने की कोशिश करेगा, क्योंकि पाकिस्तान ईरान व अफ़गानिस्तान की सीमाओं से घिरी हुई एक सामरिक महत्व की जगह पर है । मिडिल ईस्ट की तेल की बड़ी भारी घाटी, पर प्रतिद्वन्द्विता वहीं शुरू होती है, जिस घाटी पर अमरीकी साम्राज्यवाद का आधिपत्य है । चीन के लिये वहाँ प्रवेश करना बहुत कठिन है । जब तक यह स्वयं मज़बूत नहीं हो जाता है, उस समय तक वह एक ऐसी नीति का अनु-सरण करेगा जो अरब लोगों के हितों के खिलाफ़ और अमरीकी हितों के समर्थन में होगी । इसके साथ-साथ, चीन, संयुक्त राज्य अमरीका को, ईरान, साउदी अरब, आदि, देशों के साथ मिलकर, अमरीकी व यूरोपियन साम्राज्यवाद के लिये महत्वपूर्ण इस छेत्र में सोवियट राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक प्रवेश के खिलाफ़ एक शक्तिशाली रुकावट कायम करने में मदद देगा ।

अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये चीनी सामाजिक-

साम्राज्यवादी पश्चिम यूरोप पर विशेष ध्यान दे रहे हैं । उनका उद्देश्य है इसको सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के मुकाबले पर खड़ा करना । इसी कारण वे नेटो,और संयुक्त राज्य अमरीका के साथ यूरोप के देशों के सहयोगी-संघों, यूरोपियन कामन मार्केट और "संयुक्त यूरोप" को सभी तरह से समर्थन देते हैं ।

अपनी नीति-युक्त योजना में, सामाजिक-साम्राज्यवादी चीन का लक्ष्य अपने प्रभाव व आधिपत्य का उन देशों तक जिन्हें वह "तीसरी दुनिया" कहता है,फैलाना है । "तीसरी दुनिया" का सिद्धान्त चीन के लिये बहुत महत्व रखता है । माओ त्से-तुङ ने इस "सिद्धान्त" की घोषणा एक स्वपन्दर्षी की तरह नहीं की थी,बल्कि आधिपत्य ज़माने के इन निश्चित लक्ष्यों के साथ कि चीन का दुनिया पर आधिपत्य होना चाहिये । उसके उत्तराधिकारी भी माओ त्से-तुङ और चो एन-लाई की इसी नीति का अनुसरण कर रहे हैं ।

चीनी नीति-युक्त महत्वाकांक्षायें "तटस्थ दुनिया", जिसकी टीटोवाद हिमायत करता है, तक भी पहुंचती हैं । इन "दुनियाओं" के बीच कोई अन्तर नहीं है,ये एक दूसरे पर अतिव्याप्त हैं । यह भेद करना मुश्किल है कि कौनसा राज्य "तीसरी दुनिया" में है और इनमें और "तटस्थ देशों" में क्या फ़र्क है,कौनसा राज्य "तटस्थ"है,और उनमें और "तीसरी दुनिया" के राज्यों में क्या फ़र्क है । इस तरह,उन्हें चाहे जो भी नाम दिया जाये वे एक ही तरह के राज्य हैं ।

यही कारण है जिसकी वजह से चीनी नेतृत्व टीटो व युगोस्लाविया के साथ सभी छेत्रों में,विचारधारात्मक,राजनीतिक,आर्थिक व सैनिक,छेत्रों में बहुत ही मित्रतापूर्ण राज व पार्टी सम्बन्ध कायम रखने को इतना महत्व देता है ।

चीनी सँशोधनवादियों और युगोस्लाव सँशोधनवादियों के बीच विचारों की यह सहचारिता उनमें से किसी को भी इस हार्दिक मित्रता का खास अपने ही मतलबों के लिये इस्तेमाल करने से नहीं रोकती है ।

टीटो, उसकी और युगोस्लाव पार्टी की मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति वफ़ादारी के बारे में, और "आत्म प्रशासन" के समाजवादी स्वभाव और "मार्क्सवादी-लेनिनवादी" आन्तरिक व विदेश नीति जिसका टीटो अनुयायी अभिकथित रूप से अनुसरण कर रहे हैं, के बारे में हुआ कुआ-फ़ेंग द्वारा की गई घोषणाओं से फ़ायदा उठाकर यह देखने की कोशिश कर रहा है कि टीटो का, उसकी मार्क्सवाद-विरोधी पथविमुखताओं, उसकी शोवींवादी, प्रतिक्रियावादी, व साम्राज्यवाद-पक्षीय नीति, और उसके सँशोधनवाद के लिये किया गया पर्दाफ़ाश, और कुछ नहीं बल्कि स्टालिनवादियों द्वारा किया गया एक मिथ्यापवाद था, और इस आधार पर, वह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी प्रतिष्ठा को बनाने की कोशिश कर रहा है ।

अपनी ओर से, हुआ कुआ-फ़ेंग युगोस्लाविया के साथ अपने सम्बन्धों का इस्तेमाल यूरोप में चीन के प्रवेश के लिये कर रहा है । चीनी सँशोधनवादी टीटोवादियों के साथ, जो अपने को "तटस्थता" का प्रजेता बताते हैं, अपनी मित्रता का एक ऐसे ज़रूरी साधन के तौर पर इस्तेमाल करने की कोशिश कर रहे हैं जिसके जरिये वे "तटस्थ देशों" में घुस सकें और वहाँ अपना आधिपत्य जमा सकें । यह दुष्ट इरादों से ही था कि युगोस्लाविया की अपनी यात्रा के दौरान हुआ कुआ-फ़ेंग ने "तटस्थ" आन्दोलन का "साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद व आधिपत्यवाद के खिलाफ़ दुनिया के लोगों के सँघर्ष की एक बहुत ही महत्वपूर्ण शक्ति" बता कर बेहद प्रशँसा की । उसने इस

आन्दोलन व टीटो की प्रशंसा के गीत गाये क्योंकि वह इस आन्दोलन पर कब्ज़ा करने व पीकिंग को इसका केन्द्र बनाने के सपने देख रहा है ।

अपने सभी पहलुओं में चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद की नीति एक बड़ी साम्राज्यवादी शक्ति की नीति है, एक प्रति-क्रान्तिकारी व युद्धोउत्तेजक नीति है, और इसलिये लोग अवश्य ही इससे नफ़रत करेंगे, इसका विरोध करेंगे, और अधिक से अधिक दृढ़ता के साथ इसके खिलाफ़ लड़ेंगे ।

* * *

साम्राज्यवादी महाशक्तियां, जिनके बारे में हमने ऊपर बताया है, साम्राज्यवादी व युद्धोत्तेजक बनी रहेंगी, और अगर इस समय नहीं, तो भविष्य में वे दुनिया को महा अणु-युद्ध में ज़रूर डाल देंगी ।

अमरीकी साम्राज्यवाद दूसरे लोगों की अर्थव्यवस्थाओं में अपने पंजों को और भी गहरा गाढ़ने की कोशिश कर रहा है, जब कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, जिसने कि हाल ही में अपने पंजे फैलाना शुरू किया है, अपनी नव-उपनिवेश-वादी व साम्राज्यवादी स्थितियों को बनाने व उनका दृढ़ी-करण करने के लिये, दुनिया के विभिन्न देशों में अपने पंजे गाढ़ने की कोशिश कर रहा है । लेकिन इसके अलावा "संयुक्त यूरोप" भी है, जो कि नेटो के जरिये संयुक्त राज्य अमरीका से जुड़ा हुआ है, और जिसके देशों की संकेन्द्रित नहीं बल्कि अलग-अलग साम्राज्यवादी प्रवृत्तियां हैं । दूसरी ओर, चीन भी एक महा-शक्ति बनने की अपनी कोशिशों में इस नाच में शामिल हो गया है, और इसके साथ-साथ जापानी सैनिकवाद भी, जो

अपने पैरों पर खड़ा हो गया है । ये दोनों साम्राज्यवाद, दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियों का विरोध करने वाली एक साम्राज्यवादी शक्ति बनने के लिये, अपने आपको एक सहयोगी-संघ में जोड़ रहे हैं । ऐसी हालतों में विश्वयुद्ध का भारी खतरा बढ़ रहा है । वर्तमान सहयोगी-संघ कायम रहेंगे लेकिन इनमें तबदीलियां होंगी, इस अर्थ में कि इनकी दिशायें बदलेंगी, लेकिन इनका सार वही रहेगा ।

यू०एन०ओ० और साम्राज्यवादियों द्वारा आयोजित किये गये विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में निशस्त्रीकरण के बारे में मीठे शब्दों की बौछार सिर्फ़ बाज़ारू बातें हैं । उन्होंने सामरिक महत्व के शस्त्रों में अपने एकाधिकार को बनाया है, और उसकी रक्षा कर रहे हैं, और राष्ट्रों की शान्ति व सुरक्षा की गारण्टी के लिये नहीं, बल्कि अत्यधिक मुनाफ़े बनाने के लिये और क्रान्ति व लोगों का दमन करने के लिये, व हमलावर युद्धों को शुरू करने के लिये बड़े पैमाने पर शस्त्रों का व्यापार कर रहे हैं । स्टालिन ने बताया है :

"सरमायदारी देश प्रतिहिंसा के साथ अपने आपको शस्त्रों से सज्जित व पुन:सुसज्जित कर रहे हैं । किसलिये ? नि:सन्देह बातों के लिये नहीं, बल्कि लड़ाई के लिये । और साम्राज्यवादियों को लड़ाई की ज़रूरत है, क्योंकि दुनिया को फ़िर से बाँटने के लिये, बाज़ारों, मूल पदार्थों के प्राप्तिस्थानों और पूंजी के विनियोजन के लिये छेत्रों को फ़िर से बाँटने के लिये यही एकमात्र साधन है ।"*

---

* जे०वी०स्टालिन, रचनायें, ग्रन्थ १२, पृष्ठ २४२-२४३ (अल्बेनिया संस्करण)

अपने बीच प्रतिद्वन्द्विता में,जो कि उन्हें युद्ध की ओर ले जा रही है,महाशक्तियाँ अवश्य ही अनेक आंशिक लड़ाइयों को शुरू करायेंगी जिनको कि वे "तीसरी दुनिया","तटस्थ देशों" या "विकासशील देशों" के विभिन्न राज्यों के बीच उकसायेंगी ।

राष्ट्रपति कार्टर ने यह राय व्यक्त की है कि युद्ध दुनिया में सिर्फ़ दो जगह ही शुरू हो सकता है,मिडिल ईस्ट में और अफ़्रीका में । और यह स्पष्ट है,क्यों : क्योंकि इस समय दुनिया के ठीक इन्हीं दो क्षेत्रों में संयुक्त राज्य अमरीका की सबसे अधिक रुचि है । मिडिल ईस्ट में तेल है,और प्राकृतिक-साधन-सम्पन्न अफ़्रीका में महाशक्तियों के बीच, बाज़ारों व प्रभाव क्षेत्रों के विभाजन के लिये बड़े नव-उपनिवेशवादी आर्थिक व सामरिक हितों में टक्कर है,जो महाशक्तियाँ अपने स्थानों की रक्षा करने व उन्हें मज़बूत करने व दूसरे नये स्थानों को पाने की कोशिश कर रही हैं ।

परन्तु,मिडिल ईस्ट व अफ़्रीका के अलावा दूसरे ऐसे क्षेत्र भी हैं,जहाँ महाशक्तियों के हित एक दूसरे से टकराते हैं,उदाहरण के लिये दक्षिणपूर्वी एशिया । संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियट संघ,और चीन भी,अपने प्रभाव क्षेत्रों को स्थापित करने और बाज़ारों को बाँटने की कोशिश कर रहे हैं । इसके कारण झगड़े भी शुरू होते हैं,जो कि समय-समय पर स्थानीय लड़ाइयाँ बन जाते हैं, जिनका उद्देश्य किसी भी हालत में लोगों की मुक्ति नहीं,बल्कि स्थानीय पूँजी का प्रतिनिधित्व करने वाले शासक गुटों को कायम करना या उन्हें बदलना है,जो गुट कभी इस महाशक्ति के साथ होते हैं और कभी दूसरी महाशक्ति के साथ । सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद व अमरीकी साम्राज्यवाद ऐसे दो दानव हैं जिन पर लोग रत्ती भर भी

विश्वास नहीं रखते हैं। इसी तरह, लोग चीन पर भी विश्वास नहीं रखते हैं।

जब महाशक्तियाँ अपने लुटेरे हितों को आर्थिक, विचार-धारात्मक व राजनयिक तरीकों के जरिये पाने में असफल रहती हैं, जबकि अन्तर्विरोध सबसे तीक्ष्ण स्तर तक तीव्र हो जाते हैं, जबकि समझौते व "सुधार" इन अन्तर्विरोधों का समाधान करने में सफल नहीं होते हैं, तब महाशक्तियों के बीच युद्ध शुरू हो जाता है। इसलिये, लोगों को, जिनका इस युद्ध में खून बहेगा, अपनी पूरी ताकत के साथ कोशिश करनी चाहिये कि वे अपने आपको बिना तैयारी के न पायें, लुटेरी अन्तर-साम्राज्यवादी लड़ाई का अन्तर्ध्वंस करें, ताकि यह लड़ाई दुनिया-भर में न फैल पाये, और अगर वह ऐसा करने में असफल रहें, तो इस लड़ाई को एक मुक्ति लड़ाई में बदल दें और इसमें विजयी हों।

साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद की विश्वव्यापी नीति में टीटोवाद व दूसरी संशोधनवादी प्रवृत्तियों का कार्यभाग

क्रान्ति, समाजवाद और लोगों के खिलाफ़, साम्राज्यवाद सामाजिक-साम्राज्यवाद, विश्व पूंजीवाद, व प्रतिक्रिया, जो क्रूर लड़ाई कर रहे हैं उसमें उन्हें सभी प्रवृत्तियों के आधुनिक संशोधनवादियों का समर्थन प्राप्त है। ये पथभ्रष्ट और गद्दार अन्दर से अन्तर्ध्वंस करके, और सामाजिक और राष्ट्रीय गुलामी से छुटकारा पाने के लिये सर्वहारा की कोशिशों में व लोगों के संघर्ष में फूट डालकर व उनका ध्वंस करके साम्राज्यवाद को उसकी विश्वव्यापी नीति की कार्यान्विति में मदद देते हैं। आधुनिक संशोधनवादियों ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को बदनाम

करने व उसे विकृत करने, लोगों के मन में द्विविधा पैदा करने और उन्हें क्रान्तिकारी संघर्ष से अलग करने, पूंजी की मदद करने, अत्याचार व शोषण की इसकी प्रणाली की रक्षा करने और उसे जारी रखने के काम के जिम्मे को स्वयं उठा लिया है।

सोवियट व चीनी संशोधनवादियों के साथ-साथ, जिनकी चर्चा हमने ऊपर की है, युगोस्लाव टीटो-अनुयायी संशोधनवादी इस बड़े और खतरनाक प्रतिक्रान्तिकारी खेल में प्रथम-श्रेणी का कार्यभाग अदा करते हैं।

टीटोवाद, पूंजी की एक पुरानी एजेंसी है, समाजवाद और मुक्ति आन्दोलनों के खिलाफ़ साम्राज्यवादी सरमायदारों का मनचाहा हथियार है।

युगोस्लाविया के लोगों ने स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र व समाजवाद के लिये नात्ज़ी-तानाशाही कब्ज़ादारों के खिलाफ़ आत्म-बलिदान के साथ लड़ाई की थी। वे अपने देश को मुक्त करने में सफल हुये, लेकिन उन्हें समाजवाद के रास्ते पर क्रान्ति को आगे ले जाने नहीं दिया गया। टीटो के नेतृत्व में युगोस्लाव संशोधनवादी नेतृत्व, जिस पर इण्टेलिजेन्स सरविस ने बहुत अरसे तक गुप्त रूप से काम किया, और जिसने, लड़ाई की अवधि के दौरान, थर्ड इण्टरनेशनल की एक पार्टी की विशेषताओं को कायम रखने का बहाना किया, के वास्तव में और ही लक्ष्य थे, जो कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद, और युगोस्लाविया में एक सच्चे समाजवादी समाज का निर्माण करने की युगोस्लाविया के लोगों की आकांक्षाओं के विपरीत थे।

सत्ता में आने वाली युगोस्लाविया की कम्यूनिस्ट पार्टी में पथविमुखतावादी स्वभाव की अनेक गल्तियां थीं। दूसरे

विश्व युद्ध के बाद उसने स्पष्ट राष्ट्रीय-शोवींवादी विशेष-ताओं को जाहिर किया,जो कि युद्ध के समय से ही सामने आयी थीं । ये विशेषतायें, उसके मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा से हट जाने,सोवियट संघ और स्टालिन के प्रति उसके रुख,और अल्बेनिया के प्रति उसकी शोवींवादी विचार-पद्धतियों व क्रियाओं,आदि से स्पष्ट थीं ।

युगोस्लाविया में स्थापित जन लोकतन्त्र की प्रणाली अस्थायी थी । ये सत्ता में होने वाले गुट के अनुकूल नहीं थी, हालांकि ये गुट अपने आपको "मार्क्सवादी" बताता रहा । टीटो-अनुयायी समाजवाद के निर्माण के, या युगोस्लाविया की कम्यूनिस्ट पार्टी का मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त से मार्गप्रदर्शन किये जाने के पक्ष में नहीं थे,और उन्होंने सर्व-हारा अधिनायकत्व को स्वीकार नहीं किया । यही,कम्यू-निस्ट और मज़दूर पार्टियों के सूचना ब्यूरो और युगोस्ला-विया की कम्यूनिस्ट पार्टी के बीच मतभेद का कारण था । यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद और संशोधनवाद के बीच विचार-धारात्मक मतभेद था, और "आधिपत्य" के लिये व्यक्तियों के बीच झगड़ा नहीं,जैसा कि संशोधनवादी बताने की कोशिश करते हैं । स्टालिन ने मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त की शुद्धता की रक्षा की,टीटो ने,ब्राउडर व दूसरे मौकापरस्तों, जो दूसरे विश्वयुद्ध से पहले व उसके दौरान सामने आये थे, के कदमों पर चलते हुये आधुनिक संशोधनवाद की पथविमुखता-वादी,संशोधनवादी,व मार्क्सवाद-विरोधी प्रवृत्ति की रक्षा की ।

मुक्ति के बाद शुरू के कुछ सालों में युगोस्लाव नेतृत्व ने यह दिखावा किया कि वह सोवियट संघ में समाजवाद के निर्माण को एक उदाहरण के रूप में ले रहा है और उसने घोषित

किया कि वह अभिकथित रूप से युगोस्लाविया में समाजवाद का निर्माण कर रहा है । यह युगोस्लाविया के लोगों को धोखा देने के लिये किया गया था, जिन लोगों ने अपना खून बहाया था, और सच्चे समाजवाद की आकांक्षा रखी थी ।

वास्तव में, टीटो-अनुयायी न तो समाजवादी सामाजिक पद्धति या सोवियट राज के संगठनात्मक रूप के पक्ष में थे और न हो सकते थे, क्योंकि टीटो पूंजीवादी प्रणाली के, और विशेषकर एक सरमायदारी-लोकतन्त्रीय राज के पक्ष में था, जिस राज में सत्ता उसके गुट के हाथों में होगी । इस राज का उद्देश्य यह विचार पैदा करना था कि युगोस्लाविया में समाजवाद का निर्माण किया जा रहा था, एक "और भी मानव किस्म का" एक "विशेष समाजवाद", यानि कि ठीक उस किस्म का "समाजवाद" जो दूसरे समाजवादी देशों के बीच पांचवे स्तम्भ (देश के शत्रुओं को सहायता पहुंचाने वाली संगठित संस्था) का काम करेगा । एंगलो-अमरीकन साम्राज्यवादियों और टीटो के साथ में होने वाले दल द्वारा यह सब बहुत अच्छी तरह परिकलित व समन्वित किया गया था । इस प्रकार, साम्राज्यवाद और विश्व पूंजीवाद का खेल खेलते हुये और उनके साथ समझौता करके, युगोस्लाव संशोधनवादियों ने अपने आपको सोवियट संघ के खिलाफ़ कर लिया ।

तानाशाह-विरोधी राष्ट्रीय मुक्ति लड़ाई के समय से, अपनी योजनाओं को पूरा करने में, बर्तानवी, व बाद में, अमरीकी साम्राज्यवाद ने टीटो को सिर्फ़ सोवियट संघ से अलग होने में ही मदद नहीं दी, बल्कि सोवियट संघ के खिलाफ़ अन्तर्ध्वंस की कार्यवाहियों को करने के लिये भी, और खास तौर पर, लोक जनतन्त्र के दूसरे देशों को समाजवादी कैम्प से अलग करने के काम में ताकि सोवियट संघ को इन देशों से अलग

कर दिया जाये और इन देशों को पश्चिमी देशों के साथ मिला दिया जाये। यही विश्व पूंजीवाद की व इसकी एजेंसी, टीटोवाद की नीति थी ।

कट्टर कम्यूनिस्ट-विरोधी, चर्चिल ने सीधे व निजी तौर पर यह सुनिश्चित करने में भाग लिया कि टीटो व उसके दल को पूंजीवाद की सेवा में रखा जाये । युद्ध के दौरान उसने "अपने सबसे विश्वस्त दोस्तों", जैसा कि बर्तानवी नेता ने कहा था, और बाद में अपने बेटे को, टीटो के कर्मचारीवर्ग में भेजा । बाद में, यह सुनिश्चित करने के लिये कि टीटो कोई चाल नहीं चलेगा, वह, मई १९४४ को नेपल्स, इटली, में स्वयं टीटो से मिला । अपने संस्मरण में, चर्चिल ने लिखा है कि, टीटो के साथ उसके वार्तालाप में, टीटो ने वार्तालाप के बाद यह सार्वजनिक बयान देने के लिये अपनी तत्परता व्यक्त की कि "युद्ध के बाद युगोस्लाविया में कम्यूनिज़्म स्थापित नहीं किया जायेगा ।"

टीटो ने अपने मालिकों की सेवा करने में इतनी ज़्यादा लगन से काम किया कि उसकी बड़ी सेवाओं की तारीफ़ करते हुये चर्चिल ने टीटो से कहा :"अब मैं यह समझता हूं कि तुम ठीक थे, इसलिये मैं तुम्हारे साथ हूं, मैं अब तुम्हें पहले से भी ज़्यादा चाहता हूं" । कोई प्रेमी अपने प्यार की इससे ज़्यादा प्रेममय तरीके से घोषणा नहीं करेगा ।

सोवियट संघ और लोक जनतन्त्र के देशों के साथ युगोस्लाविया के पूरी तरह से सम्बन्ध तोड़ने के पहले ही, साम्राज्यवादियों, खास तौर पर अमरीकी साम्राज्यवादियों ने, युगोस्लाविया को अपनी बड़ी आर्थिक, राजनीतिक, विचारधारात्मक व सैनिक सहायता भेजी, जिनका भेजना और भी बढ़ गया और बाद में अविरत हो गया ।

यह सहायता इसी शर्त पर दी गई थी कि युगोस्लाविया का विकास पूंजीवादी रास्ते पर किया जायेगा । साम्राज्य-वादी सरमायदार इसके खिलाफ़ नहीं थे कि युगोस्लाविया अपने बाहरी समाजवादी रूपों को बनाये रखे । इसके विप-रीत, यह इनके और भी हित में था कि युगोस्लाविया अपने बाहरी समाजवादी रंग को बनाये रखे, क्योंकि इस तरह से यह समाजवाद और मुक्ति आन्दोलनों के खिलाफ़ संघर्ष में एक और भी प्रभावशाली शस्त्र की तरह काम आयेगा । सिर्फ़ यही नहीं कि इस तरह का "समाजवाद" लेनिन व स्टालिन द्वारा परिकल्पित व बनाये गये समाजवाद से पूर्ण रूप से भिन्न होगा, बल्कि यह उसका विरोध भी करेगा ।

बहुत थोड़े समय के अन्दर ही युगोस्लाविया अमरीकी साम्राज्यवाद का "समाजवादी" प्रवक्ता, और विश्व पूंजी को मदद देने वाली एक पथविमुखतावादी एजेंसी बन गया । १९४८ से आज के दिन तक टीटोवाद की विशेषता मार्क्सवाद-लेनिन-वाद के खिलाफ़ तीव्र कार्यवाही रही है, जिसका उद्देश्य युगो-स्लाव प्रणाली को एक ऐसी "सच्ची समाजवादी" पद्धति का रूप, एक "नया समाज", "एक तटस्थ समाजवाद" बताकर दुनिया में सभी जगह एक प्रचार अभियान आयोजित करना है, जो लेनिन व स्टालिन द्वारा सोवियट संघ में बनाये गये समाज-वाद की तरह नहीं है, बल्कि "मानवीयता के साथ" समाज-वादी पद्धति है जो कि दुनिया में सबसे पहले लागू की गई है और जिसके "बहुत ही अच्छे नतीजे" निकल रहे हैं । इस प्रचार का लक्ष्य हमेशा ही, दुनिया में सभी जगह स्वतन्त्रता व आज़ादी के लिये लड़ रहे लोगों व प्रगतिशील शक्तियों को बन्द रास्ते की ओर ले जाना रहा है ।

युगोस्लाव संशोधनवादियों ने अपने देश के संचालन के लिये

उन रूपों को अपनाया, जिन्हें पूंजीवादी सरमायदारों से बढ़ावा पाकर ट्रोट्स्की-अनुयायियों और दूसरे अराजकतावादी लोगों ने लेनिन के समय सोवियट संघ में, समाजवाद के निर्माण का अन्तर्ध्वंस करने के लिये अपनाने की कोशिश की थी । जबकि टीटो समाजवाद के निर्माण की बात करता रहा, वास्तव में इन रूपों को अपनाकर उसने उद्योग, कृषि, आदि, के निर्माण पर मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से विकृत कर दिया ।

युगोस्लाविया के गणराज्यों के प्रकाशन और संगठनात्मक राजनीतिक नेतृत्व के रूप ऐसे हो गये कि लोकतन्त्रीय केन्द्रीयतावाद का ध्वंस हो गया और युगोस्लाविया की कम्यूनिस्ट पार्टी का कार्यभाग महत्वहीन हो गया । युगोस्लाविया की कम्यूनिस्ट पार्टी ने अपना नाम बदल लिया । इसको "लीग आफ़ कम्यूनिस्ट्स आफ़ युगोस्लाविया" में बदल दिया गया, जो कि एक मार्क्सवादी नाम की तरह है, जबकि सार, आदर्श, सामर्थ्य और लक्ष्यों में यह मार्क्सवाद-विरोधी है । लीग एक बेरीढ़ मोर्चा बन गया, एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी होने वाली विशिष्ट विशेषताओं को हटा दिया गया, इसने पुराने रूप को बनाये रखा, लेकिन अब मज़दूर वर्ग की अग्रगामी नहीं रही, अब वैसी राजनीतिक शक्ति नहीं रही जिसने फैडरेटिव रिपब्लिक आफ़ युगोस्लाविया का नेतृत्व किया था, लेकिन टीटोवादी संशोधनवादियों के अनुसार, अभिकथित रूप से सिर्फ़ आम "शिक्षा सम्बन्धी" कामों को किया ।

टीटोवादी नेतृत्व ने पार्टी को यू०डी०बी० के नियन्त्रण में रख दिया, इसे यू०डी०बी० के अधीन कर दिया गया, इसे एक तानाशाही संगठन में, और राज को एक तानाशाही अधिनायकत्व में बदल दिया गया । हम इन कार्यवाहियों के भारी

खतरे को पूरी तरह जानते हैं, क्योंकि टीटोवादियों द्वारा लगाये गये खुफ़िये, कोची ज़ोसे, ने अल्बेनिया में यही काम करने की कोशिश की थी ।

टीटो, रैनकोविच और उनकी संस्था ने उन सभी चीज़ों का पूर्ण रूप से ध्वंस कर दिया जिनमें समाजवाद का सच्चा रंग हो सकता था । टीटोवाद ने उन आन्तरिक लोगों के खिलाफ़, जिन्होंने इस संस्था व इस पूंजीवादी-संशोधनवादी सँगठन को नष्ट करने की कोशिश की, और इसके साथ-साथ उस सभी मार्क्सवादी-लेनिनवादी प्रचार के खिलाफ़, जो कि समाजवादी होने का बहाना करने वाली इस सत्ता का पर्दा-फाश करने के लिये विदेश में किया गया था, कट्टर लड़ाई की ।

टीटोवादी नेतृत्व ने तुरन्त ही कृषि के सामूहिकीकरण को त्याग दिया, जो कि पहले के सालों में शुरू किया गया था, पूँजीवादी स्टेट फार्म को स्थापित किया, गाँवों में निजी सम्पत्ति के विकास को बढ़ावा दिया, ज़मीन के खुले आम खरीदने व बेचने की इज़ाज़त दी, कुलकों (अमीर किसानों) को पुन: स्थापित किया, शहर व गाँव में निजी बाज़ार को सम्पन्न होने की पूरी छूट दी, और ऐसे प्रथम सुधारों को कार्यान्वित किया जिन्होंने अर्थव्यवस्था की पूँजीवादी दिशा को मज़बूत किया ।

इसी दौरान, टीटोवादी सरमायदार युगोस्लाव पूँजीवादी पद्धति को छिपाने के लिये "नये" रूप ढूँढ़ रहे थे, और उन्होंने यह रूप ढूँढ़ निकाला । उन्होंने इसको युगोस्लाव "आत्म-प्रशासन का नाम दिया । उन्होंने इसको "मार्क्सवादी-लेनिनवादी" लबादा पहनाया, और यह दावा किया कि यह प्रणाली सबसे सच्चा समाजवाद थी ।

शुरू में "आत्म प्रशासन" एक आर्थिक प्रणाली के रूप में

सामने आया और बाद में उसका विस्तार राज संगठन के छेत्र और उस देश के जीवन के दूसरे छेत्रों में किया गया ।

युगोस्लाव "आत्म प्रशासन" का सिद्धान्त व अभ्यास मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षाओं और समाजवाद के निर्माण के विश्वव्यापी नियमों को खुले तौर पर इन्कार करता है । "आत्म प्रशासन" की आर्थिक व राजनीतिक प्रणाली सरमायदार अधिनायकत्व का अराजक-संघवादी रूप है, जो अधिनायकत्व, अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी पर निर्भर युगोस्लाविया पर शासन कर रहा है । "आत्म-प्रशासन" की प्रणाली, अपनी सभी विशिष्ट विशेषताओं, जैसे कि लोकतन्त्रीय केन्द्रीयतावाद को मिटा देना, राज द्वारा एकीकृत प्रशासन का कार्यभाग, अराजकवादी संघवाद, और आम तौर पर राज-विरोधी विचारधारा से युगोस्लाविया में स्थायी आर्थिक, राजनीतिक व विचारधारात्मक अव्यवस्था व द्विविधा, उसके गणराज्यों और छेत्रों के कमज़ोर व असमान विकास, बड़े सामाजिक-वर्ग भेद-भाव, राष्ट्रीकताओं के बीच झगड़े व उनपर अत्याचार, और आध्यात्मिक जीवन का पतन लायी है । उसने मज़दूर वर्ग की एक टुकड़ी को दूसरी के खिलाफ़ प्रतिस्पर्धा में लगाकर इसका बड़े पैमाने पर खण्डीकरण किया है, और इसके साथ-साथ, सरमायदारी छेत्रीयतावादी, स्थानीयवादी, व व्यक्तिवादी भावना का पोषण किया है । सिर्फ़ यही नहीं कि युगोस्लाविया में मज़दूर वर्ग राज व समाज में आधिपत्य जमाने का कार्यभाग अदा नहीं करता है, बल्कि "आत्म-प्रशासन" की प्रणाली इसको ऐसी स्थिति में डाल देती है कि वह स्वयं अपने आम हितों की रक्षा करने और एक एकीकृत व संहत वर्ग की तरह काम करने के योग्य भी नहीं रहता है ।

पूंजीवादी दुनिया ने, खास तौर से अमरीकी साम्राज्यवाद

ने युगोस्लाविया में विनियोगों,कर्ज व उधार के रूप में बड़ी संख्या में पूंजी लगाई है । ठीक यही पूंजी युगोस्लाव पूंजीवादी "आत्म-प्रशासनिक समाजवाद" के "विकास" का भौतिक आधार है। इसका सिर्फ़ कर्ज़ा ही ११ अरब डालर है। युगोस्लाविया को संयुक्त राज्य अमरीका से ७ अरब डालर से ज़्यादा का उधार मिला है ।

टीटोवादी नेतृत्व द्वारा विदेश से पाये गये अनेक उधारों के बावजूद भी युगोस्लाविया के लोगों ने इस विशेष "समाजवाद" के "प्रतिभाशाली नतीजों" का भोग नहीं किया है और न कर रहे हैं । इसके विपरीत,युगोस्लाविया में राजनीतिक व विचारधारात्मक अव्यवस्था फैली हुई है । वहाँ ऐसी प्रणाली कायम है जो देश के अन्दर बड़े पैमाने पर बेरोज़गारी और विदेश को बड़ी संख्या में श्रम का उत्प्रवासन पैदा करती है,और इसने युगोस्लाविया को पूर्ण रूप से साम्राज्यवादी शक्तियों पर निर्भर बना दिया है । सत्ता में होने वाले वर्ग और उस देश में विनियोग लगाने वाली सभी साम्राज्यवादी शक्तियों के हितों में युगोस्लाव लोगों का बेहद शोषण किया जा रहा है ।

युगोस्लाव राज को इससे कोई सारोकार नहीं है कि कीमतें हर दिन बढ़ रही हैं, कि मेहनतकश जनसमुदाय की निर्धनता क्रमशः बढ़ रही है,और कि देश सिर्फ़ गर्दन तक कर्ज में दबा हुआ ही नहीं है बल्कि पूंजीवादी दुनिया के बड़े संकट में भी गहरी तौर पर ग्रस्त है । युगोस्लाविया की स्वतन्त्रता व अधिराज्य सीमित है, क्योंकि,दूसरी बातों के अलावा, पूरी तरह से स्वयं इसका अपना ही कोई आर्थिक सामर्थ्य नहीं है । इसका बड़ा भाग विभिन्न विदेशी पूंजीवादी फ़र्मों व राज्यों के साथ संयुक्त मिलकियत में है,इसलिये इसे संकट और

विदेशी शोषण के विनाशकारी परिणामों को सहना ही पड़ेगा ।

लेकिन यह कोई आकस्मिक घटना नहीं है कि विश्व पूंजीवाद युगोस्लाव "आत्म-प्रशासन" को इस कदर राजनीतिक व वित्तीय समर्थन देता है और इस प्रणाली को सभी देशों के लिये "समाजवाद के निर्माण का एक नया परखा हुआ रूप" बताने के लिये टीटोवादी प्रचार के साथ एक धुन में गाता है ।

यह ऐसा इसलिये करता है क्योंकि युगोस्लाव "आत्म-प्रशासन" का रूप सर्वहारा व लोगों के क्रान्तिकारी मुक्ति आन्दोलनों के खिलाफ़ विचारधारात्मक व राजनीतिक तहसनहस व अन्तर्ध्वंस का, और दुनिया के विभिन्न देशों में साम्राज्यवाद के राजनीतिक व आर्थिक प्रवेश के लिये रास्ता खोलने का, एक तरीका है । पूंजीवाद, जो आसानी से मरता नहीं है, बल्कि लोगों पर भार डालकर सरकार के विभिन्न रूपों को ढूंढ़ने की कोशिश कर रहा है, के जीवन को बढ़ाने के लिये, साम्राज्यवाद व सरमायदार "आत्म-प्रशासन" को विभिन्न स्थितियों व भिन्न देशों के लिये आरक्षित प्रणाली के रूप में रखना चाहते हैं ।

"तटस्थता" के बारे में युगोस्लाव सिद्धान्त और अभ्यास विभिन्न साम्राज्यवादियों के बहुत काम आते हैं, क्योंकि इनसे लोगों को बेवकूफ़ बनाने में उन्हें मदद मिलती है । यह साम्राज्यवादियों व सामाजिक-साम्राज्यवादियों दोनों के ही हित में है, क्योंकि यह, "तटस्थ" देशों में प्रभाव को जमाने व मज़बूत करने, और स्वतन्त्रता प्रेमी लोगों को राष्ट्रीय मुक्ति व सर्वहारा क्रान्ति के रास्ते से विचलित करने में उनकी मदद करता है । इसीलिये, कार्टर व ब्रेज़नेव दोनों ही, और इसके

साथ-साथ हुआ कुआ-फेंग भी, "तटस्था" की टीटोवादी नीति की बेहद प्रशंसा करते हैं, और अपने-अपने मतलबों के लिये इसका इस्तेमाल करने की कोशिश करते हैं ।

टीटोवाद हमेशा ही साम्राज्यवादी सरमायदारों का शस्त्र, और क्रान्ति की लपटों को शान्त करने वाला अग्निशामक रहा है । इसकी कार्यदिशा वही है और इसके लक्ष्य वही हैं जो आम तौर पर आधुनिक संशोधनवाद के हैं, और उसके विभिन्न रूपों के हैं, जिनके साथ इसकी विचारधारात्मक एकता है । मार्क्सवाद-लेनिनवाद, क्रान्ति और समाजवाद के खिलाफ़ संघर्ष में जिन तरीकों, रूपों व युक्तियों का वे इस्तेमाल करते हैं वे भिन्न हो सकते हैं, लेकिन उन सबके प्रतिक्रान्तिकारी लक्ष्य एक ही हैं ।

सर्वहारा और लोगों के क्रान्तिकारी संघर्षों को दबाने के लिये सरमायदार व प्रतिक्रिया जो कोशिश कर रहे हैं, <u>उनमें सबसे पहले यूरोप की संशोधनवादी पार्टियां, तथा दूसरे महाद्वीपों पर सभी देशों की संशोधनवादी पार्टियां उनकी बहुत सेवा करती हैं ।</u>

पश्चिम यूरोप के देशों की संशोधनवादी पार्टियां एक "नये समाज", अभिकथित तौर पर समाजवादी समाज, के बारे में एक सिद्धान्त गढ़ने की कोशिश कर रहे हैं, जो कि "संरचनात्मक सुधारों" के जरिये, और सामाजिक-लोकतन्त्रीय पार्टियों के साथ, और यहां तक कि दायेंपक्षी पार्टियों के साथ, घनिष्ठ संघ बना कर हासिल किया जायेगा । उनके अनुसार, यह समाज, "सामाजिक सुधारों", "सामाजिक शान्ति", "संसदीय रास्ते", और सरमायदारी पार्टियों के साथ "ऐतिहासिक समझौते" के जरिये नयी बुनियादों पर बनाया जायेगा ।

यूरोप की संशोधनवादी पार्टियाँ,जैसे कि इटली, फ्रांस, और स्पेन की पार्टियाँ,और उनका अनुसरण करती हुई,पश्चिम की सभी संशोधनवादी पार्टियाँ,लेनिनवाद,वर्ग संघर्ष,क्रान्ति, व सर्वहारा अधिनायकत्व को इन्कार करती हैं। ये सभी पार्टियाँ पूंजीवादी सरमायदारों के साथ समझौते के रास्ते पर चल पड़ी हैं। उन्होंने इस मार्क्सवाद-विरोधी कार्यदिशा को "यूरोकम्यूनिज़्म" का नाम दिया है। "यूरोकम्यूनिज़्म" एक नयी छद्मकम्यूनिस्ट प्रवृत्ति है जो कि सोवियट संशोधनवादी दल के खिलाफ़ है, और खिलाफ़ नहीं भी है। यह दोलायमान विचारपद्धति, यूरोपीयन सामाजिक-लोकतन्त्र के विचारों, और यूरोप की हाण्डी में पक रहे सभी रंगों के विचारों,के साथ विचारों का सहअस्तित्व रखने के उनके लक्ष्य से बतायी जा सकती है। "यूरोकम्यूनिस्ट",सिर्फ़ उन लोगों को छोड़ कर जो क्रान्ति की विजय और मार्क्सवाद-लेनिनवाद विचारधारा की शुद्धता के लिये लड़ रहे हैं,सभी के साथ एक हो सकते हैं।

सभी संशोधनवादी,मौकापरस्त और सामाजिक-लोकतन्त्रीय प्रवृत्तियाँ,क्रान्ति और लोगों का दमन करने की महाशक्तियों की पैशाचिक क्रियाओं को मदद देने के लिये सभी कुछ कर रही हैं। सरमायदारों के अभिकथित रूप से नये संस्थानों के लिये इन सभी प्रवृत्तियों के समर्थन का एक ही लक्ष्य है : क्रान्ति के रास्ते में हज़ारों भौतिक,राजनीतिक व विचारधारात्मक रुकावटें पैदा करके क्रान्ति की आग को बुझाना। वे सर्वहारा और उसके सहयोगियों को दिशा-भ्रन्त करने व उनमें फूट डालने के लिये काम कर रहे हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि गुटवादी झगड़ों से विभाजित व टुकड़े-टुकड़े होने पर ये,न तो आन्तरिक और न अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर, एक ऐसी विचारधारात्मक

राजनीतिक व जंगी एकता बनाने में सफल होंगे, जो एकता पतन हो रहे विश्व पूंजीवाद के हमलों का सामना करने के लिये ज़रूरी है ।

सामाजिक-लोकतन्त्र के साथ आधुनिक संशोधनवाद के सहमिलन को तानाशाही के आने का डर है, विशेषकर उन खास देशों में जिनको अतिवादी दायेंपक्ष से खतरा है । तानाशाही अधिनायकत्व से बचने के लिये, संशोधनवादी व सामाजिक-लोकतन्त्रीय लोग, एक ओर तो लोगों के जनसमुदाय व सर्वहारा, और दूसरी ओर पूंजीवादी सरमायदारों के बीच अन्तर्विरोधों को "कम करने" की और वर्ग संघर्ष को "हल्का करने" की कोशिश करते हैं । इसलिये, "सामाजिक शान्ति" को सुनिश्चित करने के लिये, सहमिलन के इन दलों को एक दूसरों को रियायतें देना, और पूंजीवादी सरमायदारों के साथ समझौता करना पड़ता है, और इनके साथ किसी ऐसी किस्म की सत्ता के बारे में समझौता करना पड़ता है जो दोनों दलों को स्वीकृत हो । इस प्रकार, जब कि पूंजीवादी सरमायदार और इनकी पार्टियां खुले तौर पर कम्यूनिज़्म के खिलाफ़ अपनी लड़ाई को जारी रखते हैं, संशोधनवादी पार्टियां क्रान्ति की पथप्रदर्शक विचारधारा मार्क्सवाद-लेनिनवाद को विकृत करने की कोशिश करती हैं ।

मज़दूर-संघ, जो कि सुधारवादी हैं, और राजनीतिक मांगों के साथ हड़तालें, व सर्वहारा द्वारा राज सत्ता पर कब्ज़ा करने के उद्देश्यों की बजाय, सिर्फ़ आर्थिक दावे करने, और मालिक वर्गों के साथ समझौता करने के लिये विशेष रूप से शिक्षित व प्रशिक्षित किये गये हैं, यूरोप की संशोधनवादी पार्टियों के प्रधान आधार बन गये हैं । स्वभावतः उनके लेन-देन का लक्ष्य मांग और प्रस्ताव के बीच एक संतुलन ढूंढ़ निकालने

का है - एक पक्ष भीख माँगता है और दूसरा पक्ष भीख की मात्रा निश्चित करता है । दोनों पक्षों को, सुधारवादी मज़दूर-संघों व संशोधनवादी पार्टियाँ दोनों को, और मालिक वर्गों व उनकी पार्टियों, राज सत्ता व मज़दूर-संघों को, क्रान्ति से, सर्वहारा व उसकी सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों से खतरा है । इसलिये, वे एक प्रतिक्रियावादी समझौते की तलाश में हैं, एक समाधान की तलाश में हैं, जो कि सभी पूंजीवादी देशों में, पूंजी की ताकत, संकट की गहराई और अन्दर से उन्हें गला रहे अन्तर्विरोधों की हद की भिन्नताओं की वजह से, एक सा नहीं हो सकता है ।

क्रान्ति - सर्वहारा व लोगों के दुश्मनों की नीति को हराने का एकमात्र शस्त्र

सभी दुश्मन, साम्राज्यवादी, सामाजिक-साम्राज्यवादी और विभिन्न संशोधनवादी, एक साथ होकर या अलग-अलग, प्रगतिशील लोगों को गुमराह करने, मार्क्सवाद-लेनिनवाद को बदनाम करने, और विशेषकर क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त को विकृत करने, क्रान्ति व किसी भी प्रकार के सार्वजनिक प्रतिरोध और राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष का दमन करने के लिये लड़ रहे हैं ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के दुश्मनों का शस्त्रागार बड़ा है, लेकिन क्रान्ति की शक्तियाँ भी विशाल हैं । ये ही शक्तियाँ हैं जो क्रान्ति के दुश्मनों को भड़का रही हैं, उनसे टक्कर ले रही हैं व उनसे लड़ रही हैं, और इन्हीं शक्तियों ने पूंजीवादी दुनिया व विश्व प्रतिक्रिया के मन की शान्ति को बरबाद कर दिया है और उनका जीना मुश्किल कर दिया है ।

"यूरोप पर एक भूत छा रहा है - कम्यूनिज़्म का भूत । पुराने यूरोप की सभी सत्ताओं ने ... इस भूत को उतारने के लिये एक धर्म सहबंध बना लिया है" ।*

मार्क्स और एंगेल्स का यह कथन आज भी सत्य है । साम्राज्यवाद, सामाजिक-साम्राज्यवाद व आधुनिक संशोधनवाद सोचते हैं कि उनको कम्यूनिज़्म से जो खतरा था, वह मिट गया है, क्योंकि, यह सोच कर कि संशोधनवादी विश्वासघात द्वारा क्रान्ति पर किये गये भारी प्रहार असाध्य हैं, वे मार्क्सवाद-लेनिनवाद की ताकत का अल्पानुमान कर रहे हैं, और अपने हाथों में भौतिक, दमनकारी सैनिक, और आर्थिक छमता का अत्यानुमान कर रहे हैं । यह सिर्फ़ उनका एक भ्रम है ।

विश्व सर्वहारा अपनी शक्तियाँ इकट्ठी कर रहा है । अपने ही अनुभव से, सर्वहारा व स्वतन्त्रता-प्रेमी लोग दिन-प्रतिदिन टीटोवादी, क्रुश्चेववादी, चीनी, "यूरोकम्यूनिस्ट", और दूसरे आधुनिक संशोधनवादियों की गद्दारी के बारे में और भी ज़्यादा स्पष्ट जानकारी प्राप्त कर रहे हैं । समय क्रान्ति के लिये, समाजवाद के लिये अनुकूल है, और सरमायदारी, व साम्राज्यवाद के लिये नहीं, आधुनिक संशोधनवाद व विश्व प्रतिक्रिया के लिये नहीं । क्रान्ति की आग सभी जगह उत्पीड़ित लोगों के दिलों में जल रही है, जो अपनी सच्ची स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र और अधिराज्य को पाना, सत्ता को अपने ही हाथों में लेना, और साम्राज्यवाद व उसके चाटूकारों का विनाश

* कार्ल मार्क्स और एफ़० एंगेल्स, "दी मेनिफ़ेस्टो आफ़ दी कम्यूनिस्ट पार्टी", पृष्ठ १३, तिराना, १९७४ (अल्बेनिया संस्करण)

करके समाजवाद के रास्ते पर चल पड़ना चाहते हैं।

लेनिन के समय की घटना, जब कि सेकेण्ड इण्टरनेशनल से सम्बन्ध-विच्छेद के बाद नई मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ स्थापित की गई थी, आज भी हो रही है। संशोधनवादी विश्वासघात के कारण सच्ची कम्यूनिस्ट पार्टियाँ स्थापित व मज़बूत हुई हैं, जैसा कि, सभी जगह, होगा ही, और इन पार्टियों ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद और क्रान्ति की पताका को अपना लिया है और उसे ऊँचा उठाया है, जिस पताका को संशोधनवादियों ने त्याग दिया है और उसे कीचड़ में रौंध दिया है। इन नयी पार्टियों पर क्रान्ति की गौरवपूर्ण लेनिनवादी नीति, व मार्क्सवाद-लेनिनवाद के महान सिद्धान्त से विश्व साम्राज्यवाद और संशोधनवाद की विश्वव्यापी नीति का विरोध करने की जिम्मेवारी पड़ी है। इन पार्टियों पर, जनसमुदाय को, संघर्ष के उद्देश्यों और सही रास्ते, व उसके लिये आवश्यक कुर्बानियों के बारे में पूरी तरह जागरूक करने, और जनसमुदाय को एकीकृत करने, संगठित करने, उनका मार्ग-प्रदर्शन करने और उन्हें विजय की ओर ले जाने की जिम्मेवारी पड़ी है।

हम मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को, जो कि, एक ओर तो, स्वतन्त्रता की आकांक्षा रखने वाले सर्वहारा और उत्पीड़ित लोगों, और दूसरी ओर क्रूर लुटेरे साम्राज्यवादियों के बीच इस समय हो रहे अतिबृहतकाय संघर्ष में सबसे आगे हैं, उन लक्ष्यों, युक्तियों, तरीकों, व रूपों को अच्छी तरह समझना चाहिये जिनका कि सामान्य दुश्मन और हर देश के अलग-अलग दुश्मन लड़ाई में इस्तेमाल करते हैं। हम इस स्थिति को ठीक प्रकार से नहीं देख सकते हैं अगर हम अपने आप को क्रान्ति के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त पर दृढ़ता के साथ आधारित

न करें, अगर हम यह न देखें कि वर्तमान स्थिति में पूंजीवादी विश्व जंजीर में अनेक कमज़ोर कड़ियां हैं, जैसे कि भविष्य में भी होंगी, जिन स्थितियों में क्रान्तिकारियों व लोगों को बेरोक कार्यवाही, और इन कड़ियों को एक के बाद एक तोड़ने के लिये अडिग व निडर संगठित संघर्ष करना चाहिये। निःसन्देह, इसमें काम, संघर्ष, कुर्बानियां व आत्मत्याग की ज़रूरत है। क्रान्ति के हितों से प्रेरित होकर, निडर लोग व व्यक्तिगण, साम्राज्यवाद, सामाजिक-साम्राज्यवाद व प्रतिक्रिया की बड़ी शक्तियों का सामना कर सकते हैं और करेंगे, जो शक्तियां एक दूसरे से सम्बन्ध बना रही हैं, नये सहयोगी-संघ कायम कर रही हैं और उनके लिये पैदा की गई मुश्किल स्थितियों से बच निकलने की कोशिश कर रही हैं। सभी महाद्वीपों, सभी देशों में ये क्रान्तिकारी ही हैं, मार्क्सवादी-लेनिनवादी ही हैं, व लोगों के संघर्ष ही हैं जो प्रतिगामी शक्तियों के लिये मुश्किल स्थितियां पैदा करते हैं।

दुनिया में सभी जगह कम्यूनिस्टों के लिये इस आधारहीन कल्पित कथाओं से डरने का कोई कारण नहीं है, जो कुछ अरसे से क्रान्तिकारी विचार पर छायी हुई हैं। कम्यूनिस्टों को गल्ती करने वाले कम्यूनिस्टों को जीतने के लिये लड़ना चाहिये, ताकि वे अपने तरीकों को सुधार सकें, और इसके लिये बहुत कोशिश करनी चाहिये, लेकिन यह ध्यान रख कर कि कहीं वे स्वयं ही मौकापरस्ती में न गिर पड़ें। सिद्धान्ती संघर्ष की क्रियाविधि में, शुरू में कुछ अनिश्चयतायें हो सकती हैं, लेकिन यह अनिश्चयतायें दोलायमान लोगों में ही होंगी, जबकि उन लोगों में अनिश्चयतायें नहीं होंगी, जो दृढ़ हैं और मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त का ठीक प्रकार से इस्तेमाल करते हैं, जिन्हें अपने ही देश के सर्वहारा, व विश्व सर्वहारा और

क्रान्ति के हितों की उचित समझ है। परन्तु, जब ये दोलायमान लोग देखेंगे कि साथी लोग अपने क्रान्तिकारी मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारों पर दृढ़ हैं, तो वे भी अपनी लड़ाई में और भी मज़बूत हो जायेंगे।

अगर मार्क्सवादी-लेनिनवादी मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त का सही तौर पर और संकल्प के साथ, वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों, और हर देश की राष्ट्रीय स्थितियों के आधार पर प्रयोग करेंगे, अगर वे साम्राज्यवाद व सभी प्रवृत्तियों के आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ कठोर संघर्ष में सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावादी एकता को अनवरत रूप से मज़बूत करेंगे, तो वे अवश्य ही अपने रास्ते पर आने वाली सभी कठिनाइयों पर काबू पायेंगे, चाहे वह कठिनाइयाँ कितनी भी बड़ी क्यों न हों। उचित ढंग से इस्तेमाल किये जाने पर, मार्क्सवाद-लेनिनवाद और उसके अमर सिद्धान्त अनिवार्य रूप से विश्व पूंजीवाद का सर्वनाश और सर्वहारा अधिनायकत्व की विजय लायेंगे, जिसके जरिये मज़दूर वर्ग समाजवाद का निर्माण करेगा और कम्यूनिज़्म की ओर बढ़ेगा।

२

साम्राज्यवाद के बारे में लेनिनवादी सिद्धान्त अपनी पूरी सत्यता को बनाये हुए है

वर्तमान हालातों में, जब ख्रुश्चेव-अनुयायी, टीटो-अनुयायी, "यूरोकम्यूनिस्ट" व चीनी संशोधनवादी और अन्य मार्क्स-वाद-विरोधी प्रवृत्तियां, इस बहाने से कि परिस्थिति बदल गयी है, क्रान्ति व लोगों की मुक्ति के उद्देश्य पर हमला कर रहे हैं, तो इस समय साम्राज्यवाद पर लेनिन की रचनाओं का गहरे तौर पर अध्ययन करना सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो गया है ।

हमें इन रचनाओं का फिर से अध्ययन करना चाहिये और लेनिन की प्रतिभाशाली रचना "साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की उच्चतम कार्यावस्था" का विशेष रूप से गहरा व विस्तृत अध्ययन करना चाहिये । इस रचना के ध्यानपूर्वक अध्ययन से हम यह देखेंगे कि संशोधनवादी, जिनमें चीन के नेता भी शामिल हैं, किस तरह साम्राज्यवाद पर लेनिनवादी विचार को तोड़-मरोड़ते हैं, और साम्राज्यवाद के लक्ष्यों, नीति व युक्तियों को वे किस प्रकार समझते हैं । संशोधनवादियों की रचनायें, घोषणायें, विचारनीतियां व कार्य यह स्पष्ट करते हैं कि साम्राज्यवाद के स्वभाव के बारे में उनके विचार पूर्णरूप से गलत हैं, वे उसे प्रतिक्रान्तिकारी व मार्क्सवाद-विरोधी दृष्टिकोणों से देखते हैं, ठीक उसी तरह जैसे सेकेण्ड इण्टरनेशनल की सभी

पार्टियों व उनके सिद्धान्तवादियों, काउट्स्की व उसके सहयोगियों ने देखा था, जिनका लेनिन ने कठोरता से पर्दाफ़ाश किया था ।

यदि हम लेनिन की इस रचना का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें और उनके प्रतिभाशाली विश्लेषण व निष्कर्ष पर वफ़ादारी के साथ डटे रहें, तो हम यह देखेंगे कि हमारे समय में, साम्राज्यवाद उन्हीं विशेषताओं को पूरी तरह से प्रतिधारित किये हुये हैं जिनका लेनिन ने वर्णन किया था, और यह देखेंगे कि हमारे युग की लेनिनवादी परिभाषा कि यह साम्राज्यवाद व सर्वहारा क्रान्तियों का युग है, आज भी अडिग है, और यह कि क्रान्ति की विजय अनिवार्य है ।

जैसा कि सब जानते हैं, लेनिन, साम्राज्यवाद का विश्लेषण उत्पादन व पूंजी के संकेन्द्रण और एकाधिकारों से शुरू करते हैं । आज भी, उत्पादन व पूंजी के संकेन्द्रण व केन्द्रीकरण की घटनाओं का सही व वैज्ञानिक तौर से विश्लेषण सिर्फ़ साम्राज्यवाद के लेनिनवादी विश्लेषण के आधार पर ही किया जा सकता है ।

वर्तमान पूंजीवाद की एक विशेषता है, उत्पादन व पूंजी का निरन्तर बढ़ता हुआ संकेन्द्रण, जिसके परिणामस्वरूप या तो छोटे कारोबार बड़े कारोबारों में समविलीन हो गये हैं या बड़े कारोबारों द्वारा अपने में मिला लिये गये हैं । इसका एक परिणाम है, बड़े ट्रस्टों व व्यापार-संस्थाओं में श्रमशक्ति का अत्यधिक संकेन्द्रण । इन कारोबारों ने अनगिनत मात्रा में भारी उत्पादक छमताओं और ऊर्जा व कच्चे पदार्थों के स्रोतों को भी अपने हाथों में संकेन्द्रित कर लिया है । इस समय बड़े पूंजीपति कारोबार अणु ऊर्जा और आधुनिकतम तकनालोजी

का भी इस्तेमाल कर रहे हैं,जो पूरी तरह से इन कारोबारों की मिल्कियत हैं ।

इन महाकाय व्यापार-संस्थाओं का एक राष्ट्रीय और एक अन्तर्राष्ट्रीय स्वभाव है । अपने खुद के देशों में, इन्होंने अधिकांश छोटे स्वत्वाधिकारियों या उद्योगपतियों को तबाह कर दिया है,जब कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ये विशाल व्यापार-संस्थायें बन गयी हैं,जिनमें कई देशों के उद्योग,कृषि,निर्माण-कार्य,परिवहन आदि की सम्पूर्ण शाखायें शामिल हैं । जहाँ भी इन व्यापार-संस्थाओं ने अपना जाल फैलाया है,जहाँ भी उत्पादन का संकेन्द्रण एक मुट्ठीभर करोड़पति पूंजीपतियों ने किया है,छोटे मालिकों व उद्योगपतियों के विनाश की प्रवृत्ति और भी ज़्यादा व्यापक व तीव्र हो रही है । इसके परिणामस्वरूप एकाधिकार और भी ज़्यादा मज़बूत हो गये हैं ।

"प्रतिस्पर्धा का एकाधिकार में यह रूप परिवर्तन,"लेनिन ने बताया,"वर्तमान पूंजीवाद की अर्थव्यवस्था में अगर सबसे महत्वपूर्ण नहीं तो — सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में से एक है..."*

साम्राज्यवाद की इस विशेषता के बारे में बताते हुये,उन्होंने आगे कहा,

"...आमतौर से उत्पादन के संकेन्द्रण के परिणामस्वरूप एकाधिकारों का विकास, पूंजीवाद के विकास की वर्तमान

---

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २२, पृष्ठ २३७ (अल्बेनिया संस्करण)

कार्यविस्था का एक विश्वव्यापी व मूलभूत नियम है"*।

वर्तमान हालातों में पूंजीवाद का विकास लेनिन के उपर्युक्त निष्कर्ष की पूरी तरह से पुष्ठि करता है । आजकल,एका- धिकार सबसे प्रारूपिक व सामान्य घटना बन गये हैं, जो साम्राज्यवाद का स्वरूप और उसका आर्थिक सार है। साम्रा- ज्यवादी देशों,जैसे कि संयुक्त राज अमरीका,जर्मनी गणराज्य संघ, बर्तानिया,जापान,फ्रांस,आदि में उत्पादन का संकेन्द्रण अपूर्व हद तक पहुंच गया है ।

उदाहरण के लिये,१९७६ में, लगभग १.७ करोड़ लोग,जो काम पर लगे हुये लोगों के २० प्रतिशत से भी अधिक हैं,५०० सबसे बड़े अमरीकी निगमों में काम पर लगे हुये थे । विक्रय की गई सभी वस्तुओं का ६६ प्रतिशत इन निगमों से आया । जब लेनिन ने अपनी पुस्तक "साम्राज्यवाद,पूंजीवाद की उच्चतम कार्यविस्था" लिखी थी,उस समय, पूंजीवादी दुनिया में एक अरब डालर से ज्यादा अंश-पूंजी वाली सिर्फ़ एक ही बड़ी अमरीकी कम्पनी थी,"युनाइटेड स्टेट्स स्टील कार्पोरेशन", जब कि १९७६ में अरबपति कम्पनियों की संख्या लगभग ३५० थी । १९७५ में,महाएकाधिकार,"जनरल मोटर्स कार्पोरेशन" आटोमोबिल ट्रस्ट के पास कुल पूंजी २२ अरब डालर से ज्यादा थी और इसने लगभग ८००,००० मज़दूरों का शोषण किया । इसके बाद आता है, एकाधिकार "स्टेण्डर्ड आयल आफ़ न्यू जर्सी" जिसका संयुक्त राज्य अमरीका व अन्य देशों के तेल उद्योग पर आधिपत्य है,और जो ७००,००० से भी ज्यादा

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २२, पृष्ठ २४१ (अल्बेनिया संस्करण)

मज़दूरों का शोषण करता है । आटोमोबिल उद्योग में तीन बड़े एकाधिकार हैं, जो इस छेत्र के कुल उत्पादन का ९० प्रतिशत से भी ज़्यादा उत्पादन करते हैं, विमान-वहन व इस्पात, दोनों ही उद्योगों में, चार बहुत ही बड़ी कम्पनियां कुल उत्पादन का क्रमश: ६५ व ४७ प्रतिशत उत्पादन करती हैं ।

अन्य साम्राज्यवादी देशों में भी ऐसी ही क्रियाविधि हुई है और हो रही है । जर्मनी गणराज्य संघ में, कारोबारों की कुल संख्या के १३ प्रतिशत ने देश के उत्पादन के लगभग ५० प्रतिशत और श्रम शक्ति के ४० प्रतिशत को अपने पास संकेन्द्रित कर लिया है । बर्तानिया में, हर चीज़ ५० बड़े एकाधिकारों के आधिपत्य में हैं । ब्रिटिश स्टील कार्पोरेशन देश के कुल इस्पात उत्पादन का ९० प्रतिशत से भी ज़्यादा उत्पादन करता है । फ्रांस में, दो कम्पनियों ने अपने हाथों में इस्पात उत्पादन का तीन चौथाई संकेन्द्रित कर लिया है, मोटरकार का सम्पूर्ण उत्पादन चार एकाधिकारों की मिलकियत है, जबकि चार अन्य एकाधिकार तेल पदार्थों के सम्पूर्ण उत्पादन पर अधिकार रखते हैं । जापान में, दस बड़ी काली धातुकर्म कम्पनियां सम्पूर्ण कच्चा लोहा और तीन चौथाई से भी ज़्यादा इस्पात का उत्पादन करती हैं, जबकि अ-लौह धातुकर्म के छेत्र में सारा उत्पादन आठ कम्पनियों के हाथ में है । अन्य उत्पादन शाखाओं व छेत्रों में भी यही बात लागू होती है ।(१)

छोटे व मध्यम-स्तर के कारोबार, जो अभी भी इन देशों में मौजूद हैं, एकाधिकारों पर सीधी तरह से निर्भर हैं । ये

---

१. सूचना : "मन्थली बुलेटिन आफ़ स्टेटिस्टिक्स", संयुक्त राष्ट्र, १९७७; "स्टेटिस्टिकेल ईयरबुक", १९७६; अमरीकी पत्रिका "फ़ार्चून", १९७६, आदि, से ।

कारोबार एकाधिकारों का हुक्म मानते हैं और उनके लिये काम करते हैं; उनसे उधार, कच्चे पदार्थ, तकनोलाजी, आदि प्राप्त करते हैं । अभ्यास में, ये एकाधिकारों के प्रत्यंग बन गये हैं ।

उत्पादन व पूंजी का संकेन्द्रण व केन्द्रीकरण, जिससे ऐसे महाकाय एकाधिकार पैदा होते हैं, जिन एकाधिकारों में तकनीकी एकता बिल्कुल भी नहीं है, आज बहुत ही व्यापक है । औद्योगिक उत्पादन, निर्माण-कार्य, परिवहन, व्यापार, सार्वजनिक सेवायें और अधःसंरचना आदि के कारोबार व सम्पूर्ण शाखायें इन महाकाय "कांगलोमिरेट" एकाधिकारों के अधीन काम करते हैं । वे बच्चों के खिलौनों से लेकर अन्तरमहाद्विपीय मिसाइल तक, सभी चीज़ों का उत्पादन करते हैं ।

एकाधिकारों की आर्थिक शक्ति व पूंजी का संकेन्द्रण, जो कि बढ़ गये हैं और निरन्तर बढ़ रहे हैं, एक ऐसी परिस्थिति पैदा करते हैं, जिसमें प्रतिस्पधा के शिकार, सिर्फ़ "छोटे बच्चे", अर्थात अन-एकाधिकृत कारोबार, ही नहीं, जैसा कि पहले सामान्य रूप से होता था, बल्कि बड़े वित्तीय कारोबार व गुट भी हैं । अधिक एकाधिकारी मुनाफ़ों के लिये एकाधिकारों की अतृप्या भूख, और प्रतिस्पधा के अत्यधिक तीव्र होने के परिणामस्वरूप, पिछले दो दशकों के दौरान यह क्रियाविधि बहुत ही बड़े पैमाने पर हो रही है । इस समय पूंजीवादी दुनिया में समविलयन व हड़प दूसरे विश्वयुद्ध से पहले के सालों की अपेक्षा ७ से १० गुना बढ़ गये हैं ।

औद्योगिक, व्यापारिक, कृषि व बैंक के कारोबारों के समविलयन व संयोजन के परिणामस्वरूप एकाधिकारों के नये रूप पैदा हुये हैं, बड़े औद्योगिक-वाणिज्यिक या औद्योगिक-कृषि निगम पैदा हुये हैं, ऐसे रूप जिनका सिर्फ़ पश्चिम के पूंजीवादी देशों में ही नहीं, बल्कि सोवियट संघ, चेकोस्लोवाकिया, यूगो-

स्लाविया व अन्य संशोधनवादी देशों में भी व्यापक तौर पर इस्तेमाल किया जा रहा है । पहले स्काधिकार कम्बाइन, वस्तुओं का परिवहन और विक्रय अन्य स्वतन्त्र फ़र्मों की मदद से किया करते थे, जब कि अब स्काधिकार, उत्पादन, परिवहन व विक्रय पर नियन्त्रण रखते हैं ।

स्काधिकार अपने नियन्त्रण में होने वाले कारोबारों के बीच प्रतिस्पर्धा को खत्म करने की ही सिर्फ़ कोशिश नहीं करते हैं, बल्कि उन्होंने कच्चे पदार्थों के सभी स्रोतों, लोहे, कोयले, ताँबे, यूरेनियम आदि जैसे महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों में धनी सभी छेत्रों को भी स्काधिकृत करने के लिये अपने पंजों को बढ़ा लिया है । यह क्रियाविधि राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चल रही है ।

खास तौर पर दूसरे विश्व युद्ध के बाद से, राज स्काधिकारी पूंजीवाद के छेत्रक के विकास व विस्तार के साथ, उत्पादन व पूंजी का संकेन्द्रण अत्यधिक बढ़ गया है ।

राज स्काधिकारी पूंजीवाद का अर्थ है राज उपकरण का स्काधिकारों के अधीन होना, देश के आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक जीवन पर स्काधिकारों के सम्पूर्ण आधिपत्य की स्थापना । इस तरीके से, राज सारे मेहनतकश लोगों का शोषण करके सत्ता में होने वाले वर्ग के वास्ते अधिकतम मुनाफ़ा सुनिश्चित करने, और इसके साथ-साथ क्रान्ति व लोगों के मुक्ति संघर्षों का गला घोंटने के लिये, वित्तीय अल्पजनाधिपत्य के हित में अर्थव्यवस्था में सीधी तरह से दखल डालता है ।

राज स्काधिकारी पूंजीवाद का सबसे विशिष्ठ मूलभूत तत्व, राज स्काधिकारी सम्पत्ति स्क व्यक्तिगत पूंजीपति या पूंजीपतियों के गुट की सम्पत्ति नहीं है बल्कि पूंजीवादी राज की सम्पत्ति, सत्ता में होने वाले सरमायदार वर्ग की सम्पत्ति

है। विभिन्न साम्राज्यवादी देशों में राज एकाधिकारी पूंजीवादी छेत्रक कुल उत्पादन का २० से ३० प्रतिशत तक का उत्पादन करता है ।

राज एकाधिकारी पूंजीवाद, जो उत्पादन व पूंजी के संकेंद्रण की उच्चतम कायविस्था का प्रतिनिधित्व करता है, सोवियट संघ व अन्य संशोधनवादी देशों में इस समय सम्पत्ति का प्रचलित मुख्य रूप है। यह राज एकाधिकारी पूंजीवाद सत्ता में होने वाले नये सरमायदार वर्ग की सेवा में है ।

चीन में भी, अनेक सुधारों, जैसे कि मुनाफ़े को कारोबारों की क्रियाओं का मुख्य लक्ष्य बनाना, संगठन, प्रबन्धन व वेतन में पूंजीवादी अभ्यासों का प्रयोग, सोवियट, यूगोस्लाव व जापानियों के जैसे ही आर्थिक छेत्रों, ट्रस्टों, कम्बाइनों का निर्माण, विदेशी पंजी के लिये दरवाज़े खोलना, कारोबारों का विदेशी एकाधिकारों के साथ सीधे सम्बन्ध जोड़ना, आदि के जरिये अर्थव्यवस्था राज-एकाधिकारी पूंजीवाद के प्रारूपिक रूपों को धारणा कर रही है ।

इस समय, पूंजीवादी व संशोधनवादी दुनिया में उत्पादन व पूंजी का संकेन्द्रण व केन्द्रीकरण एक अन्तर्राज्यीय स्तर पर पहुंच गये हैं। यूरोपियन कामन मार्केट, कोमिकोन, आदि भी, जो विभिन्न साम्राज्यवादी सत्ताओं के एकाधिकारों के संघ का प्रतिनिधित्व करते हैं, अभ्यास में इस प्रवृत्ति को बढ़ावा देते हैं व लागू करते हैं ।

अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकारों के रूपों का विश्लेषण करते हुये, लेनिन ने अपने समय में व्यापारिक-संघों व व्यवसाय-संघों के बारे में बताया था । वर्तमान हालातों में, जबकि उत्पादन व पूंजी का संकेन्द्रण बहुत ही बड़े पैमाने तक पहुंच गया है, एकाधिकारी सरमायदारों ने भी मेहनतकश लोगों का शोषण

करने के लिये अन्य रूपों को खोज लिया है । ये रूप हैं बहु-राष्ट्रिक कम्पनियां ।

अपने बाहरी दिखावे में, ये कम्पनियां यह मत पैदा करने की कोशिश कर रही हैं कि ये कई देशों के पूंजीपतियों की संयुक्त मिलकियत में हैं । वास्तव में, जहां तक उनकी पूंजी व नियन्त्रण का सवाल है, ये बहुराष्ट्रिक कम्पनियां मुख्य तौर से एक ही देश की हैं, हालांकि ये कई देशों में अपनी कार्यवाहियां करती हैं । ये बहुराष्ट्रिक कम्पनियां, खूंख्वार प्रतिस्पर्धा का सामना न कर सकने वाली, बड़ी और छोटी, स्थानीय कम्पनियों व फ़र्मों को हड़प कर और भी ज़्यादा से ज़्यादा फैल रही हैं ।

बहुराष्ट्रिक कम्पनियां, सहकारी कम्पनियां खोलती हैं और अपने कारोबारों का उन देशों में विस्तार करती हैं जहां अधिकतम मुनाफ़े की सम्भावना सबसे ज़्यादा सुरक्षित दिख पड़ती है । उदाहरण के लिये, अमरीकी बहुराष्ट्रिक कम्पनी "फ़ोर्ड" ने अन्य देशों में २० बड़े संयंत्र स्थापित किये हैं, जिनमें विभिन्न राष्ट्रिकताओं के १ लाख मज़दूर काम कर रहे हैं ।

बहुराष्ट्रिक कम्पनियों और सरमायदारी राज के बीच निकट सम्बन्ध व पारस्परिक निर्भरता है, जो उनके शोषणकारी वर्ग स्वभाव पर आधारित हैं । राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही स्तरों पर आधिपत्य व विस्तार के उनके लक्ष्यों के लिये पूंजीवादी राज का उनकी सेवा में एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जाता है ।

जहां तक देश के सम्पूर्ण जीवन में उनके मुख्य आर्थिक कार्य-भाग व भारी दबदबे का सवाल है, कुछ बहुराष्ट्रिक कम्पनियां, अकेले ही, एक ऐसी शक्तिशाली आर्थिक ताकत हैं, जिनका बजट व उत्पादन तुलना में, अनेक विकसित देशों के सम्मिलित उत्पा-

दन या बजट के या तो बराबर या ज्यादा तक भी है। संयुक्त राज्य अमरीका की शक्तिशाली बहुराष्ट्रिक कम्पनियों में से एक, "जनरल मोटर्स कार्पोरेशन",का उत्पादन हालेण्ड, बेल्जियम व स्विज़रलैण्ड के सम्मिलित औद्योगिक उत्पादन से ज्यादा है। ये बहुराष्ट्रिक कम्पनियां,उन देशों में जहां ये काम करती हैं,अपने लिये विशेष सुविधायें व विशेषाधिकारों को सुनिष्चित करने के लिये दखल देती हैं। उदाहरण के लिये, १९७५ में, संयुक्त राज्य अमरीका के इलेक्ट्रानिक्स उद्योग के मालिकों ने मेक्सिको की सरकार से यह मांग की कि वह श्रम संहिता,जिसमें कुछ सुरक्षा उपाय परिकल्पित थे, को बदले,नहीं तो वे अपने उद्योगों को कोस्टा-रिका में ले जायेंगे, और दबाव डालने के लिये इन मालिकों ने अनेक कारखानों को बन्द किया जिनमें मेक्सिको के लगभग १२,००० मज़दूर काम पर लगे हुये थे।

बहुराष्ट्रिक कम्पनियां साम्राज्यवाद की टेक हैं और इसके प्रसार के मुख्य रूपों में से एक हैं। वे नव-उपनिवेशवाद को थामने वाले स्तम्भ हैं और जिन देशों में वे काम करती हैं उन देशों के राष्ट्रीय अधिराज्य व स्वतन्त्रता पर असर डालतीं हैं। अपना आधिपत्य जमाने के रास्तों को खोलने के लिये,ये कम्पनियां,षड्यन्त्रों को आयोजित करने व अर्थव्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने से लेकर,उच्च सरकारी अधिकारियों,राजनीतिक व मज़दूर-संघ नेताओं,आदि को पूरी तरह से खरीदने तक,किसी भी जुर्म को करने से नहीं हिचकिचाती हैं। लाकहीड कुख्यात घटना इसका काफ़ी सबूत है।

अनेक बहुराष्ट्रिक कम्पनियों ने अपने आपको संशोधनवादी देशों में भी स्थापित कर लिया है और वहां पर काम कर रही हैं।(१) उन्होंने चीन में भी प्रवेश करना आरम्भ कर

दिया है ।

उत्पादन व पूंजी के संकेन्द्रण व केन्द्रीयकरण से जो वर्तमान पूंजीवादी दुनिया की विशेषता है और जिससे उत्पादन का अत्यधिक सामाजीकरण हुआ है, किसी भी तरह साम्राज्यवाद का शोषणकारी स्वभाव नहीं बदला है । इसके विपरीत, इन्होंने मेहनतकश लोगों के उत्पीड़न व उनकी गरीबी को और भी अधिक बढ़ा व तीव्र कर दिया है । ये घटनायें, लेनिन के इस दावे को पूरी तरह से सिद्ध करती हैं कि साम्राज्यवाद में होने वाले उत्पादन व पूंजी के संकेन्द्रण की हालतों में.

"परिणाम है उत्पादन के सामाजीकरण में अत्यधिक प्रगति", लेकिन, फिर भी, "... हड़प निजी बनी रहती है । उत्पादन के सामाजिक साधन सिर्फ़ कुछ लोगों की निजी सम्पत्ति बने रहते हैं" ।*

---

(१) १७ अमरीकी, १८ जापानी, १३ पश्चिम जर्मन, २० फ्रांसीसी व ७ इटली की व अन्य बहुराष्ट्रिक कम्पनियों ने सोवियट यूनियन में अपने आपको स्थापित कर लिया है या वहाँ अपने दफ़्तर खोल लिये हैं । ३० से भी ज़्यादा बहुराष्ट्रिक कम्पनियों ने अपने आपको पोलैण्ड में स्थापित कर लिया है । उनमें से १० अमरीकी, ६ पश्चिम जर्मन, ६ बर्तानवी, ३ जापानी, इत्यादि हैं । ऐसी ३२ कम्पनियाँ रूमानिया में, ३१ हंगरी में, व ३० चेकोस्लोवाकिया में काम कर रही हैं । अन्य संशोधनवादी देशों में भी यही स्थिति है । (सूचना पुस्तक "वोड्का-कोला", लेखक कार्ल लेविन्सन, १९७७, पृष्ठ ७९-८२ से ।)

* वी०आई० लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रंथ २२, पृष्ठ २४७ (अल्बेनिया संस्करण)

एकाधिकार व बहुराष्ट्रिक कम्पनियां, सर्वहारा व लोगों के बड़े भारी दुश्मन बने रहते हैं ।

हमारे समय में उत्पादन व पूंजी के संकेन्द्रण की क्रिया-विधि के और भी तीव्र होने से, पूंजीवाद का मूल अन्तर्विरोध, यानि कि उत्पादन के सामाजिक स्वभाव व हड़प के निजी स्वभाव के बीच का अन्तर्विरोध, सभी अन्य अन्तर्विरोधों के साथ-साथ और भी अधिक तीव्र हो गया है । पहले की ही तरह, इस समय भी मज़दूरों का खूंख्वार शोषण करके प्राप्त किये गये विशाल आय व अत्यधिक मुनाफ़ों को मुट्ठीभर रईस पूंजी-पति हड़प लेते हैं । इसी तरह, उद्योग की एकीकृत शाखाओं में लगाये गये उत्पादन के साधन पूंजीपतियों की निजी सम्पत्ति हैं, जब कि मज़दूर वर्ग उत्पादन साधनों का मालिकों का गुलाम बना रहता है और उसकी श्रम शक्ति एक बिकाऊ उपभोग्य वस्तु बनी रहती है । आजकल, बड़े पूंजीपति कारोबार दसियों या सैकड़ों मज़दूरों का नहीं बल्कि सैकड़ों हज़ारों मज़दूरों का शोषण करते हैं । यह अनुमान लगाया गया है कि मज़दूरों की इस बड़ी संख्या के बेरहम पूंजीवादी शोषण के परिणामस्वरूप अमरीकी निगमों द्वारा हथियाया गया अधिशेष मूल्य, सिर्फ़ १९७६ में ही १०० अरब डालर से भी ज़्यादा था, जब कि १९६० में यह सिर्फ़ ४४ अरब डालर था ।

लेनिन ने सेकेण्ड इण्टरनेशनल के मौकापरस्तों का पर्दाफ़ाश किया था, जिन मौकापरस्तों ने, एकाधिकारों के उभरने व उनके विकास के परिणामस्वरूप पूंजीवाद के शत्रुतापूर्ण अन्तर-विरोधों को मिटा देने की सम्भावना का प्रचार किया था । लेनिन ने वैज्ञानिक तर्कों से यह सिद्ध किया कि श्रम के शोषण व उत्पीड़न और श्रम के फलों की निजी हड़प के साधन के रूप में, एकाधिकार पूंजीवाद के अन्तर्विरोधों को और भी ज़्यादा

तीव्र बनाते हैं । पूंजीवादी प्रणाली की उपरिसंरचना,एका-धिकारों के आधिपत्य के आधार पर बनायी जाती है । यह उपरिसंरचना एकाधिकारों के लुटेरे हितों की, राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही स्तरों पर,रक्षा व उनका प्रतिनि-धित्व करती है। एकाधिकार घरेलू व विदेशी नीति,आर्थिक, सामाजिक,सैनिक व अन्य नीतियों का निर्धारण करते हैं ।

उत्पादन व पूंजी के संकेन्द्रण की वर्तमान वास्तविकता, सामाजिक-लोकतन्त्र के प्रतिक्रियावादी मुखियों,सभी रंगों के आधुनिक संशोधनवादियों व मौकापरस्तों के इस प्रचार का भी पर्दाफ़ाश करती है,कि ट्रस्ट,राज एकाधिकारी पूंजीवाद की सम्पत्ति,आदि,को अभिकथित रूप से,एक शान्तिपूर्ण रास्ते के जरिये समाजवादी अर्थव्यवस्थाओं में बदला जा सकता है, और यह कि अभिकथित रूप से वर्तमान एकाधिकारी पूंजीवाद का समाजवाद में क्रमश: समाकलन किया जा सकता है ।

लेनिन ने हमें सिखाया है कि,उत्पादन व पूंजी का संके-न्द्रण,मुद्रा पूंजी के और भी ज़्यादा संकेन्द्रण के लिये,बड़े बैंकों के हाथों में इसके संकेन्द्रण,और वित्त पूंजी के पैदा होने व उसके विकास के लिये,एक आधार के रूप में भी काम करता है । पूंजीवाद के विकास के दौरान, एकाधिकारों के साथ-साथ,बैंक भी, एकाधिकारों व व्यापार-संस्थाओं की और इसके साथ-साथ छोटे उत्पादकों व विनियोजकों की मुद्रा-पूंजी को प्राप्त करके बहुत विकसित होते हैं । इस प्रकार बैंक,जो पूंजीपतियों के हाथों में हैं और उनकी सेवा करते हैं,मुख्य वित्तीय साधनों के मालिक बन जाते हैं ।

जो क्रियाविधि बड़े कारोबारों द्वारा,और उत्पादक-संघों व एकाधिकारों द्वारा छोटे कारोबारों के खात्मे के लिये

काम में लायी गयी थी,वही क्रियाविधि, एक के बाद एक, छोटे बैंकों के खात्मे के लिये भी काम में लायी गयी है । इस तरह,जैसे बड़े कारोबारों ने एकाधिकारों को पैदा किया था,ठीक वैसे ही बड़े बैंकों ने भी अपनी बैंकिंग-संस्थाओं को पैदा किया है । पिछले दो दशकों में, यह घटना अत्यधिक विशाल स्तर तक पहुंच गयी है,और इस समय भी,बड़ी तेज़ी के साथ,यही हो रहा है । इस समय बैंकों के बीच विलयनों व हड़पने की घटनाओं की खास विशेषता यह है कि,इन घट-नाओं में सिर्फ़ छोटे बैंक ही नहीं, बल्कि मध्यम स्तर के व आपेक्षिक रूप से बड़े बैंक भी ग्रस्त हैं । इस घटना का कारण पूंजीवादी पुनरुत्पादन के अन्तर्विरोधों की बढ़ती हुई तीव्रता, और प्रतिस्पर्धा के संघर्ष का विस्तार व पूंजीवादी दुनिया की वित्तीय व मुद्रा प्रणाली का भारी संकट है ।

संयुक्त राज्य अमरीका में छब्बीस बड़े वित्तीय गुटों का आधिपत्य है । उनमें से सबसे बड़ा मोर्गन गुट है,जिसमें २० बड़े बैंक,बीमा कम्पनियां,आदि हैं और जिसके पास ९० अरब डालरों की शेयर पूंजी है ।

बैंकिंग पूंजी के संकेन्द्रण व केन्द्रीयकरण का स्तर अन्य मुख्य पूंजीवादी देशों में भी बहुत ऊंचा है । पश्चिम जर्मनी में,सत्तर बड़े बैंकों में से तीन की सम्पत्ति सम्पूर्ण बैंकिंग सम्पत्ति का ५८ प्रतिशत से भी ज़्यादा है । बर्तानिया में सारी बैंकिंग क्रिया पर "बड़े चार" कहलाये जाने वाले चार बैंकों का नियन्त्रण है । बैंकिंग पूंजी के संकेन्द्रण का स्तर जापान और फ्रांस में भी ऊंचा है ।

लेनिन ने यह सिद्ध किया था कि बैंकिंग पूंजी औद्योगिक पूंजी के साथ अन्तर्ग्रंथित है । शुरू-शुरू में बैंक,उद्योगपतियों को दिये गये उधारों के परिणाम में ही रुचि रखते थे । वे यह

सुनिश्चित करने के लिये उद्योगपतियों के बीच मध्यस्थता करते हैं कि उधार प्राप्त करने वाले उद्योगपति प्रतिस्पर्धा से बचने के लिये आपस में समझौता करें क्योंकि इस प्रतिस्पर्धा से बैंकों को भी नुकसान होगा । औद्योगिक पूंजी के साथ अन्तर्ग्रंथित होने में यह बैंकों का पहला कदम था । उत्पादन व मुद्रा पूंजी के संकेन्द्रण के विकास से बैंक उत्पादन कारोबारों में सीधी तरह से विनियोग करते हैं,और संयुक्त-स्टाक कम्पनियों को स्थापित करते हैं । इस प्रकार, बैंकिंग पूंजी उद्योग,निर्माण, कृषि,परिवहन,वितरण के छेत्र और सभी अन्य छेत्रों में प्रवेश करती है । अपनी ओर से,कारोबार शेयर के बड़े धारणों को खरीदते हैं और बैंकों में भागीदार बन जाते हैं । आज बैंकों व एकाधिकारी कारोबारों के निर्देशक एक दूसरे के प्रबन्धन बोर्ड के सदस्य हैं,और इस तरह ये,जैसा कि लेनिन ने कहा था,"व्यक्तिगत संघ" बनाते हैं । इस क्रियाविधि से जो वित्त पूंजी उभरती है उसमें पूंजी के सभी रूप : औद्योगिक पूंजी, मुद्रा पूंजी, व उपभोग्य वस्तु पूंजी,शामिल हैं । इस क्रियाविधि का प्रतिपादन करते हुये,लेनिन ने कहा था कि :

"उत्पादन का संकेन्द्रण;इससे पैदा होने वाले एकाधिकार; बैंकों और उद्योगों का विलयन या जुड़ना — वित्त पूंजी के उभरने का यही इतिहास है,और इस धारणा का यही सार है ।" *

हालांकि,दूसरे विश्वयुद्ध के बाद वित्त पूंजी और भी बढ़ गयी है और उसमें संरचनात्मक परिवर्तन हुये हैं,लेकिन अभी भी

* वी०आई०लेनिन,संगृहीत रचनायें,ग्रंथ २२,पृष्ठ २७३ (अल्बेनिया संस्करण)

उसके लक्ष्य वही हैं जो हमेशा थे,यानि कि देश के भीतर व बाहर मेहनतकश लोगों के व्यापक जनसमुदाय के शोषण के जरिये अधिकतम मुनाफ़े बनाना । यही कार्यभाग बीमा कम्पनियों का भी है,जो हाल के सालों के दौरान मुख्य पूंजीवादी देशों में बहुत बढ़ गयी हैं और बैंकों की प्रतिद्वन्द्वी बन गयी हैं । उदाहरण के लिये,संयुक्त राज्य अमरीका में १९७० में बैंकिंग सम्पत्ति १९५० की तुलना में ३.५ गुणा बढ़ी,जब कि उसी अवधि में बीमा कम्पनियों की सम्पत्ति ६.५ गुना बढ़ी ।

लोगों को लूटकर एकत्र की गयी पूंजी के जरिये,ये कम्पनियां एकाधिकारों को दसियों करोड़ों डालरों तक की भारी रकमें दे सकी हैं । इस प्रकार,बीमा कम्पनियां औद्योगिक व बैंकिंग एकाधिकारों के साथ मिल व अन्तर्ग्रथित हो गयी हैं, और वित्त पूंजी का एक अंशभूत भाग बन गयी हैं ।

मुनाफ़ों के लिये अपनी अमिट प्यास से बाध्य होकर एकाधिकारी सरमायदार,अस्थायी तौर से उपलब्ध मुद्रा साधनों के सभी स्रोतों,जैसे कि मज़दूरों के पेंशन फ़ंड,लोगों की बचत, इत्यादि,को भी पूंजी में बदलते हैं ।

संकेन्द्रित वित्त पूंजी को सिर्फ़ व्यापार-संस्थाओं,छोटे उद्योगपतियों,इत्यादि,इत्यादि,से हड़पे हुये धन से बनाये गये मुनाफ़े से ही नहीं,बल्कि प्रतिभूतियों को जारी करने व उधारों को देने से भी अत्यधिक ज़्यादा आमदनी होती है । बचत जमा की ही तरह इस मामले में भी,मुनाफ़े का सिर्फ़ एक छोटा अंश ही प्रतिभूति खरीदने वालों के पास जाता है,जब कि बैंक स्वयं इन कामों से विशाल मुनाफ़े बनाता है,जिसके जरिये वह अपनी पूंजी व विनियोजनों को बढ़ाता है, जो,निस्सन्देह, वित्त पूंजी के लिये और भी मुनाफ़ों का एक निरन्तर बढ़ाव पैदा करते हैं । वित्त पूंजी,ज़्यादातर उद्योगों में विनियोग

लगाती है, लेकिन उसने सट्टेबाज़ी के अपने जाल को अन्य परि-सम्पत्तियों, जैसे कि ज़मीन, रेल, और अन्य शाखाओं व क्षेत्रों तक भी फैला दिया है ।

बैंक उन भारी रकमों में उधार दे सकते हैं जिनकी ज़रूरत उत्पादन के संकेन्द्रण व एकाधिकारों के आधिपत्य के ऊँचे स्तर के कारण पैदा हुई है । इस प्रकार, बड़े एकाधिकारी गुट के लिये, अधिकतम मुनाफ़े सुनिश्चित करने के वास्ते, देश व विदेश दोनों में मेहनतकश जनसमुदाय का ख़ूंख्वार शोषण बढ़ाने के लिये सुविधाजनक हालात पैदा किये जाते हैं ।

सोवियट संघ व अन्य संशोधनवादी देशों में पूंजीवाद की पुनस्थापना के साथ-साथ, वहां के बैंकों ने भी एकाधिकारों की सभी खास विशेषताओं को अपना लिया । सभी अन्य पूंजीवादी देशों की तरह इन देशों में भी बैंक, देश व विदेश दोनों में, मेहनतकश लोगों के व्यापक जनसमुदाय का शोषण करने के काम आते हैं ।

हाल के सालों में, पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों में किराया-खरीद अदायगी पर क्रय-विक्रय बहुत तेज़ी से बढ़ा है, जिसमें ग्राहक उपभोग्य वस्तुओं, खास तौर से टिकाऊ उप-भोग्य वस्तुओं को खरीदते हैं । ऐसे उधार सरमायदारों के लिये सामान बेचने के वास्ते बाज़ार सुनिश्चित करते हैं, ऊँचे ब्याज दर वसूल करके पूंजीपति बेहद मुनाफ़े बनाते हैं, जबकि कर्ज़दार, उधार देने वालों व पूंजीपति फ़र्मों के साथ पूरी तरह से बंध जाते हैं ।

बैंकों व उधार-देने-वाली संस्थाओं के प्रति मेहनतकश लोगों के कर्ज़ व अन्य आभार वर्तमान समय में बहुत ज़्यादा बढ़ गये हैं । सिर्फ़ संयुक्त राज्य अमरीका में ही, १९७६ में ऐसे उधारों से, जनसंख्या की कर्ज़दारी, १९४५ के ६ अरब डालरों की तुलना

में,१६७ अरब डालर तक पहुंच गयी,जब कि जर्मनी गणराज्य संघ में,जनसंख्या की कर्ज़दारी ४६ अरब मार्क से भी ज़्यादा थी ।

बैंकिंग पूंजी के बढ़ते हुये संकेन्द्रण व केन्द्रीयकरण के परिणामस्वरूप वित्तीय अल्प-जनाधिपत्यों का आर्थिक व राजनीतिक आधिपत्य बढ़ गया है,और मेहनतकश लोगों के व्यापक जनसमुदाय की आर्थिक पराधीनता,गरीबी व कष्ट को बढ़ाने के लिये अनेक रूपों व तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है ।

वित्तीय पूंजी के विकास ने,शक्तिशाली औद्योगिक पूंजीपतियों व बैंक मालिकों के एक छोटे गुट को, सिर्फ़ भारी सम्पत्ति एकत्रित करने में ही नहीं,बल्कि वास्तविक आर्थिक व राजनीतिक सत्ता को भी अपने हाथों में संकेन्द्रित करने में समर्थ बनाया है,जो देश के सम्पूर्ण जीवन में महसूस की जाती है । ये सर्व-शक्तिशाली लोग एकाधिकारों व बैंकों के प्रधान हैं और वित्तीय अल्पजनाधिपत्य संस्थापित करते हैं । इस तथ्य से शुरू होकर,कि बड़ी कम्पनियाँ अब शेयरधारियों की कम्पनियों में बदल गयी हैं, जिनमें कुछ मज़दूर भी नाममात्र के कुछ शेयर रख सकते हैं,पूंजीवाद के छमायाची यह सिद्ध करने की कोशिश करते हैं कि पूंजी अब अभिकथित रूप से वह निजी स्वभाव खो चुकी है,जो कि उसका स्वभाव उस समय था,जब मार्क्स ने "कैपिटल" लिखा था,या लेनिन ने साम्राज्यवाद का विश्लेषण किया था,और यह कि अब पूंजी,अभिकथित रूप से, लोगों की पूंजी बन गयी है । लेकिन यह एक झूठी कहानी है । आज भी,पहले ही की तरह,शक्तिशाली निजी-औद्योगिक वित्तीय गुट साम्राज्यवादी देशों पर आधिपत्य रखते हैं : संयुक्त राज्य अमरीका में रोकेफ़ेलर्स,मोर्गन्स,ड्युपोंट्स,मेलन्स, फ़ोर्ड्स, दी शिकागो,टेक्सास,केलिफ़ोर्निया और अन्य गुट;

बर्तानिया में रौथचाइल्डस,बेहरिंग्स,सेमुएल्स,आदि के वित्तीय गुट;पश्चिम जर्मनी में क्रूप,सीमेन्स,मेन्नेसूमेन,थैस्सेन,गर्लिंग,आदि के वित्तीय गुट,इटली में फ़ियट,आल्फ़ा-रोमियो,मोण्टेडिसोन्, ओलिवेट्टी,आदि के वित्तीय गुट;फ्रांस में प्रसिद्ध परिवार; इत्यादि,इत्यादि ।

औद्योगिक व वित्तीय पूंजी के मालिक होने के नाते वित्तीय अल्प-जनाधिपत्य ने देश के सम्पूर्ण जीवन में अपना आर्थिक व राजनीतिक आधिपत्य स्थापित कर लिया है । उसने राज उपकरण को भी अपने अधीनस्थ कर लिया है,जिसे, वित्तीय धनिकतन्त्र के हाथों में,उसके हितों के लिये एक साधन बना दिया गया है । वित्तीय अल्प-जनाधिपत्य सरकारों को रद्द व नियुक्त करता है,और घरेलू व विदेशी नीति को बनाता है । देश के भीतर,वह प्रतिक्रियावादी दलों के साथ, और उसकी राजनीतिक व आर्थिक सत्ता की रक्षा करने वाली सभी राजनीतिक,विचारधारात्मक,शैक्षणिक व सांस्कृतिक संस्थाओं के साथ,जुड़ा हुआ है,जबकि विदेश नीति में, उसके एकाधिकारी प्रसार का समर्थन व उसके लिये रास्ता खोलने वाले,और पूंजीवाद को बनाये रखने और मज़बूत बनाने के लिये लड़ाई करने वाले सभी रूढ़िवादी व प्रतिक्रियावादी दलों की रक्षा करता है और उन्हें टेक देता है ।

वित्तीय अल्प-जनाधिपत्य,अपना आधिपत्य जमाने के लिये किसी भी साधन का इस्तेमाल करने से नहीं हिचकिचाता है, और सभी छेत्रों में राजनीतिक प्रतिक्रिया को स्थापित करता है ।

"...वित्त पूंजी",लेनिन ने कहा था,"स्वतन्त्रता के लिये नहीं,बल्कि आधिपत्य जमाने के लिये कोशिश करती है ।"*

इस समय की परिस्थिति यह सिद्ध करती है कि एकाधिकारी सरमायदारों द्वारा अत्याचार सभी जगह और भी तीव्र कर दिया गया है । इस आधार पर, सर्वहारा और सरमायदारों के बीच अन्तर्विरोध और भी गहरा हो रहा है । इसके साथ-साथ, आर्थिक व वित्तीय प्रसार और राजनीतिक व सैनिक प्रसार ने भी लोगों और साम्राज्यवाद के बीच के अन्तर्विरोधों, और स्वयं साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच के अन्तर्विरोधों को और भी तीव्र कर दिया है । चीनी संशोधनवादियों का वर्तमान प्रचार इस अकाट्य वस्तुगत वास्तविकता की अवहेलना करता है ।

बैंकिंग पूंजी का संकेन्द्रण व केन्द्रीयकरण, अब सिर्फ एक देश के संदर्भ में ही नहीं, बल्कि अनेक पूंजीवादी, या पूंजीवादी और संशोधनवादी देशों के संदर्भ में हो रहा है । यूरोपियन कामन मार्केट के संयुक्त बैंक, या "अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक सहयोग बैंक", और इसके साथ-साथ कोमिकोन का "विनियोजन बैंक" इसी तरह के बैंक हैं । इसी प्रकार, पश्चिम जर्मनी-पोलैण्ड या एंगलो-रूमानिया, फ्रांस-रूमानिया या एंगलो-हंगरी के संयुक्त बैंक, या अमरीका-युगोस्लाविया, एंगलो-युगोस्लाविया या अन्य बैंकिंग निगम पूंजीवादी किस्म के बैंकिंग संघ हैं ! सोवियट संघ ने अनेक पूंजीवादी देशों में कई बैंक खोले हैं, और ये बैंक, जहां कहीं भी, जूरिख, लन्दन, पेरिस, अफ्रीका, लैटिन अमरीका में, और दूसरी जगह पर स्थापित किये गये हैं, पूंजीवादी बैंकों के प्रतिस्पर्द्धी और भागीदार बन गये हैं ।

चीन भी, बैंकों के पूंजीवादी एकीकरण की इस क्रियाविधि के भंवर में गहरे से गहरे फंसता जा रहा है । हांग-कांग,

---

• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रंथ २३, पृष्ठ १२४ (अल्बेनिया संस्करण)

मेकाओ व सिंगापुर में अपने बैंकों के अलावा, चीन कल को जापान, अमरीका व अन्य जगहों में भी बैंक स्थापित करेगा। इसके साथ ही साथ, वह साम्राज्यवादी सत्ताओं के बैंकों को चीन में प्रवेश करने की इजाज़त दे रहा है।

लेनिन ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि पूंजी का निर्यात वर्तमान पूंजीवाद की विशेषता है। आज साम्राज्यवाद की यह आर्थिक विशेषता और भी विकसित व मज़बूत की गयी है। आज दुनिया में पूंजी के सबसे बड़े निर्यात करने वाले देश हैं, संयुक्त राज्य अमरीका, जापान, सोवियट संघ, जर्मन गण-राज्य संघ, बर्तानिया व फ्रांस।

कुछ समय के लिये, संयुक्त राज्य अमरीका, बर्तानिया, फ्रांस व जर्मनी जैसे विकसित उद्योग वाले देशों द्वारा पूंजी का निर्यात किया गया था, जिन्होंने उपनिवेशों से ज़मीन की सम्पन्नता व ज़मीन के नीचे की सम्पत्ति को लूटा। बाद में, युद्ध व संकट के परिणामस्वरूप, कुछ साम्राज्यवादी शक्तियां, जैसे कि बर्तानिया, फ्रांस, जर्मनी, आर्थिक रूप से कमज़ोर हो गये, जबकि अमरीकी साम्राज्यवाद ने अपने आपको और भी धनी बनाया और वह एक महाशक्ति बन गया। दूसरे विश्व युद्ध के बाद पैदा हुई स्थिति में, अमरीकी पूंजी के निर्यात का प्रवेग अन्य पूंजीवादी सत्ताओं के लिये बहुत हानिकारक था।

इस समय, अमरीकी पूंजी सभी देशों को, यहां तक कि औद्यो-गीकृत देशों को भी, विनियोजनों, उधारों, व कर्ज़ों के रूप में, संयुक्त कम्पनियों में सहयोग के रूप में या बड़ी औद्योगिक कम्पनियों को स्थापित करने के जरिये निर्यात की जाती है। अमरीकी साम्राज्यवाद, एकाधिकारी पूंजी, अविकसित व गरीब देशों में विनियोग लगाता है, क्योंकि वहां उत्पादन लागत

बहुत कम है,जबकि मेहनतकश लोगों का अत्यधिक शोषण किया जाता है। वह कच्चे पदार्थों को प्राप्त करने के लिये,बाज़ारों पर एकाधिकार जमाने के लिये,और अपने औद्योगिक माल को बेचने के लिये विनियोग लगाता है ।

यह जाना जाता है कि पूंजीवादी देशों का विकास असम रूप से होता है,इसलिये संयुक्त राज्य अमरीका व अन्य देशों के बड़े एकाधिकार व कम्पनियाँ ठीक उन देशों को पूंजी निर्यात करते हैं,जहाँ आर्थिक विकास के लिये विनियोजनों व तकनालोजी की आवश्यकता है ।

विनियोग की गयी पूंजी वित्तीय व्यापार-संस्थाओं व एकाधिकारों के लिये जबरदस्त मुनाफ़े लाती है,क्योंकि गरीब, अविकसित देशों में ज़मीन बहुत सस्ती होती है,और उसके बड़े छेत्रों को उसकी सम्पन्नताओं के सहित,बहुत थोड़े पैसे से खरीदा जा सकता है । श्रम शक्ति भी सस्ती है,क्योंकि भुखमरी की स्थिति में लोगों को बहुत कम वेतन पर काम करने के लिये मजबूर किया जाता है । यह गणना की गयी है,कि इन देशों में विनियोग किये गये हर डालर पर,साम्राज्यवादी सत्तायें ५ डालर का मुनाफ़ा बनाती हैं ।

अमरीकी सरकारी आंकड़ों के अनुसार,सिर्फ़ १९७१-१९७२ की अवधि में ही, संयुक्त राज्य अमरीका से नये राज्यों में सीधे तौर पर किये गये विनियोजन ६.५ अरब डालर के थे, जबकि उसी अवधि में इन देशों से प्राप्त मुनाफ़ा लगभग ३० अरब डालर था ।(१)

पूंजी के निर्यात को छुपाने के लिये,साम्राज्यवादी सत्तायें

---

(१) अमरीकी समीक्षा-पत्र "सर्वे आफ़ बिज़नेस",पृष्ठ ४४, अगस्त १९७६

उधार देने का अभ्यास भी करती हैं। इन तथा-कथित उधारों या सहायता के जरिये, बड़ी पूंजीपति व्यापार-संस्थायें और उनके राज उधार प्राप्त करने वाले राज व लोगों पर भारी दबाव डालते हैं और उनपर अपना नियन्त्रण रखते हैं। अविकसित देशों को दी गयी "सहायता" या उधार, इन देशों की सम्पत्ति की लूट से और इसके साथ-साथ विकसित देशों में मेहनतकश जनसमुदाय के शोषण से आती है, और यह अविकसित देशों के अमीर लोगों को दी जाती है। दूसरे शब्दों में, उदाहरण के तौर पर, इसका अर्थ है कि बड़े अमरीकी एकाधिकार अमरीकी लोगों और अन्य लोगों दोनों ही के पसीने पर मोटे होते हैं, और जब ये एकाधिकार पूंजी का निर्यात करते हैं व उधार देते हैं, तब यह पूंजी व उधार इन्हीं लोगों का खून व पसीना है। दूसरी ओर, बड़े एकाधिकारों द्वारा तथा-कथित तीसरी दुनिया के देशों को दिये गये ये उधार, वास्तव में, इन देशों पर शासन करने वाले सामन्तिक-सरमायदारी वर्गों के काम आते हैं।

नये राज्यों द्वारा प्राप्त उधार, इन राज्यों के लोगों के गले में पड़ी साम्राज्यवादी जंजीर की कड़ियां हैं। जैसा कि सांख्यिकी आंकड़े दिखाते हैं, इन देशों का कर्ज हर पांच साल में दुगुना हो जाता है। साम्राज्यवादी सत्ताओं के प्रति अविकसित देशों का कर्ज १९५५ में लगभग ८.५ अरब डालर था, जब कि १९७७ में यह कर्ज १५० अरब डालर से भी ज्यादा हो गया।

विश्व पूंजीवाद ने भूमिगत साधनों की खोज, कृषि के तीव्रीकरण, इत्यादि, से अपने मुनाफों को बहुत अधिक बढ़ाने के लिये, अपने ही हितों में तकनालाजी व विशेषज्ञता का विकास किया है। यह सब तकनालाजी, तकनीकी-वैज्ञानिक क्रान्ति, और

आर्थिक शोषण के नये तरीके, लोगों की नहीं बल्कि साम्राज्यवाद व पूंजीपति एकाधिकारों की सेवा करते हैं। पूंजीवाद, पहले अपने मुनाफ़ों को आंके बिना कभी भी विनियोजन, या दूसरे देशों को उधार या पूंजी का निर्यात नहीं करता है। बड़े एकाधिकार व बैंक, जिन्होंने सम्पूर्ण पूंजीवादी व संशोधनवादी दुनिया पर मकड़ी जैसा अपना जाल फैला दिया है, तब तक उधार नहीं देते हैं, जब तक उन्हें किसी खान, ज़मीन के शोषण, या किसी रेगिस्तान से तेल या पानी के निष्कासन आदि से होने वाले मुनाफ़े के बारे में यथार्थ आंकड़े न पेश किये जायें।

उधार देने के दूसरे रूप भी हैं, जैसे कि वे रूप जो पूंजीवादी रास्ते पर चलने वाले उन छद्म-समाजवादी राज्यों, जो इस रास्ते को छुपाने की कोशिश कर रहे हैं, के साथ अभ्यास में लाये जा रहे हैं। ये हैं, व्यापारिक उधार के रूप में दिये जाने वाले बड़ी संख्या में उधार, जिनकी अदायगी, निस्सन्देह, थोड़े से समय में ही करनी पड़ती है। ये अनेक पूंजीवादी देशों द्वारा संयुक्त रूप से दिये जाते हैं, जो देश पहले से ही, उधार प्राप्त करने वाले राज्यों की आर्थिक छमता व अदायगी करने के उनके सामर्थ्य को ध्यान में रखते हुये, इन राज्यों से प्राप्त किये जाने वाले आर्थिक व इसके साथ-साथ राजनीतिक लाभ की गणना करते हैं। किसी भी हालत में पूंजीपति समाजवाद के निर्माण के लिये उधार नहीं देते हैं। वे समाजवाद को नष्ट करने के लिये उधार देते हैं। इसलिये, एक सच्चा समाजवादी देश कभी भी, किसी भी रूप में किसी पूंजीवादी, सरमायदारी या संशोधनवादी देश से उधार नहीं लेता है।

ख्रुश्चेव-अनुयायी सोवियट संशोधनवादियों की ही तरह, चीनी संशोधनवादी भी, "लेनिनवादी", "क्रान्तिकारी" दिखने वाले अनेक नारों, अनेक उद्धरणों का इस्तेमाल करते हैं व अनेक

शब्दावलियों को बनाते हैं, लेकिन उनकी वास्तविक क्रिया प्रतिक्रियावादी व प्रतिक्रान्तिकारी है । चीनी नेता साम्राज्यवादी देशों के प्रति अपनी मौकापरस्त विचार-पद्धतियों, व उनके साथ अपनी साँठगाँठ को भी इस तरह प्रस्तुत करते हैं, जैसे कि ये समाजवाद के हित में हों । ये संशोधनवादी सर्वहारा व लोगों के जनसमुदाय को अंधकार में रखने के इरादे से इस पर्दे का इस्तेमाल करते हैं, ताकि लोग अपने असंतोष को, क्रान्ति को कार्यान्वित करने के लिये एक शक्तिशाली साधन में न बदल सकें ।

अब हम उदाहरण के लिये, देश के आर्थिक निर्माण, स्वयं अपनी शक्तियों पर निर्भर होकर समाजवादी अर्थव्यवस्था के विकास के सवाल को लेते हैं । यह सिद्धान्त सही है । हर स्वतन्त्र, सम्पूर्ण-सत्ताधारी समाजवादी राज्य को सम्पूर्ण लोगों को गतिमान करना चाहिये, और अपनी आर्थिक नीति को सही तरह से निश्चित करना चाहिये, देश की सभी सम्पत्ति के उचित व सबसे युक्तिपूर्ण इस्तेमाल के लिये सभी उपाय करने चाहियें, और इस सम्पत्ति की किफ़ायती के साथ व्यवस्था करनी चाहिये, इसे अपने ही लोगों के हितों में बढ़ाना चाहिये, और इसे दूसरों द्वारा लूटने नहीं दिया जाना चाहिये । यह हर समाजवादी देश के लिये मुख्य, मूलभूत दिशा है, जब कि विदेश से सहायता, अन्य समाजवादी देशों से सहायता संपूरक है ।

दो समाजवादी देश एक दूसरे को जो उधार देते हैं उनका बिल्कुल भिन्न स्वभाव होता है । ये उधार स्वार्थरहित अन्तर्राष्ट्रीयतावादी सहायता है । अन्तर्राष्ट्रीयतावादी सहायता कभी भी पूंजीवाद को पैदा नहीं करती है, जनसमुदाय को कभी भी निर्धन नहीं बनाती है, बल्कि इसके विपरीत,

यह उद्योग व कृषि के विकास में मदद देती है, उनके सामंज-स्यीकरण के काम आती है, मेहनतकश जनसमुदाय की खुशहाली को बढ़ाती है व समाजवाद को मज़बूत करती है ।

सबसे पहले, आर्थिक तौर पर विकसित समाजवादी राज्यों को अन्य समाजवादी देशों की सहायता करनी चाहिये । इसका यह मतलब नहीं है कि एक समाजवादी देश को अन्य गैर-समाजवादी देशों के साथ सम्बन्ध नहीं बनाना चाहिये । लेकिन ये पारस्परिक हित के आधार पर आर्थिक सम्बन्ध होने चाहिये और इन सम्बन्धों के कारण एक समाजवादी या किसी भी अन्य गैर-समाजवादी देश की अर्थव्यवस्था को किसी भी तरह ज़्यादा शक्तिशाली देशों पर निर्भर नहीं बनना चाहिये । अगर राज्यों के बीच के ये सम्बन्ध बड़े व शक्तिशाली राज्यों द्वारा, छोटे व आर्थिक तौर पर कमज़ोर राज्यों के शोषण पर आधारित हैं, तो ऐसी "सहायता" को अस्वीकार किया जाना चाहिये क्योंकि यह लोगों को गुलाम बनाती है ।

लेनिन बताते हैं वित्त पूंजी ने, यथार्थ में, दुनिया के सभी देशों पर अपना जाल फैला दिया है । पूंजीपतियों के एका-धिकार, उत्पादक-संघ व व्यवसायी-संघ बाकायदा काम करते हैं, सबसे पहले वे अपने ही देश के घरेलू बाज़ार पर कब्ज़ा करते हैं, उद्योग व कृषि को अपने नियन्त्रण में लाते हैं, मज़दूर वर्ग व अन्य मेहनतकश लोगों को गुलाम बनाते हैं, अत्यधिक मुनाफ़े बनाते हैं, और फिर दुनिया-भर के बाज़ारों पर एकाधिकार जमाने की भारी सम्भावनाओं को पैदा करते हैं । वित्त पूंजी इसमें सीधे तौर पर कार्यभाग निभाती है ।

आज हम देखते हैं, और यह पूंजीवाद की अंतिम कार्यावस्था साम्राज्यवाद के बारे में दी गयी लेनिन की शिक्षाओं के अनुकूल है, कि दोनों महाशक्तियां, अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट

सामाजिक-साम्राज्यवाद,बाज़ारों पर कब्ज़ा करने के लिये दुनिया के बंटवारे पर प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं । उदाहरण के लिये,तेल की समस्या,जो दुनिया भर में तीव्र होती जा रही है,सबसे पहले बड़ी अमरीकी एकाधिकार कम्पनियों के कार्यक्षेत्र हैं,लेकिन बर्तानवी,डच व अन्य तेल कम्पनियां भी इन कार्यक्षेत्रों में काम कर रही हैं । अमरीकी कम्पनियां तेल पर पूरा एकाधिकार जमाने के लिये इस समस्या पर चालाकी कर रहे हैं । उन्होंने तेल उत्पादन करने वाले देशों, जैसे कि साउदी अरब,ईरान, आदि,में बड़ी पूंजी का विनियोजन किया है, और बड़े पैमाने पर उपकरणों को स्थापित किया है, और राजाओं,शेखों व इमामों को बड़ी संख्या में डालरों की घूस देकर, इन देशों के शासक गुटों को अपनी मुट्ठी में कर लिया है । तेल उत्पादन करने वाले देशों के शासकों को इन देशों के वित्तीय धनिकतन्त्र द्वारा संयुक्त राज्य अमरीका,बर्तानिया व अन्य जगहों में विनियोजन करने की, और यहां तक कि विभिन्न एकाधिकार कम्पनियों,और इसके साथ-साथ ऐयाश होटलों,कारखानों आदि में शेयरों को खरीदने की भी इज़ाज़त देते हैं ।

उदाहरण के लिये,साउदी अरब एक अर्ध-सामन्तिक देश है, जहां गरीबी व प्रगति-विरोध छाये हुये हैं,हालांकि वह ४२ करोड़ टन तेल प्रति वर्ष निकालता है । जब कि मेहनतकश जनसमुदाय गरीबी में जीवन बसर करते हैं,राजा व बड़े ज़मींदार वर्ग ने सिर्फ़ वाल स्ट्रीट बैंकों में ही ४० अरब डालरों से भी ज़्यादा जमा कर लिया है । कुवैत, संयुक्त अरब एमीरेट्स व दूसरी जगहों में भी यही परिस्थिति है । ये गुट,मुनाफ़े का एक हिस्सा स्वयं प्राप्त करने के उद्देश्य से, अपने ही देशों के लोगों की परिसम्पत्ति को लूटने के लिये साम्राज्यवादियों

को सभी तरह की रियायतें देते हैं ।

तेल उत्पादन करने वाले देशों द्वारा किये गये विनियोजन, जो कि शासक गुटों की सम्पत्ति हैं, इन गुटों की पूंजी को अमरीकी या बर्तानवी पूंजी के साथ, निस्सन्देह एक बहुत छोटे स्तर पर, मिलते हैं । बाहरी रूप से ऐसा लगता है जैसे कि तेल उत्पादन करने वाले देशों के शासक गुट अमरीकी, बर्तानवी या फ्रांसीसी साम्राज्यवाद के साथ विनियोजनों की साझेदारी में हों और ये गुट अभिकथित रूप से इनकी अर्थव्यवस्था पर प्रभाव डालते हों । वास्तव में, स्थिति इसके ठीक विपरीत है । अमरीकी साम्राज्यवादियों व अन्य साम्राज्यवादियों के मुनाफ़े इन गुटों को दिये जाने वाले मुनाफ़ों की तुलना में बहुत ही ज़्यादा हैं । यह वर्तमान नव-उपनिवेशवाद की एक विशेषता है, जो कुछ देशों की सम्पत्तियों का अधिकतम शोषण करने के लिये, सरमायदार-पूंजीपति या सामन्तिक शासक गुटों के पक्ष में सतर्कता के साथ कुछ रियायतें देते हैं, जो कि निस्सन्देह खुद उनके लिये हानिकारक नहीं होती है । यह उदाहरण लेनिन के इस दावे की सत्यता की पुष्टि करता है, कि विभिन्न देशों के सरमायदारों के हित बहुत आसानी के साथ अन्तर्ग्रथित हो सकते हैं, ठीक उसी तरह जैसे निजी एकाधिकारों के हित राज एकाधिकारों के हितों के साथ अन्तर्ग्रथित हो सकते हैं । बड़े एकाधिकार उन एकाधिकारों के साथ भी मिल सकते हैं, जो कम शक्तिशाली हैं, लेकिन जो बहुत सारी बहुमूल्य परि-सम्पत्तियों, खास तौर से भूमिगत पदार्थों जैसे कि लोहा, क्रोमियम, तांबा, यूरेनियम, व अन्य खानों पर नियन्त्रण रखते हैं ।

सरकारी कर्जे, उधार व सहायता इस समय पूंजी के निर्यात के सबसे ज़्यादा प्रचलित रूपों में एक हैं । इस प्रकार का निर्यात, खास तौर से सोवियट संघ व अन्य संशोधनवादी देशों

द्वारा अभ्यास में लाया जाता है ।

पूंजीपति मुनाफ़ों को चूसने के अलावा, इन उधारों, इस "सहायता" व कर्ज़ों के राजनीतिक उद्देश्य भी हैं । उधार देने वाले राज्यों का लक्ष्य ऐसे खास गुटों की राजनीतिक व आर्थिक सत्ता का समर्थन व दृढ़ीकरण करना है जो गुट उनके आर्थिक, राजनीतिक व सैनिक हितों की रक्षा करते हैं । जैसे-जैसे सरकारों के बीच ऐसे उधारों पर समझौते तय किये जाते हैं, तैसे-तैसे ये उधार, उधार पाने वाले देश की उधार देने वाले देश पर आर्थिक व राजनीतिक निर्भरता को और भी बढ़ा देते हैं । पूंजी के निर्यात के इस रूप का एक सबसे बढ़िया उदाहरण है "मार्शल प्लान", जो दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पश्चिम यूरोप के देशों में संयुक्त राज्य अमरीका के राजनीतिक व सैनिक प्रसार के लिये आर्थिक आधार था । हिन्दुस्तान, इराक जैसे देशों व अन्य देशों में अभिकथित रूप से अर्थव्यवस्था के विकास, व उद्योग के राज छेत्रक की स्थापना, के लिये सोवियट संशोधनवादियों द्वारा दी तथाकथित सहायता भी ऐसी ही है ।

वर्तमान समय में, अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, व औद्योगीकृत देशों का पूंजीवाद विकास एक ऐसी कार्यावस्था तक पहुंच गया है, कि पूंजी के जमा होने से वे जो मुनाफ़ा बनाते हैं वह अत्यधिक बढ़ गया है । पूंजी का जमा होना भारी मुनाफ़ों को पैदा करता है, जो एकाधिकारियों, वित्तीय अल्पजनाधिपत्य, की जेबों में जाता है, जो इस आय को गरीबी से मारे मेहनतकश लोगों के हितों में नहीं लगाते हैं, बल्कि इसका निर्यात उन देशों को करते हैं, जिनसे उन्हें, दूसरे और भी भारी मुनाफ़े मिल सकें । ये वे देश हैं, जिन्हें चीन "तीसरी दुनिया" का नाम देता है । लेकिन,

एकाधिकारी व वित्तीय अल्पजनाधिपत्य विकसित पूंजीवादी देशों में भी इस तरह के विनियोजन लगाते हैं ।

यूरोप में अमरीकी पूंजी के प्रवेश की क्रियाविधि और उसके राजनीतिक व आर्थिक लक्ष्यों के बारे में अनेक किताबें लिखी गयी हैं । इसका एक स्पष्ट चित्रण अमरीकी लेखक जिओफ़े ओवेन द्वारा लिखी गयी किताब में किया गया है । "अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियां" शीर्षक अध्याय के आरम्भ में वह बताता है कि विदेश में अमरीकी विनियोजन का विकास इस धारणा के अनुसार किया गया है, कि अमरीकी फ़र्म विदेश में स्वार्थ रखने वाली कम्पनिया नहीं, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियां हैं । इन कम्पनियों का मुख्य कार्यालय संयुक्त राज्य अमरीका में है । इसका मतलब यह है कि बड़े अमरीकी फ़र्म सिर्फ़ अपने खुद के देश में पूरी तरह से फैलना, और इसके उद्योग व गाहक की ज़रूरतों को पूरा करना ही नहीं चाहते हैं बल्कि विदेशी देशों में भी अपना जाल फैलाना चाहते हैं । ये कम्पनियां और भी ज़्यादा मुनाफ़ा बनाने के लिये अपनी "अतिरिक्त पूंजी" का विनियोजन दूसरे देशों में करती हैं । "सोकोनी मोबिल", "स्टैण्डर्ड आयल आफ़ न्यू जर्सी" आदि जैसे विशालकाय निगम अपने मुनाफ़े का लगभग आधा विदेशी देशों की लूट व शोषण से बनाते हैं । लगभग ५०० कम्पनियां विदेश से हर साल लगभग १० अरब डालर का मुनाफ़ा बनाती हैं । विदेशी देशों में विनियोजन करने वाले ३००० से भी ज़्यादा ऐसे कारोबार हैं । यही कारण है कि "बहुराष्ट्रिक कम्पनियां" या "अन्तर्राष्ट्रीय पूंजीवाद", आदि, जैसे सूत्रों व नामों का प्रयोग पत्रकारिता व बैंकिंग कार्यों में दिन-प्रतिदिन किया जा रहा है ।

जिओफ़े ओवेन बताता है कि १९२९ में यूरोप की १३००

से भी ज्यादा कम्पनियाँ अमरीकी फ़र्मों की मिल्कियत या उनके नियन्त्रण में थीं । यह यूरोप के उद्योग पर अमरीकी हमले की पहली कार्यविस्था थी । दूसरे विश्व युद्ध, जिसकी तैयारी की जा रही थी, के दबाव ने अमरीकी पूँजी के हमले को कुछ समय के लिये रोक दिया था । १९२९ से १९४६ तक दुनिया के दूसरे देशों में अमरीकी कम्पनियों के सीधे विनियोजन ७५० करोड़ से ७२० करोड़ डालर तक गिर गये। लेकिन दूसरे विश्व युद्ध के बाद, १९५० में, विदेश में अमरीकी विनियोजन ११२० करोड़ तक बढ़ गया, जिसमें से आधा लैटिन अमरीका के देशों व कनाडा में लगाया गया था । लैटिन अमरीका में विनियोजन कच्चे पदार्थों : तेल, ताँबा, कच्चा लोहा, बाक्साइट, और इसके साथ-साथ केले व अन्य कृषि उत्पादों का शोषण करने के लिये किये गये थे । कनाडा में विनियोजन मुख्य रूप से खदान व तेल के छेत्र में किये गये थे और नज़दीक होने व प्रवेश को सुविधाजनक बनाने वाली अन्य स्थितियों के कारण इनका विकास एक व्यापक स्तर पर हुआ ।

१९५० में यूरोप भी अमरीकी विनियोजनों के लिये एक और महत्वपूर्ण निशाना बना । इस महाद्वीप में संचार, पुंज उत्पादन की वस्तुओं व जटिल यन्त्रों के छेत्र में विनियोजनों का बड़ी तेज़ी के साथ विस्तार किया गया । विनियोजनों के साथ-साथ, अमरीकी वस्तुओं व उत्पादों को भी भारी मात्रा में लाया गया ।

लेखक, जिसकी हम बात कर रहे हैं, ने यह बताया कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद पूँजीवादी बाज़ार में जो स्थिति पैदा हुई उससे अमरीकी विनियोजनों को और भी ज्यादा आवेग मिला । विदेश में इन विनियोजनों की वृद्धि के आँकड़े ये हैं : १९४६ में ये कुल ७२० करोड़ डालर थे, और उसके बाद ये बढ़ने

लगे और १९५० में ११२० करोड़, १९६४ में ४४३० करोड़ और १९७७ में ६००० करोड़ तक पहुंच गये ।

एक विश्वव्यापी स्तर पर अपने कार्यों को बेरोक बढ़ाकर, अमरीकी कम्पनियों ने स्थानीय फ़र्मों के साथ अपनी प्रतिस्पर्धा को और भी तीव्र कर दिया है और विशालकाय अमरीकी कम्पनियों द्वारा आधिपत्य जमाये जाने के भय को बढ़ा दिया है । यह समस्या अविकसित देशों में और भी ज़्यादा तीव्र है, जहाँ उद्योग के मुख्य छेत्रों पर अमरीकी फ़र्मों का आधिपत्य है और जिन देशों की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में ये अमरीकी फ़र्म बहुत अधिक प्रभाव डालते हैं । दूसरे शब्दों में ये विशालकाय अमरीकी कम्पनियाँ स्थानीय अर्थ-व्यवस्था व सरकारों का नियन्त्रण करती हैं और वास्तव में उनको चलाती हैं ।

अमरीकी तेल कम्पनियों व मेक्सिको की सरकार के बीच जो लम्बा संघर्ष हुआ था और जो १९३८ में मेक्सिको सरकार की विरोध नीति की हार के साथ ख़त्म हुआ, उसके बारे में सब जानते हैं । बर्तानवी तेल एकाधिकार व ईरान की सरकार के बीच के संघर्ष का भी परिणाम ऐसा ही था, जिस संघर्ष का नतीजा था मोस्सादिक की सरकार का उलट दिया जाना । बरबादी लाने वाले ये संघर्ष हर समय जारी हैं और इनका नतीजा होता है बड़े अमरीकी ट्रस्टों की विजय ।

बड़ी तेल कम्पनियाँ दुनिया भर में काम करती हैं । जिन देशों में उन्होंने विनियोजन किया है, वहाँ इस शाखा की सारी पूंजी व उत्पादन पर पूरी तरह से नियन्त्रण करना, वहाँ की सरकारों पर नियन्त्रण करना, आदि, उनके लिये स्वाभाविक व आवश्यक हो गया है, क्योंकि यदि उनके पास ये सम्भावनायें नहीं होंगी तो एक विश्व स्तर पर उनकी क्रियाओं के तालमेल में कठिनाइयां पैदा होती हैं । यही

कारण है कि बड़ी विदेशी कम्पनियां, अमरीकी या अन्य साम्राज्यवादी देशों के विनियोजकों द्वारा दिये गये मुनाफ़े के हिस्से से ज़्यादा पाने की स्थानीय पूंजीपतियों की कोशिशों का विरोध करती हैं ।

यूरोप, कनाडा, एशिया अफ़्रीका व अन्य जगहों में अमरीकी कम्पनियों ने ऐसी स्थिति पैदा की है, कि अभ्यास में वे अनेक देशों की अर्थव्यवस्थाओं पर नियन्त्रण करती हैं । इन देशों की सरकारों को संयुक्त राज्य अमरीका से बड़ा भय है, जिसने अपने आपको यूरोप की अर्थव्यवस्था का लीडरशिप• बना दिया है, ठीक उसी तरह जैसा कि उसने सैनिक मामलों में भी किया है । इसलिये यूरोप के औद्योगीकृत पूंजीवादी देश अमरीकी पूंजी के हमलों को रोकने की कोशिश कर रहे हैं जो इन देशों में और भी ज़्यादा से ज़्यादा प्रवेश करती रही है व कर रही है ।

चीनी नेतृत्व दावा करता है कि १९वीं शताब्दी से ही औद्योगीकृत यूरोप के राज्य संयुक्त राज्य अमरीका में और भी ज़्यादा विनियोजन कर रहे हैं । लेकिन यह जाना जाता है कि जब कि संयुक्त राज्य में यूरोप की पूंजी का विनियोजन मुख्य तौर से प्रतिभूतियों, शेयरों, बाण्डों, जमा-पूंजी इत्यादि के रूप में किया जाता है, यूरोप में अमरीकी विनियोजन, यूरोप की अर्थव्यवस्था की सबसे महत्वपूर्ण शाखाओं में आधिपत्य रखते हैं ।

अमरीकी विनियोजनों की वृद्धि को उचित ठहराने की कोशिश करते हुये, जिओफ़े ओवेन यह दावा करता है कि यूरोप के देश वैज्ञानिक आधार पर अपने उद्योगों, जैसे कि, उदाहरण के लिये, इलेक्ट्रानिक्स व कम्प्यूटर उद्योगों, का विकास करना चाहते

• मूलप्रति में अंग्रेज़ी में

हैं और इसकी कोशिश कर रहे हैं। ये उद्योग कुछ हद तक इन देशों की तकनीकी प्रगति, निर्यातों की वृद्धि व समस्त आर्थिक वृद्धि में योगदान देते हैं । लेकिन इस छेत्र में अमरीकी कम्पनियां अपने यूरोपीय प्रतिद्वन्द्वियों की अपेक्षा ज़्यादा उन्नत हैं और वे अपने ही हितों में इस तकनीकी प्रगति का नियन्त्रण करती हैं ।

उदाहरण के लिये, कम्प्यूटर उत्पादन के छेत्र में, यूरोप की इस छेत्र की कम्पनियों ने, अमरीकी "इण्टरनेशनल बिज़नेस मशीन" (आई०बी०एम०) निगम, जिसका अमरीकी बाज़ार के ७० प्रतिशत से भी ज़्यादा और विश्व बाज़ार के इससे भी ज़्यादा बड़े भाग पर नियन्त्रण है, की प्रतिस्पर्धा से अपने आपको बचाने के लिये आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर लिया है ।

इसी प्रकार, अमरीकी कम्पनियों की, स्थानीय कम्पनियों के साथ, संयुक्त व्यापार शुरू करने की प्रवृत्ति है । अपने द्वारा किये गये शोषण को छुपाने के लिये, अनेक फ़र्में सहायक कम्पनियों को सौ प्रतिशत मिलकियत के आधार पर स्थापित करने की बजाये, ४९-५१ प्रतिशत या ५०-५० प्रतिशत संयुक्त विनियोजन के आधार पर स्थापित करती हैं। अमरीकियों ने जापान में यही ढंग अपनाया है, और युगोस्लाविया में भी उन्होंने ऐसा ही किया है, जो यह मत पैदा करना चाहता है कि वह अपनी ही शक्तियों पर निर्भर होकर समाजवाद का निर्माण कर रहा है जब कि वास्तविकता में टीटो-अनुयायियों ने युगोस्लाविया को आर्थिक तौर पर संयुक्त राज्य अमरीका और विकसित औद्योगिक देशों की बड़ी फ़र्मों के बीच बांट दिया है । ऐसा करके, टीटो-अनुयायियों ने युगोस्लाविया की आज़ादी व स्वतन्त्रता को भी सीमित कर दिया है ।

अनेक बड़ी अमरीकी कम्पनियों जैसे "जनरल मोटर्स", "फ़ोर्ड",

"क्राइस्लर","जनरल इलेक्ट्रिक" आदि की वास्तव में,विदेशी देशों की अपनी सहायक कम्पनियों का १०० प्रतिशत मिलकियत में रखने की प्रवृत्ति है । लेकिन ये सहायक कम्पनियां,ओवेन के अनुसार,राष्ट्रीयकरण की समस्या को कभी भी नहीं भूलती हैं,और इसके लिये उनका जवाब यह है कि,"यह स्थानीय विनियोजकों के साथ मिलकर कम्पनियों को स्थापित करने का नहीं, बल्कि मूल कम्पनियों में शेयरों की अन्तर्राष्ट्रीय मिलकियत को बढ़ावा देने का सवाल है" । यह पूंजीवाद की "अन्तर्राष्ट्रीयता" की धारणा है,जिसका,खास तौर से,"जनरल मोटर्स" एक उत्साही प्रणेता है ।

अमरीकी साम्राज्यवादी पूंजी या अमरीकी औद्योगिक संस्थापन,जो अपने उपनिवेशों व साम्राज्य पर निर्भर करने के लिये संयुक्त राज्य अमरीका के बाहर विनियोजन करते हैं,के ये दिशामान इस दावे को स्पष्ट करने वाले सिर्फ कुछ तथ्य हैं कि अमरीकी साम्राज्यवाद ज़रा सा भी कमज़ोर नहीं हुआ है,चाहे चीनी संशोधनवादी जो भी दिखावा करें । इसके विपरीत, वह और भी ज्यादा मज़बूत हुआ है,उसने विदेशी देशों में भारी रियायतें हासिल की हैं,और वह उनकी अर्थ-व्यवस्थाओं की अनेक महत्वपूर्ण शाखाओं को चला रहा है । उसने दूसरे देशों की सरकारों के लिये अनगिनत कठिनाइयां भी पैदा की हैं,वह अकसर इन देशों में कानून बनाता है,और अनेक सरकारें उसके नियन्त्रण व निर्देशन में हैं । निस्सन्देह,इस क्रियाविधि में उभार व गिराव होते हैं,लेकिन आम प्रवृत्ति अमरीकी साम्राज्यवाद का कमज़ोर होना नहीं सूचित करती है ।

हम अब एक ऐसे समय में रह रहे हैं,जब एक दूसरी महाशक्ति,सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद,अपनी पूंजी का निर्यात

कर रही है, और विभिन्न लोगों का शोषण करने पर तुली हुई है । इस महाशक्ति द्वारा निर्यात की गयी पूंजी, सोवियट संघ, जो एक पूंजीवादी देश में बदल दिया गया है, में ही हासिल किये गये अधिशेष मूल्य से आती है ।

पूंजीवाद की पुनस्थापना के परिणामस्वरूप वर्तमान सोवियट समाज में ध्रुवीकरण हुआ है, जहां लोगों का एक छोटा भाग अधिकांश लोगों पर शासन व उनका शोषण करता है । अब, नौकरशाहों, तकनीकतन्त्रियों, व ऊंचे रचनात्मक बुद्धिजीवियों की श्रेणी बना दी गयी है, और इसने एक अलग सरमायदार, शोषणकारी वर्ग का रूप धारण कर लिया है; जो वर्ग मज़दूर वर्ग व व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय के खूंखवार शोषण से प्राप्त अधिशेष मूल्य को हड़पता व आपस में बांटता है । क्लासिकल पूंजीवाद के देशों, जहां हर पूंजीपति की पूंजी के अनुपात में अधिशेष मूल्य को हड़पा जाता है, से भिन्न सोवियट संघ व अन्य संशोधनवादी देशों में ऊंची सरमायदार श्रेणी के लोगों के बीच, राज, आर्थिक, वैज्ञानिक, और सांस्कृतिक अधिक्रम आदि में उनके स्थानों के अनुसार इसको बांटा जाता है । मेहनतकश लोगों के श्रम व पसीने से निकाले गये अधिशेष मूल्य को हड़पने के लिये ऊंचे वेतनों, आम व विशेष बोनस, पुरस्कारों व कार्य-प्रेरक भत्तों, विशेषाधिकारों आदि को एक सम्पूर्ण संस्था में ढाल दिया गया है । "सामूहिक पूंजीपति" का प्रतिनिधित्व करने वाली श्रेणी, पूंजीवादी अत्याचार व शोषण की गारंटी देने वाले अनेकों कानूनों व कायदों के जरिये इस लूट को कायम रखती है ।

सोवियट अर्थव्यवस्था अब विश्व पूंजीवाद की पद्धति में समाविष्ट हो गयी है । जबकि अमरीकी, जर्मन, जापानी व अन्य पूंजी सोवियट संघ में बहुत गहरा प्रवेश कर चुकी है,

सोवियट पूंजी का अन्य देशों को निर्यात किया जा रहा है, और विभिन्न रूपों में स्थानीय पूंजी के साथ मिलाया जा रहा है ।

यह आम जानकारी है कि सोवियट संघ, पहले से, अपने उपाश्रित देशों का आर्थिक तौर से शोषण करता है । लेकिन अब वह, बाज़ारों व विनियोजन के छेत्रों के लिये, कच्चे पदार्थों को लूटने, व विश्व व्यापार में नव-उपनिवेशवादी कानूनों को बनाये रखने, आदि, के लिये अन्य पूंजीवादी राज्यों के साथ प्रतिस्पर्धा व प्रतिद्वन्द्विता कर रहा है ।

नये सोवियट सरमायदार, अपने आधिपत्य का विस्तार करने के पक्के इरादे से, पूंजी का निर्यात कर रहे हैं, लेकिन इसमें उसको सिर्फ़ अमरीकी साम्राज्यवाद की ही नहीं, जो कि बहुत शक्तिशाली है, बल्कि अन्य विकसित पूंजीवादी राज्यों, जैसे जापान, बर्तानिया, पश्चिम जर्मनी, फ़्रांस, आदि, की भी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है । अत्यधिक मुनाफ़ों की खोज में, ये राज्य सिर्फ़ अफ़्रीका, एशिया व लेटिन अमरीका को ही नहीं, बल्कि पूर्वीय यूरोपीय देशों को भी, जो संशोधनवादी सोवियट संघ के नियंत्रण में हैं, और यहाँ तक कि सोवियट संघ को भी पूंजी निर्यात करते हैं ।

तथा-कथित समाजवादी देशों, जैसे कि सोवियट संघ, चेकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड, आदि के, और अब चीन के भी, शासक गुट अपने देशों में विदेशी पूंजी को प्रवेश करने की इज़ाज़त देते हैं, क्योंकि यह पूंजी शासक दलों के काम आती है, जबकि यह लोगों पर एक भारी बोझ है । कामिकोन देश गर्दन तक कर्ज में डूबे हुये हैं । उनपर पश्चिमी देशों का लगभग ५० अरब डालर का कर्ज़ है ।

अपनी अर्थव्यवस्था में विदेशी पूंजी के प्रवेश की इज़ाज़त देने

वाले सबसे पहले संशोधनवादी देशों में से युगोस्लाविया एक था । सबसे पहले इसने उधार लिया,उसके बाद लाइसेन्सों को खरीदा,और बाद में संयुक्त कारोबारों को स्थापित किया । युगोस्लाविया ने १९६७ में एक ऐसा कानून अपनाया,जिसके अन्तर्गत ऐसे संयुक्त कारोबारों को बनाने की इज़ाज़त दी गयी, जिसमें लगाई गई पूंजी का ४९ प्रतिशत विदेशी कम्पनियों के हाथों में था । १९७७ में युगोस्लाविया में ऐसे १७० कारोबार थे । युगोस्लाविया ने पूंजीवादी फ़र्मों के लिये अपना काम करने व अधिकतम मुनाफ़ों को पक्का करने के लिये सबसे सुविधाजनक स्थितियाँ सुनिश्चित कीं हैं ।

युगोस्लाव घटना यह सिद्ध करती है कि युगोस्लाविया में लगायी गयी विदेशी पूंजी युगोस्लाविया को एक पूंजीवादी देश में बदलने वाले निश्चयात्मक कारणों में एक थी । संयुक्त राज्य अमरीका व अन्य अमीर पूंजीवादी राज्यों को इन विनियोजनों से कोई भी घाटा नहीं हुआ है । इसके विपरीत, उन्होंने भारी मुनाफ़े बनाये हैं,जबकि युगोस्लाविया के मज़दूर वर्ग व किसानों की दीनावस्था को बढ़ा दिया है । लेनिन ने बताया था कि मुट्ठी भर बहुत अमीर राज्यों की पूंजीवादी परिजीविता के लिये,और दुनिया के अधिकांश राष्ट्रों व देशों का शोषण करने के लिये पूंजी का निर्यात एक ठोस आधार है ।

चीन में भी,पूंजीवादी राज्य भारी मुनाफ़े बनायेंगे । हम देखते हैं कि वहाँ अब अरबों डालर में अमरीकी,जापानी, पश्चिम जर्मन व अन्य पूंजी लगाई जा रही है । तेल छेत्रों व यांग्त्ज़े नदी के शक्ति स्रोतों का संयुक्त रूप से इस्तेमाल करने के लिये जापानियों के साथ समझौतों पर हस्ताक्षर किये जा चुके हैं । जर्मनों के साथ कोयले की खानों को बनाने,आदि के

लिये एक समझौता किया गया है । चीन में जो विनियोजन किये गये हैं और किये जायेंगे, वे विदेशी पूंजीपतियों के लिये भारी मुनाफे लायेंगे, लेकिन इसके साथ-साथ वे चीन में पूंजीवाद के आधारों को मज़बूत भी करेंगे ।

एक पूंजीवादी देश से दूसरे पूंजीवादी या संशोधनवादी देश को निर्यात की जाने वाली पूंजी, चाहे पूंजी देने वाला या पाने वाला राज्य बड़ा हो या छोटा, हमेशा पूंजी द्वारा लोगों के शोषण के रूपों में से एक है । यह शोषण, पूंजी पाने वाले देश को आर्थिक व राजनीतिक तौर से निर्भर बनाता है ।

लेनिन ने यह बताया है कि देश के देशीय बाज़ार पर कब्ज़ा करने के बाद, एकाधिकार औद्योगीकृत वस्तुओं व कच्चे पदार्थों के लिये विश्व बाज़ार को पुनःविभाजित करने व उसपर कब्ज़ा करने के लिये आर्थिक संघर्ष करते हैं । प्रतिस्पर्धा और मुनाफ़ों के लिये उनका लोभ, विभिन्न देशों के एकाधिकारों को तैयार माल को बेचने व कच्चे पदार्थों को खरीदने के वास्ते अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार को बांटने के लिये, आपस में अस्थायी समझौते करने, सहयोगी संघ व संयोग बनाने के लिये बाध्य करते हैं । उनके पास कच्चे पदार्थ व ऊर्जा के स्रोत होने पर भी, विकसित पूंजीवादी राज्य अन्य देशों पर हमला करते हैं, क्योंकि इन देशों में उनके खुद के देशों की अपेक्षा उत्पादन खर्च कम होते हैं, और, खास तौर से, मज़दूरों के वेतन कई गुना कम होते हैं ।

तेल स्रोतों व बाज़ारों पर कब्ज़ा करने के लिये जो संघर्ष किया गया है और जो अभी भी जारी है, बहुत कुख्यात है । इस संघर्ष के परिणामस्वरूप बीसियों व सैकड़ों निजी कारोबार

व कम्पनियाँ तबाह हो गयी हैं और अन्तरर्राष्ट्रीय तेल उत्पादक-संघ, जिसमें ७ बड़े एकाधिकार (५ अमरीकी, १ बर्तानवी व १ बर्तानवी-डच, कुख्यात एस्सो, टेक्सको, शेल, आदि) हैं, ने पश्चिमी दुनिया के पूंजीवादी देशों में कुल तेल निष्कासन व तेल विक्रय के ६० प्रतिशत से भी अधिक पर और तेल की प्रक्रिया के लगभग ५४ प्रतिशत पर नियन्त्रण जमा लिया है ।

स्रोतों व बाज़ारों का ऐसा ही विभाजन, इस समय तांबे व टीन खनिजों और यूरेनियम व सामरिक महत्व के अन्य बहुमूल्य खनिजों के लिये भी, मौजूद है ।

अनेक पुराने उपनिवेशवादी देशों, जैसे बर्तानिया व फ्रांस ने, भूतपूर्व उपनिवेशित देशों के साथ, सहयोग आदि के खास व तथा-कथित अधिमानी समझौते कर लिये हैं, जो समझौते उनके लिये आर्थिक व व्यावसायिक अनन्य विशेषाधिकारों को सुनिश्चित करते हैं । तथा-कथित डालर, स्टर्लिंग, फ्रांक, या रूबल के क्षेत्र, एकाधिकारों व विभिन्न साम्राज्यवादी राज्यों के बीच दुनिया के आर्थिक विभाजन को दिखाते हैं ।

अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद व अन्य साम्राज्यवादी सत्तायें, इन देशों के साथ विभेदकारी व असमान व्यापार करने के जरिये, विभिन्न तरीकों से अधिकतम मुनाफ़ों को सुनिश्चित करती हैं । इस समय ओपेक देशों को छोड़कर, सिर्फ़ "विकासशील" देशों पर लगभग ३४ अरब डालर का कर्ज़ा है ।

वर्तमान हालतों में, विशेषकर इस समय आर्थिक संकट की हालतों में, एकाधिकार, उत्पादन कोटा, कीमतें, बाज़ार, आदि पर पूंजीवादी देशों की सरकारों के साथ भी सीधे तौर पर समझौते करते हैं । यूरोपीयन कामन मार्केट, कोमिकोन, आदि जैसे संगठनों की मौजूदगी भी इस समय के विश्व के आर्थिक

विभाजन का स्पष्ट सबूत है ।

विश्व के इस आर्थिक विभाजन, एकाधिकारों का आधिपत्य, दूसरे देशों के जीवन व आर्थिक विकास पर उनका नियन्त्रण, श्रम व पूँजी के बीच के अन्तर्विरोध को, और इसके साथ-साथ लोगों व साम्राज्यवाद के बीच के अन्तर्विरोधों, और अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधों को भी बहुत ज़्यादा तीव्र कर रहा है ।

"तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त, जो "तीसरी दुनिया" का "दूसरी दुनिया" के साथ, और अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ समझौता कराना चाहता है, इस वास्तविकता से बिल्कुल दूर है । वह यह देखना नहीं चाहता है, कि जिसे चीन "तीसरी दुनिया" कहता है, उस पर अमरीकी, बर्तानवी, फ्रांसीसी, जर्मन, जापानी व अन्य एकाधिकारों का निरन्तर आक्रमण, सभी साम्राज्यवादी व आधिपत्य-चाहने वाली सत्ताओं के प्रति लोगों के प्रतिरोध को और भी बढ़ा रहा है और उनके बीच कट्टर संघर्ष के लिये वस्तुगत स्थितियों का विस्तार कर रहा है । दूसरी तरफ़, साम्राज्यवादी सत्ताओं का असमान विकास, जो पूंजीवाद के विकास का एक वस्तुगत नियम है, उन्हें दुनिया में हर जगह आर्थिक प्रसार करने के लिये, एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करने व शत्रुतापूर्ण टक्कर लेने के लिये बाध्य करता है ।

"तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त, जो इन अन्तर्विरोधों में समझौते करना चाहता है और ठीक वही उपदेश देता है जो उपदेश सामाजिक-लोकतन्त्र व हर रंग के संशोधनवादी लम्बे अरसे से देते आये हैं, लेनिनवादी नीति के खुले विरोध में है, जो नीति, इन अन्तर्विरोधों को इन्कार करने से तो दूर, क्रान्ति व लोगों की मुक्ति के वास्ते सर्वहारा को तैयार करने

के लिये इन अन्तर्विरोधों को और भी गहरा करने का लक्ष्य रखती है ।

साम्राज्यवाद का विश्लेषण करते हुये, लेनिन ने बताया कि, पूर्व एकाधिकार पूंजीवाद का उसकी उच्चतम व अन्तिम कार्यावस्था, साम्राज्यवाद की कार्यावस्था में अवस्थापरिवर्तन होने के साथ ही बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच दुनिया का क्षेत्रीय विभाजन पूरा हो गया है ।

"...जिस अवधि की हम बात कर रहे हैं उसकी खास विशेषता है दुनिया का अन्तिम विभाजन, अन्तिम इस अर्थ में नहीं कि पुन:विभाजन असम्भव है; इसके विपरीत पुन:विभाजन सम्भव है और अनिवार्य है — बल्कि इस अर्थ में कि पूंजीवादी देशों की उपनिवेशक नीति ने हमारी दुनिया के अनधिकृत क्षेत्रों पर कब्ज़ा करना पूरा कर लिया है । पहली बार, दुनिया का पूरी तरह से विभाजन कर लिया गया है, जिससे भविष्य में सिर्फ़ पुन:विभाजन ही सम्भव है, अर्थात, क्षेत्र सिर्फ़ एक 'मालिक' से दूसरे के पास ही जा सकते हैं..." *

दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से, पुराने क्लासिकी उपनिवेशवाद, जिसने दुनिया के अधिकांश लोगों का शारीरिक, आर्थिक, राजनीतिक व विचारधारात्मक तौर से शोषण किया था, को एक नये उपनिवेशवाद में बदल दिया गया है । यह नया उपनिवेशवाद आर्थिक, राजनीतिक, सैनिक व विचारधारात्मक उपायों की एक सम्पूर्ण प्रणाली है, जिसे साम्राज्यवाद ने अपने आपको युद्ध के बाद पैदा हुई नयी स्थितियों के अनुकूल बनाते हुये,

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रंथ २२, पृष्ठ ३०८-३०९ (अल्बेनिया संस्करण)

अपने आधिपत्य को बनाये रखने और भूतपूर्व उपनिवेशों व कई अन्य देशों पर राजनीतिक नियन्त्रण व उनके आर्थिक शोषण को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से बनाया है ।

ये नयी स्थितियां क्या हैं ?

युद्ध के पश्चात, साम्राज्यवादी देश — फ्रांस, बर्तानिया, इटली, जर्मनी, जापान व अमरीका युद्ध के पहले जैसी परिस्थिति को शस्त्रों के बल पर कायम रखने की स्थिति में नहीं थे । उदाहरण के लिये फ्रांस मोराक्को, अल्जीरिया, तूनीशिया व अफ्रीका के अन्य देशों को उपनिवेशित स्थिति में नहीं रख सका जैसा उसने पहले किया था । यही बात बर्तानवी, इटालियन व अन्य साम्राज्यवादों के बारे में भी कही जा सकती है ।

दूसरे विश्वयुद्ध के परिणामस्वरूप दुनिया में शक्तियों के अनुपात में एक मौलिक परिवर्तन हुआ । इसके परिणामस्वरूप बड़ी तानाशाही शक्तियों की हार हुई, लेकिन इसके साथ ही पुरानी उपनिवेशवादी शक्तियां भी बहुत कमज़ोर हो गयीं और इसने उनकी नींव को भी हिला दिया । हर जगह, यहां तक कि उन देशों में भी जो इस तूफ़ान में ग्रस्त नहीं हुये थे, तानाशाह-विरोधी युद्ध ने राष्ट्रीय मुक्ति के सवाल को पैदा किया । भूतपूर्व उपनिवेशित देशों के उन लोगों को, जिन्होंने तानाशाही बेड़ी से बचने के लिये तानाशाह-विरोधी संघ के देशों के साथ मिलकर युद्ध में भाग लिया था, अब उपनिवेशिक गुलामी में वापस जाना व उसे सहन करना स्वीकार नहीं था । नाज़ीवाद पर सोवियट संघ की विजय, समाजवादी कैम्प की स्थापना, और चीन की मुक्ति ने लोगों की राष्ट्रीय जागरूकता व उनके मुक्ति संघर्ष को एक बहुत शक्तिशाली आवेग दिया । उपनिवेशों के लोगों के व्यापक जनसमुदाय ने यह समझ लिया कि पहले की परिस्थिति को बदलना ही पड़ेगा ।

इण्डोचीन, उत्तरी अफ्रीका व अन्य जगहों में मुक्ति युद्ध फूट पड़े ।

इस परिस्थिति से बाध्य होकर, कई उपनिवेशवादी देशों ने यह समझ लिया कि किसी किस्म की स्वतन्त्रता व आज़ादी को दिये बिना उपनिवेशों का शोषण व प्रशासन करने का पुराना तरीका गतप्रयोग हो गया था । उपनिवेशों पर कब्ज़ा रखने वाली साम्राज्यवादी सत्तायें इस निष्कर्ष पर अपनी लोकतन्त्रीय भावनाओं या लोगों को स्वतन्त्रता देने की अपनी इच्छा के कारण नहीं पहुंची, बल्कि उपनिवेशित लोगों द्वारा डाले गये दबाव के कारण, और इसलिये क्योंकि ये सत्तायें सैनिक, आर्थिक, राजनीतिक व विचारधारात्मक तौर से इतनी कमज़ोर हो गयीं कि पुराने उपनिवेशवाद को बनाये रखने में ये असमर्थ थीं । लेकिन फ्रांसीसी, बर्तानवी, इटालियन, अमरीकी व अन्य साम्राज्यवाद इन लोगों व देशों का शोषण करना छोड़ना नहीं चाहते थे । मौजूदा परिस्थितियों में, हर साम्राज्यवादी सत्ता इन लोगों को स्वायत्त शासन देने के लिये या कुछ समय बाद आज़ादी व स्वतन्त्रता देने का वायदा करने के लिये बाध्य हो गयी । इस अवधि में, जिसे उन्होंने अभिकथित रूप से आत्म-प्रशासन की जागरूकता को पैदा करने के लिये और इसके लिये स्थानीय कादरों के प्रशिक्षण के लिये ज़रूरी बताया, उनका वास्तविक उद्देश्य, इन देशों व लोगों के बीच यह झूठा मत पैदा करते हुये, कि इन्होंने अभिकथित रूप से अपनी स्वतन्त्रता जीत ली है, साम्राज्यवादी शोषण के दूसरे नये रूपों, नये उपनिवेशवाद को तैयार करना था ।

यह, युद्ध, जिसमें विश्व साम्राज्यवाद की एक भारी हार हुई थी, के बाद की एक कार्यविस्था थी जिसमें साम्राज्यवाद की उपनिवेशिक प्रणाली का संकट और भी ज़्यादा तीव्र हो

गया था । पूंजीवाद के पतन की इस अवधि में, दूसरे विश्व-युद्ध से साम्राज्यवाद के कमज़ोर होने के परिणामस्वरूप, संयुक्त राज्य अमरीका ने अवसर का फ़ायदा उठाया और उपनिवेशित लोगों को, जो अभिकथित रूप से स्वतन्त्र व आज़ाद थे, एक नये व और भी तीव्र शोषण के बोझ से दबा दिया । उसने अन्य साम्राज्यवादी सत्ताओं, जो एक या दूसरे ढंग से कमज़ोर हो चुकी थीं, के भूतपूर्व उपनिवेशों पर भी अपनी साम्राज्यवादी सत्ता को फैला दिया ।

हालांकि, भूतपूर्व उपनिवेशवादी सत्ताओं ने अनेक भूतपूर्व उपनिवेशित देशों को "स्वतन्त्रता" व "आज़ादी" का वायदा किया था, लेकिन फिर भी इन देशों के लोग शस्त्रों को उठाने के लिये मजबूर हुये, क्योंकि साम्राज्यवादी उनको यह "स्वतन्त्रता" व "आज़ादी" तुरन्त देने की इच्छा नहीं रखते थे। विशेषकर फ़्रांसीसी साम्राज्यवाद, युद्ध के बाद भी, फ़्रांस की शक्ति को या उसकी "महिमा" को बनाये रखने की कोशिश कर रहे थे । इसलिये अल्जीरिया, वियतनाम व कई अन्य देशों के लोगों ने मुक्ति के लिये अपना लम्बा संघर्ष शुरू किया, और अंत में उन्होंने विजय पायी। यहां हम इस बारे में विस्तृत रूप से बात नहीं करेंगे कि उन्होंने यह कैसे हासिल किया, कि किन सामाजिक शक्तियों ने संघर्ष किया था, इत्यादि । तथ्य यह है कि पुराने फ़्रांसीसी व बर्तानवी साम्राज्यवाद कमजोर हो गये थे । इस तरह लेनिन के इन दावों की पुष्टि हुई कि साम्राज्यवाद का पतन हो रहा है, कि उस समय तक उत्पीड़ित व गुलाम बने हुये लोगों के क्रान्तिकारी आन्दोलन व उनकी स्वतन्त्रता-प्रेमी आकांक्षायें, पुराने पूंजीवादी-साम्राज्यवादी समाज को नष्ट कर रहीं हैं ।

इस अवधि के दौरान अमरीकी साम्राज्यवाद और भी

मोटा हुआ, उसने डालर के छेत्र को फैलाया, फ्रेंक व स्टर्लिंग के छेत्रों को अपने नियन्त्रण में किया, और लोगों के अधिकतम शोषण पर आधारित अपनी आधिपत्य रखने वाली साम्राज्यवादी शक्ति की रक्षा करने के लिये, उसने दुनिया के उन अनेक देशों में, जिन्होंने अभिकथित रूप से अपनी आज़ादी व स्वतन्त्रता जीत ली थी, अनेक सैनिक आस्थानों को बनाया व अमरीकी-पक्षी राजनीतिक गुटों को स्थापित किया। निस्सन्देह, इस शोषण के साथ-साथ संरचना व उपरिसंरचना में अनेक परिवर्तन भी किये गये।

वित्त पूंजी ने अपनी ही खास विचारधारा को भी बनाया है, जो सर्वहारा के शोषण करने व विश्व पर विजय करने में आगे रहती है। यह विचारधारा लोगों पर उसके आधिपत्य को पूरा करती है, और झूठी स्वतन्त्रता, आज़ादी के विभिन्न चिकने-चुपड़े रूपों से और इसके साथ-साथ कुछ तथा-कथित लोकतन्त्रीय पार्टियों को बना कर, आदि, से इस आधिपत्य को उचित ठहराती है।

बैंकों व बहुराष्ट्रिक कम्पनियों की स्थापना के साथ ही, अमरीकी पूंजी विनियोजनों के साथ-साथ अमरीकी रहन-सहन का तरीका और उसमें निहित पतन भी निर्यात किया जाता है।

बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा किया गया पूंजी का निर्यात उपनिवेशों को बनाता है, जो उपनिवेश आज वे देश हैं जहां नव-उपनिवेशवाद का राज है। ये देश अभिकथित रूप से स्वतन्त्र हैं लेकिन यह सिर्फ़ औपचारिक रूप से है। दूसरे शब्दों में, आज भी पहले की ही तरह, पूंजी के निर्यात की वही क्रिया-विधि चल रही है, लेकिन भिन्न रूपों में, "शहद-भरे" व्याख्यानों व प्रचारों के साथ। इन देशों के लोगों का बेरहम शोषण पहले

की ही तरह होता है या उससे भी ज़्यादा भयंकर हो गया है;और प्राकृतिक सम्पत्तियों की लूट जारी है ।

हमारे समय की सबसे बड़ी नव-उपनिवेशवादी शक्ति संयुक्त राज्य अमरीका है । १९७३-१९७५ के तीन सालों में, भूतपूर्व उपनिवेशों, निर्भर या अर्ध-निर्भर देशों में,संयुक्त राज्य अमरीका के सरकारी व निजी पूंजी विनियोजन,इन छेत्रों में,सबसे विकसित पूंजीवाद व संशोधनवादी देशों के कुल विनियोजनों का ३६ प्रतिशत था ।(१)

साम्राज्यवादी शक्तियों व भूतपूर्व उपनिवेशित देशों के बीच आर्थिक,राजनीतिक व सैनिक संधियां व समझौते,इन देशों को गुलाम बनाते हैं और इन देशों को गुलामी में रखने के लिये ये साम्राज्यवाद के हाथों में हथियार हैं । लेनिन के ये शब्द आज भी उतने ही सत्य हैं जितना कि पहले थे,जिन्होंने

"...राजनीतिक तौर से स्वतन्त्र राज्यों को स्थापित करने के बहाने,वास्तव में आर्थिक,वित्तीय व सैनिक तौर से उनपर पूरी तरह से निर्भर राज्यों को स्थापित करने वाली,साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा व्यवस्थित रूप से अभ्यास में लाये गये फ़रेब की,सभी देशों और विशेषकर पिछड़े देशों के सबसे व्यापक मेहनतकश जनसमुदायों के बीच,निरन्तर व्याख्या करने व उसका पर्दाफाश करने की ज़रूरत," * पर जोर दिया था ।

---

(१) एफ़०जी०आर० का स्टेटिस्टिकल ईयरबुक,१९७७

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३१,पृष्ठ १५९ (अल्बेनिया संस्करण)

लोगों को अपने आधिपत्य में रखने के लिये, अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट-सामाजिक साम्राज्यवाद व अन्य पुरानी या नयी साम्राज्यवादी शक्तियां, पड़ोसी राज्यों के बीच, या एक ही देश में विभिन्न सामाजिक दलों के बीच जहां भी सम्भव हो झगड़ों को उकसाती हैं, और फिर, न्यायाधीश या एक या दूसरे पक्ष के समर्थक के रूप में, दूसरों के अन्दरूनी मामलों में दखल डालती हैं और वहां अपनी आर्थिक, राजनीतिक व सैनिक मौजूदगी को उचित ठहराती हैं। तथ्य यह दिखाते हैं कि जब भी महाशक्तियों ने दूसरे लोगों के अन्दरूनी मामलों में दखल दिया है, समस्यायें बिना सुलझे रह गयी हैं, या उसका परिणाम इन देशों में साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद की स्थितियों का दृढ़ीकरण हुआ है। मिडल ईस्ट की घटनायें, सोमालिया व इथोपिया के बीच लड़ाई, कम्बोडिया व वियतनाम के बीच युद्ध, आदि इसके सबूत हैं।

अपने विनियोजनों के साथ-साथ, संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियट संघ व सभी अन्य पूंजीवादी देश बाज़ारों व प्रभाव छेत्रों के लिये संघर्ष करने के दौरान, विनियोजनों को प्राप्त करने वाले देशों में अपनी स्थितियों को मज़बूत भी करते हैं। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न पूंजीवादी राज्यों के बीच, और बड़ी व्यापार संस्थाओं के बीच, जो एक दूसरे से जुड़ी या एक दूसरे पर निर्भर नहीं हैं, टक्करें होती हैं। ये टक्करें स्थानीय युद्धों को भड़काती हैं और एक आम युद्ध को भी शुरू कर सकती हैं। जैसा कि लेनिनवाद ने हमें शिक्षा दी है, एक युद्ध जो इन कारणों से फूट पड़ता है, चाहे वह स्थानीय हो या आम, एक लुटेरा युद्ध है, मुक्ति युद्ध नहीं। जब लोग विदेशी हमलावरों के खिलाफ़ विद्रोह करते हैं, जब वे स्थानीय पूंजीवादी सरमायदारों, जो साम्राज्यवाद, सामाजिक-साम्राज्यवाद व विश्व

पूंजी के साथ बड़ी घनिष्ठता से जुड़े हुये हैं,के खिलाफ़ विद्रोह करते हैं,सिर्फ़ तभी यह एक उचित व मुक्ति युद्ध होता है ।

बड़ी विश्व पूंजी के प्रतिनिधि अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों की वर्तमान प्रणाली में सुधार करने व एक "नयी विश्व आर्थिक प्रणाली",जिसका चीनी नेता भी समर्थन करते हैं,के निर्माण की अभिकथित ज़रूरत के बारे में बहुत शोर मचा रहे हैं । उनके अनुसार,यह "नयी आर्थिक प्रणाली" एक "विश्व-व्यापी स्थायित्व के लिये आधार" के रूप में काम करेगी । अपनी तरफ़ से,सोवियट संशोधनवादी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों की एक तथा-कथित नयी संरचना को बनाने की बात करते हैं ।

ये साम्राज्यवादी व नव-उपनिवेशवादी शक्तियों,जो नव-उपनिवेशवाद को जीवित रखना,उसके जीवन-काल को बढ़ाना और लोगों पर अपने द्वारा किये गये अत्याचार व उनकी लूट को जारी रखना चाहती हैं,की कोशिशें व योजनायें हैं । लेकिन पूंजीवाद व साम्राज्यवाद के विकास के नियम सरमायदारों व संशोधनवादियों की इच्छाओं या सैद्धान्तिक खोजों पर निर्भर नहीं हैं । जैसा कि लेनिन ने बताया था,उपनिवेशवाद व नव-उपनिवेशवाद के खिलाफ़ दृढ़ संघर्ष,क्रान्ति ही,इन अन्तर्विरोधों को खत्म करने के लिये रास्ता है ।

साम्राज्यवाद की मूलभूत आर्थिक विशेषताओं का विश्लेषण करते हुये,लेनिन ने इतिहास में उसके स्थान को भी निश्चित किया । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि साम्राज्यवाद पूंजीवाद की सिर्फ़ उच्चतम कार्यावस्था ही नहीं बल्कि अन्तिम कार्यावस्था भी है,और वह सर्वहारा क्रान्ति का पूर्वकाल है । लेनिन ने बताया :

"साम्राज्यवाद पूंजीवाद की एक खास ऐतिहासिक कार्यवस्था है...(१)एकाधिकारी पूंजीवाद;(२)परजीवी या पतन हो रहा पूंजीवाद;(३)मरणोन्मुख पूंजीवाद है ।"•

वर्तमान पूंजीवादी दुनिया की वास्तविकता इस निष्कर्ष की पूरी तरह से पुष्टि करती है ।

जैसा कि लेनिन ने सिद्ध किया था,साम्राज्यवाद की सभी सामाजिक-आर्थिक बीमारियों का आर्थिक आधार एकाधिकार है । एकाधिकार,पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्विरोधों को खत्म करने में असमर्थ हैं । लेनिन ने साम्राज्यवाद की परजीविता व पतन की, एकाधिकार की,आमतौर से उत्पादक शक्तियों के विकास को रोकने,विभिन्न उद्योगों के बीच व समूची राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अनुपातहीन विकास को गहरा करने,और मनुष्यों व पदार्थों की उत्पादक छमताओं का उपयोग न करने की प्रवृत्ति के साथ,और जनसमुदाय के लाभ व सम्पूर्ण समाज की प्रगति में विज्ञान व तकनोलोजी के नये विकासों के प्रयोग को रोकने की प्रवृत्ति के साथ आंगिक एकता दिखाई ।

मुनाफ़ों का लोभ व प्रतिस्पर्धा,एकाधिकारों को उत्पादन की क्रियाविधि में उन्नत तकनोलोजी पर विनियोजन करने के लिये बाध्य करते हैं । लेकिन साम्राज्यवाद के विकास की सम्पूर्ण ऐतिहासिक क्रियाविधि में मुख्य प्रवृत्ति अनुपातहीन विकास व विकास पर रोक है ।

उदाहरण के लिये संयुक्त राज्य अमरीका में उद्योग के छेत्र में,और विशेषकर युद्ध उद्योग में अनुसंधान व विज्ञान के विकास

• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २३, पृष्ठ १२२ (अल्बेनिया संस्करण)

पर किया गया व्यय १९५० के २ अरब डालर से बढ़कर १९६५ में करीब-करीब ११ अरब डालर,और १९७२ में लगभग ३० अरब डालर हो गया । अकसर बड़ी फ़र्में वैज्ञानिक अनुसंधान में कठिनाइयों का सामना करती हैं,लेकिन अगर कोई नयी खोज की जाती है तो ये फ़र्में पेटेंट खरीद लेती हैं और प्रशिक्षित लोगों को काम पर लगाती हैं,लेकिन ये अनुसंधान का प्रयोग तब ही करती हैं जब कि उनके स्वार्थों को इसकी ज़रूरत होती है ।

यह स्वाभाविक है कि,सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्रक,जो विकास व तकनीकी क्रान्ति के क्षेत्र में विनियोजनों के लिये ज़्यादा रुचि पैदा करते हैं,प्रमुख इसलिये हैं,क्योंकि उनमें मुनाफ़ों की ज़्यादा सम्भावनायें हैं । युद्ध उद्योग का स्थान सबसे पहला है,क्योंकि इसी में मुनाफ़ों का दर सबसे ऊंचा है । उदाहरण के लिये, १९६४ में संयुक्त राज्य अमरीका ने वायुवहन व मिस्साइल क्षेत्रक में वैज्ञानिक अनुसंधान में ३५६.५ करोड़ डालर विनियोजन किया । उसी वर्ष,विद्युत व दूर-संचार उद्योग में १ अरब ५३७ हज़ार डालर,रासायनिक उद्योग में १९.६ करोड़,मशीन-निर्माण उद्योग में १३.६ करोड़, मोटरकार उद्योग में १७.४ करोड़, वैज्ञानिक उपकरणों में १७.२ करोड़,रबड़ उद्योग में ३.८ करोड़, तेल उद्योग में ८० लाख,मिथेइन उद्योग में ९० लाख डालर,आदि विनियोजन किये गये थे ।

वर्तमान हालतों में अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण, साम्राज्यवाद के पतन के प्रत्यक्षीकरण के रूप में,सभी पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों की एक खास विशेषता बन गया है । लेकिन अर्थव्यवसथा के सैन्यीकरण की क्रियाविधि, विशेषकर संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ में,अपूर्व स्तरों तक पहुंच गयी है । दोनों पक्षों द्वारा सीधी तरह से किया गया सैनिक व्यय बेहद बढ़ गया है,और उनका कुल मिलाकर व्यय २४०

अरब डालर प्रतिवर्ष से भी ज़्यादा हो गया है ।

आधिपत्य व विश्व आधिपत्य की अपनी नीति में, संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ शस्त्रों के व्यापार का भी विस्तृत इस्तेमाल कर रहे हैं, जो साम्राज्यवाद के पतन की एक और स्पष्ट अभिव्यक्ति है । हर साल वे २० अरब डालर से भी ज़्यादा कीमत के शस्त्र बेचते हैं । अन्य साम्राज्यवादी राज्य, जैसे कि बर्तानिया, पश्चिम जर्मनी, फ्रांस, इटली आदि, भी शस्त्रों के विक्रय में भाग लेते हैं । इस साम्राज्यवादी व्यापार के नियमित खरीददार हैं, चिली, ब्राज़िल, अर्जन्तीना, इज़राईल, स्पेन, दक्षिण कोरिया, रोडेशिया, दक्षिण अफ्रीका संघ आदि के जैसे प्रतिक्रियावादी व तानाशाही गुट । इन खरीददारों में वे देश भी शामिल हैं जो सामरिक महत्व के कच्चे पदार्थों या तेल में धनी हैं, और साम्राज्यवादी इनको प्रेरित करने के लिये, ताकि ये अपनी सम्पत्ति को लूटने दें, इन्हें अपने हथियार प्रलोभन के रूप में देते हैं ।

अत्युत्पादन के आर्थिक संकट का और भी ज़्यादा से ज़्यादा बहुश: फूट पड़ना वर्तमान एकाधिकार पूंजीवाद के पतन व उसकी परजीविता का स्पष्ट सबूत है । संकटों का फूट पड़ना, जो अब बहुत गहरे हो गये हैं, उत्पादन व उपभोग के अराजक, स्वचालित व अनुपातहीन स्वभाव के बारे में मार्क्स-वादी सिद्धान्त की सत्यता की पुष्टि करता है, और "बिना संकटों" के पूंजीवाद के विकास या पूंजीवाद को "नियंत्रित पूंजीवाद" में बदलने के सरमायदारी "सिद्धान्तों" को गलत सिद्ध करता है ।

मार्क्स द्वारा खोजा गया, पूंजीवादी एकत्रीकरण का आम नियम, कि एक ओर तो मेहनतकश लोगों की निर्धनता बढ़ती है, जब कि दूसरी ओर पूंजीपतियों के मुनाफ़े बढ़ते हैं, वर्तमान

पूंजीवादी समाज में और भी ज़्यादा से ज़्यादा शक्ति के साथ लागू है । एक ओर सर्वहारा व दूसरी ओर सरमायदार, जो बहुत कम लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं, के बीच समाज के ध्रुवीकरण की क्रियाविधि और भी गहरी हो रही है ।

वर्तमान साम्राज्यवादी प्रणाली, जिसके पास सर्वहारा की ऊंची श्रेणियों व मज़दूर अभिजाततन्त्र को भ्रष्ट करने की भारी आर्थिक सम्भावनायें हैं, ने मज़दूर अभिजाततन्त्र की संख्या को बहुत अधिक बढ़ा दिया है ।

वित्तीय अल्पजनाधिपत्य, सर्वहारा को धोखा देने व द्विविधा में डालने, उसके क्रान्तिकारी उत्साह को कम करने के लिये, इस अभिजाततन्त्र का अत्यधिक इस्तेमाल कर रहा है । इस मज़दूर अभिजाततन्त्र से ही वे लोग आते हैं जिन्हें लेनिन ने कथनी में समाजवादी, करनी में साम्राज्यवादी बताया था । सामाजिक लोकतन्त्र, "सरमायदारी मज़दूर पार्टियां", मज़दूर संघों के मौकापरस्त नेता, आधुनिक संशोधनवादी, आदि, सब लेनिन द्वारा दिये गये इस वर्णन के मुताबिक हैं । लेनिन ने जोर दिया था कि साम्राज्यवाद व मौकापरस्ती आपस में जुड़े हुये हैं, और कि मौकापरस्त, साम्राज्यवाद को बनाये रखने व मज़बूत करने में सहायता देते हैं । उन्होंने बताया कि :

"...सबसे खतरनाक वे लोग हैं जो यह समझना नहीं चाहते हैं कि साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष झूठ व धोखा है अगर इस संघर्ष को मौकापरस्ती के खिलाफ़ संघर्ष के साथ अभिन्न रूप से जोड़ा न जाये ।" *

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २२, पृष्ठ ३६७ (अल्बेनिया संस्करण)

साम्राज्यवाद का पतन, सभी छेत्रों में, और विशेषकर राजनीतिक व सामाजिक छेत्रों में प्रतिक्रिया की वृद्धि व उसके तीव्रीकरण से भी स्पष्ट होता है । जैसा कि अभ्यास पुष्टि करता है, जब एकाधिकारी सरमायदार देखता है कि वर्ग संघर्ष तीव्र हो रहा है, तब वह अपने सभी छद्मवेशों को उतार फेंकता है और मेहनतकश जनसमुदाय को वे थोड़े से अधिकार भी इनकार कर देता है जिन अधिकारों को उन्होंने अपना खून बहाकर जीता था । तानाशाही सत्तायें व अधिनायकत्व जो दुनिया के अनेक देशों में स्थापित की गयी हैं, इसके सबूत हैं ।

इस सड़ी-गली प्रणाली, जो एक उथल-पुथल की स्थिति में है, को बड़ी दण्डनायक सेना और बड़ी संख्या में पुलिस, जिसे गतिमान व पूरी तरह से सशस्त्र किया गया है, के बल पर कायम रखा जाता है । इन सभी सैनिक व पुलिस शक्तियों को किसी भी किस्म के प्रतिरोध, जो शासक सरमायदारों द्वारा बनाये गये जंगली कानूनों द्वारा निर्धारित सीमाओं का अतिक्रमण करता है, को रोकने व उसका दमन करने के लिये गतिमान किया जाता है । सशस्त्र सेनाओं व अत्याचार करने के अन्य उपकरणों के कादर अमीरी में जीवन बसर करते हैं और मोटी तनख्वाहें पाते हैं । उदाहरण के लिये, इटली में आप सेना, पुलिस, बन्दूकधारी सिपाही, गुप्तचर जासूसों, जिनको सम्मानों में सज्जित किया जाता है, लेकिन जो काम में मारे भी जाते हैं, की चर्चाओं के अलावा और कुछ नहीं सुनेंगे ।

सरमायदार राज्यों में मौजूद इस बहुत ही द्विविधाजनक परिस्थिति में, गुंडागर्दी विकसित व व्यापक हो रही है, और इसे, पूंजीवादी प्रणाली स्वयं पैदा करती है । यह पूंजीवादी प्रणाली के पतन की एक अभिव्यक्ति है, सरमायदारी प्रणाली द्वारा किये गये अत्याचार व शोषण से पैदा होने वाले

निराशोन्माद व द्विविधा को प्रकट करती है। सरमायदार, गुंडागर्दी की उन घटनाओं को रोकने की कोशिश करते हैं, जो सरमायदारी राज के लिये समस्यायें व चिंता पैदा करती हैं। लेकिन वे निर्धनता में रहने वाले व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय को आतंकित करने के लिये गुंडागर्दी को उकसाते व इसका इस्तेमाल करते हैं। अनेक पूंजीवादी देशों में गुंडागर्दी एक उद्योग बन गयी है और यह बैंकों व दुकानों को लूटने से लेकर लोगों का अपहरण करने व उनको भारी संख्या में मुक्तिधन वसूल करने के लिये रोक रखने तक फैल गयी है। कुछ देशों में गुंडागर्दी विभिन्न दलों में संगठित की गयी है। इन दलों के नाम अकसर "क्रान्तिकारी" या "कम्यूनिस्ट" जैसे होते हैं। सरमायदार तानाशाही बलात् राज्यपरिवर्तन के लिये परिस्थिति तैयार करने व इसके किये जाने को उचित ठहराने के लिये, इन दलों को काम करने की पूरी छूट देते हैं। क्रान्ति व समाजवाद को बदनाम करने के लिये, इस गुंडागर्दी की क्रियाओं का यह बताकर प्रचार किया जाता है, कि ये क्रियायें सरमायदारी प्रणाली के खिलाफ़ अभिकथित रूप से काम करने वाले "कम्यूनिस्ट दलों" द्वारा की गयी हैं।

निष्कर्ष में हम यह कह सकते हैं कि सम्पूर्ण साम्राज्यवाद, यानि कि अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, इसके साथ-साथ सभी अन्य साम्राज्यवादों की वर्तमान परिस्थिति में, सभी विवरणों के साम्राज्यवाद कमज़ोर होने व पतन की कार्यावस्था में हैं, और कि क्रान्ति द्वारा पुराने समाज को उसकी नींव से उखाड़ फेंका जायेगा और उसकी जगह एक नया समाज, समाजवादी समाज, स्थापित किया जायेगा। यह नया समाजवादी समाज इस समय मौजूद है और इसका विस्तार होगा, और इसके बावजूद भी कि सोवियट संशोधनवादियों ने सोवियट संघ में समाजवाद के प्रति गद्दारी की है, इसके बाव-

जूद भी कि चीन में मौकापरस्ती व्याप्त है और वहाँ एक नया सामाजिक-साम्राज्यवाद उभर रहा है,इसके बावजूद भी कि लोक जनतन्त्र के अन्य देशों में पूंजीवाद की पुन:स्थापना कर दी गयी है,नया समाजवादी समाज विकसित होगा और फैलेगा । समाजवाद अपने ही रास्ते पर चलेगा और विश्व साम्राज्यवाद व पूंजीवाद पर संघर्ष व कोशिशों के जरिये विजय प्राप्त करेगा, लेकिन कभी भी, किसी भी तरह, सुधारों व शान्तिपूर्ण संसदीय रास्तों के जरिये नहीं,जैसा कि क्रुश्चेव ने उपदेश दिया था और जैसा सभी संशोधनवादी उपदेश दे रहे हैं । यह साम्राज्यवाद व सर्वहारा क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त के प्रति वफ़ादार रह कर ही विजयी होगा,कभी भी वर्तमान संशोधनवादी सिद्धान्तों का अनुसरण करके नहीं , जो संशोधनवादी सिद्धान्त घोषणा करते हैं कि राज एकाधिकारी पूंजीवाद अभिकथित रूप से पूंजीवाद की नयी,विशेष कार्यावस्था है,"पूंजीवाद के वक्ष में समाजवादी तत्वों का जन्म" है ।

साम्राज्यवाद के स्वभाव और इतिहास में उसके स्थान के बारे में लेनिन के निष्कर्षों से चलकर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि,उसको अन्दर से नष्ट करने वाले अन्तर्विरोधों और लोगों के मुक्ति व क्रान्तिकारी संघर्षों के परिणामस्वरूप, एक सामाजिक प्रणाली के रूप में,सम्पूर्ण विश्व साम्राज्यवाद अब आधिपत्य जमाने की वह अविभाज्य शक्ति नहीं रखता है जो वह पहले रखता था । यही इतिहास का द्वन्द्ववाद है और यह इस मार्क्सवादी-लेनिनवादी दावे की पुष्टि करता है कि साम्राज्यवाद अवनति में है,और उसका पतन व नाश हो रहा है ।

पूंजीवाद व साम्राज्यवाद के कमज़ोर होने की प्रवृत्ति, इस समय विश्व इतिहास की मुख्य प्रवृत्ति है । मार्क्स व

लेनिन ने इसका तर्क यथार्थ तथ्यों, ऐतिहासिक घटनाओं व भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के आधार पर दिया था । साम्राज्यवाद के विरोध में राज्यों द्वारा एकीकृत कोशिशों की प्रवृत्ति भी साम्राज्यवाद को कमज़ोर करती है । लेकिन राज्यों द्वारा एकीकृत कोशिशों की यह प्रवृत्ति, जिसको चीन ज़रूरी विभेद किये बिना, खास परिस्थितियों का अध्ययन किये बिना सर्वोच्च महत्व देता है, सही रास्ते की ओर नहीं ले जाती है । यह दावा करते हुये कि अमरीकी साम्राज्यवाद की अवनति हो रही है और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद से कम शक्तिशाली है, और यह घोषणा करते हुये कि "तीसरी दुनिया" युग की मुख्य प्रेरक शक्ति है, अभ्यास में चीनी नेता सरमायदारों के प्रति आत्मसमर्पण व उनकी अधीनता स्वीकार करने के लिये बढ़ावा दे रहे हैं ।

यह सच है कि लोग मुक्ति चाहते हैं, लेकिन वे इस मुक्ति को सिर्फ़ संघर्ष के जरिये, कोशिशों के जरिये और एक जंगी नेतृत्व के नायकत्व में ही प्राप्त कर सकते हैं । मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन हमें यह शिक्षा देते हैं कि यह नेतृत्व हर देश का सर्वहारा ही है । लेकिन सर्वहारा व उसकी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को हमेशा क्रान्ति की तैयारी व कार्यान्विति को ध्यान में रखते हुये, गहरा राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक विश्लेषण करना चाहिये, हर चीज़ को तराज़ू में तौलना चाहिये, निश्चय करने चाहियें, और उपयुक्त नीति व युक्ति का निर्धारण करना चाहिये । अगर क्रान्ति को भुला दिया जाये, जैसा कि चीनियों ने किया है, तब न तो विश्लेषण, क्रियायें व नीति, और न ही युक्तियां मार्क्सवादी-लेनिनवादी व क्रान्तिकारी हो सकती हैं ।

हम किसी भी तरह के साम्राज्यवाद, चाहे वह शक्तिशाली

या कम शक्तिशाली हो,के बारे में किसी भी प्रकार का भ्रम नहीं रख सकते हैं। साम्राज्यवाद,अपने स्वभाव से ही,आर्थिक व राजनीतिक प्रसार के लिये और युद्धों को शुरू करने के लिये हालतें पैदा करता है,क्योंकि उसका स्वभाव वास्तव में शोषण-कारी व आक्रामक है । इसलिये,मुक्ति चाहने वाले लोगों के व्यापक जनसमुदाय को यह धोखा देना,कि वे "तीन दुनि-याओं" के जैसे संशोधनवादी सिद्धान्तों से मार्गप्रदर्शित होकर मुक्ति हासिल कर सकेंगे,लोगों व क्रान्ति के खिलाफ़ एक भारी अपराध है ।

जैसा कि लेनिन ने हमें सिखाया है,हमारा युग,साम्राज्य-वाद व सर्वहारा क्रान्तियों का युग है । इससे हम मार्क्स-वादी-लेनिनवादियों को यह समझना चाहिये कि हमें विश्व साम्राज्यवाद,किसी भी साम्राज्यवाद, किसी भी पूंजीवादी सत्ता,जो सर्वहारा व लोगों का शोषण करती है,के खिलाफ़ अधिकतम कठोरता के साथ युद्ध करना चाहिये । हम इस लेनिनवादी दावे पर जोर देते हैं,कि क्रान्ति अब हर दिन का विषय बन गयी है । दुनिया एक नये समाज जो कि समाजवादी समाज होगा, की ओर बढ़ रही है । विश्व पूंजीवाद,साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद का और भी ज़्यादा पतन होगा और उनको क्रान्ति के जरिये खत्म कर दिया जायेगा ।

लेनिन ने हमें यह शिक्षा दी है कि हमें साम्राज्यवाद के खिलाफ़ उसके अन्त तक लड़ना चाहिये,उसकी आलोचना व्यापक रूप से करनी चाहिये,और उत्पीड़ित वर्गों को साम्राज्यवाद की नीति के खिलाफ़,सरमायदारों के खिलाफ़ उत्तेजित करना चाहिये । साम्राज्यवाद के वर्तमान विकास का मार्क्सवादी-

लेनिनवादी विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि साम्राज्यवाद व क्रान्ति के स्वभाव व विशेषताओं के बारे में लेनिन के विश्लेषण व निष्कर्षों को ज़रा सा भी नहीं बदला जा सकता है । साम्राज्यवाद पर लेनिनवादी दावों को विकृत करने की, सामाजिक-लोकतन्त्रवादियों से लेकर क्रुश्चेव-अनुयायी व चीनी संशोधनवादियों तक, सभी मौकापरस्तों की कोशिशें प्रति-क्रान्तिकारी हैं । उनका उद्देश्य क्रान्ति से इनकार करना, साम्राज्यवाद का गुणगान करना और पूंजीवाद के जीवनकाल को ड़ाना है ।

लेनिन ने साम्राज्यवाद और उसके छमायाचियों जैसे कि बर्नस्टाइन, काउट्स्की, हिल्फ़रडिंग व सेकेण्ड इन्टरनेशनल के सभी अन्य मौकापरस्तों का पर्दाफ़ाश करते हुये यह बताया कि :

"साम्राज्यवादी विचारधारा मज़दूर वर्ग में भी प्रवेश करती है । कोई चीनी दीवार मज़दूर वर्ग को अन्य वर्गों से अलग नहीं करती है ।" *

लेकिन, दुर्भाग्यवश "चीनी दीवार" को भी अब तोड़ दिया गया है और साम्राज्यवादी प्रचार व विचारधारा ने चीन में प्रवेश कर लिया है । चीनी मौकापरस्तों की विचारधारा में कुछ भी नया नहीं है । काउट्स्की व उसके सहयोगियों के रास्ते पर चलते हुये, वे भी आम तौर से साम्राज्यवाद का, और खास तौर से अमरीकी साम्राज्यवाद का, गुणगान कर रहे हैं

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रंथ २२, पृष्ठ ३४७ (अल्बेनिया संस्करण)

और वे अमरीकी साम्राज्यवाद को एक पीछे हटने वाला साम्राज्यवाद बता रहे हैं, जिसपर लोगों को, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादियों से अपनी रक्षा करने के लिये निर्भर होना चाहिये ।

चीनी संशोधनवादियों के "सिद्धान्तों" और काउट्स्की के सिद्धान्तों में समानता बहुत ही स्पष्ट है । अपने समय में, काउट्स्की ने पूंजीवाद के विकास के मार्क्सवादी सिद्धान्त को विकृत करके, साम्राज्यवाद की उपनिवेशित नीति की रक्षा करने और उसके द्वारा किये गये शोषण व प्रसार को छिपाने की कोशिश की थी । यही आज चीनी नेता भी कर रहे हैं, जो अमरीकी साम्राज्यवाद और उसकी नव-उपनिवेशवादी नीति का समर्थन करने की कोशिश में अभिकथित रूप से मार्क्स व लेनिन पर आधारित, बेतुके सिद्धान्तों को मथ रहे हैं । लेकिन, लेनिन के शब्दों में, चीनी "सिद्धान्त" संशोधनवाद व मौकापरस्ती के दलदल में एक डुबकी है ।

काउट्स्की के सिद्धान्त यह भ्रम फैलाते हैं कि अभिकथित रूप से एकाधिकारी पूंजीवाद की हालतों में एक दूसरी, राज्यों को न हड़पने वाली नीति होने की सम्भावना है । इस सम्बन्ध में लेनिन ने जोर दिया कि :

"विषय का सार यह है कि काउट्स्की साम्राज्यवाद की राजनीति को उसकी अर्थ-व्यवस्था से अलग करता है, राज्य हड़पने को वित्त पूंजी द्वारा 'प्राथमिकता दी हुई' एक नीति बताता है, और वह इस नीति के विरोध में एक दूसरी सरमायदार नीति को रखता है, जो, उसके दावे के अनुसार, वित्त पूंजी के इसी आधार पर सम्भव है । तब, इसका यह अर्थ है कि अर्थव्यवस्था के एकाधिकार, राजनीति में अन-एकाधि -

कारवादी, अहिंसापूर्ण, व राज्य न हड़पने वाले तरीकों के साथ संगतता में रह सकते हैं। तब, इसका अर्थ यह है कि विश्व का छेत्रीय विभाजन, जो ठीक वित्त पूंजी के युग के दौरान पूरा किया गया था, और जो सबसे बड़े पूंजीवादी राज्यों के बीच प्रतिस्पधर्ा के वर्तमान खास रूपों का आधार है, एक अ-साम्रा-ज्यवादी नीति के साथ संगतता में है। इसका परिणाम है पूंजीवाद की नवीनतम कार्यविस्था के सबसे गहरे अन्तर्विरोधों को, उनकी गहराई का पर्दाफाश करने की जगह, टाल जाना व कुंठित करना; इसका परिणाम है मार्क्सवाद की जगह सरमा-यदारी सुधारवाद।"*

इस तथ्य की अवहेलना करते हुये, कि संयुक्त राज्य अमरीका में, एकाधिकार व वित्त पूंजी आर्थिक छेत्र पर आधिपत्य रखते हैं और कि ठीक वे ही घरेलू व विदेश नीति को बनाते हैं, चीनी संशोधनवादी एक शान्तिपूर्ण साम्राज्यवाद, जो अब प्रसार करने की इच्छा नहीं रखता है और इसके बजाय जो पीछे हट रहा है, की बात कर रहे हैं। चीनी नेता स्टालिन के इन शब्दों को भूल जाते हैं, कि वर्तमान पूंजीवाद के मूलभूत आर्थिक नियम की मुख्य विशेषतायें व आवश्यकतायें हैं,

"...अपने देश की अधिकांश जनसंख्या का शोषण करने, व उनकी बर्बादी व निर्धनता के जरिये, अन्य देशों, व विशेषकर पिछड़े देशों के लोगों को गुलाम बनाने व व्यवस्थित रूप से

---

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २२, पृष्ठ ३२८ (अल्बेनिया संस्करण)

लूटने के जरिये, और अंत में, युद्धों व राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के सैन्यीकरण, जिनका इस्तेमाल अधिकतम मुनाफों को पाने के लिये किया जाता है, के जरिये अधिकतम पूंजीवादी मुनाफों को प्राप्त करना ।"*

इस तरह, चीनी नेताओं के "नये" सिद्धान्त यह दिखाते हैं कि वे काउट्स्की के पुराने गीत को ही एक नयी धुन में गा रहे हैं ।

सेकेण्ड इन्टरनेशनल के मुखियों, जो साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच, इस आधार पर कि कौन ज्यादा हमलावर है और कौन कम हमलावर, भेद करना चाहते थे, का पर्दाफाश करते हुये लेनिन ने यह जोर दिया था कि यह विचारपद्धति मार्क्सवाद-विरोधी है। इस रुख ने सेकेण्ड इन्टरनेशनल की पार्टियों को, शोविंवाद की नीतियों को अपनाने, और सर्वहारा व क्रान्ति के उद्देश्य के प्रति खुला विश्वासघात करने के लिये मजबूर किया। लेनिन ने बताया कि हमारे युग में यह सवाल नहीं उठाया जा सकता है, कि पहले विश्व युद्ध में ग्रस्त साम्राज्यवादी शक्तियों में से, एक या दूसरे पक्ष की कौन सी साम्राज्यवादी शक्ति "ज्यादा बुरी" है ।

"वर्तमान लोकतन्त्र", उन्होंने बताया, "अपने प्रति सच्चा तभी रहेगा, जब वह न तो एक, और न ही दूसरे साम्राज्यवादी सरमायदार के साथ शामिल हो, तभी जब वह यह कहे कि 'दोनों पक्ष समान रूप से बुरे हैं', और जब वह हर देश में

* जे०वी०स्टालिन, "यू०एस०एस०आर० में समाजवाद की आर्थिक समस्यायें", पृष्ठ ४५, १९७४ (अल्बेनिया संस्करण)

साम्राज्यवादी सरमायदारों की पराजय की इच्छा करे । कोई भी अन्य निश्चय वास्तव में राष्ट्रीय-उदारवादी होगा और सच्चे अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के साथ उसकी कोई भी सामान्यता नहीं होगी ।" *

वर्तमान हालतों में, यदि चीनी दावे को स्वीकार किया जाये, जिसके अनुसार सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद अमरीकी साम्राज्यवाद से ज़्यादा हमलावर है, तब इसका परिणाम क्रान्ति के प्रति, मज़दूर वर्ग के ऐतिहासिक निमित्त-कार्य के प्रति खुला विश्वासघात करना और सेकेण्ड इन्टरनेशनल की नीतियों को अपनाना होगा । दोनों साम्राज्यवादी महा-शक्तियां, एक ही हद तक, समाजवाद, लोगों की स्वतन्त्रता व आज़ादी और राष्ट्रों के सर्वसत्ताधिकार के मुख्य दुश्मन व इनके लिये मुख्य खतरा हैं । ये दोनों महाशक्तियां विश्व पूंजीवाद की मुख्य रक्षक हैं ।

लोगों के प्रति अपने विश्वासघात को छिपाने के लिये, चीनी नेता कहते हैं कि बड़े एकाधिकारों और बड़ी प्राकृतिक सम्पत्ति रखने वाले कुछ देशों के बीच सम्बन्ध एक ऐसी परि-स्थिति को पैदा करते हैं, जिसमें एकाधिकारी शक्तियों व लोगों के बीच की लड़ाइयों से भी बचा जा सकता है । यह एक सरासर बेतुकी बात है, और खूंख्वार साम्राज्यवाद को दब्बू के रूप में प्रस्तुत करने की, व खुशहाली की एक ऐसी झूठी भावना को पैदा करने की कोशिश है कि अभिकथित रूप से पूंजी का विनियोजन, पूंजी लगाये गये देश के लोगों के लिये खुशहाली

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २१, पृष्ठ १४५-१४६ (अल्बेनिया संस्करण)

पैदा करेगा और इस तरह साम्राज्यवादियों व इन देशों के लोगों के बीच शत्रुतापूर्ण अन्तर्विरोध नहीं रहेंगे । यह झूठा सिद्धान्त, जिसका चीनी नेता अब प्रचार कर रहे हैं, साम्राज्यवाद द्वारा, दुनिया में हर जगह अपने आधिपत्य को फैलाने के लिये, और विभिन्न देशों में शासन करने वाले प्रतिक्रियावादी गुटों को, उनके खुद के लोगों पर अत्याचार करने और विदेशियों के हाथों देश को बेचने में सहायता देने के लिये, गढ़ा गया है ।

ये "सिद्धान्त" सेकेण्ड इन्टरनेशनल के मौकापरस्तों के प्रतिक्रियावादी सिद्धान्तों की नये व मार्जित रूपों में पुनरावृत्ति है । पहले विश्व युद्ध के समय, लेनिन ने काउट्स्की के "अति-साम्राज्यवाद" के मार्क्सवाद-विरोधी सिद्धान्त का पर्दाफाश किया था । काउट्स्की ने यह दावा किया था, कि विभिन्न देशों के पूंजीपतियों के बीच समझौते के जरिये, साम्राज्यवाद के युग में युद्धों को रोका जा सकता है ।

काउट्स्की के साथ वाग्युद्ध में, लेनिन ने बताया कि :

"...अंग्रेज़ी पादरियों व जर्मन 'मार्क्सवादी' काउट्स्की की तुच्छ प्रगति-विरोधी कल्पनाओं में तो नहीं, लेकिन पूंजीवादी प्रणाली की वास्तविकताओं में, 'अन्तर-साम्राज्यवादी' या 'अति-साम्राज्यवादी' सहयोगी संघ, चाहे ये जैसा भी रूप धारण करें, चाहे यह एक साम्राज्यवादी संघ का दूसरे के खिलाफ़ सहयोगी संघ हो या सभी साम्राज्यवादी शक्तियों को शामिल करने वाला एक आम सहयोगी संघ हो, ये अनिवार्य रूप से, युद्धों के बीच की अवधियों में 'संधि' से ज़्यादा और कुछ नहीं हैं ।"*

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २२, पृष्ठ ३५९-३६० (अल्बेनिया संस्करण)

लेनिन की ये शिक्षायें वर्तमान हालतों में बहुत ही उपयुक्त हैं, जब कि चीनी संशोधनवादी सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़, सभी तानाशाही व सामन्तिक, पूंजीवादी व साम्राज्यवादी राज्यों व सत्ताओं, जिसमें संयुक्त राज्य अमरीका भी शामिल है, के एक सहयोगी संघ और एक महान विश्व मोर्चे की बात कर रहे हैं और इसको स्थापित करने की व्यग्रता के साथ कोशिशें कर रहे हैं ।

लेनिन ने जोर दिया था, कि साम्राज्यवादी देशों के बीच सहयोगी संघ सम्भव हैं, लेकिन इनकी स्थापना, क्रान्ति व समाजवाद को संयुक्त रूप से कुचलने, और उपनिवेशों और निर्भर व अर्ध-निर्भर देशों को संयुक्त रूप से लूटने के एकमात्र उद्देश्य से की जाती है ।

चीनी संशोधनवादी, सेकेण्ड इन्टरनेशनल के मुखियों की तरह, कम्यूनिस्ट मेनिफ़ेस्टो के नारे "सभी देशों के सर्वहारा, एक हो ! " के स्थान पर यह उपयोगितावादी नारा लगा रहे हैं कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ "हम उन सबके साथ एक हों जिन्हें एकीकृत किया जा सकता है ।"

चीनी नेताओं द्वारा गढ़ा गया "तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त, साम्राज्यवाद के ऐतिहासिक विकास का मार्क्सवादी-लेनिनवादी वर्ग दृष्टिकोण से विश्लेषण नहीं करता है, बल्कि वह इसे, मार्क्स व लेनिन द्वारा इतने स्पष्ट रूप से निश्चित किये गये हमारे युग के अन्तर्विरोधों की अवहेलना करते हुये, एक विकृत दृष्टिकोण से देखता है । इस "सिद्धान्त" का अनुसरण करके, "समाजवादी" चीन, अमरीकी साम्राज्यवाद व "दूसरी दुनिया", अर्थात लोगों का शोषण करने वाले अन्य साम्राज्यवादियों, के साथ एकीकृत हो जाता है, और विश्व साम्राज्यवाद व पूंजीवाद, चाहे वह अमरीकी साम्राज्यवाद हो या

सोवियत सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ने की आकांक्षा रखने वाले लोगों, यानि कि "तीसरी दुनिया" से सिर्फ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ एक होने की मांग करता है ।

"तटस्थ" देशों का टीटोवादी सिद्धान्त भी, उतना ही मार्क्सवाद-विरोधी है, जितना कि "तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त ।

ये दोनों "सिद्धान्त" एक ही रेल की पटरियां हैं, जिसपर अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की रेलगाड़ी दौड़ रही है, एक ऐसी रेलगाड़ी, जो दुनिया के लोगों से लूटी हुई सम्पत्ति से भरी हुई है । टीटो-अनुयायी व चीनी संशोधनवादी इस साम्राज्यवादी व सामाजिक-साम्राज्यवादी रेलगाड़ी के डब्बों में कुछ छेद करने की कोशिश कर रहे हैं, ताकि इसमें से, थोड़ा तेल, शक्कर, कुछ डालर, पाउण्ड, फ्रैंक या रूबल टपक पड़ें । ये पटरियां, जो उत्पीड़ित लोगों के कंधों पर डाली गयी हैं, और जिनका उद्देश्य इन लोगों को स्थायी गुलामी में रखना है, दो सिद्धान्त हैं जो उतने ही प्रतिक्रियावादी हैं, जितने कि ट्राट्स्कीवादियों, अराजकतावादियों, बुखारिनवादियों, क्रुश्चेववादियों, तोग्लियाटी, करिल्लो, मार्शे के समर्थकों, आदि के मार्क्सवाद-विरोधी सिद्धान्त हैं ।

जीवन के अनुभव से साम्राज्यवाद पर लेनिन के प्रतिभाशाली दावों की निरन्तर पुष्टि हो रही है । पूंजीवाद अपने पतन की कार्यावस्था में प्रवेश कर चुका है । यह परिस्थिति लोगों के विद्रोह को उत्तेजित कर रही है, और उन्हें क्रान्ति की ओर प्रवृत कर रही है । साम्राज्यवाद व सरमायदारी पूंजीवादी गुटों के खिलाफ लोगों का संघर्ष, विभिन्न रूपों में, और

विभिन्न तीव्रताओं के साथ, बढ़ रहा है। परिमाणात्मक परिवर्तन अनिवार्य रूप से गुणात्मक परिवर्तन में बदलेगा। यह सबसे पहले उन देशों में होगा,जो पूंजीवादी जंजीर की सबसे कमज़ोर कड़ियां हैं, और जहां मज़दूर वर्ग की जागरूकता व उसका संगठन एक ऐसे ऊंचे स्तर तक पहुंच गया है,जहां समस्या के बारे में एक गहरी राजनीतिक व विचारधारात्मक समझ मौजूद है।

साम्राज्यवाद ने लोगों पर अपने ख़ूंख्वार अत्याचार व शोषण को और भी बढ़ा दिया है। लेकिन,इसके साथ-साथ, दुनिया के लोग इस बात को ज़्यादा से ज़्यादा समझ रहे हैं कि वे पूंजीवादी समाज में रहना स्वीकार नहीं कर सकते हैं जहां मेहनतकश जनसमुदाय का उत्पीड़न व शोषण युद्ध के पहले की अपेक्षा ज़रा सा भी कम नहीं हुआ है।

साम्राज्यवाद व उसके उपजीवी अपनी सभी कोशिशों के बावजूद भी,लोगों पर अपना आधिपत्य जमाने के लिये अपने संघर्ष में,इस समय या भविष्य में, कभी भी कोई स्थायित्व नहीं पायेंगे। वे मज़दूर वर्ग और मुक्ति चाहने वाले उत्पीड़ित मेहनतकश लोगों के जनसमुदायों की बढ़ती हुई जागरूकता के कारण,और इसके साथ-साथ अविश्यम्भावी अन्तर-साम्राज्य-वादी अन्तर्विरोधों के कारण,स्थायित्व नहीं पा सकते हैं।

लोग यह देख रहे हैं,और भविष्य में वे इसे और भी स्पष्ट रूप से देखेंगे,कि विश्व साम्राज्यवाद व पूंजीवाद सिर्फ़ दोनों महाशक्तियों की आर्थिक,सैनिक,राजनीतिक व विचारधारात्मक शक्ति पर ही नहीं,बल्कि अमीर वर्गों पर भी आधारित है, जो अमीर वर्ग अपने ख़ुद के देशों के लोगों को गुलामी में और डर में रखते हैं व उनका शोषण करते हैं, ताकि ये लोग अपनी सच्ची स्वतन्त्रता व आज़ादी को प्राप्त करने के लिये

विद्रोह न करें ।

दुनिया के विभिन्न देशों के व्यापक जनसमुदाय भी यह समझने लगे हैं, कि वर्तमान सरमायदारी-पूंजीवादी समाज व विश्व साम्राज्यवाद की शोषणकारी प्रणाली का अन्तर्ध्वंस किया जाना चाहिये । लोगों के लिये यह सिर्फ़ एक आकांक्षा नहीं है, बल्कि अनेक देशों में उन्होंने शस्त्रों को उठा भी लिया है ।

इसलिये ऐसे सिद्धान्तों को गढ़ने की कोई ज़रूरत नहीं है, जो दुनिया को तीन या चार भागों में, "गुटबद्ध" व "तटस्थ" में विभाजित करते हैं, बल्कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षाओं के अनुसार, महान वस्तुगत ऐतिहासिक क्रियाविधि को देखा जाना चाहिये व उसकी सही व्याख्या की जानी चाहिये । दुनिया दो भागों में विभाजित है, पूंजीवाद की दुनिया और समाजवाद की नयी दुनिया, जो एक दूसरे के साथ कठोर संघर्ष में लगी हुई हैं । इस संघर्ष में नयी, समाजवादी दुनिया विजयी होगी, जबकि पुराने पूंजीवादी समाज, सरमायदारी व साम्राज्यवादी समाज का अन्तर्ध्वंस किया जायेगा ।

३

क्रान्ति और लोग

मार्क्स ने पूंजीवादी समाज के ध्वंस और अधिक उन्नत समाज, समाजवाद व उसके बाद कम्यूनिज़्म के निर्माण की ज़रूरत को वैज्ञानिक तर्कों के साथ दिखाया। लेनिन ने अपनी किताब "साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की उच्चतम कार्यविस्था", में मार्क्स के विचारों का आगे विकास करते हुये यह दिखाया कि वर्तमान युग, साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तिओं का युग है। यह पुरानी पूंजीवादी प्रणाली, उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के ध्वंस का, सर्वहारा द्वारा राज सत्ता पर कब्ज़ा करने का और उत्पीड़ित लोगों की मुक्ति का युग है, विश्व स्तर पर साम्राज्यवाद की विजय का युग है।

इसका मतलब यह है कि इस समय हम पुराने शोषणकारी समाज जो कि अधिकांश मानवजाति और उत्पीड़ितों व शोषितों के लिये असहनीय है, की जगह नये समाज, जिसमें आदमी द्वारा आदमी के शोषण को हमेशा के लिये खत्म कर दिया जायेगा, की स्थापना के युग में रह रहे हैं। ठीक इन्हीं बुनियादी शिक्षाओं और इस समय दुनिया के विकास की क्रियाविधि के अपने मार्क्सवादी-लेनिनवादी विश्लेषण पर चल कर हमारी पार्टी ने अपनी सातवीं कांग्रेस में इस दावे को सामने रखा कि दुनिया एक ऐसी कार्यविस्था में है जिसमें क्रान्ति

और लोगों की मुक्ति का सवाल एक ऐसी समस्या है, जिसका समाधान करना है ।

सरमायदारों के खिलाफ़ सर्वहारा का संघर्ष एक दृढ़ और कठोर संघर्ष है जो कि निरन्तर जारी है। एक दूसरे के मुकाबले में खड़ी हैं दो महान सामाजिक शक्तियां । एक तरफ़ तो खड़े हैं, पूंजीवादी-साम्राज्यवादी सरमायदार जो कि इतिहास में जाना गया सबसे ज़्यादा खूंख्वार, धोखेबाज़ और खून का प्यासा वर्ग है । दूसरी तरफ़ खड़ा है सर्वहारा, वह वर्ग जो पूर्णरूप से उत्पादन के साधनों से वंचित रखा गया है और जिसका सरमायदारों द्वारा बेरहमी से उत्पीड़न व शोषण किया गया है, जो इसके साथ-साथ समाज में सबसे उन्नत वर्ग है, जो विचार करता है, निर्माण करता है, काम करता है व उत्पादन करता है, फिर भी अपनी मेहनत के फलों का उपभोग नहीं करता है ।

इनमें से हर एक वर्ग शक्तियों को अपने पक्ष में एकत्रित करने और उनको अपने ही उद्देश्यों के लिये तैयार करने की कोशिश करता है : सर्वहारा सामाजिक और राष्ट्रीय मुक्ति के लिये और क्रान्ति को कार्यान्वित करने के लिये; और सरमायदार अपने आधिपत्य को बनाये रखने के लिये व क्रान्ति का दमन करने के लिये । सरमायदार अपने चारों ओर सबसे अनिष्ठकारी, प्रतिगामी व अपराधी शक्तियों को इकट्ठी करता है, जबकि सर्वहारा सभी क्रान्तिकारी, प्रगतिशील शक्तियों को अपनी तरफ़ जीतने का प्रयत्न करता है ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद हमें सिखाता है कि सर्वहारा और सरमायदारों के बीच संघर्ष निरन्तर बढ़ता है और निश्चय ही सर्वहारा और उसके सहयोगी विजयी होंगे । इस संघर्ष में सफलता हासिल करने के लिये, सर्वहारा को संगठित होना

चाहिये, उसकी अपनी अग्रगामी पार्टी होनी चाहिये, क्रान्ति की आवश्यकता के लिये व्यापक जनसमुदाय को सचेत करना चाहिये, अपना अधिनायकत्व स्थापित करने और समाजवाद व कम्यूनिज़्म यानि कि वर्गहीन समाज के निर्माण करने के लिये, राज सत्ता पर कब्ज़ा करने के लिये लड़ाई में उनका नेतृत्व करना चाहिये ।

दुनिया में अच्छी और बुरी नियत रखने वाले बहुत से बेसब्र लोग हैं जो यह सोचते हैं कि क्रान्ति किसी भी समय, किसी भी छण और किसी भी जगह कार्यान्वित की जा सकती है । लेकिन ऐसे लोग गलती पर हैं । क्रान्ति किसी की अपनी इच्छा के अनुसार किसी भी समय और किसी भी जगह कार्यान्वित नहीं की जा सकती है । क्रान्ति पूंजीवादी जंजीर की उस कड़ी में फूट पड़ती है और पूरी की जाती है जो सबसे कमज़ोर है । क्रान्ति के फूट पड़ने और उसकी विजय के लिये, उपयुक्त वस्तुगत व आत्मगत जागरूकता की स्थितियों का मौजूद होना आवश्यक है, और अनुकूल समय पर ही क्रान्ति शुरू की जानी चाहिये । मुख्य बात यह है कि, जब क्रान्ति आरम्भ की जाय तो सर्वहारा के नेतृत्व में व्यापक जनसमुदाय को क्रान्ति को अन्त तक ले जाने के लिये दृढ़संकल्प और तैयार रहना चाहिये ।

लेनिन जोर देते हैं कि क्रान्ति हर एक देश के लोगों द्वारा की जाती है, और यह कि इसका निर्यात नहीं किया जाता । इसका यह मतलब नहीं है कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी जहाँ कहीं भी संघर्ष कर रहे हों, आपस में ऐक्यभाव नहीं रखें, सच्ची सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद की भावनाओं के साथ एक दूसरे से सम्बन्ध न रखें, और दूसरे देशों के सर्वहारा और लोगों के मुक्ति संघर्षों में उनकी सहायता न करें । इसके विपरीत,

विभिन्न देशों के सभी कम्यूनिस्ट, सम्पूर्ण सर्वहारा और क्रान्तिकारी शक्तियाँ, प्रचार, आन्दोलन, भौतिक सहायता, अपने दृढ़संकल्प और निस्स्वार्थता के उदाहरण के जरिये और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति वफ़ादारी से डटे रह कर, हर एक देश और सारी दुनिया में क्रान्ति को सहायता देने के लिये कर्मबद्ध हैं । निःसन्देह, इस सहायता का फ़ायदा उठाने में सफलता, सबसे पहले इस या उस देश में सर्वहारा और उसकी पार्टी की तैयारी पर और क्रान्तिकारी संघर्ष के विकास पर निर्भर है ।

मार्क्स और एंगेल्स ने "कम्यूनिस्ट पार्टी के मैनिफ़ेस्टो" में बताया है कि एक देश के सर्वहारा व लोगों के हित सारी दुनिया के सर्वहारा व लोगों के हित से अलग नहीं हैं ।

जैसा कि लेनिन हमको सिखाते हैं और जीवन ने भी जिसकी पुष्टि की है, हर एक देश में क्रान्ति की विजय अलग-अलग होती है । इसलिये, यह विजय, सबसे पहले, हर एक देश में मज़दूर वर्ग और उसकी क्रान्तिकारी पार्टी पर, और क्रान्ति के बारे में दी गई, मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन की शिक्षाओं को यथार्थ परिस्थितियों में लागू करने की योग्यता पर निर्भर करती है ।

लेकिन, इन शिक्षाओं के बारे में और विशेषकर क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त के बारे में अत्यधिक भ्रम पैदा किया गया है, टीटोवादियों, सोवियट, "यूरोकम्यूनिस्ट", चीनी, और दूसरे आधुनिक संशोधनवादियों द्वारा बहुत सुरंगें बिछाई गई हैं, जिन्होंने, क्रान्ति के सवाल पर लोगों को गुमराह करने और क्रान्ति के फूट पड़ने को रोकने का जिम्मा उठा लिया है ।

आज, जब इस सवाल को समाधान के लिये आगे रखा गया है, तब मार्क्सवादी-लेनिनवादियों का यह अनिवार्य कर्त्तव्य है

कि वे संशोधनवादियों द्वारा क्रान्ति के बारे में फैलाये गये भ्रम को मिटायें, और इस समस्या के बारे में उनकी चालबाज़ी और जाने-बुझे मिथ्यावाद का पर्दाफ़ाश करें, व उनके प्रति-क्रान्तिकारी, शोवींवादी, आधिपत्य जमाने के इरादों का पर्दाफ़ाश करें, और यह सुनिश्चित करें कि क्रान्ति के सवाल पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षाओं को समझा और सही तौर पर लागू किया जाये ।

हमें क्रान्ति पर मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षाओं की रक्षा करनी व उन्हें कार्यान्वित करना चाहिये

मार्क्सवाद-लेनिनवाद हमें सिखाता है और सभी क्रान्तियों के अनुभव ने इसकी पुष्टि की है कि क्रान्ति के फूट पड़ने और उसकी विजय के लिये वस्तुगत व आत्मगत जागरूकता की स्थिति का मौजूद होना आवश्यक है ।

लेनिन ने अपनी पुस्तक "सेकण्ड इण्टरनैशनल का पतन" में इस शिक्षा के बारे में बताया और अपनी पुस्तक "'वाम-पक्षी' कम्यूनिज़्म, एक अपरिपक्व विकार" और दूसरे लेखों में इसका आगे विकास किया ।

क्रान्ति के लिये वस्तुगत स्थिति के रूप में क्रान्तिकारी परिस्थिति का सविस्तार वर्णन करते हुये लेनिन ने इसका इस प्रकार वर्णन किया :

गहरे संकट, जिसने शासक वर्गों को अन्तर्ग्रस्त कर रखा है, एक ऐसा संकट जो उत्पीड़ित वर्गों के बीच पीड़ा व असन्तोष पैदा करते हैं, की वजह से "१) जब शासक वर्गों के लिये अपने शासन को रूपपरिवर्तन किये बिना कायम रखना असम्भव हो

जाता है" ।* "सामान्यत:, क्रान्ति के फूट पड़ने के लिये," उन्होंने बताया कि, "सिर्फ़ यह काफ़ी नहीं है कि पुराने तरीकों में 'निम्न श्रेणियाँ रहना न चाहें'; यह भी ज़रूरी है कि, पुराने तरीकों में 'उच्च श्रेणियाँ रहने न पायें' ।" २) जब उत्पीड़ित वर्गों की ज़रूरतें और मुसीबतें उग्र हो जाती हैं... ३) जब ऊपर बताये गये कारणों की वजह से जनसमुदाय की कार्यवाहियों में बहुत बढ़ोत्तरी हो जाती है, जो... ऐतिहासिक महत्व की स्वतन्त्र कार्यवाहियों में... खींच लिये जाते हैं" ।**

"दूसरे शब्दों में, इस सत्य को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है : राष्ट्रीय स्तर पर संकट (जो शोषित और शोषक दोनों पर ही असर डालता है) के बिना क्रान्ति का होना असम्भव है ।***

"बिना इन वस्तुगत परिवर्तनों", उन्होंने जोर दिया कि "जो सिर्फ़ अलग दलों व पार्टियों की इच्छाओं पर ही नहीं बल्कि विभिन्न वर्गों की इच्छाओं पर भी, निर्भर नहीं है, एक क्रान्ति - आम तौर पर - असम्भव है" ।****

---

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २१, पृष्ठ २२३ (अल्बेनिया संस्करण)

** पहले वाला ही

*** वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३१, पृष्ठ ८३ (अल्बेनिया संस्करण)

**** वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २१, पृष्ठ २२३ (अल्बेनिया संस्करण)

लेकिन, लेनिन ने बताया, कि हर एक क्रान्तिकारी स्थिति क्रान्ति को जन्म नहीं देती है। उन्होंने बताया कि कई बार, जैसे कि १८६०-१८७० के सालों में जर्मनी में, या १८५९-१८६१ और १८७९-१८८० के सालों में रूस में, क्रान्तिकारी स्थितियाँ क्रान्ति में नहीं बदली गयीं क्योंकि आत्मगत जागरूकता की स्थिति मौजूद नहीं थी, यानि कि, क्रान्ति के लिये जनसमुदाय में ऊँचे स्तर की जागरूकता और तत्परता नहीं थी, और

"...क्रान्तिकारी वर्ग की उन क्रान्तिकारी जनसामुदायिक क्रियाओं को कार्यान्वित करने की योग्यता", नहीं थी, " जो क्रियायें", जैसा कि लेनिन ने बताया, "पुरानी सरकार, जो कभी भी, और संकट के समय में भी, अगर उसे नीचे 'धकेला' न जाये, तो अपने आप नहीं 'गिरती' है, को नष्ट करने (या उसे उसकी जगह से हटाने) के लिये काफ़ी शक्तिशाली है।"*

जैसा कि लेनिन ने अपनी शुरू की रचनाओं में लिखा था, आत्मगत जागरूकता की स्थिति को तैयार करने में, मज़दूर वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी, उसका नेतृत्व, क्रान्तिकारी जनसमुदाय की शिक्षा और गतिमानता निश्चयात्मक कार्यभाग अदा करते हैं। पार्टी इसको एक सही राजनीतिक कार्यदिशा बनाकर, जो कार्यदिशा यथार्थ स्थितियों और जनसमुदाय की क्रान्तिकारी इच्छाओं और मांगों के अनुकूल हो, और भारी मात्रा में काम, दोनों के जरिये यह हासिल करती है, जिस काम में गहरे और राजनीतिक रूप से अच्छी तरह विचार की

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २१, पृष्ठ २२३ (अल्बेनिया संस्करण)

गई क्रान्तिकारी क्रियायें शामिल हैं,जो क्रियायें सर्वहारा व मेहनतकश जनसमुदाय को उन परिस्थितियों के बारे में,जिनमें वे रह रहे हैं,अत्याचार व शोषण के बारे में,सरमायदारों के बर्बर कानूनों और गुलाम बनाने वाली प्रणाली का ध्वंस करने के लिये क्रान्ति की नितान्त आवश्यकता के बारे में,जागरूक करते हैं ।

इस तरह,गरीब श्रेणियां इतनी तीव्रता से प्रत्याक्रमण करेंगी कि अमीर और सरमायदार,जो सत्ता में हैं,और जो आन्तरिक और बाहरी अन्तर्विरोधों के कारण भी बुरी तरह से हिले हुये हैं,के लिये पहले की तरह शासन करना मुश्किल हो जायेगा । जब ये शर्तें पूरी हो जायेंगी,जब वस्तुगत व आत्मगत जागरूकता की स्थितियां,जो एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं,मौजूद होंगी,तब,सिर्फ़ क्रान्ति का फूट पढ़ना ही नहीं बल्कि उसकी विजय भी सम्भव होगी ।

क्रान्तिकारी हमेशा ही लेनिन के इन प्रतिभाशाली दावों पर गम्भीरता से विचार करते हैं,और वे सिर्फ़ इन पर विचार ही नहीं करते बल्कि परिस्थितियों का यथार्थ व सम्पूर्ण विश्लेषण भी करते हैं । वे यह सुनिश्चित करने के लिये काम करते हैं कि वे कभी भी अपने आपको क्रान्तिकारी परिस्थितियों में अचानक घिरा न पायें,ताकि वे इन निश्चयात्मक क्षणों में अपने आपको निहत्था न पायें, बल्कि क्रान्ति की तैयारी और उसको आरम्भ करने के लिये इनका इस्तेमाल करने के योग्य हो सकें ।

दुनिया की वर्तमान परिस्थितियों का विश्लेषण क्या दिखाता है ? क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त से शुरू होकर, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि इस समय दुनिया में परिस्थितियां आमतौर पर क्रान्ति-

कारी हैं, कि बहुत से देशों में यह परिस्थिति परिपक्व हो गई है, या तेज़ी के साथ परिपक्व हो रही है, जब कि अन्य देशों में इस क्रियाविधि का विकास हो रहा है ।

जब हम यह कहते हैं कि इस समय परिस्थिति क्रान्तिकारी है, इससे हमारा मतलब यह है कि इस समय दुनिया महान स्फोटनों की तरफ़ बढ़ रही है । आमतौर पर इस समय परिस्थिति ज्वालामुखी के विस्फोटन, एक प्रचण्ड अग्नि की तरह है, एक ऐसी अग्नि जो ठीक इन्हीं अत्याचारी व शोषणकारी ऊँचे शासक वर्गों को जला देगी ।

पूँजीवादी और सँशोधनवादी दुनिया भयँकर आर्थिक व राजनीतिक, वित्तीय व सैनिक, विचारधारात्मक व नैतिक सँकट की जकड़ में है । वर्तमान सँकट, जिसने सरमायदारी और सँशोधनवादी पद्धति की सम्पूर्ण सँरचना और उपरिसँरचना को पूरी तरह से हिला दिया है, ने पूँजीवादी प्रणाली के आम सँकटों को और भी गम्भीर व तीव्र बना दिया है ।

संकटों के परिणाम स्पष्ट रूप से बहुत गम्भीर और विनाशकारी हैं, विशेषकर आर्थिक छेत्र में । दूसरे विश्वयुद्ध के बाद का अत्यधिक गम्भीर आर्थिक सँकट १९७४ के बाद से और भी गहरा होता जा रहा है । इससे औद्योगिक उत्पादन की मात्रा में बहुत कमी हुई है : २० प्रतिशत जापान में, १५ प्रतिशत बर्तानिया में, १४ प्रतिशत सँयुक्त राज्य अमरीका में, १८ प्रतिशत फ्रान्स और इटली में, १० प्रतिशत जर्मन गणराज्य संघ में, इत्यादि । संकटों ने एक बहुत गहरा आर्थिक अवसाद पैदा किया है । बहुत से पूँजीवादी देशों में अर्थव्यवस्था की कुछ मुख्य शाखाओं में बिना इस्तेमाल की गई उत्पादक छमता २५-४० प्रतिशत तक पहुँच गई है और यही परिस्थिति सालों से चलती आ रही है । यही कारण है कि औद्योगिक उत्पा-

दन की गतिहीनतता जारी है । भारी संख्या में अधिशेष माल के संचय बिन-बिके रह जाते हैं ।

बिन-बिके माल के इन संचयों के बावजूद भी और हालांकि बहुत सी उत्पादन छमताओं का इस्तेमाल नहीं किया जाता है, फिर भी बढ़ती हुई कीमतों के कारण एकाधिकारों के मुनाफ़ों का बढ़ना जारी है । कीमतें दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही हैं, जबकि कुछ विशेष देशों में मुद्रास्फीति बहुत ऊँचे स्तर तक पहुंच गई है ।

कीमतों का बढ़ना, और विशेषकर मुद्राप्रसार, मज़दूर वर्ग और मेहनतकश लोगों के ऊपर संकट का भारी बोझ लादने के लिये, एकाधिकारों और पूंजीवादी व संशोधनवादी राज के हाथों में बहुत ही सुविधाजनक साधन बन गये हैं ।

मुद्राप्रसार को रोकने के बहाने, पूंजीवादी व सरमायदार-संशोधनवादी राज मेहनतकश जनसमुदायों की आय पर टैक्स बढ़ा देते हैं और उनके वेतनों का स्थिरीकरण कर देते हैं, और इसके साथ-साथ एकाधिकारों के मुनाफ़ों पर टैक्स घटा देते हैं और मुद्रा का विमूल्यन कर देते हैं, इत्यादि । ये उपाय मज़दूर वर्ग और सभी मेहनतकश लोगों के खिलाफ़ निर्दिष्ट किये गये हैं, और ये उपाय उन पर किये शोषण को बढ़ाते और उनके जीवन-निर्वाह के स्तर को कम करते हैं ।

लम्बे अरसे से चले आ रहे आर्थिक संकट ने मज़दूर वर्ग व किसान जनसमुदाय की रहने की स्थितियों को और भी ख़राब कर दिया है और उनके लिये जीवन और भी कठिन बना दिया है । बेरोज़गारी उस स्तर तक बढ़ गई है जो पहले कभी शायद ही देखी गई हो, और चिरकालिक, और सरमायदार व संशोधनवादी समाज का एक खास नासूर बन गयी है । पूंजीवादी-संशोधनवादी दुनिया में, ११ करोड़ लोगों को

बेरोज़गार कर दिया गया है । सिर्फ़ संयुक्त राज्य अमरीका में ही बेरोज़गार लोगों की संख्या ७०-८० लाख से कम नहीं है । इस समय, हज़ारों लाखों लोग भूखमरी की स्थिति में हैं या वास्तव में भूखे मर रहे हैं । हज़ारों लाखों लोग भविष्य की अनिश्चितता की चिन्ता से सताये जा रहे हैं ।

मेहनतकश लोगों के व्यापक जनसमुदाय के लिये गरीबी और अनिश्चितता, और इसके साथ साथ पूंजीवादी और सरमायदार-संशोधनवादी सत्ताओं द्वारा अनुसरण की गई प्रतिक्रान्तिकारी, आन्तरिक व बाहरी लोक-विरोधी नीतियों ने जनसंख्या की व्यापक श्रेणियों में असन्तुष्टी को और भी बढ़ा दिया है और निरन्तर बढ़ा रही है । इस भयंकर परिस्थिति ने उनके रोके न जा सकने वाले क्रोध को उत्तेजित कर दिया है जो कि हड़तालों, विरोधों, प्रदर्शनों में, सरमायदारी व संशोधन-वादी प्रणाली के दमनकारी अंगों के खिलाफ़ टक्करों में, और कई बार, वास्तविक विद्रोहों में भी प्रकट होता है । आम लोग उन पर शासन करने वाली सत्ताओं के प्रति और भी अधिक शत्रुतापूर्ण होते जा रहे हैं ।

संकट की इस परिस्थिति में भी, अपने अधिकतम मुनाफ़ों की रक्षा करने की कोशिश में, साम्राज्यवादी, पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों की सरकारें, जनसमुदाय के असन्तोष और क्रोध को शान्त करने, और उनके मन को क्रान्ति से पथविमुख करने के लिये, सभी प्रकार के छलपूर्ण वायदे और प्रस्ताव कर रही हैं ।

इसी बीच, गरीब और भी गरीब होते जा रहे हैं, और अमीर और भी अमीर होते जा रहे हैं, गरीब और अमीर सामाजिक श्रेणियों के बीच, विकसित पूंजीवादी देशों व अविक-सित देशों के बीच अन्तर और भी गहरे से गहरा होता जा

रहा है ।

वर्तमान संकट राजनीतिक जीवन तक भी फैल गया है, और पूंजीवादी व संशोधनवादी राज्यों के शासक गुटों के बीच अन्तर्विरोधों को उत्तेजित कर रहा है । इसका स्पष्ट सबूत है सरकारी संकटों में अत्यधिक बढ़ोतरी और सत्ता में आने वाले गुटों का बार-बार प्रतिस्थापन ।

मेहनतकश लोगों को धोखा देने और उनकी इन आशाओं को बढ़ाने कि नया गुट पुराने गुट से बेहतर होगा और उनको यह विश्वास दिलाने कि पुराना गुट संकटों के लिये और संकट से बाहर निकलने में असफल होने के लिये दोषी है जबकि नया गुट परिस्थितियों में सुधार लायेगा इत्यादि के उद्देश्य से सरमायदार और शासक दल अपने सरकारी गुटों के नेताओं को और भी बहुश: बदलने के लिये बाध्य हैं । यह सब धोखा, जो कि निरन्तर व्यापक स्तर पर किया जाता है, स्वतन्त्रता व लोकतन्त्र इत्यादि, के झूठे नारों से छिपाया जाता है, विशेषकर निर्वाचकीय अभियानों के दौरान । इसके साथ-साथ, पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों में सरमायदार हिंसा के अपने बर्बर उपकरणों, सेना, पुलिस, गुप्तचर सेवायें, न्यायालयों को, और सर्वहारा के सभी आन्दोलनों और कोशिशों पर अपने अधिनायकत्व के जरिये नियन्त्रण को, और भी मज़बूत कर रहा है । इस समय पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों में सरमायदारी हिंसा को बढ़ाने, और लोकतन्त्रीय अधिकारों पर रोक लगाने की एक स्पष्ट प्रवृत्ति है । ऐसे समय पर जब सरमायदार "लोकतन्त्रीय तरीकों" व साधनों से शासन करना असम्भव समझते हैं, देश के जीवन में तानाशाही के विकास की, और तानाशाही की स्थापना के लिये तैयारियों की प्रवृत्ति और भी अधिक स्पष्ट होती जा रही है ।

आर्थिक-वित्तीय और राजनीतिक संकट ने सिर्फ़ एका-धिकारों, सरकारों, और हर एक देश की राजनीतिक पार्टियों व शक्तियों को ही नहीं पकड़ा है बल्कि, अन्तर्राष्ट्रीय सह-योगी-संघों, आर्थिक, राजनीतिक व सैनिक संगठनों, जैसे कि यूरोपियन कामन मारकेट व कोमेकान, युरोपियन कम्यूनिटी, नेटो, वारसा ट्रीटी को भी । इन सहयोगी-संघों व टुकड़ियों के साझीदारों के बीच अन्तर्विरोध, मतभेद, द्वन्द्व और झगड़े, और भी खुल कर व तीव्रता के साथ सामने आ रहे हैं ।

इस संकट और इससे बच निकलने की कोशिशों, की अभि-व्यक्ति शस्त्रों की होड़, युद्ध के लिये सब-तरफ़ा तैयारी, और महा-शक्तियों व दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा स्थानीय युद्धों को, जैसे कि मिडिल ईस्ट, हार्न आफ़ अफ़्रीका, पश्चिमी सहारा, इण्डोचीन, और दूसरी जगहों में, भड़कने से देखी जा सकती है । यह रास्ता एक या दूसरी साम्राज्यवादी शक्ति की आधिपत्य जमाने वाली व प्रसारवादी योजनाओं के काम आता है । यह युद्ध उद्योग व हथियारों के व्यापार को बनाये रखता व उसका विकास करता है, जो इस समय अपूर्व स्तरों तक पहुँच गये हैं ।

लेकिन ये सब राजनीतिक व सैनिक साधन सिर्फ़ सान्त्वना-दायक ही हैं जो भयंकर रूप से रूग्ण पूँजीवादी संशोधनवादी प्रणाली की बीमारियों का न तो इलाज करते हैं, और न ही कर सकते हैं ।

पूँजीवादी व समाजवादी दुनिया के आर्थिक व राज-नीतिक संकट में अभूतपूर्व विचारधारात्मक व नैतिक संकट को भी शामिल करना चाहिये । ऐसी विचारधारात्मक द्विविधा और नैतिक भ्रष्टाचार जो इस समय देखे जा रहे हैं, पहले किसी भी समय नहीं देखे गये । पहले कभी भी सरमायदारी सिद्धान्तों

के इतने सारे दाँयपक्षी, मध्यपक्षी या "वामपक्षी" विभिन्न रूपों को अधार्मिक व धार्मिक, पुरातन व आधुनिक, खुले रूप से मार्क्सवाद-विरोधी व अभिकथित रूप से कम्यूनिस्ट और मार्क्सवादी भेषों में, गढ़ा गया । इतना नैतिक भ्रष्टाचार, रहने का इतना पतित तरीका या इतना अधिक अध्यात्मिक पतन पहले किसी भी समय नहीं देखा गया । इतने प्रयत्नों के साथ बनाये गये सरमायदारी व संशोधनवादी सिद्धान्त, जिनका "पुराने समाज की बुराइयों से उद्धार पाने के रास्ते" के रूप में शान के साथ गुणगान किया गया था, जैसे कि "पूंजीवाद का अन्तिम स्थायीकरण", "लोक पूंजीवाद", "उपभोग्य समाज", "परा-औद्योगिक समाज", "संकटों से बचने", "तकनीकी-वैज्ञानिक क्रान्ति", ख्रुश्चेववादी "शान्तिपूर्ण सहास्तित्व", "सेनाओं, हथियारों और युद्धों से रहित दुनिया", "मानवीय समाजवाद", इत्यादि, इत्यादि, के सिद्धान्तों को अब उनकी नींव तक हिला दिया है ।

आम संकट के ये सब पहलू युगोस्लाविया, जहाँ इस संकट के परिणाम साफ़ तौर पर जाहिर हैं, बल्कि सामाजिक-साम्राज्यवादी सोवियट संघ और दूसरे संशोधनवादी देशों में भी पाये जाते हैं । इन देशों में हर जगह अत्याचार और शोषण बढ़ा दिया गया है, ये सभी देश पूंजीवाद की बुराइयों से, और नेताओं व उच्च स्तरों की श्रेणियों में सत्ता और विशेष-अधिकारों के लिये हो रहे झगड़ों और संघर्षों से कष्ट पा रहे हैं; हर जगह आम लोग असन्तोष व क्रोध से उबल रहे हैं । इसलिये, इन देशों में भी क्रान्ति की अत्यधिक सम्भावनायें मौजूद हैं । क्रान्ति का नियम वहां भी हर दूसरे सरमायदार देशों की तरह ही लागू होता है ।

पूंजीवाद के वर्तमान आम संकट, जिसकी प्रवृत्ति निरन्तर

गहरा होने की है,की ठीक इसी स्थिति से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि अधिकांश पूंजीवादी और संशोधनवादी देशों में क्रान्तिकारी स्थिति पहले से ही आच्छादित है या आच्छादित होने की क्रियाविधि में है,और इसलिये इस स्थिति ने क्रान्ति को दिन प्रतिदिन का विषय बना दिया है ।

सरमायदार व संशोधनवादी,क्रान्ति का गला घोंटने की अपनी भविष्यवाणियों व चालों में हुई अपनी पराजयों व संकट के हमेशा बढ़ते हुये दबाव के कारण,नयी तरकीबों को खोजने व अन्य फ़रेबी सिद्धान्तों को गढ़ने की कोशिश कर रहे हैं ।

इस समय आधुनिक संशोधनवादियों ने पूंजीवादी प्रणाली की रक्षा करने,लोगों का अत्याचार और शोषण करने,क्रान्तिकारी व मुक्ति आन्दोलन में फूट डालने के लिये,और आम तौर पर जनसमुदाय को धोखा देने का बीड़ा उठा लिया है । लेकिन इनका भी वैसा ही अन्त होगा जैसा कि पहले सामाजिक-लोकतन्त्रवादियों और दूसरे मौकापरस्तों का हुआ था,जो कि सरमायदारों के पूरे चाटुकार बन गये थे ।

अपने गहरे आर्थिक,राजनीतिक,व विचारधारात्मक संकटों की इस वर्तमान परिस्थिति में,सरमायदार यह मांग कर रहे हैं कि उनके संशोधनवादी नौकर और भी खुले रूप से उनकी सहायता करें । यह इन संशोधनवादियों को अपना छद्मवेश और भी छोड़ देने के लिये,व और भी ज़्यादा पूरी तरह से बदनाम होने के लिये मजबूर करता है । लेनिन ने कहा है :

"मौकापरस्त सर्वहारा क्रान्ति के सरमायदार दुश्मन हैं, जो शान्ति के समय गुप्त रूप से अपना सरमायदारी काम करते रहते हैं,मज़दूरों की पार्टियों में अपने आप को गुप्त रूप से

रखते हैं, जब कि संकटों के समय ये तुरन्त ही सरमायदारों के रूढ़िवादी भाग से लेकर सबसे उन्मूलनवादी व लोकतन्त्रीय भाग तक, स्वतन्त्र विचारकों से लेकर धार्मिक व पादरी श्रेणियों तक, सम्पूर्ण एकीकृत सरमायदारों के खुले सहयोगी साबित होते हैं"।•

लेनिन का यह वैज्ञानिक निश्कर्ष, आधुनिक संशोधनवादियों द्वारा इस समय संकट-ग्रस्त पूंजीवादी प्रणाली को दी गई सेवा से पूर्ण रूप से साबित होता है ।

इटली का उदाहरण लीजिये, एक प्रारूपिक देश, जिसमें पूंजीवाद का पतन, उसके आर्थिक आधार और ऊपरिसंरचना में देखा जाता है । दूसरे विश्व युद्ध के बाद से अब तक, बड़े सरमायदारों की पार्टी, वैटिकन की पार्टी, क्रिश्चियन डेमोक्रेट, जिसने सभी धार्मिक प्रतिक्रान्तिकारी सरमायदारों और दांय-पक्षी लोगों को अपने साथ इकट्ठा कर रखा है, इटली में सत्ता में रही है। उनकी सरकार उस देश पर शासन कर रही है, जो दिवालियेपन की हालत में है । १९४५ से अब तक सरमायदारों की उच्च श्रेणियां ऐसे भयंकर संकटों की जकड़ में रही हैं कि उस अवधि के दौरान करीब करीब ४० सरकारें एक के बाद एक शासन में आईं, "इकरंगी" क्रिश्चियन डेमोक्रेट, समाजवादी-क्रिश्चियन-डेमोक्रेट, त्रिपक्षीय, क्रिश्चियन-डेमोक्रेट-समाजवादी-सामाजिक-लोकतन्त्रीय, "मध्य वामपक्षी" सरकारें, "मध्य दांयपक्षी" सरकारें, इत्यादि ।

इटली में यह भारी सरकारी संकट, आन्तरिक आम संकटों की उस परिस्थिति को दिखलाता है जिससे बाहर निकलने

• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २१, पृष्ठ १०६ (अल्बेनिया संस्करण)

का कोई रास्ता नहीं है । झगड़े, हमले, राजनीतिक हत्याऐं और लोकापवाद जैसे कि राष्ट्रपति लीओन को सत्ता से हटाना, क्रिश्चियन डेमोक्रेट पार्टी के नेता मोरो की हत्या इत्यादि, जो कि और भी बहुश: हो रहे हैं, इन संकटों के परिणाम हैं ।

इटली, संयुक्त राज्य अमरीका का सेतु-शिखर बन गया है । इसकी दिवालिया अर्थ-व्यवस्था, जो अमरीकी साम्राज्यवाद के पंजे में पड़ गयी है, यूरोपियन कामन मार्केट से भी सम्बन्धित है, जिसमें यह सबसे कम नियन्त्रण रखने वाला भागीदार है ।

इस परिस्थिति के परिणामस्वरूप, इटली में व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय कंगाल बन गया है, व और भी कंगाल बन रहा है । यूरोपियन कामन मार्केट के देशों में से इटली में सबसे अधिक बेरोज़गारी है । इटली से श्रम-शक्ति का सबसे अधिक उत्प्रवास होता है और उसका आयात, निर्यात से कहीं अधिक है । यूरोपियन कामन मार्केट के सदस्य देशों, विशेषकर पश्चिम जर्मनी और फ्रांस ने इटली से अपने लिये खाद्य-सामग्री की खरीददारी पर रोक लगाकर इटली की कृषि-व्यवस्था में एक कठिन परिस्थिति पैदा की है । इटली से निर्यात किये जाने वाले मक्खन, दूध और फल के दाम बहुत तेज़ी से गिर गये हैं जबकि इस देश में जीवन-निर्वाह का खर्च अत्यधिक बढ़ गया है । इटली बड़ी हड़तालों का एक देश बन गया है, जिन हड़तालों में, भारी व लघु उद्योग और परिवहन के मज़दूरों से लेकर डाकियों, हवाई यातायात कर्मीदल और यहां तक कि पुलिस भी भाग लेती है ।

असन्तोष से उबलती हुई ऐसी परिस्थिति जिसमें जनसमुदाय व क्रान्ति का हित इस बात में है कि सर्वहारा व सभी

लोगों के इस अत्यधिक असन्तोष को, प्रतिक्रियावादी सरमायदारों के खिलाफ़, और तानाशाही हमले, जिनको करने की वे कोशिश कर रहे हैं, की तैयारी के खिलाफ़, लड़ाई की ओर ले जाया जाये, ऐसी स्थिति में इटली के संशोधनवादी और सुधारवादी मज़दूर-संघ, सम्पूर्ण मज़दूर अभिजाततन्त्र, इसके साथ साथ "तीन दुनियाओं" के चीनी सिद्धान्त के समर्थक क्रान्ति की आग को बुझाने के लिये अग्निशामकों व सरमायदारी प्रणाली के रक्षकों की तरह काम कर रहे हैं ।

इस सड़ी-गली सरमायदारी पद्धति की रक्षा, तानाशाह पार्टी से लेकर बरलिंगवर की संशोधनवादी पार्टी तक, सभी पार्टियों द्वारा की जाती है । इटली की संशोधनवादी पार्टी, इस सरमायदारी पद्धति को, जो नींव तक हिल चुकी है, सत्ता में रखने के लिये ही सरमायदारों के साथ एकीकृत है । इस झूठ को फैला कर कि यह एक ऐसे मार्क्सवाद का अनुसरण व इसका इस्तेमाल कर रही है जो इस देश की स्थितियों के अनुकूल है, यह पार्टी इटली के सर्वहारा के क्रान्तिकारी प्रवेग को कमज़ोर व उसका दमन करने की कोशिश कर रही है ।

बरलिंगवर काफ़ी पहले से क्रिश्चियन डेमोक्रेट पार्टी के लोगों के साथ समझौता वार्ता ही नहीं कर रहा था, बल्कि उसने उनके साथ समझौता भी किया, और अवश्य ही, सरकार में औपचारिक रूप से भाग लिये बिना, वह बहुत से विषयों पर उनके साथ मिल कर शासन कर रहा था । सरकार इस पार्टी का समर्थन करती है, लेकिन इसके साथ साथ, दिखावे के लिये यह आडम्बर रचती है कि यह उससे सहमत नहीं है । इटली की संशोधनवादी पार्टी अपना कार्यभाग अदा करने के लिये, यही खेल खेल रही है ।

इटली के संशोधनवादी इटली की संसदीय अधिसंख्या की

पाँच पार्टियों की सहमति से बनाये गये एक सरकारी कार्यक्रम के बारे में शोर मचा रहे हैं, जिसका वे अपने देश में एक "महत्व-पूर्ण विजय", और "नई राजनीतिक कार्यविस्था" बता कर गुणगान कर रहे हैं। लेकिन जिस राजनीतिक कार्यविस्था की बरलिंगवर बात कर रहा है, यह कार्यविस्था इटली की पूंजी की योजनाओं में संशोधनवादी पार्टी का शामिल हो जाना है। बरलिंगवर इसको एक गम्भीर, यथार्थवादी और हठवाद-रहित समझौता बताता है। वह यह दावा करता है कि यह समझौता सिर्फ़ पार्टियों के बीच राजनीतिक सम्बन्ध में ही नहीं, बल्कि देश के सम्पूर्ण आर्थिक, सामाजिक और राजकीय जीवन में भी परिवर्तन लायेगा।

इस तरह इटली के संशोधनवादी ठीक उसी रास्ते पर गिरते जा रहे हैं जिसे लेनिन ने उन विभिन्न मौकापरस्तों के लिये पूर्वसूचित किया था, जो मौकापरस्त जनसमुदाय के क्रान्ति-कारी आवेग को रोकने के लिये पूंजी के साथ एक होने की कोशिश करते हैं। इस एकता के साथ, वे सोचते हैं कि उन्होंने बहुवाद के जरिये समाजवाद को प्राप्त करने के अपने लक्ष्य में कुछ प्रगति की है। स्पष्टतया, यह एक स्वप्न के अलावा और कुछ नहीं है, और इटली की सीनेट का सभापति अमीन-टोरे फ़ानफ़ानी बिल्कुल गल्त नहीं है जबकि वह पाँच पार्टियों के बीच इस समझौते को स्वप्नों का एक संग्रह बताता है। इटली के संशोधनवादियों के लिये यह स्वप्नों का एक संग्रह है, जबकि पूंजी की शक्तियों के लिये, किसी भी हालत में यह एक स्वप्न नहीं है, बल्कि, इटली में कम्यूनिज़्म के विचारों का ध्वंस करने, और इटली के लोगों और सर्वहारा के दावों को इन्कार करने और नये समाज के निर्माण के लिये उनके संघर्षों का दमन करने के लिये, अच्छी तरह सोच समझ कर तैयार किया

गया काम है । इटली के संशोधनवादियों को अब कुछ टुकड़े मिल रहे हैं, लेकिन इस बात का दावा करके कि सरकार को संशोधनवादी पार्टी की सहभागिता की ज़रूरत है, वे, जल में मछली की तरह पार्टी को पूर्णरूप से सरकार में लाने की कोशिश कर रहे हैं। मतलब यह है कि, इटली की संशोधनवादी पार्टी इटली की एकाधिकार पूंजी के प्रतिक्रियावादी घालमेल में पूरी तरह से अन्तर्ग्रस्त हो जाने की कोशिश कर रही है ।

बरलिंगवर की पार्टी विचारधारात्मक रूप से बिलकुल पतित पार्टी है, जिसका कार्यक्रम पूर्ण रूप से सुधारवादी, संसदीय-वादी व सामाजिक-लोकतन्त्रीय है। यह छद्मरूपी-लोकतन्त्रीय संविधान द्वारा स्थापित की गई पद्धति का समर्थन करती है, जिसके व्यवस्थापन में टोगलियाटी के नेतृत्व में इटली के "कम्यूनिस्टों" ने स्वयं भाग लिया था। ठीक इसी संविधान के अन्तर्गत प्रतिक्रियावादी और पादरी सरमायदार इटली में कानून बना रहे हैं और तीन दशकों से सर्वहारा और व्यापक जनसमुदाय पर अत्याचार कर रहे हैं । इटली के तथाकथित कम्यूनिस्ट इस अत्याचार को उचित और संविधान के अनुरूप पाते हैं ।

इटली की संसद के अन्दर व बाहर, समाचार माध्यम, टेलीविज़न और रेडियो के जरिये, इटली की संशोधनवादी पार्टी सरमायदारों की दूसरी पार्टियों के साथ, जिनका नेतृत्व क्रिश्चियन डेमोक्रेट पार्टी के हाथों में है, सर्वहारा की क्रान्ति-कारी इच्छाशक्ति और मेहनतकश जनसमुदाय की राजनीतिक जागरूकता को कमज़ोर करने के लिये बेलगाम बाज़ारूपन की नीति को कार्यान्वित कर रही है, जो इटली के लोगों को दिन-प्रति-दिन बेवकूफ़ बनाती, द्विविधा में डालती और विघटित करती है ।

इटली के प्रतिक्रियावादियों को और वेटिकन को इन सब कार्यवाहियों की बहुत ज़रूरत है । इटली की संशोधनवादी पार्टी, क्रान्ति में बाधा डालने, सरमायदारों को उनकी कठिन परिस्थितियों से निकालने और मौजूदा पद्धति के ध्वंस को रोक देने के लिये, सर्वहारा के नेतृत्व में जनसमुदाय के क्रान्तिकारी आन्दोलनों का दमन करने की कोशिश कर रही है ।

एक और उदाहरण लीजिये, स्पेन का । फ्रैन्को की मौत के बाद, स्पेन में राजा युआन कारलोस सत्ता में आया । यह स्पेन के बड़े सरमायदारों का प्रतिनिधि है, जो यह देख कर कि तानाशाही सत्ता ने अपने लम्बे शासन के दौरान देश को एक गम्भीर संकट में डाल दिया था, इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि स्पेन पर अब फ्रैन्को के समय की तरह शासन नहीं किया जा सकता है । इसलिये सरकार के रूप में कुछ परिवर्तन करने होंगे और फ्रैन्को की बदनाम फेलेंज (फ्रैन्को की तानाशाही पार्टी) को अब सत्ता में नहीं रखा जा सकता है । सरकार के उच्च पदाधिकारियों में बहुत से परिवर्तनों के बाद, राजा के सबसे विश्वसनीय लोगों, सुधार किये गये फ्रैन्कोवाद को जारी रखने वालों, को सत्ता में ले आया गया ।

स्पेन में ऐसे प्रदर्शन और हड़तालें फूट पड़ीं जैसा पहले कभी नहीं हुआ था । इनके जरिये लोगों ने परिवर्तनों की मांग की, स्वभावत: इस "परिवर्तन" की नहीं जो हुआ, बल्कि गम्भीर और मूलभूत परिवर्तनों की । हड़तालें, प्रदर्शन और मुठभेड़ें वहां बन्द नहीं हुई हैं और अभी तक जारी हैं । लोग स्वतन्त्रता और अधिकारों की मांग कर रहे हैं, और विभिन्न राष्ट्रीकतायें स्वायत्त शासन की । इस परिस्थिति में, विद्रोह कर रहे जनसमुदाय को गुमराह करने के लिये, युआन कारलोस की सरकार ने इबारुरी-करिल्लो की संशोधनवादी पार्टी को

वैधानिक भी बना दिया । इस पार्टी के नेता स्पेन के एक-राजाधिपत्य शासन के आज्ञाकारी चाटुकार बन गये हैं,व उस महान क्रान्तिकारी आवेग,जो मौजूदा परिस्थितियों में और भी बढ़ गया है,को रोकने और सरमायदारों के सहयोग में, स्पेनिश युद्ध के बारे में क्रान्तिकारी विचार रखने वाले सभी लोगों व रिपब्लिक के प्रशंसकों का दमन करने के लिये दलाल बन गये हैं ।

यहाँ भी,हम स्पेन की संशोधनवादी पार्टी का वही अग्नि-प्रशामक कार्यभाग देखते हैं,जो इटली की संशोधनवादी पार्टी द्वारा अदा किया जाता है,हालाँकि इसके पास इटली की संशोधनवादी पार्टी से कम सत्ता है ।

फ़ान्स,जापान,संयुक्त राज्य अमरीका,ब्रतानिया,पुर्तगाल और दूसरे सभी पूंजीवादी देशों में भी संशोधनवादी पार्टियाँ सरमायदारी पद्धति की रक्षा करने के लिये यही कार्यभाग अदा कर रही हैं,और इस तरह इसको संकटों और क्रान्ति-कारी परिस्थितियों पर काबू पाने,और सर्वहारा व दूसरे उत्पीड़ित व शोषित जनसमुदाय जो यह और भी अच्छी तरह से समझ रहे हैं कि अब "उपभोक्ता समाज" और अन्य शोषण-कारी समाजों में रहना सम्भव नहीं है,और जो पूंजीवादी राजनीतिक और आर्थिक पद्धति के खिलाफ़ विद्रोह कर रहे हैं को द्विविधा में डालने और गतिहीन करने के योग्य बना रहीं हैं ।

संशोधनवादी पार्टियाँ लेनिनवाद के प्रति खासतौर से शत्रुतापूर्ण हैं । इसका मतलब यह है कि वे क्रान्ति के प्रति शत्रुतापूर्ण हैं,क्योंकि लेनिन ही ने सर्वहारा क्रान्ति के सिद्धान्त को परिपूर्णता तक सिद्ध किया था,और रूस में इसको अभ्यास में लगाया था । इसी सिद्धान्त के आधार पर अल्बेनिया और

दूसरे देशों में समाजवादी क्रान्ति की विजय हुई है। लेनिनवादी सिद्धान्त,जो सभी जगह क्रान्ति की विजय का रास्ता दिखाता है,संसदीय रास्ते के जरिये समाजवाद में शान्तिपूर्ण अवस्थापरिवर्तन के प्रतिक्रान्तिकारी संशोधनवादी सिद्धान्त की व्यर्थता को प्रकट करता है,जो शान्तिपूर्ण अवस्थापरिवर्तन, इन संशोधनवादी सिद्धान्तों के अनुसार सरमायदारी राज उपकरण को नष्ट किये बिना, और यहां तक कि शान्तिपूर्ण समाजवादी रूपपरिवर्तनों के लिये इसका इस्तेमाल करके,और सर्वहारा व उसकी अग्रगामी पार्टी के नेतृत्व या सर्वहारा अधिनायकत्व की ज़रूरत के बिना किया जा सकता है ।

ठीक इन्हीं क्रान्तिकारी छणों में,जब पूंजीवादी जंजीर की सबसे कमज़ोर कड़ियों में क्रान्ति फूट पड़ने की महान सम्भावनायें हैं,जब सर्वहारा की वर्ग जागरूकता को बढ़ाने, आत्मगत जागरूकता की स्थिति को तैयार करने,मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त,जो सर्वहारा और दूसरे उत्पीड़ित जन-समुदायों द्वारा राजसत्ता पर अधिकार करने का सच्चा रास्ता दिखाता है,की सत्यता और उसके विश्वव्यापी स्वभाव में विश्वास को बढ़ाने की अत्यधिक आवश्यकता है,तब संशोधनवादी,सरमायदारों को क्रान्ति का सामना करने व उसको रोक देने की उनकी कोशिशों के लिये उनकी अनमोल सेवा कर रहे हैं । इसीलिये सरमायदार,संशोधनवादी पार्टियों और मज़दूर-संघों को क्रान्ति और कम्यूनिज़्म के खिलाफ़ लड़ाई में हर तरीके से अपने प्रभाव में लाने की कोशिश कर रहे हैं । ठीक यही वह उद्देश्य है जिसको सम्पूर्ण अमरीकी साम्राज्यवाद,विश्व पूंजीवाद और हर एक देश के सरमायदार प्राप्त करने का इरादा रखते हैं । सरमायदार चाहते हैं कि संशोधनवादी पार्टियां "कम्यूनिस्ट" रंगों के साथ काम करके,और

परिस्थिति को बदलने व एक नये मिश्रज समाज का निर्माण करने के लिये अभिकथित रूप से लड़ते हुये, खुलेतौर व पूरी तरह से अपने आप को पूंजी की सेवा में लगा दें, एक ऐसा मिश्रज समाज जिसमें सिर्फ़ मालिक वर्ग व धनी वर्ग के ही नहीं बल्कि अभिकथित रूप से गरीब वर्ग के भी अधिकार होंगे, और जिसमें संशोधनवादी "कम्यूनिस्ट" पार्टियाँ और समाजवादी पार्टियाँ अपने आप को गरीब वर्गों का प्रतिनिधि और प्रजेता बतायेंगी।

सत्ताधारी संशोधनवादी, विशेषकर, युगोस्लाव, सोवियट और चीनी संशोधनवादी, क्रान्ति को रोकने और कुचल देने के संघर्ष में विश्व पूंजीवाद की अत्यधिक सेवा कर रहे हैं।

युगोस्लाव संशोधनवादी लेनिनवाद के घोषित दुश्मन हैं। वे, समाजवादी क्रान्ति के नियमों के विश्वव्यापी स्वभाव, जो अक्टूबर की क्रान्ति में समाविष्ट है और क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त में प्रतिबिम्बित है, से इन्कार करने वाले सबसे उग्र प्रचारक हैं। वे यह उपदेशदेते हैं कि अभिकथित रूप से इस समय दुनिया स्वचालित ढंग से समाजवाद की ओर बढ़ रही है, इसलिये क्रान्ति, वर्ग संघर्ष आदि की कोई ज़रूरत नहीं है। युगोस्लाव संशोधनवादी "आत्म-प्रशासन" की अपनी पूंजीवादी प्रणाली को सच्चे समाजवाद के नमूने के रूप में प्रस्तुत करते हैं, और यह दावा करते हैं कि यह "स्टालिनवादी" समाजवाद की "बुराइयों" और पूंजीवाद की बुराइयों दोनों ही के लिये एक अचूक दवा है। उनके अनुसार, इस प्रणाली की स्थापना के लिये अभिकथित रूप से हिंसापूर्ण क्रान्ति, सर्वहारा अधिनायकत्व, राज की समाजवादी मिलकियत, या लोकतन्त्रीय केन्द्रीयतावाद की ज़रूरत नहीं है। "आत्म-प्रशासन" की स्थापना, शासक गुटों के बीच, मालिक और मज़दूरों के बीच, सरकार और सम्पत्ति के मालिकों के बीच समझौते और सह-

योग द्वारा शान्तिपूर्वक और धीरे-धीरे की जा सकती है ।

क्योंकि युगोस्लाव संशोधनवाद लेनिनवाद का दुश्मन है, और क्रान्ति का ध्वंस करता है,इसलिये अन्तर्राष्ट्रीय पूंजीवाद और विशेषकर अमरीकी साम्राज्यवाद,टीटोवादी युगोस्लाविया को आर्थिक,भौतिक,राजनीतिक और विचारधारात्मक सहायता देने में इतना "उदार" है ।

कथनी में,सोवियट संशोधनवादी लेनिनवाद और क्रान्ति के लेनिनवादी सिद्धान्त को अस्वीकार नहीं करते हैं लेकिन अभ्यास में वे अपनी प्रतिक्रान्तिकारी विचारपद्धति और क्रियाओं के जरिये उससे लड़ाई करते हैं । उनको सर्वहारा क्रान्ति से उतना ही डर है जितना अमरीकी साम्राज्यवादियों या किसी दूसरे देश के सरमायदारों को है क्योंकि उनके अपने ही देश में क्रान्ति उनको गद्दी से गिरा देती है,और उनसे उनकी सत्ता व वर्ग विशेषाधिकार छीन लेती है,जबकि दूसरे देशों में विश्व आधिपत्य के लिये उनकी नीतियुक्त योजनाओं को नष्ट कर देती है ।

सोवियट संघ और दूसरे देशों में सर्वहारा और मेहनतकश लोगों को धोखा देने के लिये ये अपने आप को अक्टूबर क्रान्ति को जारी रखने वालों और लेनिनवाद के अनुयायियों के रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश करते हैं । अपने देश में संशोधनवादी शासन के खिलाफ़ किये गये मेहनतकश लोगों के किसी भी असन्तोष, विद्रोह,और क्रान्तिकारी आन्दोलनों का ध्वंस करने, और उनको "प्रतिक्रान्तिकारी","समाजवाद-विरोधी"कार्य बता कर उनका दमन करने के लिये वे "विकसित समाजवाद" और "कम्यूनिज्म में अवस्थापरिवर्तन" की बात करते हैं । अपने देश के बाहर,सामाजिक-साम्राज्यवाद की प्रसारवादी और आधिपत्य जमाने वाली योजनाओं के वास्ते रास्ता खोलने के लिये

ये अपने मार्क्सवाद-विरोधी व लेनिनवाद-विरोधी सिद्धान्तों और अभ्यासों को छिपाने के लिये "लेनिनवाद" का,नकाब के रूप में इस्तेमाल करते हैं ।

सोवियट संशोधनवादी विकसित पूंजीवादी देशों में इस समय हिंसापूर्ण क्रान्ति को बहुत खतरनाक बताते हैं,जबकि, उनके अनुसार,कोई भी क्रान्तिकारी विद्रोह तापनाभिकीय विश्व युद्ध में बदला जा सकता है,जो मानव जाति का सर्वनाश कर देगा । इसलिये,ये क्रान्ति के शान्तिपूर्ण रास्ते, और संसद को "सरमायदारी लोकतन्त्र के उपकरण से मेहनतकश लोगों के लोकतन्त्र के उपकरण में" बदलने के रास्ते को,इस समय, सबसे उपयुक्त रास्ता बताते हैं । ये "डेटाण्ट",तनाव का यह तथाकथित कम होने,जो सोवियट विदेश नीति के लक्ष्यों की सेवा करता है,को "वर्तमान विश्व विकास की आम प्रवृत्ति" के रूप में बताते हैं , जो अभिकथित रूप से विश्व स्तर पर क्रान्ति को शान्तिपूर्ण विजय की ओर ले जायेगा ।

बाज़ारू मतलबों के लिये ये सर्वहारा अधिनायकत्व से इन्कार नहीं करते हैं,यही नहीं,ऐसा कहकर कि विशेष हालतों में,हिंसापूर्ण क्रान्ति का भी इस्तेमाल किया जा सकता है,ये सिद्धान्त में इसकी रक्षा करते हैं । लेकिन इनको इन घोषणाओं की ज़रूरत है,विशेषकर उन षड्यन्त्रों और हथियारबन्द विद्रोहों को उचित बताने के लिये,जिनको ये राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों को सही रास्ते से गुमराह करने और उनको अपने आधिपत्य में रखने इत्यादि, के लिये, एक देश या दूसरे देश में सोवियट-पक्षीय प्रतिक्रियावादी शासनों व गुटों को स्थापित करने के लिये आयोजित करते हैं ।

अब संशोधनवादी चीन भी,क्रान्ति की आग बुझाने वाला एक उत्सुक अग्निशामक बन गया है ।

चीनी संशोधनवादियों की पूरी सम्पूर्ण आन्तरिक व विदेश नीति क्रान्ति के खिलाफ़ निर्दिष्ट की गई है, क्योंकि क्रान्ति, एक साम्राज्यवादी महाशक्ति बनने की चीन की नीति में गड़बड़ पैदा करती है ।

चीन में संशोधनवादी नेतृत्व, अपनी सरमायदारी-प्रति-क्रान्तिकारी विचारपद्धति और कार्यों के खिलाफ़ किये गये मज़दूर वर्ग और दूसरे मेहनतकश लोगों के किसी भी क्रान्तिकारी विद्रोह का बर्बरता से दमन कर रहा है। ये हर एक तरीके से वर्तमान युग के अन्तर्विरोधों, विशेषकर, श्रम और पूंजी के बीच के, और सर्वहारा व सरमायदारों के बीच के अन्तर्विरोधों को छिपाने की कोशिश कर रहा है । चीनी संशोधनवादी कहते हैं कि इस समय दुनिया में सिर्फ़ एक अन्तर्विरोध है, यानि कि दोनों महाशक्तियों के बीच का अन्तर्विरोध, जिसे वे एक ओर, संयुक्त राज्य अमरीका और दुनिया के सभी दूसरे देशों, और दूसरी ओर सोवियट-सामाजिक साम्राज्यवाद के बीच का अन्तर्विरोध बताते हैं । वे अपने आप को इस झूठे गढ़े हुये सिद्धान्त पर आधारित करके, हर एक देश के सर्वहारा और लोगों से, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद से पैदा होने वाले खतरे के खिलाफ़ "जन्मभूमि और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिये", अपने-अपने देश के सरमायदारों के साथ मिल जाने की मांग कर रहे हैं । इस तरह चीनी संशोधनवादी जनसमुदायों को क्रान्ति और मुक्ति संघर्ष का परित्याग करने का उपदेश दे रहे हैं ।

चीनी संशोधनवादियों के लिये सर्वहारा और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन क्रान्ति एक सामयिक विषय नहीं है, इसलिये भी क्योंकि, उनके अनुसार दुनिया में कहीं भी क्रान्तिकारी परिस्थिति नहीं है । इसलिये, ये सर्वहारा को सलाह देते हैं

कि वे अपने आपको पुस्तकालयों में बन्द कर लें और "सिद्धान्त" का अध्ययन करें, क्योंकि क्रान्तिकारी क्रियाओं का समय अभी नहीं आया है। इस प्रसंग में, यह स्पष्ट है कि चीनी संशोधनवादियों की नीति कितनी शत्रुतापूर्ण और प्रतिक्रान्तिकारी है, जो मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन में फूट डाल रहे हैं, और पूंजी के खिलाफ़ संघर्ष में मज़दूर वर्ग की एकता में बाधा डाल रहे हैं।

चीनी समाचार-माध्यम और प्रचार, और इसके साथ-साथ चीनी नेताओं के भाषण, उन बड़े प्रदर्शनों और हड़तालों का जिक्र भी नहीं करते हैं, जिनको सम्पूर्ण सर्वहारा इस समय विभिन्न पूंजीवादी देशों में आयोजित कर रहा है। ऐसा इसलिये है क्योंकि ये जनसमुदायों के विद्रोह को बढ़ावा देना नहीं चाहते हैं, क्योंकि वे नहीं चाहते हैं कि सर्वहारा अत्याचार और शोषण के खिलाफ़ अपनी लड़ाई में इन परिस्थितियों का उपयोग करे। उनके आडम्बरपूर्ण शब्दों वाले और सारहीन नारे, कि "देश स्वतन्त्रता चाहते हैं, राष्ट्र मुक्ति चाहते हैं, और लोग क्रान्ति चाहते हैं", कितने कपटी सुनाई पड़ते हैं।

चीनी संशोधनवादियों का यह दावा कि दुनिया में इस समय क्रान्तिकारी परिस्थितियां नहीं हैं सिर्फ़ वास्तविकता के विपरीत ही नहीं है, बल्कि वे यह मांग भी करते हैं कि सर्वहारा अपनी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के साथ हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाये और कोई भी क्रान्तिकारी क्रिया न करे, और क्रान्ति की तैयारी के लिये कोई भी काम न करे। बहुत समय पहले कम्यूनिस्ट इण्टरनेशनल की दूसरी कांग्रेस में, लेनिन ने इटली के सीराटी द्वारा प्रकट किये गये ऐसे आत्मसमर्पणवादी विचारों की आलोचना की थी, जिन विचारों के अनुसार क्रान्तिकारी परिस्थिति के न होने पर

कोई भी क्रान्तिकारी कार्य नहीं किया जाना चाहिये ।

"सोशलिस्टों और कम्यूनिस्टों के बीच अन्तर", लेनिन ने बताया, "इसमें निहित है कि सोशलिस्ट किसी भी परिस्थिति में, जिस प्रकार हम काम करते हैं, उस प्रकार काम करने से इन्कार करते हैं, यानि कि क्रान्तिकारी काम करने से" ।•

लेनिन द्वारा की गई यह आलोचना चीनी आधुनिक संशोधनवादियों के और दूसरे सभी संशोधनवादियों के भी मुंह पर एक भारी थप्पड़ है, जो संशोधनवादी सामाजिक-लोकतन्त्रवादियों की तरह, सर्वहारा और दूसरे मेहनतकश जनसमुदायों की क्रान्तिकारी क्रियाओं के खिलाफ़ हैं ।

लेनिन ने काउट्स्की को पथभ्रष्ट बताया, क्योंकि "उसने मार्क्स के सिद्धान्त को पूर्णरूप से विकृत किया, उसको मौकापरस्ती के अनुकूल बनाया, और उसने करनी में क्रान्ति को त्याग दिया, जबकि कथनी में इसे स्वीकार किया" ।••

चीन के संशोधनवादी नेता काउट्स्की से भी कुछ आगे बढ़ गये हैं । वे कथनी में भी क्रान्ति की आवश्यकता को स्वीकार नहीं करते हैं ।

यह प्रतिक्रियावादी कार्यदिशा चीनी संशोधनवादी नेतृत्व की प्रगाढ़ क्रान्ति-विरोधी नीति और रुखों को स्पष्ट करती

• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३१, पृष्ठ २७७ (अल्बेनिया संस्करण)

•• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २८, पृष्ठ २५७ (अल्बेनिया संस्करण)

है,जो संशोधनवादी नेतृत्व अमरीकी साम्राज्यवाद व दूसरे विकसित पूंजीवादी देशों के साथ हर तरह के सहयोगी-संघ बनाने और सहयोग करने की कोशिश कर रहा है, और जो यूरोपियन कामन मार्केट और नेटो का समर्थन करता है ।

अमरीकी साम्राज्यवादियों के साथ,जो सोवियट-सामाजिक साम्राज्यवादियों के साथ मिलकर,सर्वहारा और लोगों के सबसे खूंख्वार,अत्याचारी व शोषक व सबसे बड़े दुश्मन हैं,और इसके साथ-साथ अन्य साम्राज्यवादी शासकों के साथ,व सबसे खतर-नाक विश्व प्रतिक्रिया के साथ सहयोगी संघ बनाकर व एकता की कोशिश करके,जब वे यह मांग कर रहे हैं कि यूरोप के देशों व अन्य विकसित पूंजीवादी देशों का सर्वहारा सरमायदारों के सामने झुक जाये और उनके द्वारा किये गये अत्याचार को स्वीकार कर ले,तब चीनी संशोधनवादी स्वयं भी इस अत्या-चार में भाग ले रहे हैं और क्रान्ति के खिलाफ़,समाजवाद के खिलाफ़,और लोगों की मुक्ति के खिलाफ़ लड़ाई में,विश्व पूंजी के साथ मिल रहे हैं ।

जैसा कि देखा जा सकता है,विश्व पूंजीवाद,आधुनिक संशोधनवाद व अपने सभी दूसरे साधनों के साथ,क्रान्ति को फूट पड़ने से रोकने के लिये,सभी मोर्चों पर बहुत ही भयंकर और बहु-तरफ़ा लड़ाई कर रहा है ।

क्रान्तिकारी परिस्थितियों को क्रान्ति में बदलने से रोकने के लिये वे संकटों पर काबू पाने की व क्रान्तिकारी परि-स्थितियों को ठंडा करने व उनको बुझाने की जी जान से कोशिश कर रहे हैं । लेकिन, संकट और क्रान्तिकारी परि-स्थितियां वस्तुगत घटनायें हैं,जो पूंजीवादियों,संशोधनवादियों या किसी और की इच्छा व अभिलाषा पर निर्भर नहीं करती हैं । सिर्फ़ इन संकटों व परिस्थितियों को अनिवार्य रूप से

पैदा करने वाली अत्याचार व शोषण की पूंजीवादी विचार-पद्धति का सफाया करके ही, इनको रोका जा सकता है ।

साम्राज्यवादी, दूसरे पूंजीपति व संशोधनवादी अच्छी तरह से जानते हैं कि संकटों और क्रान्तिकारी परिस्थितियों के समय क्रान्ति स्वचालित रूप से नहीं फूट पड़ती है । इसलिये ये अपना ध्यान व मुख्य प्रहार आत्मगत जागरूकता की स्थिति की ओर निर्दिष्ट करते हैं । एक ओर तो ये सर्वहारा, दूसरे मेहनतकश जनसमुदायों और लोगों को बेवकूफ़ बनाने व धोखा देने, उनको क्रान्ति की ज़रूरत के बारे में जागरूक होने से और एकीकृत व संगठित होने से रोकने की कोशिश करते हैं; दूसरी ओर वे अन्तर्राष्ट्रीय मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन को नष्ट करने, व उसको बढ़ने व मज़बूत होने से रोकने के लिये लड़ते हैं ताकि वह क्रान्ति की एक महान नेतृत्वदायी राजनीतिक शक्ति न बन सके, ताकि हर एक देश की सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां, जनसमुदायों को क्रान्ति में और विजय के लिये एकीकृत, संगठित, गतिमान करने व उनका नेतृत्व करने की राजनीतिक व विचारधारात्मक छमता को हासिल न कर सकें ।

लेकिन, साम्राज्यवादी, पूंजीपति, संशोधनवादी व प्रतिक्रियावादी चाहे जितनी भी कोशिश व संघर्ष करें, वे इतिहास के पहिये को आगे बढ़ने से रोक नहीं सकते हैं । उनकी कोशिशों और संघर्ष को सर्वहारा और स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों की क्रान्तिकारी कोशिशों और संघर्ष का सामना करना पड़ेगा, जबकि आधुनिक संशोधनवादियों की भी वही दुर्दशा होगी जो सामाजिक-लोकतन्त्रवादियों और पहले के सभी मौका-परस्तों, और सरमायदारों व साम्राज्यवादियों के सभी चाटुकारों की हुई थी ।

लोगों का मुक्ति संघर्ष - विश्व क्रान्ति का एक अंशभूत भाग

जब हम क्रान्ति की बात करते हैं तो उससे हमारा मतलब सिर्फ़ समाजवादी क्रान्ति से ही नहीं है। पूंजीवाद से समाजवाद तक क्रान्तिकारी अवस्थापरिवर्तन के वर्तमान युग में, लोगों के मुक्ति संघर्ष, राष्ट्रीय-लोकतन्त्रीय, साम्राज्यवाद-विरोधी क्रान्तियां, राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन, एक एकाकी क्रान्तिकारी क्रियाविधि, विश्व सर्वहारा क्रान्ति के अंशभूत भाग हैं, जैसा कि लेनिन और स्टालिन ने बताया था।

"लेनिनवाद", स्टालिन ने बताया, "ने सिद्ध किया है... कि राष्ट्रीय समस्या का समाधान सिर्फ़ सर्वहारा क्रान्ति से सम्बन्धित होकर ही और उसके आधार पर ही किया जा सकता है, और कि पश्चिम में क्रान्ति की विजय इस क्रान्ति और साम्राज्यवाद के खिलाफ़ उपनिवेशों और अधीनस्थ देशों के मुक्ति आन्दोलनों के बीच क्रान्तिकारी सहयोग के जरिये ही प्राप्त की जा सकती है। राष्ट्रीय समस्या, सर्वहारा क्रान्ति की आम समस्या का एक भाग, व सर्वहारा के अधिनायकत्व की समस्या का एक भाग है"।

इस समय, जब, पुरानी उपनिवेशिक प्रणाली के पतन से अधिकतर लोगों ने अपने राष्ट्रीय राज्यों का निर्माण करके स्वतन्त्रता की ओर एक बड़ा कदम उठाया है, और जब इस कदम का अनुसरण करके, वे आगे बढ़ने की आकांक्षा रखते हैं,

---

जे०वी०स्टालिन, रचनायें, ग्रन्थ ६, पृष्ठ १४४ (अल्बेनिया संस्करण)

यह सम्बन्ध और भी स्पष्ट व और भी अधिक स्वाभाविक बन गया है । वे नव-उपनिवेशवादी प्रणाली का, किसी भी साम्राज्यवादी अधीनता का,व विदेशी पूंजी द्वारा किये गये सभी शोषण का ध्वंस करना चाहते हैं । वे अपने लिये सम्पूर्ण सत्ताधिकार और आर्थिक व राजनीतिक स्वतन्त्रता चाहते हैं । अब यह सिद्ध किया जा चुका है कि विदेशी आधिपत्य और विदेशियों पर निर्भरता को खत्म करके, और स्थानीय सरमायदारों व बड़े ज़मीन्दार शासकों द्वारा किये गये अत्याचार व शोषण का ध्वंस करके ही ऐसी आकांक्षायें पूरी की जा सकती हैं और ऐसे उद्देश्य प्राप्त किये जा सकते हैं ।

इसीलिये, राष्ट्रीय-लोकतन्त्रीय,साम्राज्यवाद-विरोधी, राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्ति और समाजवादी क्रान्ति आपस में जुड़ी व गुथी हुई हैं,क्योंकि,साम्राज्यवाद और प्रतिक्रिया,जो सर्वहारा और लोगों के सामान्य दुश्मन हैं, पर प्रहार करके,ये क्रान्तियां महान सामाजिक परिवर्तनों के लिये भी रास्ता तैयार करती हैं,और समाजवादी क्रान्ति की विजय में सहयोग देती हैं । और इसी तरह समाजवादी क्रान्ति भी इन क्रान्तियों को सहयोग देती है,साम्राज्यवादी सरमायदारों पर प्रहार करके और उसकी आर्थिक व राजनीतिक स्थितियों को नष्ट करके,समाजवादी क्रान्ति मुक्ति आन्दोलनों के लिये अनुकूल परिस्थितियां पैदा करती है और उसकी विजय को सुविधाजनक बनाती है ।

पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया क्रान्ति के सवाल को इसी तरह आंकती है । वह इसे मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोणों से देखती है,और इसीलिये यह,अमरीकी साम्राज्यवाद,सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद और दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियों के खिलाफ़ व नव-उपनिवेशवाद के खिलाफ़,

स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों के उचित संघर्षों को पूरा समर्थन व सहायता देती है, क्योंकि ये संघर्ष हर एक देश में व विश्व स्तर पर साम्राज्यवाद व पूंजीवादी प्रणाली के विध्वंस और समाजवाद की विजय के सामान्य उद्देश्य में सहायता देते हैं ।

इसलिये, जब हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि क्रान्ति समाधान के लिये उठाया गया एक सवाल है, कि यह एक करणीय-कार्य है,तब हमारा मतलब सिर्फ समाजवादी क्रान्ति से ही नहीं,बल्कि लोकतान्त्रिक साम्राज्यवाद-विरोधी क्रान्ति से भी है ।

क्रान्तिकारी स्थिति की परिपक्वता का स्तर,क्रान्ति का स्वभाव व विकास सब देशों के लिये समान नहीं हो सकता है। ये बातें,हर एक देश की यथार्थ ऐतिहासिक परिस्थितियों,उसके आर्थिक व सामाजिक विकास की कार्यावस्था,वर्गों का अनुपात, सर्वहारा व उत्पीड़ित जनसमुदायों के संगठन की स्थिति व स्तर,विभिन्न देशों में विदेशी शक्तियों के हस्तक्षेप का स्तर, इत्यादि,पर निर्भर करती हैं। हर एक देश व लोगों के सामने क्रान्ति की अनेक विशेष समस्यायें हैं,जो बहुत जटिल हैं ।

इस समय, अफ्रीका,एशिया व लेटिन अमरीका की परि-स्थितियों, और वहां क्रान्ति को कार्यान्वित करने के बारे में बहुत सी बातें की जा रही हैं । चीनी नेता इन देशों की क्रान्ति व स्वतन्त्रता और राष्ट्रीय मुक्ति के सवाल को विश्वव्यापी ढंग से देखते हैं, जैसे कि हर एक देश व छेत्र की अपनी अपनी यथार्थ परिस्थितियों व समस्याओं की अवहेलना करके,सम्पूर्ण "तीसरी दुनिया",यानि कि राज्यों,वर्गों,सरकारों इत्यादि,की एकता के जरिये इस समस्या का समाधान किया जा सकता हो । यह अभौतिकवादी दृष्टिकोण दिखाता है

कि चीनी नेता वास्तव में क्रान्ति,और अफ्रीका, एशिया, लैटिन अमरीका के लोगों की मुक्ति के खिलाफ़ हैं, और इन देशों में साम्राज्यवादी व नव-उपनिवेशवादी आधिपत्य को बनाये रखने के ,यथापूर्व स्थिति को कायम रखने के पक्ष में हैं ।

हम भी,अफ्रीका,एशिया,लैटिन अमरीका के और अरब व दूसरे लोगों की मुक्ति के सवाल के बारे में बात करते हैं । इन लोगों के सामने अनेक सामान्य समस्यायें हैं,जिनका इन्हें समाधान करना है,लेकिन उनमें से हर एक के सामने बहुत जटिल विशेष समस्यायें भी हैं ।

इन लोगों का आम व सामान्य काम साम्राज्यवादी उपनिवेशक व नव-उपनिवेशक विदेशी दासता और स्थानीय सरमायदारों द्वारा किये गये अत्याचार का अन्तर्ध्वंस करना है । अफ्रीका,लैटिन अमरीका, एशिया और दूसरी जगहों में ये लोग विदेशी दासता के खिलाफ़,इसके साथ-साथ स्थानीय सरमायदारों या ज़मीन्दार-सरमायदार शासक गुटों जिन्होंने अपने आपको अमरीकी साम्राज्यवादियों,सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादियों या दूसरे साम्राज्यवादियों के हाथों बेच दिया है,के खिलाफ़ गुस्से और नफ़रत से उबल रहे हैं । ये लोग अब जागरूक हो गये हैं और अब अपनी सम्पत्ति,अपने खून और पसीने का अपहरण बर्दाश्त नहीं करेंगे,और अब उन आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपन,जिसमें वे रह रहे हैं,को स्वीकार नहीं करेंगे ।

अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद,जो क्रान्ति और लोगों की राष्ट्रीय व सामाजिक मुक्ति के मुख्य दुश्मन हैं,के खिलाफ़ संघर्ष, और सरमायदारों व प्रतिक्रिया के खिलाफ़ संघर्ष से सम्बन्धित अनेक सामान्य हित व अनेक सामान्य समस्यायें लोगों के सामने हैं और इस आधार

पर उनको एक दूसरे के साथ एकीकृत होना चाहिये ।

इज़राइल — अमरीकी साम्राज्यवाद का सबसे ज्यादा खून-का-प्यासा-साधन — जो अरब लोगों की उन्नति में एक भारी रूकावट बन गया है, के खिलाफ़ लड़ाई, इन सब लोगों के लिये एक सामान्य समस्या है । परन्तु, अभ्यास में अरब के सभी राज्य, इज़राइल के खिलाफ़ संयुक्त रूप से उन्हें जो संघर्ष करना चाहिये, उसके बारे में और अपने सामान्य दुश्मन के खिलाफ़ इस संघर्ष के स्वभाव के बारे में एक मत नहीं हैं । अक्सर, उनमें से कुछ इस संघर्ष को एक संकुचित राष्ट्रीयतावादी दृष्टिकोण से देखते हैं । हम ऐसी विचारपद्धति से सहमत नहीं हो सकते हैं । हम अपनी विचारपद्धति पर दृढ़ हैं कि इज़राइल को अपनी सीमा में वापस चला जाना चाहिये और उसको अरब राज्यों के खिलाफ़ अपनी शोवींवादी, उत्तेजक, आक्रामक और हमलावर रूखों और कामों का परित्याग कर देना चाहिये । हम यह मांग करते हैं कि इज़राइल को अरब के लोगों की सीमायें छोड़ देनी चाहिये और पेलेस्टाइन के लोग अपने सब राष्ट्रीय अधिकारों को प्राप्त करें, लेकिन हम यह कभी भी स्वीकार नहीं कर सकते हैं कि इज़राइल के लोगों का सफ़ाया कर दिया जाय ।

इसी प्रकार, साम्राज्यवाद और सामाजिक-साम्राज्यवाद के पंजे से पूर्ण मुक्ति पाने, और अपनी स्वतन्त्रता और सम्पूर्ण सत्ताधिकार को मजबूत बनाने की अरब देशों के लोगों की कोशिशें भी, इन सब लोगों की सामान्य समस्यायें हैं ।

लेकिन हर एक अरब लोगों की अपनी विशेषतायें, और विशेष समस्यायें भी हैं, जो कि दूसरे अरब लोगों से भिन्न हैं, और उनके सामाजिक-आर्थिक विकास, उनके सांस्कृतिक स्तर,

उनके राज संगठन, प्राप्त की गई स्वतन्त्रता और सम्पूर्ण सत्ताधिकार का स्तर, और उनमें से बहुतों के कुल व कबीलों के एकीकरण, आदि से पैदा होती हैं। इन सब अलग-अलग बातों को एक साथ मिला देना और माँग करना कि आज़ादी, स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र और समाजवाद के सवाल का इन सब देशों में एक ही तरीके और एक ही समय में समाधान किया जाय, सम्भव नहीं है।

उन सभी अरब देशों में जहाँ सरमायदारों के सबसे अधिक स्वार्थ है, वहाँ विभिन्न साम्राज्यवादियों ने प्राकृतिक सम्पत्ति और लोगों का शोषण करने के लिये बहुत धन लगाया है। इसको प्राप्त करने के लिये, उपनिवेशक और उपनिवेशित दोनों के लिये काम करने की कुछ विशेष परिस्थितियाँ बनाई गई हैं। जहाँ कहीं भी प्राकृतिक सम्पत्ति सबसे अधिक रही है और उपनिवेशकों के स्वार्थ सबसे अधिक रहे हैं वहाँ लोगों और उनकी सम्पत्ति का शोषण भी सबसे अधिक हुआ है। स्वभावतः, सम्पत्ति के शोषण से कुछ विकास भी हुआ है, लेकिन इसको इस या उस देश की अर्थव्यवस्था का समूचा व संगतिपूर्ण विकास नहीं समझा जा सकता है। उपनिवेशकों ने मुख्य कबीलों के उन मुखियों को आर्थिक सहायता व समर्थन दिया है जिन्होंने अपने आप को और लोगों की सम्पत्ति को कब्ज़ा करने वाले साम्राज्यवादियों के हाथों बेच दिया है। इसके बदले में मुखियों को उपनिवेशकों द्वारा बनाये गये भारी मुनाफ़े का एक छोटा हिस्सा दिया गया।

उनको गुलाम बनाने वाले राज्य की शक्ति के और परिस्थितियों के अनुसार, और इन मुनाफ़ों व उनके विदेशी संरक्षकों की सहायता से इन कबीलों के मुखियों ने उपनिवेशक देश के समर्थन से और उसके नियन्त्रण में, किसी तरह के अभिकथित रूप से

स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की । इस तरह,उपनिवेशकों की सहायता से कबीलों के मुखिये अमीर सरमायदार श्रेणी के शेख बन गये,जिन्होंने बहुत ही थोड़े दामों में अपने राज्यछेत्रों को लोगों सहित बेच दिया और लोगों को दुहरी गुलामी,यानि कि विदेशी उपनिवेशकों की और अपनी गुलामी के अधीन कर दिया। इस तरह,अरब देशों में एक ओर तो,बड़े सरमायदार,बड़े ज़मीन्दार, मध्यकालीन राजा, और दूसरी ओर गुलाम,विदेशी परियोजनाओं में काम कर रहे सर्वहारा, की श्रेणियों को बनाया गया,और वे एक दूसरे के मुकाबले में खड़ी हो गईं । विदेशी शोषकों द्वारा उनको दिये गये पैसे और मुनाफ़े से ऊंची श्रेणियों ने यूरोपीय और अमरीकी सरमायदारों के रहन-सहन के तरीकों को अपनाया । उनके बेटे पढ़ाई के लिये उपनिवेशकों के स्कूलों में भी गये जहां उन्होंने कुछ पश्चिमी संस्कृति हासिल की। इन्होंने अपने आप को अपने लोगों की संस्कृति का प्रतिनिधि बताया,लेकिन वास्तव में इन्हें मेहनतकश लोगों को गुलामी में रखने और उपनिवेशकों द्वारा किये गये मेहनतकश लोगों के बेरहम शोषण को जारी रखने के लिये प्रशिक्षित किया गया था ।

उस अरब राज्य, जिसके पास अधिक सम्पत्ति थी, का विकास ज़्यादा तेज़ी से हुआ,दूसरे,जिसके पास इतनी सम्पत्ति नहीं थी,का विकास कम तेज़ी से हुआ,जबकि वह राज्य,जो गरीब था,विकास के एक बहुत निचले स्तर पर बना रहा ।

बेमिसाल अत्याचार करने के काबिल एक संगठन और सशस्त्र सेनाओं को अपने हाथों में रखकर, उपनिवेशवाद, सामन्तिक राजाओं और बड़े ज़मीन्दार-सरमायदारों की राज-सत्ता ने किसी भी प्रकार के विद्रोह की कोशिश की,और राजनीतिक मांगों व क्रान्ति की तो बात ही छोड़िये,बहुत ही सीमित

आर्थिक अधिकारों के दावों को भी शुरू होते ही कुचल दिया।

वर्तमान समय में, अरब राज्यों के विकास के लिये उनके सामने एक जैसी ही समस्यायें नहीं हैं। उदाहरण के लिये, साउदी अरेबिया के राजा की समस्यायें भिन्न हैं और वह आर्थिक, राजनीतिक, संगठनात्मक और सैनिक सवालों को परशियन गल्फ़ के अमीरों से अलग ढंग से देखता है, जो इन सवालों को पूर्णतया अलग दृष्टिकोण से और भिन्न विषयों में देखते हैं। इसी तरह, इराक, सीरिया, ईजिप्ट, लीबिया, तुनीशिया, अल्जीरिया, मोराक्को, मारिशस, आदि सब अपनी समस्याओं को भिन्न दृष्टिकोण से देखते हैं।

इसलिये, जब हम अरब लोगों की बात करते हैं, तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि, हालांकि उनके बहुत से सामान्य हित हैं, लेकिन उनकी समस्यायें एक जैसी नहीं हैं और उनका समाधान हर एक अरब देश में एक ही तरीके से नहीं किया जा सकता है। इसी तरह, हम यह नहीं कह सकते हैं कि इन सामान्य समस्याओं के समाधान के बारे में इन देशों के बीच एक सहयोगी-संघ व एकमत मौजूद है। हर एक अरब राज्य की समस्यायें सिर्फ़ इसलिये अलग-अलग नहीं हैं कि विभिन्न देशों की सरकारों की अलग-अलग विचारपदतियां हैं, बल्कि उन उप-निवेशिक व नव-उपनिवेशिक राज्यों के रुखों की वजह से भी, जो अब भी बहुत से अरब राज्यों में कानून बनाते हैं।

जो कुछ अरब लोगों के लिये कहा गया है, वह अफ़्रीका के महाद्वीप के लोगों पर भी लागू होता है। अफ़्रीकी लोगों का एक मोजैक है जिसकी संस्कृति प्राचीन है। हर एक अफ़्रीकी देश की अपनी संस्कृति, रीति रिवाज़, रहन-सहन का ढंग है, जो जाने पहचाने कारणों की वजह से, कुछ विभिन्नताओं के

साथ, एक बहुत ही पिछड़े हुये स्तर पर हैं। इन लोगों में से अधिकांश की जागरूकता हाल ही में शुरू हुई है। संविधानिक रूप से अफ्रीका के लोगों ने आम तौर पर अपनी आज़ादी और स्वतन्त्रता जीत ली है। लेकिन सच्ची आज़ादी और स्वतन्त्रता की बात नहीं की जा सकती है, क्योंकि इनमें से अधिकतर अभी भी उपनिवेशित व नव-उपनिवेशित स्थिति में हैं। इनमें से अनेक देशों पर पुराने कबीलों के मुखिये शासन करते हैं, जिन्होंने सत्ता पर कब्ज़ा कर लिया है और जो पुराने उपनिवेशवादियों, या अमरीकी साम्राज्यवादियों व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादियों पर निर्भर करते हैं। ऐसी स्थिति में इन राज्यों में शासन का तरीका उपनिवेशवाद के अवशेषों से किसी भी तरह अलग नहीं है और न हो सकता है। साम्राज्यवादी अभी भी अपनी व्यापार-संस्थाओं, उद्योग में लगाई अपनी पूंजी, व बैंकों के जरिये अफ्रीका के अधिकांश देशों पर शासन कर रहे हैं। इन देशों की अधिकांश सम्पत्ति अभी भी महानगरों को जाती है।

अफ्रीका के कुछ देशों ने उस आज़ादी व स्वतन्त्रता के लिये लड़ा है जिसका कि वे उपभोग कर रहे हैं जबकि दूसरों को यह आज़ादी बिना लड़ाई के ही मिल गई है। बर्तानवी, फ्रांसीसी, और दूसरे उपनिवेशकों ने अफ्रीका में अपने उपनिवेशिक शासन के दौरान लोगों को उत्पीड़ित किया, लेकिन उन्होंने कुछ न कुछ पश्चिमी ढंग से शिक्षित स्थानीय सरमायदारों को भी पैदा किया। आज के मुख्य नेता भी इन्हीं सरमायदारों से निकले हैं। इनमें से बहुत से साम्राज्यवाद-विरोधी, अपने देश की स्वतन्त्रता के लिये लड़ने वाले लोग भी हैं, लेकिन उनमें से अधिकांश उपनिवेशवाद के औपचारिक उन्मूलन के बाद भी पुराने उपनिवेशकों के साथ निकट सम्बन्ध बनाये रखने के लिये

उनके प्रति वफ़ादार बने रहे या अमरीकी साम्राज्यवादियों या सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादियों पर आर्थिक व राजनीतिक रूप से निर्भर हो गये हैं ।

उपनिवेशकों ने पहले बहुत अधिक विनियोजन नहीं किया था । उदाहरण के लिये लीबिया, तूनीशिया, ईजिप्ट इत्यादि में ऐसा ही हुआ । लेकिन उपनिवेशकों ने इन सब देशों की सम्पूर्ण सम्पत्ति का शोषण किया, भूमि के बड़े खण्डों पर कब्ज़ा किया, और उद्योग की कुछ विशेष शाखाओं, जैसे कच्चे पदार्थों के निष्कासन और प्रक्रिया में, सर्वहारा के वर्ग को विकसित किया, जो वर्ग किसी तरह भी संख्या में कम नहीं था । वे बड़ी संख्या में मज़दूरों को भी सस्ती श्रम शक्ति के रूप में, महानगरों में, जैसे कि उदाहरण के लिये फ्रांस में और बर्तानिया में भी ले आये, जिन मज़दूरों ने उपनिवेशकों की खानों व कारखानों में काम किया ।

अफ्रीका के दूसरे भागों में, विशेषकर काले अफ्रीका में औद्योगिक विकास ज़्यादा पिछड़ा रहा । इस क्षेत्र के सभी देशों को, विशेषकर फ्रान्स, बर्तानिया, बेल्जियम और पुर्तगाल के बीच बांट लिया गया । बहुत सी भूमिगत सम्पत्तियों जैसे, हीरा, लोहा, तांबा, सोना, टिन, इत्यादि को वहां बहुत समय पहले से ही खोजा जा चुका था और खनिजपदार्थों को खानों से निकालने के लिये और उनकी प्रक्रिया के लिये उद्योग स्थापित किये गये ।

अफ्रीका के बहुत से देशों में बड़े प्रारूपिक उपनिवेशिक शहर बनाये गये, जहां उपनिवेशकों ने शानदार जीवन व्यतीत किया । अब एक ओर तो स्थानीय बड़े सरमायदार और उनकी सम्पत्ति वहां बढ़ व विकसित हो रही है, जबकि दूसरी ओर, मेहनतकश जनसमुदायों की निर्धनता और भी बढ़ती जा रही है । इन

देशों में कुछ हद तक सांस्कृतिक विकास हुआ है, लेकिन इस विकास की प्रवृत्ति ज़्यादातर यूरोपीय ही रही है। स्थानीय संस्कृति का विकास नहीं हुआ है। इसका विकास आमतौर पर कबीलों द्वारा हासिल किये गये स्तर पर ही रुक गया है और यह इन कबीलों के बाहर गगनचुम्बी भवनों वाले केन्द्रों में नहीं देखी जाती है। ऐसा इसलिये हुआ क्योंकि बड़े केन्द्रों जहां उपनिवेशक रहते थे के बाहर अत्यन्त दीनावस्था और अत्यधिक गरीबी मौजूद थी, और भुखमरी बीमारी, अज्ञानता और लोगों का बेरहम शोषण, सच्चे अर्थों में सभी जगह व्याप्त था।

अफ्रीका की जनसंख्या सांस्कृतिक व आर्थिक रूप से अविकसित ही रही और उपनिवेशक युद्धों, बर्बर जातिवादी जुल्म व अफ्रीका के नीग्रों के दास व्यापार, जिसके जरिये उनको महा-नगरों, संयुक्त राज्य अमरीका और दूसरे देशों को रुई व दूसरी फसलों के बागानों में और इसके साथ-साथ उद्योग और निर्माण के भारी से भारी काम में जानवरों की तरह काम करने के लिये भेजा जाता था, की वजह से अफ्रीका की जनसंख्या निरन्तर कम होती गई।

इन्हीं कारणों की वजह से अफ्रीका के लोगों के सामने अभी भी एक बड़ा संघर्ष है। यह एक बहुत ही जटिल संघर्ष है और जटिल संघर्ष होगा और विभिन्न देशों के आर्थिक, सांस्कृतिक व शैक्षणिक विकास के भिन्न स्तरों, उनकी राज-नीतिक जागरूकता के भिन्न स्तरों, और विभिन्न धर्मों, जैसे कि ईसाई व मुसलिम धर्म, प्राचीन पैगान विश्वासों इत्यादि द्वारा इन लोगों के जनसमुदायों पर डाले गये भारी प्रभाव के कारण यह संघर्ष एक देश से दूसरे देश में भिन्न होगा। यह संघर्ष अब और भी कठिन हो गया है क्योंकि इनमें से बहुत

से देश वास्तव में नव-उपनिवेशवाद और इसके साथ-साथ स्थानीय सरमायदार-पूंजीपति गुटों की अधीनता में हैं । वहाँ कानून उन शक्तिशाली पूंजीवादी व साम्राज्यवादी राज्यों द्वारा बनाये जाते हैं जो शासक गुटों को आर्थिक सहायता देते हैं या उनपर नियन्त्रण रखते हैं, जिन गुटों को ये तभी कायम करते हैं जब नव-उपनिवेशवादियों के हितों को इनकी ज़रूरत होती है,और जब उनके हितों का सन्तुलन बिगड़ जाता है तब उन्हें हटा देते हैं ।

बड़े ज़मीन्दारों,प्रतिक्रियावादी सरमायदारों,साम्राज्य-वादियों और नव-उपनिवेशवादियों द्वारा अपनायी गई नीति अफ्रीका के लोगों को चिरस्थाई दासता और अज्ञानता में रखने, उनके सामाजिक, राजनीतिक,और विचारधारात्मक विकास को रोकने और इन अधिकारों को प्राप्त करने के लिये किये गये उनके संघर्षों में बाधा डालने के उद्देश्य से बनाई गई है । इस समय हम देखते हैं कि वही साम्राज्यवादी जो इन लोगों के ऊपर हुकूमत करते थे,और इनके साथ-साथ दूसरे नये साम्राज्यवादी,लोगों के आन्तरिक मामलों में हर तरीके से दखल देकर अफ्रीका के महाद्वीप में प्रवेश करने की कोशिश कर रहे हैं । इसके परिणामस्वरूप,साम्राज्यवादियों के बीच,इनमें से अधिकांश देशों के लोगों व सरमायदार-पूंजीपति नेतृत्व के बीच,और लोगों व नव-उपनिवेशकों के बीच अन्तर्विरोध दिन-प्रतिदिन ज़्यादा से ज़्यादा तीव्र होते जा रहे हैं ।

लोगों को इन अन्तर्विरोधों का इस्तेमाल,इनको गहरा करने व इनसे फ़ायदा उठाने के लिये,करना चाहिये । लेकिन यह सिर्फ़,साम्राज्यवाद,नव-उपनिवेशवाद, स्थानीय बड़े सरमाय-दारों,बड़े ज़मीन्दारों और उनके सम्पूर्ण संस्थापन के खिलाफ़, सर्वहारा, गरीब किसानों,और सभी उत्पीड़ित लोगों और

गुलामों के द्वारा किये गये दृढ़ संघर्ष के जरिये ही किया जा सकता है । इस संघर्ष में एक विशेष कार्यभाग प्रगतिशील व लोकतन्त्रवादी क्रान्तिकारी युवक व युवतीगण व देशभक्त बुद्धिजीवियों को सौंपा गया है जो अपने देशों को विकास और प्रगति के रास्ते पर आज़ादी और स्वतन्त्रता से बढ़ता हुआ देखने की आकांक्षा रखते हैं। उनके निरन्तर व संगठित संघर्ष के जरिये ही स्थानीय व विदेशी अत्याचारियों और शोषकों के जीवन को कठिन व उनकी सरकार को असम्भव बनाया जा सकेगा । अफ़्रीका के हर एक राज्य की विशेष हालतों में इस परिस्थिति को तैयार किया जायेगा ।

बर्तानिया और अमरीकी साम्राज्यवाद ने अफ़्रीका के लोगों को किसी भी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं दी है । उदाहरण के लिये, सब यह देख सकते हैं कि दक्षिण अफ़्रीका में क्या हो रहा है । गोरे जातिवादी, बर्तानवी पूंजीपति, शोषक वहां शासन कर रहे हैं, और उस राज्य के काले लोगों पर बर्बरता से अत्याचार कर रहे हैं जहां पर जंगल के नियम चलते हैं । अफ़्रीका के बहुत से दूसरे देशों पर संयुक्त राज्य अमरीका, बर्तानिया, फ़्रांस, बेलजियम और दूसरे पुराने उपनिवेशवादियों और साम्राज्यवादियों, जो कुछ कमज़ोर हो गये हैं, लेकिन जो अब भी इन देशों की अर्थव्यवस्थाओं पर नियन्त्रण रखते हैं, की व्यापार-संस्थाओं और पूंजी का आधिपत्य है ।

एशिया के लोगों को भी, मुसीबत व कठिनाई और साम्राज्यवादी अत्याचार व शोषण से भरे रास्ते पर चलना पड़ा है । दूसरे विश्व युद्ध के पूर्व काल के समय सोवियट एशिया को छोड़कर, इस महाद्वीप की ९० प्रतिशत जनसंख्या पर यूरोप, जापान और संयुक्त राज्य अमरीका की साम्राज्यवादी शक्तियां

उपनिवेशिक व अर्ध-उपनिवेशिक अत्याचार व उनका शोषण कर रही थीं। सिर्फ़ बर्तानिया के ही एशिया में इतने उपनिवेश थे जिनका कुल क्षेत्र ५६ लाख ३५ हज़ार वर्ग किलोमीटर था और जिसमें ४२ करोड़ से भी ज़्यादा निवासी थे। उपनिवेशिक उत्पीड़न व शोषण ने एशिया के अधिकांश देशों को बहुत सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक पिछड़ेपन और अत्यधिक गरीबी की हालत में छोड़ दिया था। ये देश साम्राज्यवादी महानगरों को कच्चे पदार्थों, जैसे तेल, कोयला, क्रोमियम, मैंगनीज़, मैग्नीशियम, टीन, रबड़ इत्यादि की आपूर्ति के स्रोत मात्र बन गये।

युद्ध के बाद एशिया में भी उपनिवेशिक प्रणाली को चकनाचूर कर दिया गया। उपनिवेशित देशों में अलग-अलग राष्ट्रीय राज्य स्थापित किये गये। इनमें से अधिकांश देशों ने, उपनिवेशवादी और जापानी हमलावरों के खिलाफ़ लोक जनसमुदायों द्वारा किये गये ख़ूनी युद्ध के जरिये इस विजय को प्राप्त किया।

चीनी लोगों के मुक्ति युद्ध, जिसके परिणामस्वरूप जापानी साम्राज्यवादी शासन से चीन ने मुक्ति प्राप्त की, चैंग काई-शेक की प्रतिक्रियावादी सेनाओं को पूरी तरह से हराया गया, व लोकतन्त्रीय क्रान्ति की विजय हुई, का एशिया में उपनिवेशवाद के पतन के लिये विशेष महत्व था। चीन जैसे बड़े देश की इस विजय ने कुछ समय के लिये एशिया के लोगों व उन दूसरे देशों के लोगों पर जिनपर साम्राज्यवादी शक्तियों का आधिपत्य था या जो उन पर निर्भर थे, के मुक्ति संघर्ष पर गहरा प्रभाव डाला। लेकिन चीन लोक गणराज्य की स्थापना के बाद चीनी नेतृत्व द्वारा अनुसरण की गई कार्य-दिशा के कारण यह प्रभाव क्रमशः कम होता गया।

चीनी नेतृत्व ने यह घोषणा की कि चीन समाजवादी विकास के रास्ते पर चल पड़ा है। दुनिया के उन क्रान्तिकारी व स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों ने,जो यह चाहते व आशा करते थे कि चीन समाजवाद और विश्व क्रान्ति का एक शक्तिशाली दुर्ग बने,इस घोषणा का उत्साहपूर्वक स्वागत किया। लेकिन उनकी इच्छायें व आशायें पूरी नहीं हुई। हालांकि लोगों के लिये यह विश्वास करना कठिन था,लेकिन तथ्यों और चीन में व्याप्त बहुत ही द्विविधापूर्ण व अव्यवस्थित परिस्थिति ने यह दिखाया कि चीन समाजवाद के रास्ते पर आगे नहीं बढ़ रहा है।

इसी दौरान, उपनिवेशवाद के पतन के साथ एशिया के लोगों के संघर्ष खत्म नहीं हुये थे। जब कि बर्तानवी,फ्रांसीसी, डच व दूसरे उपनिवेशवादी भूतपूर्व उपनिवेशित देशों की स्वतन्त्रता को स्वीकार करने के लिये बाध्य थे, लेकिन वे दूसरे नव-उपनिवेशवादी रूपों में अपने आधिपत्य व शोषण को जारी रखने के लिये अपनी आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों को बनाये रखना चाहते थे। एशिया,विशेषकर सुदूर पूर्व,दक्षिण-पूर्वी एशिया और प्रशान्त महासागर के द्वीपों में संयुक्त राज्य अमरीका के प्रवेश ने परिस्थिति को खासकर गम्भीर बना दिया। यह क्षेत्र अमरीकी साम्राज्यवाद के लिये विशेष आर्थिक व सैनिक-सामरिक महत्व रखता था और अब भी रखता है। इसने वहाँ पर बड़े सैनिक-आस्थान स्थापित किये और शक्तिशाली जहाज़ी बेड़ों को भेजा। इसके साथ-साथ इन देशों की अर्थव्यवस्थायें पूरी तरह से अमरीकी पूँजी के रक्त-रँजित पंजों में आ गईं। इसी दौरान,एशिया के देशों के मुक्ति आन्दोलनों का दमन करने के लिये अमरीकी साम्राज्यवादियों ने बड़े पैमाने पर सैनिक क्रियाविधि व पथभ्रंशिक और जासूसी कार्य-

वाहियों को अपनाया । वे कोरिया व वियतनाम को दो भागों में विभाजित करने और इन देशों के दक्षिणी भागों में प्रतिक्रियावादी चाटुकार सत्तायें स्थापित करने में सफल हुये । एशिया के बहुत से भूतपूर्व उपनिवेशित व अर्ध-उपनिवेशित देशों में साम्राज्यवाद-पक्षीय ज़मीन्दार-सरमायदारी सत्तायें स्थापित की गई । इस तरह, वहाँ मध्यकालीन गुलामी, महा-राजाओं, राजाओं, शेखों, समुराओं व "आधुनिक" पूंजीपति महानुभावों के बर्बर शासन को सुरक्षित रखा गया । इन सत्ताओं ने अपने देशों को फ़िर से साम्राज्यवादियों, विशेष-कर अमरीकी साम्राज्यवादियों के हाथों बेच दिया, जिससे इन देशों के सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक विकास में अत्यधिक बाधा पड़ी ।

इन परिस्थितियों में, एशिया के लोग जो फ़िर से, भारी साम्राज्यवादी और ज़मीन्दार-सरमायदारी दासता के अधीन दुख उठा रहे थे, अपने शस्त्रों को नहीं छोड़ पाये बल्कि उन्हें इस दासता से मुक्ति व छुटकारा पाने के लिये अपनी लड़ाई को जारी रखना पड़ा । आमतौर पर, इस संघर्ष का नेतृत्व कम्यूनिस्ट पार्टियों ने किया । जहाँ कहीं भी ये पार्टियाँ जनसमुदायों के साथ गहरे सम्बन्ध स्थापित करने, उनको युद्ध के मुक्ति लक्ष्यों के प्रति जागरूक करने और क्रान्तिकारी सशस्त्र संघर्ष में उनको गतिमान व संगठित करने में सफल हुईं, वहीं सही नतीजे निकले । इण्डोचीन के लोगों, विशेषकर वियतनाम के लोगों ने अमरीकी साम्राज्यवादियों और उनके स्थानीय ज़मीन्दार-सरमायदार चाटुकारों पर जिस ऐतिहासिक विजय को प्राप्त किया है उसने सम्पूर्ण विश्व को यह दिखा दिया है कि साम्राज्यवाद, यहाँ तक कि संयुक्त राज्य अमरीका जैसी महाशक्ति भी अपने पास शक्तिशाली आर्थिक व सैनिक छमता,

व युद्ध के सभी आधुनिक साधन जिनका इस्तेमाल ये मुक्ति आन्दोलनों का दमन करने के लिये करती है,के होते हुये भी लोगों और देशों, चाहे ये छोटे हों या बड़े, जब ये अपनी आज़ादी और स्वतन्त्रता के लिये कोई भी बलिदान करने और निःस्वार्थता से अन्त तक लड़ने का निश्चय कर लेते हैं, अपने अधीन करने में असमर्थ हैं ।

एशिया के अनेक दूसरे देशों में,जैसे बर्मा,मलेशिया,फ़िलिपीन,इण्डोनेशिया और दूसरी जगह,सशस्त्र मुक्ति संघर्ष किये गये हैं और अब भी जारी हैं । अगर चीनी नेतृत्व ने इस मार्क्सवाद-विरोधी और शोविंवादी दखल और विचार-पद्धति को नहीं अपनाया होता,जिसने क्रान्तिकारी शक्तियों और इन शक्तियों का नेतृत्व करने वाली कम्यूनिस्ट पार्टियों के बीच फूट डाली और उन्हें दिशाभ्रमित किया,तो निश्चय ही इन संघर्षों को बहुत ही अधिक सफलता व विजय प्राप्त होती । एक ओर तो चीनी नेताओं ने इन देशों में मुक्ति युद्धों के लिये अपने समर्थन की घोषणा की,जबकि दूसरी ओर इन्होंने प्रतिक्रियावादी सत्ताओं की सहायता की और प्रशंसा के स्तुतिगीत और हज़ारों सम्मानों के साथ इन सत्ताओं के मुखियों का स्वागत किया व उन्हें विदा किया । इन्होंने एशिया के देशों के मुक्ति आन्दोलनों को अपनी उपियोगितावादी नीति और आधिपत्यवादी स्वार्थों के अधीन रखने की युक्ति और नीति का सदा ही अनुसरण किया है । इन्होंने क्रान्तिकारी शक्तियों और उनके नेतृत्व पर इस नीति को थोपने के लिये हमेशा ही दबाव डाला है । एशिया के देशों के लोगों की मुक्ति और क्रान्ति के सवाल से वास्तव में उनका कभी भी कोई सारोकार नहीं रहा है बल्कि अपनी शोविंवादी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने से ही उन्हें सारो-

कार रहा है । उन्होंने इन लोगों की सहायता नहीं की है बल्कि उनके कामों में बाधा डाली है ।

एशिया में क्रान्ति और मुक्ति संघर्ष के सवाल का समाधान करने की मांग कभी भी इतनी प्रबल और आवश्यक नहीं रही है जितनी कि अब है, इसका समाधान कभी भी इतना ज़्यादा जटिल और कठिन नहीं रहा है ।

यह जटिलता और ये कठिनाइयाँ खासतौर से अमरीकी साम्राज़्यवादियों के लक्ष्यों और क्रियाओं, व इसके साथ-साथ सोवियट और चीनी संशोधनवादियों और सामाजिक-साम्रा-ज़्यवादियों के मार्क्सवाद-विरोधी, लोक-विरोधी, आधिपत्य-वादी और प्रसारवादी लक्ष्यों और क्रियाओं का परिणाम हैं ।

संयुक्त राज़्य अमरीका एशिया में अपनी सामरिक, आर्थिक व सैनिक आस्थानों को कायम करने व मज़बूत बनाने का उद्देश्य रखता है और पूरी शक्ति से इसकी कोशिश कर रहा है, क्योंकि यह इन आस्थानों को अपने साम्राज़्यवादी स्वार्थों के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण समझता है ।

सोवियट संघ भी, सभी तरीकों और सभी शक्तियों के साथ उन स्थितियों, जिन पर उसने पहले से ही कब्ज़ा कर रखा है, का विस्तार करने का उद्देश्य रखता है और इसकी कोशिश कर रहा है ।

अपनी ओर से, चीन ने भी संयुक्त राज़्य अमरीका और खासकर जापान के साथ सहयोगी संघ बनाकर और सीधे तौर से सोवियट संघ का विरोध करके, एशिया के देशों का शासक बनने के अपने दावे को खुलेरूप से प्रदर्शित कर दिया है ।

जापान भी, एशिया पर आधिपत्य जमाने की महत्वाकांक्षा रखता है, जो जापानी साम्राज़्यवाद की पुरानी महत्वाकांक्षा

है ।

इसी लिये सोवियट संघ चीनी-जापानी सहयोगी संघ से इतना अधिक डरा हुआ है और इतनी प्रबलता से उसका विरोध कर रहा है । लेकिन अमरीकी साम्राज्यवाद भी यह नहीं चाहता है कि यह सहयोगी-संघ इतना मज़बूत बने कि यह उन सीमाओं को पार कर बैठे जिससे अमरीकी स्वार्थों का उल्लंघन हो, हालांकि उसने यह सोचकर कि शायद यह सन्धि सोवियट प्रसार, जो कि अमरीकी आधिपत्य के लिये हानि-कारक है, को सीमित कर देगी, चीन और जापान के बीच इस सन्धि पर हस्ताक्षर किये जाने को बढ़ावा और अपना "आशीर्वाद" दिया था ।

हिन्दुस्तान भी, जो कि एक बड़ा देश है, अणुबम व एशिया में भारी दबदबा रखने वाली एक बड़ी शक्ति बनने की, और खासतौर से हिन्द महासागर, परशियन गल्फ और उसकी उत्तरी व पूर्वी सीमाओं में, जहां अमरीकी व सोवियट दोनों ही साम्राज्यवादी महाशक्तियों के प्रसारवादी हित टक्कराते हैं अपनी सामरिक महत्व की स्थिति के सम्बन्ध में एक खास कार्यभाग अदा करने की महत्वाकांक्षा रखता है ।

बर्तानवी साम्राज्यवाद ने भी एशिया के देशों पर आधि-पत्य जमाने के अपने लक्ष्यों को नहीं छोड़ा है । और कुछ दूसरे पूंजीवादी-साम्राज्यवादी राज्यों के भी यही लक्ष्य हैं ।

यही कारण है कि एशिया आज सबसे भयंकर अन्तर-साम्राज्यवादी प्रतिद्वन्द्विताओं के छेत्रों में से एक बन गया है और इसके परिणामस्वरूप, वहां विश्वयुद्ध शुरू होने की अनेक खतरनाक जगहों को बनाया गया है, जिन युद्धों की कीमत को लोग चुकायेंगे ।

एशिया के देशों में क्रान्तियों और मुक्ति आन्दोलन का

दमन करने और अपनी आधिपत्यवादी व प्रसारवादी योजनाओं को पूरा करने के लिये, एक दूसरे के साथ जबरदस्त प्रतियोगिता में, सोवियट और चीनी संशोधनवादी, इन देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों की, और क्रान्तिकारी व स्वतन्त्रता-प्रेमी शक्तियों की श्रेणियों में फूट डालने और उनको नष्ट करने के नीच काम में लगे हुये थे व अभी भी लगे हुये हैं । यह कार्यवाही, इण्डोनेशिया की कम्यूनिस्ट पार्टी की तबाही के, और हिन्दुस्तान की कम्यूनिस्ट पार्टी, आदि, में फूट डालने व उसको नष्ट करने के मुख्य कारणों में से एक थी । ये स्थानीय प्रतिक्रियावादी सरमायदारों के साथ सर्वहारा और व्यापक लोक जनसमुदायों की मित्रता और एकता की हिमायत करते हैं, जबकि इनमें से हर एक अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिये इन शासक सरमायदारों की मित्रता को जीतने की कोशिश कर रहे हैं ।

एशिया के बहुत से देशों में, अपनी आधिपत्यवादी व प्रसारवादी विचारपद्धतियों व महत्वाकांक्षाओं से सोवियट व चीनी सामाजिक साम्राज्यवादियों द्वारा दिये गये दखल ने इन देशों के लोगों के मुक्ति आन्दोलनों के लिये भारी खतरे पैदा किये हैं और वियतनाम, कम्बोडिया व लाओस में मुक्ति युद्ध की विजयों को भी सीधे तौर पर खतरे में डाल दिया है ।

एशिया के देशों के क्रान्तिकारी और स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों को, जिनका नेतृत्व मार्क्सवादी-लेनिनवादी कम्यूनिस्ट पार्टियां कर रहीं हैं, स्थानीय प्रतिक्रिया, जिसे उसके साम्राज्यवादी आश्रयदाताओं ने सशस्त्र किया है, के खतरे, और सोवियट और चीनी संशोधनवादियों की फूट डालने व विनाश करने वाली कार्यवाहियों और उनकी आधिपत्यवादी व प्रसारवादी योजनाओं से होने वाले खतरों, दोनों ही का सामना

व खात्मा करना है। उनको पुरानी प्रतिक्रियावादी, रहस्य-मय, बौद्धमतानुयायी, ब्राह्मणीय और दूसरे धार्मिक विचारों व धारणाओं से भी, जो मुक्ति आन्दोलन में बाधा डालती हैं, अपने आप को मुक्त करना पड़ेगा। उनको "नये" प्रतिक्रिया-वादी विचारों और धारणाओं, जैसे कि ख्रुश्चेववाद, माओवाद के संशोधनवादी विचारों और दूसरे ऐसे ही प्रतिक्रियावादी सिद्धान्तों को भी जमने से रोकना पड़ेगा, जो जनसमुदायों को दिशाविमुख करते व धोखा देते हैं और उनको उनकी जंगी भावना से वंचित करते हैं और गल्त व आशाहीन रास्ते पर ले जाते हैं।

एशिया के लोगों को जो मुक्ति संघर्ष करने हैं, वे सच्चे रूप से कठिन हैं और निःसन्देह उनमें अनेक बाधायें हैं, लेकिन भारी कठिनाइयों व बाधाओं पर विजय पाये बिना, व अन्तिम विजय को प्राप्त करने के लिये खून बहाये व कुर्बानियां किये बिना एक आसान मुक्ति संघर्ष या क्रान्ति न कभी हुई है और न कभी होगी।

अफ्रीका व एशिया के देशों से लैटिन अमरीका के देशों में आम तौर से पूंजीवादी विकास का स्तर अधिक ऊंचा है। लेकिन लैटिन अमरीका के देशों की विदेशी पूंजी पर निर्भरता का स्तर अफ्रीका और एशिया के अधिकांश देशों से कम नहीं है।

अफ्रीका और एशिया के देशों की तुलना में लैटिन अम-रीका के अधिकांश देशों ने, स्पेन और पुर्तगाल के उपनिवेशकों के खिलाफ़ इस महाद्वीप के लोगों के मुक्ति संघर्षों के परिणाम-स्वरूप, बहुत पहले ही १९वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अपने आप को स्वतन्त्र राज्य घोषित कर दिया था। स्पेन या पुर्तगाल

की उपनिवेशिक दासता को नष्ट करने के तुरन्त बाद ही अगर ये देश एक दूसरी दासता, बर्तानवी, फ्रांसीसी, जर्मन, अमरीकी और दूसरी विदेशी पूंजी की अर्ध-उपनिवेशित दासता के अधीन नहीं हो जाते तो इन देशों ने अत्यधिक उन्नति कर ली होती। इस शताब्दी के शुरू के समय तक बर्तानवी उपनिवेश-वादी इस महाद्वीप पर अपना आधिपत्य रखते थे। उन्होंने इन देशों से भारी मात्रा में कच्चे पदार्थों को लूटा, और अपनी रियायती कम्पनियों की एकमात्र सेवा के लिये बन्दरगाह, रेलमार्ग, विद्युत घरों को बनाया, और बर्तानिया में बनाये गये अपने औद्योगिक सामानों का यहां व्यापार विनिमय किया।

अपने साम्राज्यवादी विकास की कार्यविस्था में संयुक्त राज्य अमरीका के लैटिन अमरीका में प्रवेश के साथ यह परि-स्थिति बदल गई, लेकिन यह परिवर्तन लैटिन अमरीका के लोगों के पक्ष में नहीं था। संयुक्त राज्य अमरीका के साम्राज्यवाद ने "मोनरो सिद्धान्त" में समाविष्ट नारे "अमरीका अमरीकी लोगों के लिये है," का इस्तेमाल सम्पूर्ण पश्चिमी गोलार्द्ध पर अपना अविभाजित आधिपत्य स्थापित करने के लिये किया था। इस गोलार्द्ध में संयुक्त राज्य अमरीका का आर्थिक प्रवेश सैनिक शक्ति व राजनीतिक ब्लैकमेल और डालर चातुर्य के जरिये, डण्डे और लालच के जरिये कार्यान्वित किया गया था। इस तरह १९३० में लैटिन अमरीका में अमरीकी व बर्ता-नवी पूंजी का विनियोजन बराबर था, जबकि दूसरे विश्व युद्ध के बाद, संयुक्त राज्य अमरीका भूमण्डल के इस छेत्र की आर्थिक व्यवस्था का असली मालिक बन गया। इसके बड़े एकाधिकारों ने लैटिन अमरीका में अर्थव्यवस्था की मुख्य शाखाओं पर कब्ज़ा कर लिया। इस महाद्वीप के देश अमरीकी साम्राज्यवाद के "अदृश्य" साम्राज्य का हिस्सा बन गये, और इसने इन सब देशों में, कानून बनाना, राज और सरकारों के

नेताओं की नियुक्ति व पदच्युति करना, व उनकी आन्तरिक व विदेशी आर्थिक और सैनिक नीतियों को बनाना शुरू कर दिया ।

संयुक्त राज्य अमरीका की एकाधिकारी कम्पनियों ने सम्पन्न प्राकृतिक कच्चे पदार्थों और लैटिन अमरीका के लोगों की मेहनत, पसीने और खून के शोषण से अत्यधिक मुनाफ़ा बनाया : इस महाद्वीप के विभिन्न देशों में विनियोजित हर एक डालर से इन्होंने ४-५ डालर का मुनाफ़ा बनाया । अभी भी यही परिस्थिति है ।

हालांकि साम्राज्यवादी राज्यों द्वारा लैटिन अमरीका में किये गये पूंजी विनियोजनों के परिणामस्वरूप कुछ आधुनिक उद्योग, विशेषकर निष्कासन, व इसके साथ-साथ हल्के व खाद्य-पदार्थ-प्रक्रिया उद्योग स्थापित किये गये थे, लेकिन ये विनि-योजन लैटिन अमरीका के देशों के आम आर्थिक विकास में एक बड़ी बाधा बने हुये हैं । साम्राज्यवादी राज्यों के विदेशी एकाधिकारों और उनकी नव-उपनिवेशवादी नीति ने इन देशों के आर्थिक विकास को विकृत, एक-तरफ़ा रूप, एक-सांस्कृतिक स्वभाव दे दिया है, और इन देशों को पूरी तरह से विशेष कच्चे पदार्थों का पूर्तिकर्ता बना दिया है : वेनिजुएला— तेल, बोलिविया — टीन, चिली — तांबा, ब्राज़िल व कोलम्बिया — काफ़ी, क्यूबा, हेटी, डोमिनिकन गणराज्य - शक्कर, उरुग्वे व अर्जेन्तीना - पशु पदार्थ, एक्वादोर - केले, आदि ।

इस एक-तरफ़ा स्वभाव ने इन देशों की अर्थव्यवस्था को पूर्णरूप से अस्थायी, तेज़ और सब-तरफ़ा विकास में पूर्वरूप से असमर्थ, और पूंजीवादी विश्व बाज़ार कीमतों के परिवर्तन व उतार चढ़ाव पर पूरी तरह से निर्भर बना दिया है । संयुक्त राज्य अमरीका और दूसरे पूंजीवादी देशों के उत्पादन

में किसी भी कमी, और आर्थिक संकटों के किसी भी प्रत्यक्षीकरण का लेटिन अमरीका के देशों की अर्थव्यवस्था पर भी अवश्य ही बुरा असर वस्तुतः और भी गम्भीर असर पड़ना था ।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद साम्राज्यवादी महानगरों ने उद्योग की विभिन्न शाखाओं, खनिकर्म, खेती-बारी, राष्ट्रीय कारोबारों को खरीदने आदि में बड़े पैमाने पर विनियोजन करना शुरू कर दिया । उन्होंने उत्पादन के सम्पूर्ण छेत्रकों पर अपने आधिपत्य को फैला दिया और लेटिन अमरीका के देशों में लूट को अधिकतम कर दिया । इसके साथ-साथ इन्होंने ऊँचे ब्याज दर पर कर्ज़ देने और पूंजी लगाने को बढ़ावा दिया, और इस तरह इन देशों को और भी मज़बूती से विदेशी आधिपत्य, और सबसे पहले संयुक्त राज्य अमरीका के आधित्य, के नियन्त्रण में कर दिया । सिर्फ़ ब्राज़ील के ऊपर विदेशी बैन्कों का ४० अरब डालर और मैक्सिको के ऊपर लगभग ३० अरब डालर का कर्ज़ है ।

लेटिन अमरीका में पूंजीवादी विकास भी आमतौर पर पिछड़ा रहा है क्योंकि वहां पर लेटिफुण्डिया (ज़मीन्दारी) के अनेक अवशेष अभी भी मौजूद हैं जिन्होंने अपना सामान्तिक स्वभाव पूरी तरह से नहीं खोया है, और इसी कारण लेटिन अमरीका के कुछ देशों में एशिया व अफ्रीका के देशों की तरह काफ़ी पिछड़ापन है । लेटिन अमरीका के देशों में साम्राज्यवादी आर्थिक नीति और सीधे साम्राज्यवादी दखल पर निर्भर एक अल्पजनाधिपत्य, एक बहुत शक्तिशाली एकाधिकारी बड़ी सरमायदारी पैदा की गई है, जो बड़े ज़मीन्दारों के साथ मिलकर राज सत्ता को अपने हाथों में रखती है और हमेशा ही अमरीकी साम्राज्यवाद के समर्थन से व उसके साथ मिल कर बेहद गरीबी में रहने वाले मज़दूर वर्ग, किसानों व मेहनतकश

लोगों की दूसरी श्रेणियों पर निर्दयता से अत्याचार व उनका शोषण करती है ।

एशिया व अफ्रीका के देशों से भिन्न जहां अधिकांश देशों में मज़दूर वर्ग की संख्या बहुत कम है, इस विकास ने लेटिन अमरीका में काफ़ी बड़ी संख्या में औद्योगिक सर्वहारा को पैदा किया है जो कृषक सर्वहारा और निर्माण व सेवाकार्य के मज़दूरों को मिलाकर जनसंख्या का आधा भाग है ।

इसके अलावा लेटिन अमरीका में किसान व इसकी श्रेणियों से पैदा हुये मज़दूर वर्ग की एक बहुत जंगी क्रान्तिकारी परम्परा है जिसको इन्होंने स्वतन्त्रता, ज़मीन, काम और रोटी के लिये निरन्तर होने वाले संघर्षों में प्राप्त किया है, एक ऐसी परम्परा जिसका स्थानीय अभिजाततन्त्र व विदेशी एकाधिकारों के खिलाफ़ और अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़ लड़ाई में और भी विकास किया गया है । लेटिन अमरीका के लोग उन लोगों में से हैं जिन्होंने अपने आन्तरिक व विदेशी अत्याचारियों और शोषकों के खिलाफ़ सबसे अधिक लड़ा है, और खून बहाया है । इन लड़ाइयों में उन्होंने बहुत सी विजय प्राप्त की हैं, और ये विजय कुछ गौण भी नहीं हैं, लेकिन लोकतन्त्रीय स्वतन्त्राओं, और शोषण का सफ़ाया करने, राष्ट्रीय स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार प्राप्त करने, में सम्पूर्ण विजय अभी तक लेटिन अमरीका के किसी भी देश में नहीं जीती गई है । लेटिन अमरीका के लोग बहुत सी आशायें संजोते थे, क्यूबा के लोगों की विजय के बारे में बहुत से भ्रम रखते थे, जो विजय स्थानीय पूंजीपतियों व ज़मीन्दार शासकों व अमरीकी साम्राज्यवादियों की दासता का ध्वंस करने के उनके संघर्ष में उनके लिये प्रेरणा व प्रोत्साहन बन गये । लेकिन, उनकी ये आशायें व यह प्रेरणा तुरन्त ही फीकी पड़ गयी जब उन्होंने यह

देखा कि केस्टोवादी क्यूबा समाजवाद के रास्ते पर नहीं, बल्कि संशोधनवादी-तरह के पूंजीवाद के रास्ते पर विकसित हो रहा था, और जब क्यूबा सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का गुलाम व भाड़े का टट्टू बन गया तो ये आशायें व प्रेरणा और भी जल्दी फीकी पड़ गई ।

सभी महाद्वीपों की तरह, लैटिन अमरीका में भी इस समय परिस्थिति जटिल है ।

बहुत से इन देशों में परिस्थिति क्रान्तिकारी है, और इसने सरमायदार-ज़मीन्दारी पद्धति का ध्वंस व साम्राज्यवादी निर्भरता का अन्तर्ध्वंस करने के लिये क्रान्ति को दिन-प्रतिदिन का काम बना दिया है । निस्सन्देह हर एक देश या देशों के समूह की विशेष हालतों व समस्याओं, उनके सामाजिक-आर्थिक विकास के भिन्न स्तरों, साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद पर उनकी निर्भरता, ज़्यादा या कम उदारवादी, ज़्यादा या कम तानाशाही सरमायदारी सत्तायें, आदि के जाने पहचाने कारणों से, हर जगह इन क्रान्तियों का स्वभाव, विकास की क्रियाविधि और समाधान एक सा नहीं हो सकता है । लेकिन एक बात स्पष्ट रूप से आवश्यक है — क्रान्ति के साम्राज्यवाद-विरोधी, लोकतन्त्रीय और समाजवादी कार्यों में, एशिया-अफ्रीका के देशों की अपेक्षा लेटिन अमरीका में ज़्यादा घनिष्ट रूप से पारस्परिक सम्बन्ध होना ।

लेटिन अमरीका में स्वतन्त्रता, लोकतन्त्र और समाजवाद के लिये, और आन्तरिक व विदेशी अत्याचार व शोषण के खिलाफ़ लड़ने के लिये, व्यापक लोक जनसमुदायों की जागरूकता व तत्परता का आपेक्षाकृत ऊंचा स्तर होने के कारण, क्रान्ति की आत्मगत जागरूकता की स्थिति को तैयार करने में अनेक सुविधायें भी हैं । लेकिन स्थानीय प्रतिक्रिया के साथ यह सिर्फ़

साम्राज्यवादी, विशेषकर अमरीकी, ही नहीं, बल्कि स्थानीय संशोधनवादी और पूंजीवाद के दूसरे मौकापरस्त चाटुकार भी, और इसके साथ-साथ सोवियट व चीनी संशोधनवादी भी हैं जो इस आत्मगत जागरूकता की स्थिति को पूरी तरह से तैयार करने में बाधा डाल रहे हैं व द्विविधा पैदा कर रहे हैं और इस तैयारी के खिलाफ़ अपनी पूरी शक्ति से लड़ रहे हैं।

लैटिन अमरीका, जिससे वह भारी अत्यधिक मुनाफ़े बनता है, को सिर्फ़ अपने ही प्रभावक्षेत्र में रखने की नीति पर डटे रह कर, अमरीकी साम्राज्यवाद किसी दूसरे साम्राज्यवाद को वहाँ अधिकार जमाने से रोकने, और यह निश्चित करने कि इन देशों में से किसी भी देश में क्रान्ति न हो व उसकी विजय न हो, अपने सभी साधनों — सैनिक शक्ति, खुफ़िया दलालों, बाज़ारू बातों और धोखे के साथ चालें चल रहा है। इस प्रकार यह संयुक्त राज्य अमरीका पर लैटिन अमरीका के देशों की पूर्ण निर्भरता, व इन देशों में सरमायदारी-ज़मीन्दारी पद्धति को कायम रखना चाहता है।

अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिये संयुक्त राज्य अमरीका के हाथों में तथाकथित अमरीकी राज्यों का संगठन, जो संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति, पैण्टागन व राज्य विभाग के नियन्त्रण में हैं, एक महत्वपूर्ण हथियार है। इस संगठन का संविधान संयुक्त राज्य अमरीका को, लैटिन अमरीका के देशों में आन्तरिक व विदेशी यथापूर्वस्थिति को बनाये रखने के लिये किसी तरह और किसी भी साधन से यहाँ तक कि सैनिक साधनों से हस्तक्षेप करने का अधिकार देता है।

इसी दौरान बड़े अमरीकी एकाधिकारों ने बहु-राष्ट्रिक एकाधिकारी कम्पनियों, जिनके अपने केन्द्र संयुक्त राज्य अमरीका में हैं, और जो इसके नियन्त्रण में हैं, को संगठित करके,

और राज्य पूंजीवाद, जिसके जरिये वे आमतौर से स्थानीय सरकारों व राज उपकरणों पर भी अपना नियन्त्रण जमाते हैं, का अत्यधिक इस्तेमाल करके, इन देशों का शोषण करने के अपने तरीकों को परिपूर्ण बना लिया है ।

लेकिन ये और दूसरे अनेक तरीके जिनका संयुक्त राज्य अमरीका इस्तेमाल करता है, गम्भीर आर्थिक व राजनीतिक संकटों से पैदा हुई समस्याओं का समाधान नहीं करते हैं, जिन संकटों ने लैटिन अमरीका के देशों को भी जकड़ रखा है ।

अब, जबकि स्थानीय पूंजीपति और ज़मीन्दार अमरीकी साम्राज्यवाद पर निर्भर हुये बिना या उसकी सहायता प्राप्त किये बिना नहीं रह सकते हैं, राष्ट्रीय व सामाजिक मुक्ति को प्राप्त करने के लिये सिर्फ़ एकमात्र व अनिवार्य साधन के रूप में क्रान्ति का विचार, इन देशों के सर्वहारा, मेहनतकश किसानों, प्रगतिशील बुद्धिजीवी, और युवक व युवतीगण के जन-समुदायों की चेतना में पहले से कहीं अधिक गम्भीरता व व्यापकता से, जमता जा रहा है ।

क्रान्तियों को पथविमुख करने के लिये अमरीकी साम्राज्यवादी व स्थानीय पूंजीपति दो मुख्य तरीकों का सहारा लेते हैं । एक तरीका है, उन हालतों में जब उनकी स्थितियों को तात्कालिक खतरा है, "प्रोन्सिमेण्टो मिलिटार" (सैनिक विद्रोह) के जरिये सैनिक तानाशाही सत्ताओं को स्थापित करना । यही उन्होंने ब्राज़ील, चिली, उरुग्वे, बोलिविया और अन्य जगहों पर किया था । दूसरा तरीका है, लोकतन्त्रीय सरमायदारी सत्ताओं को संगठित करना, जिनमें बहुत कम व सीमित मौलिक स्वतन्त्रतायें हैं, जैसा कि उन्होंने वेनीज़ुयेला व मेक्सिको में किया था और अब ब्राज़ील में कर रहे हैं, और इस तरीके का प्रयोग करते हुये, ये क्रान्तिकारी तनावों को

कम करने और यह मत बनाने की कोशिश कर रहे हैं कि इन देशों के सरमायदार और इससे भी ज़्यादा, संयुक्त राज्य अमरीका का प्रशासन व उसका राष्ट्रपति भी "मानवीय अधिकारों" के बारे अभिकथित रूप से चिन्तित है ।

लेकिन ऐसे तरीके और चालें इन संकटों की समस्यायों का समाधान नहीं कर सकती हैं,क्रान्तिकारी स्थितियों को नहीं रोक सकती हैं,करणीयकाम से क्रान्ति का सफ़ाया नहीं कर सकती हैं ।

लेटिन अमरीका के देशों में सर्वहारा व सभी क्रान्तिकारी शक्तियों को बहुत महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी कामों का सामना करना है । ऐसे कामों को करने के लिये,यानि कि,क्रान्ति को कार्यान्वित करने, अपनी सम्पूर्ण राष्ट्रीय स्वतन्त्रता को जीतने,लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रताओं व समाजवाद को स्थापित करने के लिये उनको, स्थानीय सरमायदारों और बहुत बड़े ज़मीन्दार अभिजाततन्त्र के खिलाफ़,अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़,इसके साथ-साथ पूंजीवाद,साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद के विभिन्न चाटुकारों,जैसे कि सोवियट-पक्षीय व केस्ट्रोवादी संशोधनवादी,चीनी-पक्षीय संशोधनवादी, ट्राट्स्कीवादी, आदि,के खिलाफ़ बहु-तरफ़ा लड़ाई करनी होगी । उनको सिर्फ़ विभिन्न रंगों के मौकापरस्तों व संशोधनवादियों की पथविमुखकारी व फूट डालने वाली कार्यवाहियों का ही सामना नहीं करना है, बल्कि ऐसे निम्न-सरमायदारी प्रभावों से भी अपने आपको मुक्त करना है,जो अनेक पुशवादी,फोक्विस्ट,जोखिमवादी धारणाओं व अभ्यासों में अभिव्यक्त है और जो एक तरह की परम्परा बन गये हैं, लेकिन जिनकी सच्ची क्रान्ति के साथ कोई सामान्यता नहीं है,और जो इसके विपरीत क्रान्ति को बहुत नुकसान पहुंचाते

हैं । तथापि इस सवाल को बहुत ही सावधानी से देखने की ज़रूरत है ।

जहाँ तक लेटिन अमरीका के लोगों की जंगी परम्पराओं का सवाल है, इनमें सकारात्मक व क्रान्तिकारी पहलू सर्वप्रथम है । यह एक बहुत महत्वपूर्ण तथ्य है, जिसका इस्तेमाल, इस परम्परा को हानिकारक पिस्टोलेरी व फ़ोक्विस्ट तत्वों से मुक्त एक नया सार देते हुये क्रान्ति की तैयारी व विकास में अधिकतम फ़ायदे के लिये और अधिक से अधिक व्यापक रूप से करना चाहिये ।

इन महान कार्यों को कार्यान्वित करने के लिये मज़दूर वर्ग की मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ एक निर्णायक कार्यभाग अदा करेंगी । अब लेटिन अमरीका के लगभग हर देश में ऐसी पार्टियों को सिर्फ़ स्थापित ही नहीं किया गया है बल्कि इनमें से अधिकांश ने क्रान्ति के लिये सर्वहारा और लोगों के जनसमुदायों को तैयार करने के काम में महत्वपूर्ण कदम भी उठाये हैं । संशोधनवादियों व दूसरे मौकापरस्तों के खिलाफ़, सरमायदारों व साम्राज्यवाद के सभी चाटुकारों के खिलाफ़, केस्ट्रोवादी, ख्रुश्चेववादी, ट्रोट्स्कीवादी, "तीन दुनियाओं" व दूसरे ऐसे विचारों और अभ्यासों के खिलाफ़, इन्होंने एक सही राजनीतिक कार्यदिशा को बना लिया है और इस कार्यदिशा को अभ्यास में लाने के संघर्ष में काफ़ी अनुभव प्राप्त किया है, और मज़दूरों के व मुक्ति आन्दोलनों के फ़ायदे में व क्रान्ति में जनसमुदायों को तैयार करने व उत्तेजित करने के लिये पहले की सभी क्रान्तिकारी परम्पराओं का इस्तेमाल करने व इनका और भी विकास करने के लिये इनकी वाहक बन गयीं हैं ।

इस समय मौजूद क्रान्तिकारी स्थितियों ने इन पार्टियों के लिये यह अनिवार्य बना दिया है कि, एक दूसरे के अनुभव से

फ़ायदा उठाने के लिये, और प्रतिक्रियावादी सरमायदारों और साम्राज्यवाद के खिलाफ़, सोवियट, चीनी, और दूसरे सभी किस्मों के आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष की आम समस्याओं और क्रान्ति की सभी समस्याओं पर अपनी विचारपद्धति और कामों को समन्वित करने के लिये, निकटतम सम्बन्धों को बनाये रखने और जितना भी सम्भव हो एक दूसरे के साथ परामर्श करें ।

अब जब लोग जागरूक हो गये हैं और साम्राज्यवादी व उपनिवेशिक दासता के नियन्त्रण में रहने से अब उन्होंने इनकार कर दिया है, अब जब ये आज़ादी, स्वतन्त्रता, विकास और प्रगति की मांग कर रहे हैं और विदेशी और आन्तरिक अत्याचारियों के खिलाफ़ गुस्से से उबल रहे हैं, अब जब अफ़्रीका, लैटिन अमरीका और एशिया एक उबलता हुआ कड़ाह बन गया है, पुराने और नये उपनिवेशवादियों के लिये पहले के तरीकों और रूपों से इन देशों के लोगों पर आधिपत्य जमाना व उनका शोषण करना, असम्भव नहीं तो, कठिन हो गया है । ये उपनिवेशवादी इन लोगों के धन, मेहनत व खून की लूट व शोषण किये बिना नहीं रह सकते हैं ।

इसीलिये, धोखा देने, लूटने व शोषण करने के नये तरीकों व रूपों को ढूंढ़ने, और कुछ दान देने, जो कि जनसमुदायों को नहीं बल्कि सरमायदार-ज़मीन्दार शासक वर्गों को ही फ़ायदा पहुंचाते हैं, के लिये ये सब कोशिशें की जा रही हैं ।

इसी दौरान, समस्या और भी जटिल हो गई है, क्योंकि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद ने काफ़ी पहले से ही भूतपूर्व उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों में प्रवेश करना व अपने आप को और भी गहरे रूप से जमाना शुरू कर दिया था, और क्योंकि सामाजिक-साम्राज्यवादी चीन ने भी वहां प्रवेश करने

की तीव्र कोशिशें शुरू कर दी हैं ।

अपने आप को इन देशों और लोगों का सच्चा सहयोगी बताते हुये संशोधनवादी सोवियट संघ लोगों के मुक्ति संघर्ष के लिये सहायता की अपनी अभिकथित लेनिनवादी नीति के छद्मवेश में अपने प्रसारवादी दखल को कार्यान्वित करता है । अफ्रीका और दूसरी जगहों में प्रवेश करने और उन लोगों को, जो अपने आप को मुक्त करने, और अत्याचार व शोषण का ध्वंस करने की आकांक्षा रखते हैं और जो यह जानते हैं कि सम्पूर्ण राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति के लिये समाजवाद ही सिर्फ़ एक रास्ता है, को धोखा देने के लिये सोवियट संशोधनवादी साधनों के रूप में समाजवादी रंगों के नारों का इस्तेमाल करते व उनको फैलाते हैं ।

सोवियट संघ दखल देने में अपने सहयोगियों, या सही मायने में, उत्पीड़ित देशों को भी काम में लाता है । हम अफ्रीका में यह यथार्थ रूप से देख रहे हैं जहां सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी और उनके क्यूबा के भाड़े के टट्टू, क्रान्ति की सहायता करने के बहाने दखल दे रहे हैं । यह बहाना एक झूठ है । उनका दखल एक उपनिवेशवादी क्रिया, जिसका लक्ष्य बाज़ारों को हथियाना और लोगों पर आधिपत्य जमाना है, के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ।

अंगोला में सोवियट संघ और उसके भाड़े के टट्टुओं के दखल का यही स्वभाव है । अंगोला की क्रान्ति को सहायता देने की उनकी कभी भी कोई इच्छा नहीं थी, बल्कि उनका लक्ष्य अफ्रीका के इस देश में, जिसने पुर्तगाली उपनिवेशवादियों को बाहर निकाल फेंकने के बाद कुछ हद तक स्वतन्त्रता को जीता था, अपने पंजे गाढ़ना था, और अभी भी है । क्यूबा के भाड़े के टट्टू, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की एक

ऐसी उपनिवेशित सेना है, जिसे सोवियट संघ, काले अफ्रीका के देशों में बाज़ारों और सामरिक आस्थानों पर कब्ज़ा करने और अंगोला से दूसरे राज्यों में भी भेजे जाने के लिये भेजता है ताकि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी भी एक आधुनिक उपनिवेशिक साम्राज्य का निर्माण कर सकें ।

लोगों की मुक्ति के लिये सहायता की आड़ में और अभिकथित रूप से समाजवाद का निर्माण करने, जो न तो सोवियट संघ में मौजूद है और न क्यूबा में, सोवियट संघ, और उसका भाड़े का टट्टू क्यूबा युद्धास्त्रों और तोपों से सशस्त्र सेनाओं के साथ दूसरे देशों में दखल दे रहा है । अंगोला के लोगों के लक्ष्यों के विपरीत जिन्होंने अपनी आज़ादी को जीतने के लिये पुर्तगाली उपनिवेशवादियों से लड़ा था, इन दोनों सरमायदारी-संशोधनवादी राज्यों ने एक पूंजीवादी गुट को सत्ता में लाने के लिये अंगोला में दखल दिया । आगसटिनो नेटो सोवियट संघ के खेलों को खेल रहा है । सत्ता पर अपना अधिकार करने के लिये दूसरे गुट के खिलाफ़ संघर्ष में, इसने सोवियट संघ से मदद मांगी । अंगोला के दोनों विरोधी गुटों के बीच संघर्ष का कोई भी लोक-क्रान्तिकारी स्वभाव नहीं है । इन दोनों के बीच लड़ाई सत्ता के लिये गुटों का संघर्ष था । उनमें से हर एक को भिन्न साम्राज्यवादी राज्यों से सहायता मिली । आगसटिनो नेटो इस लड़ाई में विजयी हुआ, जबकि अंगोला में समाजवाद की विजय नहीं हुई । इसके विपरीत, विदेशी दखल के बाद, सोवियट नव-उपविवेशवाद वहां स्थापित किया गया ।

सामाजिक-साम्राज्यवादी चीन भी भूतपूर्व उपनिवेशित व अर्ध-उपनिवेशित देशों में प्रवेश करने की बहुत कोशिश कर रहा है ।

चीन कैसे दखल देता है इसका उदाहरण ज़ाईर से दिया जा सकता है, एक ऐसा देश जिसपर मोबूटू के एक गुट, जो अफ्रीका के महाद्वीप का सबसे धनी व खून का प्यासा गुट है, का शासन है । ज़ाईर की हाल ही की लड़ाई में मोराक्को शरफ़ीयन राज की मोराक्को सेना, फ्रांसीसी वायु सेना और चीन भी, पेटरिस लुमुम्बा के खूनी मोबूटू की सहायता के लिये दौड़ पड़े । फ्रांस द्वारा दी गयी सहायता फिर भी समझी जा सकती है, क्योंकि दखल देकर वे काटांगा में अपनी रियायतों और व्यापार-संस्थाओं की रक्षा कर रहे थे, और इसके साथ-साथ अपने आदमियों, और मोबूटू और उसके गुट की भी रक्षा कर रहे थे । लेकिन चीनी संशोधनवादी कटांगा में क्या चाहते हैं ? वहां वे किसकी मदद कर रहे हैं ? क्या वे ज़ाईर के लोगों की मदद कर रहे हैं जिनका मोबूटू और उसके गुट द्वारा और फ्रांसीसी, बेलजियन, अमरीकी और दूसरे रियायत पाने वालों द्वारा दमन किया जा रहा है ? या क्या वे भी खून के प्यासे मोबूटू के गुट की मदद नहीं कर रहे हैं ? वास्तविकता यह है कि चीनी संशोधनवादी नेतृत्व अप्रत्यक्ष रूप से नहीं बल्कि बहुत खुले रूप से इस गुट की मदद कर रहा है । इस मदद को और भी यथार्थ बनाने व इसका और भी सबूत देने के लिये इसने अपने विदेश मन्त्री हुआंग हुआ, व इसके साथ साथ सैनिक विशेषज्ञों को भेजा और सैनिक व आर्थिक सहायता दी । इस तरह इसने एक मार्क्सवाद-विरोधी, प्रतिक्रान्तिकारी तरीके से काम किया । चीन के दखल की विशेषतायें भी वहीं हैं जो मोराक्को के राजा हसन और फ्रांस के दखल की हैं ।

चीनी सामाजिक-साम्राज्यवादी सिर्फ़ इस देश के मामलों में ही दखल नहीं दे रहे हैं बल्कि अफ्रीका और अन्य महाद्वीपों के दूसरे लोगों और देशों कें मामले में भी, और विशेषकर उन देशों में

जहाँ वे आर्थिक, राजनीतिक व सामरिक आस्थानों को स्थापित करने के लिये हर तरह से प्रवेश करने की कोशिश कर रहे हैं ।

संयुक्त राज्य अमरीका भी, चिली के तानाशाही जल्लाद, पिनोशे, की इतने खुले रूप से मदद करने की हिम्मत नहीं करते हैं, जैसा कि चीन कर रहा है । निस्सन्देह, अमरीकी शासक दूसरे देशों के प्रतिक्रियावादी शासकों की इस प्रकार मदद नहीं करते हैं, हालाँकि वहाँ उनके भारी स्वार्थ खतरे में हैं । इसका मतलब यह नहीं है कि अमरीकी साम्राज्यवादी अपने स्वार्थों को त्याग रहे हैं । ये अपने स्वार्थों की रक्षा करते हैं, इनकी बहुत मज़बूती के साथ रक्षा करते हैं, लेकिन ज़्यादा चालाक तरीकों से ।

अपनी विचारपद्धति से, जिसको इसने कायम किया हुआ है, तथाकथित समाजवादी चीन, लोगों, कम्यूनिस्टों, क्रान्तिकारी लोगों के हितों व आकांक्षाओं के खिलाफ़ और लेटिन अमरीका के सभी प्रगतिशील लोगों की आकांक्षाओं के खिलाफ़ जा रहा है ।

चीन विभिन्न तानाशाहों की रक्षा कर रहा है, जो लोगों पर शासन कर रहे हैं, और आतंक और दूसरे किसी भी तरह से, क्रान्तिकारियों, सर्वहारा और मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों, जो राष्ट्रीय व सामाजिक मुक्ति के लिये लड़ रही हैं, की कोशिशों का दमन कर रहे हैं। ऐसी विचारपद्धतियों से उसने प्रतिक्रान्ति के रास्ते को अपना लिया है । मार्क्सवाद-लेनिनवाद के छद्मवेष में चीन यह दिखाने की कोशिश कर रहा है कि यह अभिकथित रूप से दूसरे देशों में क्रान्ति के विचारों का निर्यात कर रहा है, लेकिन वास्तव में चीन प्रति-क्रान्तिकारी विचारों का निर्यात कर रहा है । इस तरह यह अमरीकी साम्राज्यवाद और दूसरे सत्ताधारी तानाशाह

गुटों की मदद कर रहा है ।

आपस में समझौता करके, उन पर शासन करने वाले व उनका खून चूसने वाले, उनके नेतृत्व व साम्राज्यवादियों द्वारा किये जाने वाले अत्याचार व खूंखार शोषण के खिलाफ़ अफ्रीका, एशिया व लेटिन अमरीका के लोगों को अपने क्रान्तिकारी संघर्ष का क्रमशः कार्यावस्थाओं में विकास करने से रोकने की साम्राज्यवादी व सामाजिक-साम्राज्यवादी शक्तियाँ एक ही हद तक कोशिश कर रहीं हैं ।

उन देशों में जिनके सामाजिक-आर्थिक विकास का स्तर नीचा है और जो साम्राज्यवादी, सामाजिक-साम्राज्यवादी शक्तियों पर निर्भर हैं, के क्रान्तिकारियों, प्रगतिशील व देशभक्त लोगों को, हमेशा यह बात ध्यान में रखते हुये कि यह व्यापक जनसमुदाय और लोग ही हैं जो क्रान्ति को कार्यान्वित करते हैं, यह कर्त्तव्य है कि वे इस अत्याचार व शोषण के बारे में लोगों को जागरूक करें, उनको शिक्षित, गतिमान व संगठित करें और मुक्ति संघर्ष में उनको लगा दें । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये यह आवश्यक है कि हर एक देश की आन्तरिक विदेशी स्थितियों, उसके सामाजिक-आर्थिक विकास, वर्ग शक्तियों के अनुपात, वर्गों के बीच शत्रुताओं, और लोगों व सत्ताधारी प्रतिक्रियावादी गुटों के बीच शत्रुताओं, इसके साथ-साथ लोगों व साम्राज्यवादी राज्यों के बीच शत्रुताओं, का गम्भीर विश्लेषण किया जाये । इस आधार पर, सही निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं कि कौन से कदम उठाये जायें और कौन सी युक्तियों का इस्तेमाल किया जाये । क्रान्तिकारी शक्तियों को जिनकी ज़रूरत है वे हैं, गम्भीर काम, दृढ़संकल्पता व बुद्धिमता, और सबसे पहले, इस वास्तविकता की पूरी समझ कि उनके देशों में मुक्ति संघर्ष तभी सच्ची विजय प्राप्त कर सकता है

जब उस संघर्ष को सर्वहारा व समाजवाद के हितों के साथ जोड़ा जाये ।

इसलिये हर एक देश के सर्वहारा को अपनी क्रान्तिकारी पार्टी का निर्माण करना चाहिये, जो पार्टी वफ़ादारी से मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्टालिन की शिक्षाओं को काम में लाने, और इन शिक्षाओं को हर एक देश की हालतों व हर एक देश के लोगों की परिस्थितियों के साथ निकटता से जोड़ने के योग्य हो । यह पूर्णरूप से आवश्यक है इनमें से हर पार्टी, अपने देश के लोगों की मनोवृत्ति और उसके आर्थिक, राजनीतिक, विचारधारात्मक और सांस्कृतिक विकास की गहरी जानकारी रखे, और अस्थिर और दुःसाहसपूर्ण तरीके, ब्लेंक्विस्ट तरीके से काम न करे बल्कि सर्वहारा के सहयोगियों व लोगों के व्यापक जनसमुदायों को अपनी कार्यदिशा के आधार पर एकीकृत करने के लिये निरन्तर लड़े ।

प्रतिक्रियावादी सरमायदारों और सत्ताधारी बड़े ज़मी-न्दारों और विदेशी अत्याचारियों की कार्यवाहियों, व इसके साथ-साथ नव-उपनिवेशवादियों की साज़िशों को ध्यान में रखते हुये, क्रान्तिकारियों और लोगों के जनसमुदायों को अपने आप को निरन्तर तैयार करना चाहिये । ये महत्वपूर्ण बातें हैं जिनका क्रान्तिकारियों और लोगों को, परिपक्वता, ठोस संगठन और क्रान्तिकारी युक्तियों के साथ सामना करना चाहिये ।

स्वभावतः, सिर्फ़ यही नहीं कि सहकारिता, व समन्वय के सम्बन्धों और अनुभव के आदान-प्रदान को निषिद्ध नहीं करना चाहिये बल्कि इनको विभिन्न देशों की क्रान्तिकारी शक्तियों और लोगों के बीच स्थापित करना आवश्यक है । ऐसा करना आसान है क्योंकि उनकी बहुत सी हालतें एक सी हैं, जैसे, नव-

उपनिवेशवाद और प्रतिक्रियावादी सरमायदारों द्वारा किये जाने वाला अत्याचार व शोषण, सामान्य सांस्कृति, इसके साथ-साथ इस अत्याचार व शोषण से मुक्ति पाने का सामान्य उद्देश्य। इनकी ये सामान्य हालतें व हित इन सब देशों के क्रान्तिकारी और प्रगतिशील लोगों को विचार-विमर्श करने, अपने कामों में सहकारिता व समन्वय को बढ़ाने के लिये प्रेरित करते हैं, जिनसे वे उन पर अत्याचार करने वाले दुश्मनों की कार्य-वाहियों का विरोध करते हैं।

नव-उपनिवेशवादी आधिपत्य के अधीन कष्ट पा रहे लोगों की स्थितियों को मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण से देखने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सभी सच्चे क्रान्तिकारियों के सामने इन लोगों के क्रान्तिकारी व मुक्ति संघर्ष को निस्संकोच समर्थन और सहायता देने का काम है, ताकि ये संघर्ष निरन्तर बढ़ता रहे और क्रान्ति का उसकी पूरी विजय तक निरन्तर विकास होता रहे।

सच्चे क्रान्तिकारी, सर्वहारा व लोगों से नई दुनिया, समाजवादी दुनिया, के लिये उठ खड़े होने की मांग करते हैं

जैसा कि हमने पहले बताया है, पूंजीवाद का आम संकट पहले से भी अधिक गहरा होता जा रहा है। इसके परिणाम-स्वरूप, सर्वहारा, उत्पीड़ित वर्ग व लोग अब शोषण का भार उठाने से इनकार कर रहे हैं, अपने जीवन में परिवर्तन लाने की मांग कर रहे हैं, और सरमायदारी प्रणाली का ध्वंस करने, नव-उपनिवेशवाद व साम्राज्यवाद का खात्मा करने की मांग कर रहे हैं। लेकिन इन आकांक्षाओं को सिर्फ़ क्रान्ति के

जरिये ही पूरा किया जा सकता है । आन्तरिक व विदेशी वर्ग दुश्मनों के साथ लड़ाई व उन पर हमला किये बिना कोई भी विजय प्राप्त नहीं की जा सकती है ।

मज़दूर वर्ग की सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को क्रान्ति के नेता के रूप में,इन लड़ाइयों के लिये सर्वहारा, मेहनतकश जनसमुदायों और लोगों को जागरूक करना और उनको राजनीतिक, विचारधारात्मक और सैनिक तौर पर तैयार करना चाहिये ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों, व सभी क्रान्तिकारी, चाहे उनकी संख्या कितनी भी कम हो,अपने आप को लोगों के बीच स्थापित करते हैं,व बहुत सावधानी और सहनशीलता से लोगों को नियमित रूप से संगठित करते हैं, उनको यह विश्वास दिलाते हैं कि वे एक महान शक्ति हैं, कि वे राज सत्ता पर अधिकार जमाने और उसको सर्वहारा व लोगों के हितों में लगाने के लिये पूंजी का विध्वंस करने के योग्य हैं । ऐसी पार्टियां ऐसा नहीं सोचती हैं कि वे छोटी हैं और सरमायदारों की पार्टियों के गठ-बन्धन और उनके द्वारा बनाये गये मत का सामना नहीं कर सकती हैं । क्रान्तिकारियों का काम लोगों के व्यापक जनसमुदायों के सामने यह सिद्ध करना है कि सरमायदारों द्वारा बनाया गया यह मत गलत है व इसको मिटाया जाना चाहिये और एक सच्चे क्रान्तिकारी मत को बनाना चाहिये जो एक महान परिवर्तनकारी शक्ति है ।

अपने विभिन्न कार्यों को सफलता से करने के लिये मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां यह सोचती हैं कि सबसे पहले, उनके पास एक क्रान्तिकारी नीति व युक्ति,एक सही राजनीतिक कार्यदिशा होनी चाहिये,जो व्यापक लोक जनसमुदायों

के हितों और आकांक्षाओं के अनुकूल हों, और इसके साथ-साथ सरमायदारी पद्धति व विदेशी साम्राज्यवादी आधिपत्य को नष्ट करने के संघर्ष में समस्यायों और कार्यों का क्रान्तिकारी समाधान होना चाहिये ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद ही एक ऐसा विज्ञान है जो मज़दूर वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी को एक सही कार्यदिशा बनाने, और नीतियुक्त लक्ष्य और कामों की साफ़तौर से व्याख्या करने और उनको पूरा करने के लिये क्रान्तिकारी युक्तियों और तरीकों का प्रयोग करने की सम्भावना देता है ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद से ज्ञानोद्दीप्त होकर और देश की यथार्थ सामाजिक-आर्थिक व राजनीतिक हालतों और अन्तर-राष्ट्रीय परिस्थितियों के अनुकूल, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी यह जानती है कि अपने आपको किस प्रकार दिशा-मान करे, और किसी भी समय व क्रान्ति की हर एक कार्यावस्था में, चाहे वह लोकतन्त्रीय, राष्ट्रीय मुक्ति, या समाजवादी क्रान्ति हो, जनसमुदायों का नेतृत्व किस प्रकार करे । मार्क्स-वाद-लेनिनवाद पर आधारित एक क्रान्तिकारी नीति व एक सही राजनीतिक कार्यदिशा, और विश्व सर्वहारा का क्रान्ति-कारी अनुभव और अपने ही देश का वर्ग संघर्ष, हर कार्यावस्था के नीतियुक्त लक्ष्य की स्पष्ट रूप से व्याख्या करने, और यह निश्चित करने कि आन्तरिक और विदेशी मुख्य दुश्मन कौन हैं व किसके खिलाफ़ मुख्य हमला करना चाहिये और सर्वहारा के आन्तरिक व विदेशी सहयोगी कौन हैं, आदि, को सम्भव बनाते हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों का लक्ष्य पूंजीवादी पद्धति का ध्वंस करना और समाजवाद की विजय प्राप्त करना है, जबकि, अगर उनके देश की क्रान्ति के सामने लोकतन्त्रीय

और साम्राज्यवाद -विरोधी काम हों,तो उनका लक्ष्य होता है अनवरत रूप से इसका विकास करना, इसको समाजवादी क्रान्ति तक ले जाना,और जितना जल्दी से जल्दी सम्भव हो समाजवादी कार्यों की पूर्ति करना ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के नीतियुक्त लक्ष्य, और उसको प्राप्त करने के रास्ते,दोनों ही,झूठी कम्यूनिस्ट और मज़दूर पार्टियों के लक्ष्यों व रास्तों से पूर्णरूप से भिन्न है । सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ उत्पादन के पूँजीवादी सम्बन्धों का ध्वंस किये बिना और पुराने राज उपकरणों व सम्पूर्ण सरमायदारी उपरिसंरचना को उसकी नींव सहित नष्ट किये बिना इस लक्ष्य को प्राप्त करने के बारे में सोच भी नहीं सकती हैं । ये लेनिन की शिक्षाओं पर दृढ़ रहती हैं,जिन्होंने बताया था,

"क्रान्ति का सार है कि सर्वहारा प्रशासकीय उपकरणों, और सम्पूर्ण राज उपकरणों का ध्वंस करता है,और इसकी जगह सशस्त्र मज़दूरों से बने नये उपकरण स्थापित करता है ।"*

झूठी कम्यूनिस्ट व मज़दूरों की पार्टियाँ पुराने राज उपकरणों को बनाये रखने की शिक्षा देती हैं,हालाँकि कथनों में ये दावा करती हैं कि ये समाजवाद के पक्ष में हैं । उनके अनुसार,सुधारों के जरिये,संसदीय रास्ते के जरिये,और यहाँ तक कि पुराने राज उपकरण का इस्तेमाल करके भी समाजवाद की स्थापना की जा सकती है ।

---

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २५, पृष्ठ ५७७ (अल्बेनिया संस्करण)

बहुत सी तथाकथित कम्यूनिस्ट पार्टियाँ इस समय अपने आप को मौजूदा पूँजीवादी पद्धति की रक्षा करने में घोषित सरमायदारी पार्टियों से भी कहीं ज़्यादा उत्साहशील सिद्ध कर रही हैं । उदाहरण के लिये, एक ऐसे समय जब कि स्पेन की कुछ सरमायदारी पार्टियाँ युवान कारलोस की राजतन्त्रीय सत्ता को गणतन्त्रीय सत्ता से बदलने की माँग कर रही हैं, इबार्रूरी-करिल्लो की संशोधनवादी पार्टी बेशर्मी के साथ इसकी रक्षा कर रही है । इसी तरह, बरलिंगुवर की संशोधनवादी पार्टी इटली के पूँजीवादी राज के अत्याचारी कानूनों, जो लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रताओं के खिलाफ़ निर्दिष्ट हैं, के उत्कट प्रजेता के रूप में एक ऐसे समय सामने आती है, जब कि विभिन्न सरमायदारी पार्टियाँ खुले रूप से ऐसा नहीं कर रही हैं । अपनी तरफ़ से, चीनी संशोधनवादी भी पूँजीवादी देशों की उन पार्टियों को, जो चीनी कार्यदिशा का अनुसरण करती हैं, अभिकथित रूप से जन्मभूमि की रक्षा करने के वास्ते, लेकिन वास्तव में क्रान्ति के फूट पड़ने पर उसका दमन करने के वास्ते, सेनाओं व हिंसा के सरमायदारी उपकरणों को मज़बूत करने के लिये सबसे सैनिकवादी श्रेणियों के साथ मिलकर लड़ने की हिदायत देते हैं ।

क्रान्तिकारी व मुक्ति आन्दोलन को नष्ट करने और पूँजीवादी व साम्राज्यवादी आधिपत्य को जारी रखने के अपने उद्देश्य से, सरमायदार व उनके अनुयायी, विशेषकर आधुनिक संशोधनवादी, क्रान्ति के मित्रों और दुश्मनों के बीच अन्तर को मिटाते हुये, सभी तरीकों से क्रान्तिकारी शक्तियों में भ्रम पैदा करने व फूट डालने की कोशिश कर रहे हैं । इसका ठीक उदाहरण चीनी संशोधनवादियों के उपदेश हैं, जो बड़े एकाधिकारी सरमायदारों, प्रतिक्रियावादी व तानाशाही सत्ताओं,

नेटो और यूरोपीयन कामन मार्केट, और यहाँ तक कि अमरीकी साम्राज्यवाद को भी सर्वहारा व उत्पीड़ित लोगों का सहयोगी बताते हैं ।

जहाँ तक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों का सवाल है, वे समझती हैं कि सच्ची क्रान्तिकारी नीति को बनाने के लिये यह नितान्त आवश्यक शर्त है कि क्रान्ति की प्रेरक शक्तियों और उसके दुश्मनों के बीच एक स्पष्ट विभाजन रेखा बनायी जाये, और इन मुख्य घरेलू व विदेशी दुश्मनों को स्पष्ट रूप से निश्चित किया जाये जिनके खिलाफ़, जैसा कि स्टालिन ने बताया था, मुख्य प्रहार निर्दिष्ट किया जाये लेकिन उसके साथ-साथ अन्य दुश्मनों के खिलाफ़ लड़ाई का अल्पानुमान और उनकी उपेक्षा नहीं की जाये ।

हमारे समय में, साम्राज्यवाद की हालतों में, विकसित पूँजीवादी देशों में ही नहीं बल्कि उत्पीड़ित व निर्भर देशों में भी, क्रान्ति के मुख्य घरेलू दुश्मन स्थानीय बड़े सरमायदार हैं जो पूँजीवादी पद्धति का नेतृत्व करते हैं और अपने आधिपत्य व विशेषाधिकारों को कायम रखने, मज़दूर लोगों के हर एक आन्दोलन को, जो उनकी राज शक्ति व वर्ग हितों को ज़रा भी खतरे में डालते हैं, कुचलने व मिटाने के लिये, अपने सभी साधनों, हिंसा व अत्याचार, बाज़ारू बातों व धोखों, से लड़ते हैं । दूसरी ओर, वास्तविक हालतों में, क्रान्ति और लोगों का मुख्य विदेशी दुश्मन विश्व साम्राज्यवाद, विशेषकर साम्राज्यवादी महाशक्तियाँ हैं । सर्वहारा और उत्पीड़ित लोगों को, एक महाशक्ति से लड़ने के लिये दूसरी पर निर्भर करने, या अभिकथित रूप से राष्ट्रीय आज़ादी व स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिये साम्राज्यवादी शक्तियों के साथ सहयोगी संघ बनाने, की सलाह देना व माँग करना, जैसा कि चीनी संशोधन-

वादी हिमायत कर रहे हैं, क्रान्ति के उद्देश्य के प्रति गद्दारी के सिवाय और कुछ नहीं है ।

संशोधनवादियों ने, क्रान्ति में आधिपत्य रखने के मज़दूर वर्ग के कार्यभाग को, जो क्रान्तिकारी नीति के मूलभूत सवालों में से एक है, अपना खास निशाना बना लिया है ।

"मार्क्स के सिद्धान्त का मुख्य सार है", लेनिन ने बताया, "समाजवादी समाज के निर्माता के रूप में सर्वहारा के विश्व ऐतिहासिक कार्यभाग की व्याख्या करना" ।*

लेनिन ने, क्रान्तिकारी आन्दोलन में, सर्वहारा के आधिपत्य की धारणा से इनकार करने को सुधारवाद की सबसे अश्लील अभिव्यक्ति बताया ।

आधुनिक संशोधनवादियों में से कुछ यह सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं कि मज़दूर वर्ग का अभिकथित रूप से विसर्वहारा-करण, हो रहा है और उसका कारोबारों के "सह-प्रबन्धक" के रूप में परिवर्तन हो रहा है, इसलिये अब सर्वहारा क्रान्ति की कोई आवश्यकता नहीं है और मौजूदा सामाजिक पद्धति से भिन्न किसी भी सामाजिक पद्धति की ज़रूरत नहीं है । दूसरे यह दावा करते हैं कि सिर्फ़ मज़दूर ही नहीं बल्कि काम और सांस्कृतिक कार्य में लगा हुआ हर एक व्यक्ति, और मजूरी व वेतन पाने वाले सभी, अब सर्वहारा हैं, और सिर्फ़ मज़दूर वर्ग ही नहीं बल्कि सामाज के दूसरे वर्ग व श्रेणियां भी समाजवाद

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ १८, पृष्ठ ६५१ (अल्बेनिया संस्करण)

चाहती हैं । इसलिये, वे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि, क्रान्तिकारी आन्दोलन में आधिपत्य रखने के मज़दूर वर्ग के कार्यभाग का अब कोई महत्व नहीं रह गया है । सोवियट संशोधनवादी कथन में मज़दूर वर्ग के नेतृत्वदायी कार्यभाग से इनकार नहीं करते हैं, जबकि अभ्यास में इन्होंने इस कार्यभाग को मिटा दिया है, क्योंकि इन्होंने इस वर्ग को नेतृत्व करने की हर सम्भावना से वंचित कर दिया है । लेकिन सिद्धान्त में भी इन्होंने इस कार्यभाग को मिटा दिया है जो इस बात से स्पष्ट है कि वे कुख्यात सिद्धान्त, "सम्पूर्ण लोगों की पार्टी और राज", की रक्षा करते हैं । चीनी संशोधनवादी उपयोगितावादी होने के नाते मौके के अनुसार कभी किसानों, कभी सेना, कभी शिष्यों और विद्यार्थियों आदि को "क्रान्ति" का नेता बनाते हैं ।

पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया दृढ़ता से इस मार्क्सवादी-लेनिनवादी दावे की रक्षा करती है कि मज़दूर वर्ग समाज के विकास में निश्चयात्मक शक्ति, विश्व के क्रान्तिकारी रूप-परिवर्तन के लिये व समाजवादी और कम्यूनिस्ट समाज के निर्माण के लिये एक नेतृत्वदायी शक्ति है ।

मज़दूर वर्ग समाज की मुख्य उत्पादक शक्ति है, सबसे उन्नत वर्ग है, राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति व समाजवाद में किसी भी दूसरे वर्ग से ज़्यादा रुचि रखने वाला वर्ग है, और क्रान्तिकारी संगठन व संघर्ष की सबसे अच्छी परम्पराओं का वाहक है । इसके पास समाज के क्रान्तिकारी रूपपरिवर्तन का एक-मात्र वैज्ञानिक सिद्धान्त और इसकी अपनी जंगी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी है, जो इसको इस उद्देश्य की ओर मार्ग-प्रदर्शित करती है । वस्तुगत रूप से इतिहास ने, पूंजीवाद से कम्यूनिज़्म तक अवस्थापरिवर्तन के लिये किये जाने वाले सम्पूर्ण

संघर्ष का नेतृत्व करने का निमित्त कार्य इसको सौंपा है ।

क्रान्ति के मूलभूत सवाल, यानि कि राजनीतिक सत्ता के सवाल का अपने व लोगों के जनसमुदाय के पक्ष में समाधान करने के लिये क्रान्ति में सर्वहारा का आधिपत्य निश्चयात्मक है ।

यथार्थ हालतों जिनमें क्रान्ति को कार्यान्वित किया जाता है और विभिन्न कार्यावस्थाओं जिनमें से यह गुज़रती है के अनुसार नयी सत्ता भी विभिन्न प्रावस्था में से गुज़र सकती है और इसे विभिन्न नाम दिये जा सकते हैं, लेकिन, सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना किये बिना क्रान्ति का समाजवाद की विजय की ओर विकास नहीं हो सकता है । मार्क्सवाद-लेनिनवाद हमें यह सिखाता है और सभी विजयी समाजवादी क्रान्तिओं का अनुभव भी यही सिद्ध करता है । इसलिये, क्रान्ति को कार्यान्वित करने की परिस्थितियां चाहे जैसी भी हों, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी, सर्वहारा अधिनायकत्व को स्थापित करने के अपने लक्ष्य का परित्याग कभी भी नहीं करती है ।

बिना किसी अपेक्षा के, विभिन्न रंगों व प्रवृत्तियों के सभी संशोधनवादी, एक या दूसरे तरीके से सर्वहारा अधिनायकत्व को स्थापित करने की ज़रूरत से इनकार करते हैं क्योंकि ये क्रान्ति के खिलाफ़ है, क्योंकि ये पूंजीवादी पद्धति को कायम रखने और जारी रखने के पक्ष में हैं ।

<u>सर्वहारा अपनी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी व अपने सहयोगियों के साथ मिलकर लड़ाई करता है । यह भी क्रान्तिकारी नीति के सबसे महत्वपूर्ण सवालों में से एक है ।</u>

गरीब किसान सर्वहारा के स्वभाविक व निकट सहयोगी हैं, जो इसके साथ सिर्फ़ तात्कालिक नीतियुक्त लक्ष्यों से ही

नहीं बल्कि भावी व अन्तिम नीतियुक्त लक्ष्यों से भी जुड़े हुये हैं । शहर के मेहनतकश लोगों की गरीब श्रेणियाँ भी इसी तरह की सहयोगी हैं । सर्वहारा, व इसके साथ-साथ गरीब किसान और दूसरे उत्पीड़ित व शोषित मेहनतकश लोग क्रान्ति की मुख्य प्रेरक शक्तियाँ हैं ।

शहरों के निम्न-सरमायदार भी जो निरन्तर भारी पूँजी की जकड़ में हैं और जिन पर पूर्णतया हड़प लिये जाने का खतरा बना रहता है, इसके सहयोगी बन सकते हैं और इन्हें बनना चाहिये ।

सर्वहारा, जनसंख्या की दूसरी श्रेणियों, जैसे कि बुद्धिजीवियों का प्रगतिशील भाग, जिसका घरेलू व विदेशी पूँजी शोषण करती है, को अपना सहयोगी बनाने के लिये भी कोशिश व संघर्ष करता है । पूँजीवादी और संशोधनवादी देशों में बुद्धिजीवियों का महत्व अब बढ़ गया है । लेकिन इसकी स्थितियों, उसके काम के स्वभाव व कार्यभाग में कितना भी परिवर्तन क्यों न हो जाये, ये अपने आप में एक वर्ग कभी नहीं बन सकता है, न तो ये मज़दूर वर्ग में समाविष्ट हैं और न ही हो सकता है जैसा कि विभिन्न संशोधनवादी दावा करते हैं । इसलिये, जैसा कि लेनिन ने दिखाया और इतिहास ने सिद्ध किया है बुद्धिजीवी श्रेणी एक स्वतन्त्र सामाजिक-राजनीतिक शक्ति नहीं हो सकती है । समाज में उसके कार्यभाग व स्थान उसकी सामाजिक-आर्थिक स्थितियों और विचारधारात्मक व राजनीतिक धारणाओं के आधार पर निश्चित किये जाते हैं । यह स्थिति और वे धारणायें चाहे कितनी भी क्यों न बदल जायें, बुद्धिजीवी श्रेणी क्रान्ति को नेतृत्व देने के मज़दूर वर्ग के कार्यभाग में मज़दूर वर्ग का स्थान नहीं ले सकती है । सर्वहारा का काम है, बुद्धिजीवी श्रेणी के प्रगतिशील भाग को अपने पक्ष में

जीतना, और उसको यह विश्वास दिलाना कि पूंजीवादी प्रणाली का विनाश और समाजवाद की विजय अवश्यम्भावी है,और क्रान्ति में उसे अपना सहयोगी बनाना ।

अफ्रीका,लैटिन अमरीका,एशिया,आदि के देशों में,जिनका सामाजिक-आर्थिक विकास बहुत कम है और जो विदेशी पूंजी पर ज़्यादा निर्भर हैं,और जहाँ क्रान्ति के लोकतन्त्रीय और साम्राज्यवाद-विरोधी कार्यों का विशेष महत्व है,मध्य किसान वर्ग और सरमायदारों का वह भाग,जो विदेशी पूंजी के साथ जुड़ा हुआ नहीं है और जो देश के स्वतन्त्र विकास की आकांक्षा रखता है,भी सर्वहारा के सहयोगी हो सकते हैं ।

सरमायदारों के इस भाग का लोकतन्त्रीय और साम्राज्यवाद-विरोधी क्रान्ति के साथ एकीकृत होना,सर्वहारा की सही नीति और युक्तियों,और मज़दूर वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के निपुण और चतुरतापूर्ण कामों पर निर्भर करता है । इस तरह,सर्वहारा व इसकी पार्टी,सिर्फ़ निम्न-सरमायदारों को ही नहीं बल्कि सरमायदारों के इस भाग को भी,अपने आप को सर्वहारा के नेतृत्व के अधीन रखने,और विदेशी आधिपत्य को नष्ट करने व साम्राज्यवाद के एक साधन — खूंख्वार पूंजीवादी बड़े सरमायदारों,जो लोगों पर अत्याचार व उनका शोषण करते हैं,उनका नैतिक पतन करते हैं और उनकी पवित्र भावनाओं व शताब्दियों पुरानी संस्कृति को दूषित करते हैं, का अन्तर्ध्वंस करने के लिये विश्वास दिला सकते हैं ।

क्रान्ति की किसी खास कार्यावस्था में नीतियुक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने में रुचि रखने वाले अन्य वर्गों व श्रेणियों को अपना सहयोगी बनाने में सफल होने के लिये सर्वहारा को बड़े सरमायदारों और दूसरे प्रतिक्रियावादियों के साथ उसी तरह लड़ाई करनी पड़ेगी जैसा कि उसे सभी दूसरे मामलों में करना

पड़ता है ।

अपनी पराजयों का पूर्वानुमान करते हुये,प्रतिक्रियावादी सरमायदार और बड़े ज़मीन्दार,निम्न-सरमायदारी,किसान वर्ग और प्रगतिशील बुद्धिजीवियों को अपने पक्ष में करने और उनको सर्वहारा का सहयोगी बनने से रोकने के लिये हज़ारों कोशिशें करते व चालें चलते हैं । वे मज़दूर वर्ग को भी धोखा देने की कोशिश करते हैं ताकि क्रान्ति न फूट सके और अगर फूट भी पड़े तो यह सुनिश्चित किया जा सके कि उसको अन्त तक न ले जाया जाये,बल्कि वह रुक जाय या उल्टे रास्ते पर चल पड़े ।

अपनी ओर से सर्वहारा व उसकी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी को,अपने सामान्य दुश्मन,जैसे बड़े सरमायदार,बड़े ज़मीन्दार, साम्राज्यवादियों व सामाजिक-साम्राज्यवादियों के खिलाफ़ अपने सहयोगियों की एकता को प्राप्त करने,और किसान वर्ग की श्रेणियों व निम्न-सरमायदारी को,बड़ी पूंजी या तानाशाही एकाधिपत्य की आरक्षित शक्ति बनने,जैसा कि जर्मनी में हिटलर,इटली में मुसोलिनी,और स्पेन के युद्ध में फ्रेन्को के समय में हुआ था, से रोकने के लिये काम करना चाहिये,और ऐसा करने की उनके पास सभी सम्भावनायें हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी,एक सतर्क व नम्य रुख बनाये रखती है,विशेषकर अपने दोलायमान,सम्भव या अस्थाई सहयोगियों के प्रति,जिनमें मध्य सरमायदारों की विभिन्न श्रेणियां भी शामिल हैं, जो अनेक तरीकों, विभिन्न हितों, परम्पराओं व पक्षपातों द्वारा विश्व पूंजी व साम्राज्यवाद के साथ जुड़ी हुई हैं । सर्वहारा व उसकी अग्रगामी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी अपनी सिद्धान्ती स्थितियों से हिले बिना, ऐसी शक्तियों को,उनकी दोलायमानता व अस्थिरता के बाव-

जूद भी, क्रान्ति व मुक्ति संघर्ष के पक्ष में आकर्षित करना, या कम से कम उनको तटस्थ करना चाहती हैं, ताकि वे दुश्मन की रक्षित शक्ति न बनें ।

क्रान्ति के नियम दूसरे देशों की तरह उन देशों में भी लागू होते हैं जहां संशोधनवादी सत्ता में हैं । यूरोप के संशोधनवादी देशों में विकसित हो रहे नये सरमायदारों की स्थिति क्या है ? ये सोवियट सरमायदारों, सोवियट -सामाजिक-साम्राज्यवाद के सब तरफ़ा बर्बर अत्याचार से अपने आप को मुक्त करने की आकांक्षा रखते हैं, लेकिन दोनों पक्षों के मूलभूत स्वार्थ सामान्य हैं । इन देशों के सरमायदार सोवियट सरमायदारों से अलग होकर नहीं रह सकते हैं । और अगर ये अपने आप को इन बर्बर सामाजिक-साम्राज्यवादी बड़े सरमायदारों से अलग कर भी लें, तो इसमें कोई शक नहीं है कि थोड़े ही समय में ये पश्चिमी यूरोप के विकसित पूंजीवादी राज्यों के सरमायदारों और अमरीकी साम्राज्यवाद के आधिपत्य में आ जायेंगे ।

इसके साथ-साथ, उन सभी संशोधनवादी देशों में, जिन्हें, आर्थिक, राजनीतिक और सैनिक रूप से बड़े सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी राज के साथ मिलाया जा रहा है, सर्वहारा के अलावा जनसंख्या की दूसरी श्रेणियां भी नये सरमायदारों द्वारा किये गये शोषण और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के आधिपत्य के कारण असन्तुष्ट हैं । इसी कारण ये अपने शासक सरमायदारों और रूसी आधिपत्यवाद व नव-उपनिवेशवाद, दोनों ही से घृणा करती हैं । इन देशों के सर्वहारा को जागरूक किया जाना चाहिये, और इसे सर्वहारा क्रान्ति को फिर से कार्यान्वित करने व सर्वहारा अधिनायकत्व की पुन: स्थापना करने के लिये एक बार फिर रणभूमि में उतर आने

की, और गद्दारों का ध्वंस व सफ़ाया करने के लिये अपने आप को लड़ाई में झोंकने की ऐतिहासिक ज़रूरत के बारे में जागरूक किया जाना चाहिये। इसको अपनी नई मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों की स्थापना करनी चाहिये, व सभी लोक जनसमुदायों को अपने साथ एक करना चाहिये।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां इस सिद्धान्त पर दृढ़ता से अडिग रहती हैं कि क्रान्ति की विजय के लिये निश्चयात्मक कारक आन्तरिक हैं, यानि कि उस देश के सर्वहारा व लोगों का क्रान्तिकारी संघर्ष, जबकि बाहरी कारक सहायक व गौण है, लेकिन इसके साथ-साथ वे क्रान्ति के बाहरी सहयोगियों की किसी भी तरह से उपेक्षा नहीं करती हैं या उनके महत्व को कम नहीं समझती हैं। इसके साथ-साथ वे बाहरी सहयोगियों के प्रति एक सिद्धान्ती व नम्य रूप रखती हैं, जैसा कि वे आन्तरिक सहयोगियों के साथ करती हैं।

लेनिन व स्टालिन की शिक्षाओं के अनुसार और मौजूदा परिस्थितियों पर अपने आप को आधारित करते हुये वे, दूसरे देशों में सर्वहारा व उसके क्रान्तिकारी आन्दोलन, दुनिया के उत्पीड़ित लोगों के साम्राज्यवाद-विरोधी क्रान्तिकारी आन्दोलन, और सच्चे समाजवादी देशों को, हर एक देश के क्रान्तिकारी आन्दोलन के स्वभाविक व विश्वस्थ विदेशी सहयोगियों के रूप में देखते हैं।

विशेष स्थितियों में, ऐसी परिस्थितियां भी पैदा हो सकती हैं जिनमें एक समाजवादी देश, या वे लोग जो साम्राज्यवादी व सामाजिक-साम्राज्यवादी हमलों के खिलाफ़ लड़ रहे हैं, अपने आप को, एक ही दुश्मन के खिलाफ़ लड़ रहे पूंजीवादी दुनिया के अनेक देशों के साथ सामान्य मोर्चे पर पाते हैं, जैसा कि दूसरे विश्व युद्ध के दौरान हुआ था।

ऐसी स्थितियों में, यह सुनिश्चित करना कि क्रान्ति के हितों को हमेशा ही ध्यान में रखा जाये और उसे सामान्य मोर्चे या इन अस्थायी सहयोगियों के साथ सहयोगी-संघ की खातिर कभी भी भुलाया न जाये, धुंधला नहीं किया जाये या त्यागा न जाये,और यह सुनिश्चित करना कि यह मोर्चा या सहयोगी-संघ अपने ही में एक लक्ष्य न बन जाये,पहले दर्जे का महत्व रखते हैं । यह खासतौर से महत्वपूर्ण है कि ऐसे सहयोगियों को क्रान्ति का ध्वंस करने के उद्देश्य से दखल देने न दिया जाये और विजयी क्रान्ति पर कब्ज़ा करने न दिया जाये । तानाशाह-विरोधी राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के सालों में, अमरीकी व बर्तानवी सहयोगियों के प्रति अल्बेनिया की कम्यूनिस्ट पार्टी के रुख का अनुभव महत्वपूर्ण है । अल्बेनिया में क्रान्ति के भविष्य के लिये यह रुख उपयोगी था ।

क्रान्ति का लक्ष्य प्राप्त करने व उसके कामों को पूरा करने के लिये मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों द्वारा इस्तेमाल की गई क्रान्तिकारी युक्तियां क्रान्तिकारी नीति से अलग नहीं की जा सकती हैं । जब कि युक्तियां नीति का भाग व उसकी सेवा में हैं, वे क्रान्तिकारी तरंग के चढ़ाव व उतार और यथार्थ परिस्थितियों व हालतों के अनुसार बदली जा सकती हैं लेकिन,यह हमेशा क्रान्तिकारी नीति और मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों की सीमाओं के अन्दर किया जाना चाहिये ।

"युक्ति-सम्बन्धी नेतृत्व का काम है",स्टालिन ने बताया, "सर्वहारा के संघर्ष व संगठन के सभी रूपों में निपुणता प्राप्त करना और यह सुनिश्चित करना कि इनका इस्तेमाल ठीक

तरह से किया जाये ताकि शक्तियों के मौजूदा सम्बन्ध से अधिकतम परिणाम प्राप्त किये जा सकें जो कि नीति में सफलता पाने की तैयारी के लिये ज़रूरी है ।"*

संघर्ष की निपुण युक्तियों और रूपों को अपनाते हुए क्रान्ति के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिये सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां हमेशा ही वफ़ादारी के साथ क्रान्तिकारी सिद्धान्तों का अनुमोदन करती हैं । ये, सिर्फ़ युक्तियों को अपनाने के लिये सिद्धान्तों का त्याग करने की किसी भी प्रवृत्ति को अस्वीकार करती हैं व उसके खिलाफ़ संघर्ष करती हैं, ये, बदलती हुई परिस्थितियों पर आधारित किसी भी सिद्धान्तहीन, उपयोगितावादी नीति की जो सभी प्रवृत्तियों के संशोधनवादियों की सम्पूर्ण कार्यवाहियों को परिलक्षित करती हैं, सबसे दृढ़ विरोधी हैं ।

क्रान्ति हमेशा ही क्रान्तिकारी अग्रगामी के नेतृत्व में जनसमुदायों द्वारा किये जाने वाला काम है । इसलिये हर एक देश में मौजूदा यथार्थ हालतों, परिस्थितियों व परम्पराओं, आदि, को ध्यान में रखते हुये, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी को उपयुक्त रूपों में जनसामूहिक क्रान्तिकारी संगठन पर हर हालत में बहुत ध्यान देना चाहिये । जनसमुदायों के साथ पार्टी के सम्बन्ध स्थापित किये बिना उनको क्रान्तिकारी संघर्ष के लिये प्रेरित करने, तैयार करने व गतिमान करने की बात करना भी व्यर्थ है ।

ठीक इसी लिये, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी अपने नेतृत्व

* जे०वी०स्टालिन, रचनायें, ग्रन्थ ६, पृष्ठ १६४ (अल्बेनिया संस्करण)

में,जनसमुदायों के संगठनों का निर्माण करने के काम को बहुत अधिक महत्व देती हैं। निस्सन्देह,यह ऐसा सवाल नहीं है जिसका समाधान आसानी से किया जा सके,विशेषकर इस समय जबकि सभी पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों में विभिन्न प्रकार के मज़दूर संघ,कोआपरेटिविस्ट,सांस्कृतिक, वैज्ञानिक,युवा, नारी,व दूसरे संगठन मौजूद हैं। इनमें से अधिकांश संगठन सरमायदारों,संशोधनवादियों व चर्च के नेतृत्व व प्रभाव में हैं।

लेकिन जैसा कि लेनिन हमको सिखाते हैं कम्यूनिस्टों को जहाँ कहीं भी जनसमुदाय हैं वहीं जाना व काम करना चाहिये। इसलिये कम्यूनिस्टों को उन संगठनों में भी काम करना चाहिये जिन पर सरमायदारों,सामाजिक-लोकतन्त्र-वादियों,संशोधनवादियों,आदि,का नेतृत्व या प्रभाव है। मार्क्सवादी-लेनिनवादी,सरमायदारों व सुधारवादी पार्टियों के प्रभाव व नेतृत्व का अन्तर्ध्वंस करने के लिये,जनसमुदायों के बीच मज़दूर वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी के प्रभाव को फैलाने के लिये,इन संगठनों के मुखियों के कार्यक्रम व कार्यवाहियों के कपटी स्वभाव का पर्दाफ़ाश करने के लिये,और जनसमुदायों के कार्यों को एक पूंजीवाद-विरोधी,साम्राज्यवाद-विरोधी, संशोधनवाद-विरोधी राजनीतिक स्वभाव देने के लिये इन संगठनों में काम करते हैं। जनसमुदायों की श्रेणियों में किये गये इनके क्रान्तिकारी कामों के जरिये,इन संगठनों में क्रान्ति-कारी दल भी पैदा किये जा सकते हैं,निस्सन्देह इन संगठनों पर नेतृत्व करने और उनको सही रास्ते पर ले जाने की सम्भा-वना भी पैदा की जा सकती है।

लेकिन किसी भी हालत में मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी अपने नेतृत्व में जनसमुदायों के क्रान्तिकारी संगठनों का निर्माण

करने के लक्ष्य को कभी भी नहीं छोड़ती है ।

जनसमुदायों के सबसे महत्वपूर्ण संगठन मज़दूर संघ हैं । आम तौर पर, इस समय पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों में सर्वहारा व सभी मेहनतकश लोगों को गुलामी में रखने के लिये ये संगठन सरमायदारी व संशोधनवाद की सेवा करते हैं । अपने समय में, एंगेल्स ने बताया था कि बर्तानिया के मज़दूर संघों को, जो सरमायदारों को आतंकित करते थे, पूंजी की सेवा करने वाले संघों में बदल दिया गया है । मज़दूर-संघ के संगठनों ने मज़दूरों को हज़ारों धागों से, गुलामी की हज़ारों जंजीरों से बांध दिया है ताकि जब कोई अकेला मज़दूर विद्रोह करे तो आसानी से उसका दमन किया जा सके । मज़दूर-संघों के मौकापरस्त नेता इस तरह काम करते हैं ताकि एक या एक से अधिक कारोबार के हड़ताल व प्रदर्शन करने वाले मज़दूरों के विद्रोहों को नियन्त्रण में रखा जाये और इन विद्रोहों को सिर्फ़ आर्थिक रूप ही धारण करने दिया जाये । मज़दूर अभिजाततन्त्र इन सब बातों को किसी न किसी तरह से इस दिशा में ले जाने के लिये बहुत मेहनत करता है । पूंजीवादी देशों में यह अभिजाततन्त्र जनसमुदायों के विद्रोहों को नष्ट करने व उनका दमन करने में और उनको गुमराह करने में एक बहुत बड़ा कार्य-भाग अदा करता है और क्रान्ति की आग को बुझाने के लिये बहुत पहले से ही अग्नि-प्रशामक बन गया है ।

इस समय सभी पूंजीवादी देशों में, मुख्य सरमायदारी व संशोधनवादी पार्टियों के अपने मज़दूर संघ हैं । ये मज़दूर-संघ सर्वहारा के क्रान्तिकारी आन्दोलन में बाधा डालने और मज़दूर वर्ग को राजनीतिक व नैतिक रूप से भ्रष्ट करने के लिये अब एक होकर काम कर रहे हैं, और इन्होंने अपने बीच निकट

सहयोग स्थापित कर लिया है ।

उदाहरण के लिये फ्रांस और इटली में संशोधनवादी पार्टियों के मज़दूर संघ बड़े शक्तिशाली संघ हैं । लेकिन ये करते क्या हैं ? ये सर्वहारा को गुलामी में रखने, उसको थपकी देकर सुलाने, और जब सर्वहारा क्रोधित व विद्रोही हो जाता है तो उसको मालिक वर्ग से समझौता-वार्ता करने के रास्ते पर ले जाने, और पूंजीपतियों के अधिकतम मुनाफ़ों में से कुछ टुकड़े मज़दूरों को देकर उनका मुंह बन्द करने की कोशिश करते हैं । और जो कुछ ये इनको देते हैं उसे चीज़ों के दाम बढ़ा कर वापस ले लेते हैं ।

इसलिये, पूंजीवाद से अपने आप को मुक्त करने के वास्ते हर एक देश के सर्वहारा के लिये यह अनिवार्य है कि वे सरमायदारों व मौकापरस्तों के आधिपत्य में होने वाले मज़दूर संघों और इसके साथ-साथ किसी भी प्रकार के सामाजिक-लोकतन्त्रीय और संशोधनवादी संगठन व पार्टी के प्रभाव को नष्ट करें । ये सभी संस्थान विभिन्न तरीकों से मालिक वर्ग की सहायता करते हैं, और यह भ्रम पैदा करने की कोशिश करते हैं कि "ये एक बड़ी शक्ति हैं", "ये एक रोक हैं", और अभिकथित रूप से सर्वहारा के पक्ष में "बड़े पूंजीपतियों पर अपना दबाव डाल सकते हैं" । यह एक भारी धोखे के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । सर्वहारा को इन संस्थानों को चकनाचूर करना पड़ेगा । लेकिन कैसे ? इन्हें नष्ट करने के लिये इसे इन मज़दूर-संघों के नेतृत्व के खिलाफ़ लड़ाई करनी पड़ेगी, सरमायदारों के साथ होने वाले उनके कपटी सम्बन्धों का विरोध करना पड़ेगा, "शान्ति" व "सामाजिक शान्ति", जिसकी ये स्थापना करना चाहते हैं को तोड़ना पड़ेगा, जिस "शान्ति" को इन संघों द्वारा समय-समय पर मालिक वर्गों के खिलाफ़

अभिकथित रूप से किये गये विद्रोहों में छिपाया जाता है ।

उनसे लड़ने व अन्दर से उनका क्षय करने, और उनके अनुचित निर्णयों और कामों का विरोध करने के लिये इन मज़दूर-संघों में घुस कर इनको नष्ट करने का काम सम्भव है । इस क्रिया में, कारखानों के मज़दूरों के सबसे बड़े और शक्तिशाली दलों को भाग लेना चाहिये । हर एक मामले में लक्ष्य यह होना चाहिये कि सिर्फ़ मालिकों के खिलाफ़ ही नहीं, बल्कि उनके खुफ़ियों व मज़दूर संघ के साहबों के खिलाफ़ भी, लड़ाई में सर्वहारा की फौलादी एकता प्राप्त की जाये। मज़दूर-संघों का नेतृत्व करने वाले सभी गद्दारों का, मज़दूर-संघों के नेतृत्व के सरमायदारी पतन का, और आम तौर पर सुधारवादी मज़दूर-संघों का, जबरदस्त पर्दाफाश मज़दूरों को इस नेतृत्व और इन मज़दूर-संघों के बारे में अभी भी जो बहुत से भ्रम हैं, उनसे स्वतन्त्र करता है ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी मौजूदा मज़दूर-संघों में घुसते हैं, लेकिन वे कभी भी उन मज़दूर-संघवादी, सुधारवादी, अराजक-संघवादी, संशोधनवादी स्थितियों पर नहीं गिरते हैं, जो इन मज़दूर-संघों के नेतृत्व की विशेषतायें हैं । वे मज़दूर-संघों का नेतृत्व करने वाले संशोधनवादियों व दूसरी सरमायदार व मौकापरस्त पार्टियों के सहयोगी कभी भी नहीं बनते हैं । इनका उद्देश्य है सच्चे सर्वहारा मज़दूर-संघों की स्थापना की तैयारी के लिये, इस समय पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों के मज़दूर संघों के आम तौर पर होने वाले सरमायदारी स्वभाव व प्रतिक्रियावादी कार्यभाग का पर्दाफाश करना, और इन संगठनों का अन्तर्ध्वंस करना ।

<u>युवा जनसमुदायों के संगठन मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों</u>

के लिये विशेष महत्व रखते हैं । क्रान्तिकारी आन्दोलनों में युवक-युवतीगण का कार्यभाग हमेशा ही महान रहा है । अपने स्वभाव से ही युवक-युवतीगण नये के पक्ष में, और पुराने के खिलाफ़ हैं और हर प्रगतिशील व क्रान्तिकारी मामले की विजय के लिये लड़ने के लिये तैयार रहते हैं । परन्तु, ये अपने आप सही रास्ता खोजने में असमर्थ हैं । सिर्फ़ मज़दूर वर्ग की पार्टी ही इसे यह रास्ता दिखा सकती है । जब राष्ट्रीय व सामाजिक मुक्ति के लिये और उत्पीड़न व शोषण को खत्म करने के लिये युवकों की अपार क्रान्तिकारी शक्ति मज़दूर वर्ग और दूसरे मेहनतकश जनसमुदायों की शक्ति के साथ मिल जाती है तब ऐसी कोई ताकत नहीं है जो क्रान्ति की विजय को रोक सके ।

लेकिन, इस समय पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों में अधिकांश युवक-युवतीगण अपनी शक्तियों को गलत दिशाओं में लगाते हैं । सरमायदार और संशोधनवाद इनको गुमराह करता है और ये अकसर जोखिमवाद और अराजकतावाद को अपना लेते हैं या कल्पना-लोक और निराशा में पड़ जाते हैं, क्योंकि इनको दिशाविमुख व बुद्धिहीन किया गया है और ये भविष्य व अपनी राजनीतिक, भौतिक व नैतिक मांगों की पूर्ति की सम्भावना के प्रति निराशाजनक दृष्टिकोण रखते हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी हमेशा ही युवक-युवतीगण पर बहुत ध्यान देते हैं, उनको ज्ञानोद्दीप्त करने की कोशिश करते हैं, और उनको यह विश्वास दिलाते हैं कि युवक-युवतीगण की आकांक्षायें और इच्छायें, सिर्फ़ मार्क्सवाद-लेनिनवाद द्वारा दिखाये गये रास्ते और मज़दूर वर्ग व उसकी पार्टी के नेतृत्व में ही पूरी की जा सकती हैं । ये युवक-युवतीगण को सरमायदारों और संशोधनवादियों के प्रभाव से, और "वामपक्षी",

ट्राट्स्कीवादी या अराजकतावादी आन्दोलनों से मुक्त कराने और उनको क्रान्तिकारी संगठनों में गतिमान करने और उनको क्रान्ति के रास्ते पर ले जाने के लिये काम कर रहे हैं ।

सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी और क्रान्तिकारी कम्यूनिस्ट, मज़दूरों की हड़तालों व प्रदर्शनों में सक्रियता से भाग लेते हैं और उनको राजनीतिक हड़तालों और प्रदर्शनों में बदल देने के लिये लड़ते हैं, जिससे पूंजीवाद, मालिकों, उत्पादक-संघों, एकाधिकारों और मज़दूर-संघ के मुखियों का जीना असम्भव हो जाये । इस व्यापक क्रिया के दौरान सर्वहारा और भी अधिक व खुले रूप से सरमायदारी पद्धति की सशस्त्र शक्तियों का सामना करेगा, लेकिन इन मुठभेड़ों से वह और भी अच्छी तरह से लड़ना सीखेगा । संघर्ष के दौरान वह यह भी जान जाता है कि संगठन और क्रान्तिकारी संघर्ष के कौन से रूप सम्भव, सही व उपयुक्त हैं । "पानी के अन्दर गये बिना आप तैरना नहीं सीख सकते हैं", यह एक लोक कथनी है । हड़तालों व प्रदर्शनों द्वारा लड़ाई किये बिना, और आम तौर पर पूंजी-वाद के खिलाफ़ कामों में सक्रिय रूप से भाग लिये बिना, अन्तिम विजय के लिये संघर्ष आयोजित व तीव्र नहीं किया जा सकता है, सरमायदारी पद्धति का ध्वंस नहीं किया जा सकता है ।

सिर्फ़ बातों द्वारा ही क्रान्ति की तैयारी नहीं की जा सकती है, जैसा कि विभिन्न संशोधनवादी करते हैं, या चीनी संशोधनवादी "तीन दुनियाओं" के बारे में सिद्धान्त बना कर करते हैं । शान्तिपूर्ण रास्ते से इसकी विजय नहीं हो सकती । लेनिन ने, विशेष स्थितियों में ऐसा होने की सम्भावना के बारे में बताया था, लेकिन उन्होंने हमेशा ही क्रान्तिकारी हिंसा पर मुख्य ज़ोर दिया था, क्योंकि सरमायदार कभी भी स्वेच्छा

से अपनी सत्ता नहीं छोड़ते हैं । अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर और कम्युनिस्ट आन्दोलन व क्रान्तियों का विकास और बहुत से भूतपूर्व समाजवादी देशों और हमारे समाजवादी देश में मज़दूर वर्ग की विजयों का इतिहास यह दिखाता है कि अब तक क्रान्तियों की विजय सिर्फ़ सशस्त्र विद्रोह के जरिये ही हुई हैं ।

क्रान्तिकारी सशस्त्र विद्रोह और सैनिक पुशों के बीच कोई समानता नहीं है । क्रान्तिकारी सशस्त्र विद्रोह का लक्ष्य है पुरानी सत्ता का मूलभूत रूप से राजनीतिक ध्वंस करना और उसको नींव समेत चकनाचूर करना । सैनिक पुश न तो उत्पीड़न और शोषण की पद्धति का ध्वंस और न ही साम्राज्य-वादी आधिपत्य का विध्वंस करता है और न ही कर सकता है । सशस्त्र विद्रोह लोगों के व्यापक जनसमुदायों की सहा-यता पर आधारित है, जबकि पुश जनसमुदायों के प्रति अविश्वास और जनसमुदायों से अलगाव की अभिव्यक्ति है । अपने आप को मज़दूर वर्ग की पार्टी कहने वाली पार्टी की नीति और कार्यवाही में पुशवादी प्रवृत्तियों का होना मार्क्सवाद-लेनिन-वाद से विचलन है ।

एक देश की यथार्थ स्थितियों और आम तौर पर उसकी परिस्थितियों के अनुसार सशस्त्र विद्रोह अचानक फूट पड़ सकता है या अधिक लम्बी क्रान्तिकारी क्रियाविधि का रूप ले सकता है, लेकिन बिना परिप्रेक्ष के कभी न खत्म होने वाली क्रिया-विधि नहीं जैसा कि माओ त्से-तुङ का "लम्बे लोक-युद्ध का सिद्धान्त" हिमायत करता है । अगर हम क्रान्तिकारी सशस्त्र विद्रोह पर मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन की शिक्षाओं से माओ त्से-तुङ के "लोक-युद्ध" के सिद्धान्त की तुलना करें तो इस सिद्धान्त का मार्क्सवाद-विरोधी, लेनिनवाद-विरोधी, विज्ञान-विरोधी स्वभाव साफ़ जाहिर हो जाता है । सशस्त्र

विद्रोह पर मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षायें, मज़दूर वर्ग और उसकी क्रान्तिकारी पार्टी के नेतृत्व में शहर और गांव में होने वाले संघर्षों को निकटता से मिलाने पर आधारित हैं ।

क्रान्ति में सर्वहारा के नेतृत्वदायी कार्यभाग के विरुद्ध होने के कारण माओवादी सिद्धान्त सिर्फ़ गांव को ही सशस्त्र विद्रोह का आधार समझता है और शहर में मेहनतकश जन-समुदायों द्वारा किये गये सशस्त्र संघर्ष की अवहेलना करता है । यह सिद्धान्त प्रचार करता है कि गांवों को शहर पर घेरा डाले रहना चाहिये क्योंकि यह शहरों को प्रतिक्रान्तिकारी सरमाय-दारों का दुर्ग समझाता है । यह मज़दूर वर्ग के प्रति अविश्वास की अभिव्यक्ति है और उसके आधिपत्य के कार्यभाग से इनकार करना है ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षाओं, कि हिंसापूर्ण क्रान्ति एक विश्वव्यापी नियम है, पर अडिग रह कर मज़दूर वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी दृढ़ता से जोखिमवाद का विरोध करती है और सशस्त्र विद्रोह के साथ कभी भी खेल नहीं सकती है । सभी परिस्थितियों और हालतों में, क्रान्तिकारी हिंसा से सरमायदारी शासन का अन्तर्ध्वंस करने के लिये क्रान्ति में निश्चयात्मक लड़ाइयों के वास्ते अपने आप को, और जनसमुदाय को तैयार करने के लिये यह हमेशा ही विभिन्न रूपों में अन-वरत क्रान्तिकारी संघर्ष और क्रियायें करती हैं । लेकिन सिर्फ़ जब क्रान्तिकारी स्थिति पूरी तरह से परिपक्व हो जाती है तभी यह सशस्त्र विद्रोह को सीधे तौर से दिन-प्रति-दिन का काम बनाती है और इसको विजय तक ले जाने के लिये सभी राजनीतिक, विचारधारात्मक या संगठनात्मक और सैनिक उपाय लेती है ।

क्रान्ति के वास्ते जनसमुदाय को तैयार करने के लिये प्रचार मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के हाथ में एक शक्तिशाली साधन है,लेकिन यह प्रचार जोशीला,स्पष्ट और विश्वासप्रद होना चाहिये । क्रान्तिकारी प्रचार बेकार है अगर यह सिर्फ़ वाग्विलासी हो । सिर्फ़ उत्तेजनापूर्ण प्रचार ही, जिसका जीवन की समस्याओं, और आम समस्याओं व स्थानीय सवालों से निकट सम्बन्ध हो, एक ऐसा प्रचार ही, जो व्यापक जनसमुदायों के बीच पहल की भावना को पैदा करता व बढ़ाता है, सर्वहारा व दूसरे मेहनतकश जनसमुदाय को राजनीतिक व विचारधारात्मक रूप से शिक्षित कर सकता है, और उनको सक्रिय कर सकता है, और उनको क्रान्ति के लिये तैयार कर सकता है ।

सभी देशों के पूँजीपति सरमायदारों के पास सेना, पुलिस, आदि, जैसी शक्ति के बड़े साधनों के अलावा, सर्वहारा और उसकी क्रियाओं के खिलाफ़ संघर्ष का व्यापक अनुभव भी है । इसी तरह, इसके पास सम्पूर्ण प्रचार माध्यम भी है, जिसमें प्रेस, रेडियो, टेलीविज़न, फ़िल्म, थियेटर, संगीत, इत्यादि, शामिल हैं । इस प्रचार में पथभ्रष्ट करने की एक ऐसी शक्ति है जो सर्वहारा की कोशिशों और मुक्ति के लिये उसके संघर्ष को अस्थायी रूप से दिशाविमुख करने, रोकने और कमज़ोर बनाने के काबिल है ।

तथाकथित सरमायदारी लोकतन्त्र के राज्यों में, जहाँ कुछ मात्रा में "लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रता" भी मौजूद है, पूँजीवाद के खिलाफ़ आम तौर पर सिर्फ़ स्वभाविक पत्रकारिता-सम्बन्धी प्रचार करना ही काफ़ी नहीं है । विभिन्न सरमायदार और संशोधनवादी पार्टियों के अख़बार सरमायदारी पद्धति के खिलाफ़ नहीं, बल्कि उन व्यक्तियों के खिलाफ़ निरन्तर शोर मचा रहे हैं, जो एक साथ मिलकर की गयी लोगों की लूट में से

अपने हिस्से से ज़्यादा हड़पना चाहते हैं ।

नई मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के प्रचार, विशेषकर प्रेस, के सामने एक महान काम है : "सरमायदारी लोकतन्त्र" की झूठ का पर्दाफ़ाश करना, इसकी सब चालबाज़ियों, और इसके साथ-साथ संशोधनवादियों और पूँजी के दूसरे चाटुकारों की बाज़ारू बातों से नकाब उतार फेंकना । मार्क्सवादी-लेनिनवादी प्रचार और प्रेस नग्न सत्य को बताती हैं, और क्रान्ति के जरिये सामाजिक और राष्ट्रीय मुक्ति का रास्ता दिखाती हैं, जबकि सरमायदारी और संशोधनवादी प्रचार व प्रेस, जनसमुदाय को क्रान्ति से गुमराह करने, उनको अन्धकार में ले जाने व गुलामी में रखने के लिये लोगों को धोखा देती हैं, उनको निष्क्रिय बनाती व दिशाविमुख करती हैं ।

लेकिन जनसमुदाय को जागरूक करने, मज़दूर वर्ग की पार्टी की राजनीतिक कार्यदिशा की सत्यता के बारे में उनको विश्वास दिलाने और क्रान्ति के लिये उनको तैयार करने के लिये सिर्फ़ प्रचार ही काफ़ी नहीं है । लेनिन ने बताया है कि क्रान्ति की तैयारी के लिये,

"...स्वयं इन जनसमुदायों का राजनीतिक अनुभव ज़रूरी है" । *

प्रचार सिर्फ़ तभी प्रभावशाली होता है और लक्ष्य की पूर्ति करता है जब उसे क्रान्तिकारी क्रियाओं के साथ किया जाता है । बिना क्रिया के विचार का अपक्षय हो जाता

---

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३१, पृष्ठ ९२ (अल्बेनिया संस्करण)

है । यह क्रिया एक जोखिम का काम नहीं है और न ही होनी चाहिये,बल्कि वर्ग दुश्मनों के खिलाफ़ एक दृढ़ संघर्ष व तीव्र मुठभेड़ है,जो कि साधारण रूप से गुज़र कर ऊँचे रूप तक पहुँच जाती है, और अनेकों कठिनाइयों पर काबू पाती है और क्रान्ति के लिये ज़रूरी सभी बलिदानों को स्वीकार करती है ।

सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ क्रान्तिकारी कामों में सबसे आगे रहती हैं और उसके पीछे-पीछे नहीं चलती हैं । संघर्ष और कोशिशों की अस्थायी सीमित सम्भावनायें, जिनके जरिये इनको पूंजीवादी प्रतिक्रिया की बड़ी शक्ति का विरोध करना पड़ता है व ये ऐसा करती हैं,इनको निरुत्साहित नहीं कर पाती हैं । ये अपने सदस्यों को सिखाती हैं कि वे निर्भीक बनें,और यह ध्यान में रखें कि उनके द्वारा किया गया सही, परिपक्व, दृढ़ और अच्छी तरह सोचा समझा काम उन जन-समुदायों के बीच, जो इस काम को देखते व सुनते हैं, अगाध प्रभाव डालता है । कम्यूनिस्टों के इस तरह काम करने से जनसमुदाय यह समझते हैं कि इस या उस क्रान्तिकारी काम का लक्ष्य सर्वहारा व शोषितों के हित में है । कामों को करने में साहस और परिपक्वता बहुत महत्व रखते हैं,क्योंकि इस तरह,थोड़ा थोड़ा करके,सफलता मिलती है और क्रान्ति में उभार लाने के लिये प्रगति होती है । क्रान्तिकारी काम मज़दूर वर्ग की पार्टियों और जनसमुदायों के बीच सम्बन्ध स्थापित करते हैं,उनको जनसमुदायों का अग्रगामी बनाते हैं, और उनको सुधारवादी व संशोधनवादी पार्टियों पर विजय प्राप्त करने के योग्य बनाते हैं ।

"सच्चे आन्दोलन द्वारा लिया गया हर एक कदम",मार्क्स

ने बताया,"एक दर्जन कार्यक्रमों से कहीं ज़्यादा महत्व रखता है" ।*

पूँजीवादी देशों में मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के नेतृत्व में क्रान्तिकारी शक्तियों के अतिरिक्त दूसरी शक्तियां भी हैं जो पुलिस,सशस्त्र पुलिस,इत्यादि,से लड़ाई व मुठभेड़ करती हैं । इन शक्तियों के बहुत से कार्यों और हमलों का स्वभाव आतंकवादी,जोखिमवादी,और अराजकतावादी है । इनको सभी प्रकार के रंगों और नामों के साथ पेश किया जाता है और ये विभिन्न विचारधाराओं से मार्गप्रदर्शित हैं । अक्सर ऐसे काम पूंजीवादी देशों के खुफ़िया विभागों के भड़काव और उनके पैसे से आयोजित किये जाते हैं, और दूसरी बातों के साथ-साथ इनका लक्ष्य मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों पर इन कामों का आरोप लगा कर उनको बदनाम करना है । तानाशाही या सरमायदारों के खुफ़िया कारिन्दे,जो अक्सर इन कामों को आयोजित व इनका नेतृत्व करते हैं,सर्वहारा, स्कूल के शिष्यों व विद्यार्थियों व आम तौर से युवक-युवतीगण के असन्तोष,क्रोध व साहस से फ़ायदा उठाकर इन जनसमुदायों से पैदा हुये विभिन्न दलों व आन्दोलनों, को ऐसे कामों में लगाने की कोशिश करते हैं जो सिर्फ़ यही नहीं कि सच्चे क्रान्तिकारी आन्दोलनों के साथ कोई समानता नहीं रखते हैं,बल्कि इनको भारी खतरे में भी डालते हैं और यह मत भी पैदा करते हैं कि सर्वहारा का पतन हो रहा है और यह एक लुम्पन** सर्वहारा बन गया है ।

* के०मार्क्स और एफ़० एंगेल्स,संकलित रचनायें,ग्रन्थ २,पृष्ठ ८, तिराना १९७५ (अल्बेनिया संस्करण)

**अपने वर्ग की विशेषताओं को खो बैठने वाले लोग (अनुवादक)

इस समस्या पर ठीक ध्यान देते हुये, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को एक ओर तो, जनसमुदाय को उनके ही अनुभव से यह विश्वास दिलाना चाहिये कि क्रान्तिकारी कामों का स्वभाव आतंकवादी व अराजकतावादी कामों से पूर्णतया भिन्न है, व दूसरी ओर, धोखे में रखे गये क्रान्तिकारी लोगों को, आतंकवादी व अराजकतावादी गुटों और इन गुटों में काम कर रहे तानाशाहियों और सरमायदारों के खुफ़िया कारिन्दों की श्रेणियों से दूर करके अपने पक्ष में करने के लिये लड़ना चाहिये ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ क्रान्ति की पार्टियाँ हैं । संशोधनवादी पार्टियों, जो पूर्ण रूप से सरमायदारी वैधता और "संसदीय विकलांग मूढ़ता" में लीन हो गई हैं, के सिद्धान्तों और अभ्यासों के विपरीत, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ अपने संघर्ष को सिर्फ़ वैधिक कामों तक ही सीमित नहीं रखती हैं और न ही ये इसे अपना मुख्य काम समझती है । सभी तरह के संघर्ष में निपुणता प्राप्त करने के लिये ये पार्टियाँ गैर कानूनी काम को प्राथमिकता देते हुये कानूनी काम के साथ गैर कानूनी काम के मिलाव को विशेष महत्व देती हैं, जो सरमायदारी के अन्तर्ध्वंस और विजय की सच्ची गारण्टी के लिये निश्चयात्मक है । कानूनी और गैर-कानूनी हालतों में कैसे बुद्धिमानता, निपुणता और साहस के साथ काम किया जाये यह बताने के लिये ये अपने कार्यकर्ताओं, सदस्यों, और सहानुभूति रखने वालों को शिक्षित करती हैं । लेकिन जब ये गम्भीर गुप्तता की हालत में काम करती हैं और अपनी शक्तियों को दुश्मन के सामने प्रकट न करने और क्रान्तिकारी संगठन को दुश्मनों के हमलों से बचाने की कोशिश करती हैं, तब भी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियाँ अपने आप को बन्द

नहीं कर लेती हैं और जनसमुदाय के साथ अपने सम्बन्धों को न तो कमज़ोर करती हैं और न ही तोड़ती हैं,और जनसमुदायों के बीच अपनी सक्रिय क्रिया को एक छण के लिये भी भंग नहीं करती हैं, और क्रान्ति के फ़ायदे के लिये हालतों और परिस्थितियों द्वारा दी गई सभी कानूनी सम्भावनाओं का इस्तेमाल करने में कभी भी नहीं चूकती हैं ।

संसदीय रास्ते के जरिये सत्ता पर नियन्त्रण करने के बारे में कोई भ्रम न रखते हुये मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी ठीक इसी उद्देश्य से कि वह जनसमुदाय के बीच अपनी कार्यदिशा का प्रचार कर सके और सरमायदारी राजनीतिक पद्धति का पर्दफाश कर सके,खास उपयुक्त हालतों में म्युनिस्पल सभाओं और संसद इत्यादि के चुनावों जैसी कानूनी क्रियाओं में भाग लेना भी उचित समझती है । लेकिन,पार्टी इस सहभागिता को अपने संघर्ष की आम कार्यदिशा में नहीं बदलती है जैसा कि संशोधनवादी करते हैं,और इनको अपने संघर्ष का मुख्य, या इससे भी बदतर एकमात्र रूप नहीं बनाती है ।

कानूनी सम्भावनाओं से फ़ायदा उठाते हुये,पार्टी क्रान्तिकारी स्वभाव के,सबसे साधारण से सबसे जटिल रूपों व तरीकों को,चाहे इसके लिये कितनी भी कुर्बानियां क्यों न करनी पड़ें, ढूंढ़ती,पाती व प्रयोग में लाती है, जब कि वह इन रूपों व तरीकों को जनसमुदाय के लिये जितना भी सम्भव हो सके लोकप्रिय व स्वीकार्य बनाने की कोशिश करती है ।

अपनी क्रियाओं में,मार्क्सवादी-लेनिनवादी अपने क्रान्तिकारी कामों के द्वारा सरमायदारी संविधान,कानूनों,नियमों, आदर्शों और पद्धति को तोड़ने और उनका उल्लंघन करने की परवाह नहीं करते हैं । ये क्रान्ति की तैयारी के लिये इस पद्धति का अन्तर्ध्वंस करने के लिये लड़ रहे हैं । इसलिये मार्क्स-

वादी-लेनिनवादी पार्टी, सर्वहारा व लोक जनसमुदाय के क्रान्तिकारी कामों के जवाब में सरमायदारों द्वारा किये गये प्रति-हमलों का सामना करने के लिये अपने आप को और जनसमुदाय को तैयार करती है ।

क्रान्तिकारी और मुक्ति आन्दोलन के विकास, जो व्यापक सामाजिक आधार वाली एक जटिल क्रियाविधि है, जिसमें बहुत से वर्ग और राजनीतिक शक्तियाँ भाग लेती हैं, की वर्तमान हालतों में, सर्वहारा की क्रान्तिकारी पार्टी को, दूसरी पार्टियों व राजनीतिक संगठनों के साथ, क्रान्ति की इस या उस कार्यावस्था में, सामान्य हित की इन या उन समस्याओं पर, सहयोग व सामान्य मोर्चों की समस्या का अक्सर सामना करना पड़ता है । इस समस्या पर, किसी भी मौकापरस्ती व पंथवाद से दूर, एक सही, सिद्धान्ती और इसके साथ-साथ नम्य विचारनीति क्रान्ति व मुक्ति संघर्ष के लिये जनसमुदाय को आकर्षित, तैयार और गतिमान करने के लिये प्रमुख महत्व रखती है । जब क्रान्ति के हितों के लिये इसकी आवश्यकता है और परिस्थितियों को इसकी ज़रूरत है तब मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी दूसरी राजनीतिक पार्टियों के साथ सहकारिता और सामान्य मोर्चे के खिलाफ़ न तो होती है और न ही सैद्धान्तिक रूप से हो सकती है । लेकिन मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी इसे मुखियाओं के बीच सहयोग और अपने ही में एक उद्देश्य के रूप में नहीं बल्कि संघर्ष के लिये जनसमुदाय को एकत्रित और उत्साहित करने के साधन के रूप में देखती है । महत्वपूर्ण बात यह है कि इन सामान्य मोर्चों में सर्वहारा की पार्टी को कभी भी एक छण के लिये सर्वहारा के वर्ग हित और उसके संघर्ष के अन्तिम उद्देश्य को नहीं भूलना चाहिये, और अपने आप को मोर्चे में विलीन नहीं कर देना चाहिये लेकिन उसमें

अपनी विचारधारात्मक विशेषता और अपनी राजनीतिक, संगठनात्मक और सैनिक स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखना चाहिये, और मोर्चे में अपने नेतृत्वदायी कार्यभाग को बनाये रखने और क्रान्तिकारी नीति को लागू करने के लिये लड़ना चाहिये ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी को एक क्रान्तिकारी नीति और युक्ति व एक सही राजनीतिक कार्यदिशा बनाने और प्रयोग में लाने के योग्य बनने के लिये, और कठिन परिस्थितियों में कैसे काम करें यह जानने के लिये, व दुश्मनों और कठिनाइयों का सामना करने के योग्य बनने के लिये, यह पूर्ण रूप से ज़रूरी है कि वह मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त के अध्ययन और अन्तर्ग्रहण के लिये एक महान विस्तृत काम करे ।

पूंजीवादी देशों में भूतपूर्व कम्यूनिस्ट पार्टियों के संशोधन-वादी पार्टियों में बदल जाने का एक कारण ठीक यही है कि उन्होंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अध्ययन और अन्तर्ग्रहण की पूर्ण रूप से अवहेलना की थी । मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त का सिर्फ़ सजावट के रूप में इस्तेमाल किया गया था, और उसको खोखले शब्दों और नारों में बदल दिया गया था व पार्टी के सदस्यों की चेतना में गहरे रूप से नहीं जमाया गया था, और उनके जीवन का एक भाग नहीं बनाया गया था व काम के लिये हथियार नहीं बनाया गया था । जो थोड़ा सा काम मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अध्ययन के लिये किया गया था उसका उद्देश्य पार्टी के सदस्य को उतने ही बने-बनाये फ़ार्मूलों से परिचित कराना था, जिससे कि वह अपने आप को कम्यूनिस्ट कह सके और कम्यूनिज़्म को भावुक रूप से प्यार कर सके, जबकि कैसे और किस तरह इसको प्राप्त किया जा सकता है, के बारे में उसे कुछ पता नहीं था क्योंकि उसको यह नहीं पढ़ाया गया था ।

उन पार्टियों के नेता, जिनके पास शब्दों की कमी नहीं थी लेकिन जो काम करने में कम थे, सरमायदारी वातावरण में रहते थे और अपने देशों के सर्वहारा को उदार व सुधारवादी विचारों से दूषित करते थे ।

इस तरह, संशोधनवादी पार्टियों का सरमायदारी की ओर मुड़ना एक सामाजिक-लोकतन्त्रीय मौकापरस्त उद्विकास है जिसकी बहुत लम्बे समय से इसके नेताओं ने तैयारी की थी, जो वास्तव में सामाजिक-लोकतन्त्रवादी हैं और इन तथा-कथित कम्यूनिस्ट पार्टियों का नेतृत्व करने वाले मज़दूर अभिजाततन्त्र हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को कभी भी इस नकारात्मक अनुभव को नहीं भूलना चाहिये और इससे उनको यह सीखना चाहिये कि गम्भीर रूप से मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अध्ययन और अन्तर्ग्रहण को आयोजित करें और हमेशा ही इस अध्ययन को क्रान्तिकारी क्रिया से जोड़ें ।

<u>क्रान्ति की तैयारी के लिये, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के सिद्धान्त के आधार पर विभिन्न देशों की मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों की एकता व सहकारिता विशेष महत्व रखती हैं ।</u>

साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ व क्रुश्चेववादी, टीटोवादी, "यूरोकम्यूनिस्ट", चीनी, इत्यादि, सभी प्रकार के सरमायदारी व आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष में यह एकता और भी मज़बूत होगी व यह सहकारिता और भी बढ़ेगी ।

क्रान्ति के दुश्मन, संशोधनवादी, विश्व सर्वहारा व हर एक देश के सर्वहारा के हाथों से सरमायदारी और साम्राज्यवाद

के खिलाफ़ संघर्ष करने के शक्तिशाली हथियार सर्वहारा अन्तर-राष्ट्रीयतावाद को छीनने के लिये अपनी पूरी शक्ति व साधनों से सर्वहारा अन्तरर्ष्ट्रीयतावाद के खिलाफ़ लड़ाई कर रहे हैं।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों का यह कर्त्तव्य है कि वे टीटो-अनुयायी संशोधनवादियों व "यूरोकम्यूनिस्टों", जो इस समय सर्वहारा अन्तरर्ष्ट्रीयतावाद को अप्रचलित व पिछड़ा हुआ बता रहे हैं कि चालबाज़ियों का और इसके साथ-साथ सोवियट संशोधनवादियों व चीनी संशोधनवादियों की चाल-बाज़ियों का भी पर्दाफाश करें जिन्होंने सर्वहारा अन्तर-राष्ट्रीयतावाद को विकृत किया है और जिसे अपने आधिपत्य-वादी व सामाजिक-साम्राज्यवादी लक्ष्यों की पूर्ति के लिये एक हथियार के रूप में इस्तेमाल करने की कोशिश कर रहे हैं।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी, जो सर्वहारा अन्तरर्ष्ट्रीयता-वाद के सिद्धान्तों का पालन नहीं करती है और जो लोगों के क्रान्तिकारी व मुक्ति संघर्षों का समर्थन नहीं करती है, अब उन सामाजिक-लोकतन्त्रीय और सरमायदारी पार्टियों जिनमें चरम-दक्षिणपक्षी व प्रतिक्रियावादी पार्टियाँ भी शामिल हैं, के साथ वैरशमन व मित्रता स्थापित करने के रास्ते पर निकल पड़ी है। इसके साथ-साथ वह उस पर निर्भर व उसके द्वारा निर्दिष्ट विभिन्न दलों को पैदा करने की कोशिश कर रही है। इसको, सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों और प्रगतिशील लोगों, जिन्होंने लोगों को जागरूक करने व महा-शक्तियों के साथ जुड़े शासक गुटों के खिलाफ़ लोगों को क्रान्ति के लिये उकसाने के काम का बीड़ा उठा लिया है, का ध्वंस करने के लिये ही ऐसे दलों की ज़रूरत है।

वे छोटे दल जो अपने आप को पार्टियाँ कहते हैं और मौकापरस्त होने की वजह से चीनी कार्यदिशा का अनुसरण

करते हैं, वे हुआ कुआ-फेंग और तैंग सियाओ-पिङ के दल के संशोधनवादी सिद्धान्तों और इसके प्रतिक्रान्तिकारी कामों की रक्षा व प्रचार के अलावा और कुछ नहीं करते हैं । इन दलों में किसी भी प्रकार की वैयक्तिकता, या मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के अनुसार लड़ने की कोई भी दृढ़ संकल्पता नहीं है ।

इन पार्टियों का मुख्य नारा भी वही है जो चीनी नीति का मूलभूत नारा है, यानि कि, वर्तमान स्थिति में सर्वहारा का एकमात्र व बुनियादी काम राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की रक्षा करना है, जिसको अभिकथित रूप से सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद से ही खतरा है । ये हु-बहु सेकेण्ड इण्टरनेशनल के मुखियों के नारों को दोहरा रहे हैं, जिन्होंने क्रान्ति के उद्देश्य को त्याग दिया था और उसकी जगह पूंजीवादी जन्म-भूमि की रक्षा के सिद्धान्त को दे दी थी । लेनिन ने इस झूठे व मार्क्सवाद-विरोधी नारे का, जो सच्ची स्वतन्त्रता की रक्षा नहीं करता है, बल्कि अन्तर-साम्राज्यवादी युद्धों के भड़काव की सेवा करता है, पर्दाफ़ाश किया था । उन्होंने, साम्राज्यवादी दलों के बीच झगड़ों के प्रति सच्चे क्रान्तिकारी की क्या विचारनीति होनी चाहिये इसकी स्पष्ट व्याख्या की थी । उन्होंने लिखा था :

"अगर युद्ध, एक प्रतिक्रियावादी साम्राज्यवादी युद्ध है, यानि कि, अगर यह साम्राज्यवादी, हिंसक लुटेरे व प्रतिक्रियावादी सरमायदारों के दो विश्व गठबंधनों द्वारा किया गया है तब हर एक सरमायदार (छोटे से छोटे देश का भी) इस लूट में भागीदार बन जाता है, और क्रान्तिकारी सर्वहारा का प्रतिनिधि होने के नाते मेरा यह कर्त्तव्य है कि, विश्व हत्याकाण्ड

के आतंक से बचने के लिये एकमात्र तरीके, विश्व सर्वहारा क्रान्ति,की तैयारी करना ...

अन्तर्राष्ट्रीयतावाद का यही मतलब है,और अन्तर्राष्ट्रीयतावादी,क्रान्तिकारी मज़दूर व सच्चे समाजवादी का यही कर्त्तव्य है" ।•

वे पार्टियाँ जो चीनी कार्यदिशा का अनुसरण कर रही हैं सरमायदारी सेनाओं की बढ़ोत्तरी व मज़बूती के लिये छमायाची बन गई हैं और यह दलील पेश कर रही है कि स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये यह ज़रूरी है । ये मेहनतकश लोगों से आज्ञाकारी सिपाही बनने और सरमायदारों के साथ मिल कर उन सब लोगों के खिलाफ़,जो पूंजीवादी शासन और शोषण के इस मुख्य हथियार को कमज़ोर करने के लिये लड़ रहे हैं,उठ खड़े होने की मांग करते हैं । संक्षेप में,ये चाहते हैं कि सर्वहारा और मेहनतकश लोग साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद द्वारा शुरू किये गये लुटेरे युद्धों में युद्धबलि बन जायें ।

इसके साथ-साथ चीनियों के ये चाटुकार सरमायदारी पूंजीवादी राज संस्थाओं, खासकर, नेटो,यूरोपियन कामन मार्केट,आदि,जिनको ये "स्वतन्त्रता की रक्षा" के मुख्य साधन समझते हैं,के जोशपूर्ण रक्षक बन गये हैं । चीनी नेताओं की तरह ये भी पूंजीवादी आधिपत्य व प्रसार के इन आधार स्तम्भों पर रंग पोतते हैं व उन्हें सुन्दर बनाते हैं । ये ठीक उन संस्थानों की सहायता कर रहे हैं जिन्होंने वास्तव में इनके

• वी०आई०लेनिन,संगृहीत रचनायें,ग्रन्थ २८,पृष्ठ ३२४-३२५ (अल्बेनिया संस्करण)

देशों की स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार का भारी उल्लंघन किया है ।

इन छद्मवेशी-मार्क्सवादियों के लिये,बड़े सरमायदारों के साथ मित्रता,सरमायदारी सेना की रक्षा, नेटो,यूरोपियन कामन मार्केट,आदि,का समर्थन करना,बाधा-रहित रास्ता है,क्योंकि इस तरह सरमायदारों के साथ इनका झगड़ा नहीं होता है,बल्कि इसके विपरीत इनको सरमायदारों का अनुग्रह मिलता है ।

इन दलवादी लोगों,जिनका कोई भविष्य नहीं है,की ये विचारपद्धतियां,उन्हें,यूरोकम्यूनिजम और सरमायदारों की पार्टियों के साथ एकीकरण की ओर ले जा रही है,और ऐसा अवश्य ही होगा क्योंकि चीन स्वयं भी सर्वहारा से सरमायदारों के साथ मिल जाने की मांग कर रहा है । अभी भी, इन छद्मवेशी-मार्क्सवादी-लेनिनवादियों और मार्शे के बीच कोई भी फ़र्क नहीं है ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को,आधुनिक संशोधनवादियों, सामाजिक-लोकतन्त्रवादियों और छद्मवेषी मार्क्सवादी-लेनिनवादियों द्वारा सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद व शान्ति की रक्षा के लिये सर्वहारा की एकता,आदि,के बारे में इस्तेमाल किये गये खोखले शब्दों के खिलाफ़ बहुत सतर्क रहना चाहिये । सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद तभी सच्चा है जब लोग क्रान्तिकारी कामों को मदद देने व उनको कार्यान्वित करने,और सबसे पहले अपने देश में,क्रान्तिकारी संघर्ष के लिये वास्तविक परिस्थिति पैदा करने के लिये आत्मत्याग की भावना से काम करें । इसके साथ-साथ, जैसा कि लेनिन ने बताया है,इनको बिना किसी अपेक्षा के, सभी देशों में इस संघर्ष और कार्यदिशा को, प्रचार, सहानुभूति और भौतिक

सहायता के जरिये समर्थन देना चाहिये । इसके अलावा और सब,वे हमें सिखाते हैं,धोखा और मनीलोववाद है ।

इसलिये,हमको ऐसे छद्मवेषी-मार्क्सवादी,छद्मवेषी-क्रान्तिकारी, छद्मवेषी-अन्तर्राष्ट्रीयतावादी लोगों, चाहे वे अकेले व्यक्ति हों या छोटे दल हों या पार्टियाँ हों,जो अपने आप को मार्क्सवादी-लेनिनवादी कहते हैं,लेकिन वास्तव में जो ऐसे नहीं हैं,बल्कि वे सामाजिक-शोवींवादी,सेन्ट्रिस्ट (वे लोग जो क्रान्तिकारी निर्णय लेते हैं लेकिन अभ्यास में कार्यान्वित नहीं करते हैं — अनुवादक) और निम्न-सरमायदार हैं, के खिलाफ़ हमको बहुत ही सतर्क रहना चाहिये । ये सभी पार्टियाँ जो अपने सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद,शान्ति की रक्षा व सुधारों आदि के बारे में शोर मचा रही हैं पूँजी की सेवा करती हैं ।

चीनी संशोधनवादी भी समय-समय पर सर्वहारा अन्तर-राष्ट्रीयतावाद की बात करते हैं,लेकिन उनकी विचारपद्धति राष्ट्रीयतावादी और शोवींवादी है । चीनी नेता उन लोगों में से हैं जो शोर मचाते हैं और "भगवान की" कसम खाते हैं कि वे सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद,शान्ति,सर्वहारा के संघर्ष व उसके अधिकारों के पक्ष में हैं,लेकिन अभ्यास में वे दूर खड़े रहते हैं व कुछ नहीं करते हैं,बल्कि क्रान्तिकारी शक्तियों में फूट डालने के लिये धोखा देने वाले वाक्यांश जारी करते हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के सामने सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद को मज़बूत करने का महत्वपूर्ण काम है, जिसका विकास सभी पार्टियों,चाहे वे बड़ी हो या छोटी, पुरानी व नई, के बीच किया जाना चाहिये । उन सबको अपने बीच एकता को मज़बूत करना चाहिये,और अपने राजनीतिक,विचारधारात्मक व लड़ाई के कामों को समन्वित

करना चाहिये ।

विश्व पूंजीवाद, उसकी गुलाम बनाने वाली नीति, व इसके साथ-साथ उसके षड्यन्त्र, चालबाजी और सोवियट, टीटोवादी, चीनी, इटेलियन, फ्रांसीसी, स्पेनिश और दूसरे आधुनिक संशोधनवादों के साथ उसके सहयोगी-संघों पर सीधा हमला कर सकने के लिये इस महत्वपूर्ण कार्यदिशा पर ज़ोर देना मार्क्स-वादी-लेनिनवादी पार्टियों का एक मुख्य कार्य है, जिससे ये पार्टियां एक शक्तिशाली मोर्चा बनायेंगी जो दिन-प्रतिदिन अटूट होता जायेगा । अगर ये एक साथ मिलकर काम करें और प्रतिक्रिया की शक्तियों पर एक साथ हमला करें, अगर ये, क्रान्ति का ध्वंस करने और वर्ग संघर्ष को शान्त करने के लिये पूंजीवाद व आधुनिक संशोधनवाद द्वारा विभिन्न तरीकों से गढ़े गये षड्यन्त्रों का पर्दाफ़ाश करें तो इनकी विजय अवश्य होगी ।

हम मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को लड़ना व मज़दूरों से यह मांग करनी चाहिये कि वे जहां कहीं भी हों, क्रान्ति को कार्यान्वित करने के लिये अपने सदियों-पुराने दुश्मनों के खिलाफ़ खड़े हों और अपनी बेड़ियों को तोड़ दें, और अपने आप को एकाधिकारों और पूंजीपतियों के हवाले न करें जिस की आधुनिक संशोधनवादी हिमायत करते हैं । मार्क्सवादी-लेनिन-वादियों व सच्चे क्रान्तिकारियों का यह काम है कि वे सर्वहारा व लोगों से नई दुनिया, उनकी अपनी दुनिया, समाज-वादी दुनिया के लिये उठ खड़े होने की मांग करें ।

भाग दो

१

"तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त – एक प्रतिक्रान्तिकारी शोवींवादी सिद्धान्त

इस समय चीनी संशोधनवादी भी, क्रान्ति और लोगों के मुक्ति संघर्षों के लेनिनवादी सिद्धान्त और नीति के खिलाफ़ खुले रूप से सामने आये हैं, और एक विस्तृत मोर्चे पर इसके खिलाफ़ लड़ रहे हैं। वे इस गौरवपूर्ण वैज्ञानिक सिद्धान्त और नीति का अपने "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त, जो एक फ़रेबी, प्रतिक्रान्तिकारी और शोवींवादी सिद्धान्त है, से विरोध करने की कोशिश कर रहे हैं।

"तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त, मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के सिद्धान्त के विरुद्ध है, या और भी यथातथ्य रूप में वह इससे इनकार करता है। यह जानना इतना महत्व नहीं रखता है कि "तीन दुनियाओं" का नाम सबसे पहले किसने गढ़ा, दुनिया को सबसे पहले किसने तीन भागों में बांटा, लेकिन यह निश्चित है कि लेनिन ने ऐसा कोई विभाजन नहीं किया, जब कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी इस पर हक का

दावा करती है, और यह घोषित करती है कि माओ त्से-तुङ ने "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त को बनाया था । अगर वही इस तथाकथित सिद्धान्त की सबसे पहले शब्दरचना करने वाला लेखक था, तो यह इस बात का और भी सबूत है कि माओ त्से-तुङ मार्क्सवादी नहीं था । लेकिन, अगर उसने सिर्फ़ इस सिद्धान्त को दूसरों से अपनाया था, तो, यह भी, इस बात का काफ़ी सबूत है कि वह मार्क्सवादी नहीं था ।

"तीन दुनियाओं" की धारणा — मार्क्सवाद-लेनिनवाद से इनकार करना है

तीन दुनियाओं की मौजूदगी, या दुनिया के तीन भागों में विभाजन, की धारणा, एक जातिवादी और अभौतिकवादी विश्व दृष्टिकोण पर आधारित है, जो कि विश्व पूंजीवाद और प्रतिक्रिया की पैदाइश है ।

लेकिन यह जातिवादी दावा, जो देशों को तीन स्तरों या तीन "दुनियाओं" में रखता है, सिर्फ़ लोगों के रंग पर ही आधारित नहीं है । यह दावा देशों के आर्थिक विकास के स्तर के आधार पर एक वर्गीकरण करता है, और इसका उद्देश्य, पूंजीवादी सरमायदारों के हितों में एक अपरिवर्तनीय व अभौतिकवादी विभाजन करने के लिये, एक ओर तो, "महान उच्च जाति", और दूसरी ओर, "अछूत व नीच जाति" को निश्चित करना है । यह दुनिया के विभिन्न राष्ट्रों व लोगों को भेड़ों का एक झुण्ड, व एक गठनहीन समग्र वस्तु समझता है ।

चीनी संशोधनवादी यह मानते हैं और इसका प्रचार करते हैं कि "उच्च जाति" की रक्षा की जानी चाहिये, और "अछूत व नीच जाति" को चुपचाप व समर्पित होकर इसकी सेवा करनी

चाहिये ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी द्वन्द्ववाद हमें सिखाता है कि विकास की कोई सीमा नहीं है, सभी कुछ में परिवर्तन होता रहता है। भविष्य की ओर अनवरत विकास की इस क्रियाविधि में, परिमाणात्मक व गुणात्मक परिवर्तन होते हैं । दूसरे किसी भी युग की तरह, हमारे युग की विशेषतायें गहरे अन्तर्विरोध हैं, जिनकी, मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन ने स्पष्ट रूप से व्याख्या की थी। यह साम्राज्यवाद व सर्वहारा क्रान्तियों का युग है, इस प्रकार, महान परिमाणात्मक व गुणात्मक रूपपरिवर्तनों का युग है, जिनका परिणाम होता है क्रान्तियां, और नये समाजवादी समाज का निर्माण करने के लिये मज़दूर वर्ग द्वारा सत्ता पर कब्ज़ा कर लेना ।

मार्क्स का सम्पूर्ण सिद्धान्त वर्ग संघर्ष, और द्वन्द्ववादी व ऐतिहासिक भौतिकवाद पर आधारित है । मार्क्स ने यह सिद्ध किया कि पूंजीवादी समाज शोषक व शोषित वर्गों में बंटा हुआ एक समाज है, और यह कि वर्ग तभी खत्म होंगे जब वर्गहीन समाज, कम्यूनिज़्म, की स्थापना होगी ।

इस समय, हम साम्राज्यवाद के पतन और सर्वहारा क्रान्तियों की विजय की कार्यावस्था में रह रहे हैं । इसका मतलब् है कि वर्तमान पूंजीवादी समाज में दो मुख्य वर्ग हैं, सर्वहारा और सरमायदार, जिनके बीच कट्टर, जीवन-मौत का संघर्ष है। उनमें से कौन विजयी होगा ? मार्क्स और लेनिन, मार्क्सवादी-लेनिनवादी विज्ञान, क्रान्ति का सिद्धान्त व अभ्यास हमें विश्वासप्रद सबूत देते हैं कि, अन्त में, सर्वहारा, सरमायदारों, साम्राज्यवाद, व सभी शोषकों की सत्ता को नष्ट करके व उसका अन्तर्ध्वंस करके विजयी होगा, और एक नये समाज, समाजवादी समाज का निर्माण करेगा । वे हमें यह भी सिखाते हैं कि इस

नये समाज में भी वर्ग, यानि कि, मज़दूर वर्ग और मेहनतकश किसान, जिनके बीच घनिष्ट सहयोग है, बहुत लम्बे समय तक मौजूद रहेंगे, लेकिन इसके अलावा उन वर्गों के अवशेष भी होंगे जिनको नष्ट किया गया है व जिनकी सम्पत्ति छीन ली गई है। इस पूरी अवधि के दौरान, ये अवशेष वर्ग, और इसके साथ-साथ वे लोग, जो पतित हो जाते हैं और समाजवाद के निर्माण का विरोध करते हैं, अपनी खोई हुई सत्ता को पुनः प्राप्त करने की कोशिश करेंगे। इस प्रकार, समाजवाद में भी, कठोर वर्ग संघर्ष जारी रहेगा।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी हमेशा इस बात का धयान रखते हैं कि उन देशों, जहां क्रान्ति विजयी रही है और समाजवादी पद्धति स्थापित की गयी है, को छोड़कर सभी देशों में गरीब वर्ग हैं जिनका नेतृत्व सर्वहारा के हाथों में है, और अमीर वर्ग हैं जिनका नेतृत्व सरमायदारों के हाथों में है।

हर एक पूंजीवादी राज्य में, चाहे वह कहीं भी हो, और कितना भी लोकतन्त्रीय या प्रगतिशील हो, उत्पीड़ित व अत्याचारी लोग हैं, शोषित व शोषक हैं, शत्रुतायें हैं, और कठोर वर्ग संघर्ष है। इस संघर्ष की तीव्रता में विभिन्नता इस वास्तविकता को नहीं बदलती है। इस संघर्ष में चढ़ाव व उतार होते हैं, लेकिन यह मौजूद है और इसे मिटाया नहीं जा सकता है। यह सभी जगह मौजूद है, यह संयुक्त राज्य अमरीका में सर्वहारा और साम्राज्यवादी सरमायदारों के बीच मौजूद है, इसी प्रकार, यह सोवियट संघ में मौजूद है, जहां मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति विश्वासघात किया गया है, और प्रति नये सरमायदारी-पूंजीवादी वर्ग, जो उस देश के मेहनतकश लोगों पर अत्याचार करता है, की स्थापना की गई है। वर्ग और वर्ग संघर्ष "दूसरी दुनिया", जैसे कि फ्रांस, बर्तानिया, इटली,

पश्चिम जर्मनी और जापान में भी मौजूद हैं । वे "तीसरी दुनिया", हिन्दुस्तान, ज़ाईर, बुरून्दी, पाकिस्तान, फ़िलिपीन्स, आदि में भी मौजूद हैं ।

सिर्फ़ माओ त्से-तुङ के "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त के अनुसार, किसी भी देश में वर्ग व वर्ग-संघर्ष मौजूद नहीं है । यह उन्हें देख नहीं पाता है, क्योंकि यह देशों व लोगों को सरमायदारी भू-राजनीतिक धारणाओं व उनके आर्थिक विकास के स्तर से देखता है ।

दुनिया को तीन भागों, "पहली दुनिया", "दूसरी दुनिया", और "तीसरी दुनिया" में विभाजित देखने, जैसा कि चीनी संशोधनवादी देखते हैं, और वर्ग दृष्टिकोण से न देखने का मतलब है, वर्ग संघर्ष के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त से विचलित होना, इसका मतलब है एक पिछड़े समाज से एक नये समाज, समाजवादी समाज, और बाद में वर्गहीन समाज, कम्यूनिस्ट समाज, में अवस्थापरिवर्तन के लिये सरमायदारों के खिलाफ़ सर्वहारा के संघर्ष से इनकार करना । दुनिया को तीन भागों में बांटने का मतलब है इस युग की विशेषताओं को न पहचानना, क्रान्ति और राष्ट्रीय मुक्ति की ओर सर्वहारा और लोगों के विकास में बाधा डालना, अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, और हर देश व दुनिया के हर कोने में पूंजी व प्रतिक्रिया के खिलाफ़ सर्वहारा व लोगों के संघर्ष में बाधा डालना । "तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त, सामाजिक शान्ति व वर्ग समझौते की हिमायत करता है, और कट्टर दुश्मनों के बीच, सर्वहारा व सरमायदार के बीच, उत्पीड़ित लोगों व अत्याचारियों के बीच, और लोगों व साम्राज्यवाद के बीच सहयोगी-संघ बनाने की कोशिश करता है । यह वर्ग संघर्ष को ही मिटाने की कोशिश के जरिये पुरानी दुनिया,

पूँजीवादी दुनिया के जीवन को बढ़ाने की, इसे अपने पैरों पर खड़े रहने देने की कोशिश है ।

लेकिन वर्ग संघर्ष, सर्वहारा व उसके सहयोगियों का सत्ता पर कब्ज़ा करने का संघर्ष, और सरमायदारों का अपनी सत्ता बनाये रखने का संघर्ष कभी भी मिटाया नहीं जा सकता है । यह एक अखण्डनीय सत्य है, और "दुनियाओं", चाहे "पहली दुनिया", "दूसरी दुनिया", "तीसरी दुनिया", "तटस्थ दुनिया", या "बहुतेरी दुनिया" के बारे में कितने भी खोखले सिद्धान्त इस तथ्य को नहीं बदल सकते हैं । ऐसे विभाजन को स्वीकार करने का मतलब है, वर्गों और वर्ग संघर्ष पर मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के सिद्धान्त का बहिष्कार व त्याग करना ।

अक्टूबर क्रान्ति की विजय के बाद, लेनिन व स्टालिन ने बताया कि हमारे समय में दो दुनियायें हैं : समाजवादी दुनिया और पूंजीवादी दुनिया, हालाँकि उस समय समाजवाद सिर्फ़ एक देश में ही विजयी हुआ था । लेनिन ने १९२१ में लिखा :

"...अब दो दुनियायें हैं, पूंजीवाद की पुरानी दुनिया, जो कि अव्यवस्था की हालत में है लेकिन जो कभी भी स्वेच्छा से आत्मसमर्पण नहीं करेगी, और उदीयमान नयी दुनिया, जो कि अभी भी कमज़ोर है, लेकिन जो बढ़ेगी, क्योंकि यह अपराजेय है ।" •

दुनिया के विभाजन की यह वर्ग कसौटी आज भी सच है,

• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३३, पृष्ठ १५३-१५४ (अल्बेनिया संस्करण)

हालाँकि, समाजवाद की अनेक देशों में विजय नहीं हुई है और नये समाज ने पुराने सरमायदारी-पूंजीवादी समाज की जगह नहीं ली है । ऐसा भविष्य में अवश्य ही होगा ।

यह तथ्य कि सोवियट संघ और दूसरे भूतपूर्व समाजवादी देशों में समाजवाद के प्रति विश्वासघात किया गया है, दुनिया के विभाजन की लेनिनवादी कसौटी को किसी भी तरह नहीं बदल सकता है । पहले की तरह अभी भी सिर्फ़ दो दुनियायें हैं, और इन दो दुनियाओं के बीच, दो शत्रुतापूर्ण वर्गों के बीच, और समाजवाद व पूंजीवाद के बीच संघर्ष सिर्फ़ राष्ट्रीय स्तर पर ही मौजूद नहीं है, बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी ।

चीनी संशोधनवादी, जो कि इस बहाने से कि सोवियट संघ और दूसरे भूतपूर्व समाजवादी देशों में विश्वासघात के परिणामस्वरूप अब समाजवादी कैम्प है ही नहीं, समाजवादी दुनिया की मौजूदगी को स्वीकार नहीं करते हैं, जानबूझ कर इस बात की अवहेलना करते हैं, कि आधुनिक संशोधनवाद का उभर आना किसी भी तरह क्रान्ति की ओर, साम्राज्यवाद के पतन की ओर इतिहास की आम प्रवृत्ति को नहीं बदलता है, हालाँकि पूंजीवाद अभी भी मौजूद है । इसके साथ-साथ वे इस तथ्य की भी अवहेलना करते हैं कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अमर विचार मौजूद हैं, विकसित व विजयी हो रहे हैं, कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां मौजूद हैं, समाजवादी अल्बेनिया मौजूद है, स्वतन्त्रता, आज़ादी, व राष्ट्रीय सर्वसत्ताधिकार के लिये लड़ने वाले लोग मौजूद हैं, और यह कि विश्व सर्वहारा मौजूद है और संघर्ष कर रहा है ।

पेरिस काम्यून विजयी नहीं हुआ, उसका दमन कर दिया गया था, लेकिन उसने विश्व सर्वहारा के सामने एक महान उदाहरण रखा । मार्क्स ने बताया कि काम्यून के अनुभव ने

फ्रांस के सर्वहारा की अस्थायी कमज़ोरी को प्रकट किया, तिस पर भी इसने सभी देशों के सर्वहारा को विश्व क्रान्ति के लिये तैयार किया, और विजय पाने के लिये आवश्यक स्थितियों के बारे में महान शिक्षा दी। मार्क्स ने काम्यूनार्डस, जिन्होंने "आसमान हिला दिया था", के इस महान अनुभव को सिद्धान्त का स्तर दिया और सर्वहारा को सिखाया कि इसे क्रान्तिकारी हिंसा से सरमायदारी राज और उसके अधिनायकत्व को चकनाचूर करना पड़ेगा।

आधुनिक संशोधनवादी कायर हैं। वे सोचते हैं कि इस समय प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियाँ बहुत शक्तिशाली हैं। लेकिन यह बिल्कुल भी सच नहीं है। वे लोगों की अपेक्षा कमज़ोर हैं। लोग, जिनका नेतृत्व सर्वहारा के हाथों में है, उनसे ज़्यादा शक्तिशाली हैं। वे प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों, प्रतिक्रिया, साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद की शक्तियों को कुचल देंगे। यह विचार दुनिया के वर्ग विश्लेषण पर आधारित है। दूसरा कोई भी विचार गलत है, चाहे संशोधनवादी अपनी क्रियाओं व डर को कितना भी क्रान्तिकारी वाक्यांशों में छिपायें।

जब हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी कहते हैं कि सिर्फ़ दो दुनिया हैं, तीन या पाँच नहीं, तो हम सही रास्ते पर हैं, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के आधार पर हमें पूंजीवादी सरमायदारी, अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ व दूसरे साम्राज्यवादियों के खिलाफ़ अपने संघर्ष को बढ़ाना चाहिये। इस संघर्ष का परिणाम होना चाहिये पुरानी सरमायदारी-पूंजीवादी दुनिया का सर्वनाश और नयी समाजवादी पद्धति की स्थापना।

सर्वहारा हमारे युग की प्रेरक सामाजिक शक्ति है। लेनिन ने जोर दिया था कि इतिहास को आगे बढ़ाने वाली प्रेरक शक्ति वह वर्ग है जो

"...एक या दूसरे युग का केन्द्र होता है, इसके मुख्य सार, इसके विकास की मुख्य दिशा, इस युग की ऐतिहासिक परिस्थिति की मुख्य विशेषताओं, इत्यादि, को निश्चित करता है।"*

लेकिन, लेनिन के इस दावे के विपरीत, चीनी संशोधनवादी "तीसरी दुनिया" को "इतिहास के पहिये को आगे बढ़ाने वाली महान प्रेरक शक्ति" के रूप में पेश करने की कोशिश कर रहे हैं। ऐसी घोषणा करने का मतलब है प्रेरक शक्ति की ऐसी व्याख्या करना जो कि सिद्धान्त और अभ्यास में गलत है। सामाजिक विकास के वर्तमान युग में, जिसके केन्द्र में सबसे क्रान्तिकारी वर्ग, सर्वहारा, है, राज्यों के एक गुट को, जिनमें से अधिकांश में सरमायदार, जागीरदार, और यहां तक कि खुले आम प्रतिक्रियावादी व तानाशाही शासन करते हैं, प्रेरक शक्ति बताना कैसे मुमकिन है? यह मार्क्स के सिद्धान्त को बुरी तरह से विकृत करना है।

चीनी नेतृत्व इस तथ्य पर ज़रा भी ध्यान नहीं देता है कि "तीसरी दुनिया" में, उत्पीड़ित व अत्याचारी हैं, एक ओर तो, सर्वहारा, गुलाम, गरीबी के मारे और दीन किसान हैं, और दूसरी ओर, पूंजीपति व ज़मीन्दार हैं, जो लोगों का

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २१, पृष्ठ १४७ (अल्बेनिया संस्करण)

शोषण करते हैं व उन्हें लूटते हैं । तथा-कथित तीसरी दुनिया के देशों में आम तौर पर पूंजीवादी सरमायदार सत्ता में हैं । ये सरमायदार, अपने लिये अधिकतम मुनाफ़ा बनाने के लिये, व लोगों को निरन्तर गुलामी व दीनता में रखने के लिये, अपने देश का शोषण करते हैं, व अपने ही वर्ग हितों के लिये गरीब लोगों का शोषण व उन पर अत्याचार करते हैं ।

"तीसरी दुनिया" के अनेक देशों में,सत्ता में होने वाली सरकारें सरमायदार, पूंजीवादी सरकारें हैं, निस्सन्देह,उनमें भिन्न राजनीतिक आभास हैं। ये सरकारें सर्वहारा,उत्पीड़ित व गरीब किसानों के प्रति दुश्मन,व क्रान्ति व मुक्ति युद्धों के प्रति दुश्मन वर्ग की सरकारें हैं । इन देशों में राज सत्ता रखने वाले सरमायदार ठीक उसी पूंजीवादी समाज की रक्षा कर रहे हैं, जिसे सर्वहारा, शहर व गांवों की गरीब श्रेणियों के साथ मिलकर,नष्ट करना चाहता है। यह,वह उच्च वर्ग है,जो कि,अपने ही संकुचित हितों पर आधारित होकर, किसी भी समय,घटनाओं के किसी भी मोड़ पर,देश की ज़मीन से पैदा हुई सम्पत्ति व भूमिगत सम्पत्ति,और जन्मभूमि की स्वतन्त्रता,आज़ादी,व सर्वसत्ताधिकार को विदेशी पूंजीवाद के हाथों बेचने को तैयार है । यह वर्ग, जहां कहीं भी यह सत्ता में है,सर्वहारा व उसके सहयोगियों,उत्पीड़ित वर्गों व श्रेणियों के संघर्ष व उनकी आकांक्षाओं के विरुद्ध है ।

अनेक राज्य, जिन्हें चीनी नेतृत्व "तीसरी दुनिया" में शामिल करते हैं,अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का विरोध नहीं करते हैं । ऐसे राज्यों को "साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष व क्रान्ति की मुख्य प्रेरक शक्ति" बताना,जैसी कि माओ त्से-तुङ हिमायत करता है,हिमालय जैसी स्पष्ट खड़ी होने वाली साफ़ गलती है । दूसरे छद्म-

मार्क्सवादी भी हैं,लेकिन वे कम से कम अपने आपको सरमायदारी सिद्धान्तों के पीछे छिपाना, व भेष भरना तो जानते हैं ।

चीनी संशोधनवादी सिर्फ़ "तीसरी दुनिया" के बारे में ही नहीं बल्कि,जिसे वह "दूसरी दुनिया" कहते हैं,उसके बारे में भी मार्क्सवाद-विरोधी विचार रखते हैं,जिस "दूसरी दुनिया" में कल के बड़े पूंजीवादी सरमायदार और बड़े साम्राज्यवादी,जो कि अभी भी साम्राज्यवादी हैं,शासन करते हैं । तथा-कथित दूसरी दुनिया के देशों में,बड़ी संख्या में शक्तिशाली सर्वहारा है,जिसका बेहद शोषण किया जाता है,और जिसे,सरमायदार अधिनायकत्व के सभी उपकरणों,कुचलने वाले कानूनों,सेना,पुलिस,मज़दूर संघों,से दबा कर रखा जाता है । "तीसरी दुनिया" के देशों में,और "दूसरी दुनिया" के देशों में वही सरमायदारी पूंजीवादी वर्ग है, वही सामाजिक शक्तियां हैं,जो सर्वहारा व लोगों पर शासन कर रही हैं, और जिन्हें चकनाचूर करना पड़ेगा । यहां भी मुख्य प्रेरक शक्ति सर्वहारा ही है ।

जैसा कि वे "तीसरी दुनिया" और "दूसरी दुनिया" के बारे में करते हैं,चीनी संशोधनवादी संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियट संघ के बारे में भी, सर्वहारा,जो क्रान्ति की सबसे बड़ी सेना है,की अवहेलना करते हैं,समाज की उसी मुख्य प्रेरक शक्ति, वह शक्ति जिसे एकाधिकार सरमायदारों,अपने वर्ग दुश्मनों,और आम तौर पर विश्व क्रान्ति के दुश्मनों पर हमला करना है,से इनकार करते हैं ।

माओ त्से-तुङ का "तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त इस महान वास्तविकता से इनकार करता है,और यूरोप व दूसरे विकसित देशों के सर्वहारा की अवहेलना करता है । यह सच

है कि सर्वहारा की श्रेणियों में भी,चाहे वह तथाकथित तीसरी, दूसरी या पहली दुनिया की हों,कुछ हद तक पतन मौजूद है, क्योंकि सरमायदार हाथों पर हाथ धरे नहीं बैठे हैं,बल्कि अपने दुश्मन से,सिर्फ़ शस्त्रों व अत्याचार से ही नहीं,बल्कि राजनीतिक व विचारधारात्मक तौर पर भी,उस रहन-सहन के तरीके से,जिसे यह बनाते हैं,आदि,से भी लड़ते हैं । लेकिन इस तथ्य कि सर्वहारा की कुछ श्रेणी,जैसे कि मज़दूर अभिजाततन्त्र,का पतन हो जाता है,का यह मतलब नहीं है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद को त्याग दिया जाये,और विश्व क्रान्तिकारी क्रियाविधि में मज़दूर वर्ग के निश्चयात्मक कार्यभाग से इनकार किया जाये । सही मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा के जरिये,अपनी रोजाना क्रान्तिकारी क्रियाओं के जरिये, सच्चे कम्यूनिस्ट हर एक देश व हर एक "दुनिया" के सर्वहारा का पतन होने से रक्षा करते हैं और इसे,इस पर अत्याचार करने वालों के खिलाफ़ संघर्ष करने के लिये गतिमान करते हैं, चाहे वे अत्याचारी बर्तानिया के हों,या फ्रांस, इटली,या जर्मनी,पुर्तगाल,या स्पेन,अमरीका,या जापान इत्यादि के हों।

संयुक्त राज्य अमरीका में भी,जो विश्व साम्राज्यवाद का मुखिया है,बड़ी संख्या में सर्वहारा मौजूद है । दुनिया के सबसे अधिक औद्योगिकृत देशों में से एक होने के कारण, यह सबसे अधिक अमीर भी है,इसलिये यहाँ सर्वहारा को धोखा देने के लिये पूंजी जो टुकड़े डालती है, वह दूसरे सरमायदार देशों में डाले गये टुकड़ों की अपेक्षा ज़रा बड़े हैं । संयुक्त राज्य अमरीका में रहन-सहन का तरीका सर्वहारा पर ज़्यादा असर डालता है,लेकिन हम किसी भी हालत में उस देश की क्रान्ति में अमरीकी सर्वहारा के कार्यभाग व योगदान से इनकार नहीं कर सकते हैं । वास्तव में, संयुक्त राज्य अमरीका में भी,

साम्राज्यवाद, लुटेरी लड़ाइयों, और पूंजीवादियों, ट्रस्टों, बैंकों, आदि द्वारा किये गये अत्याचार के विरुद्ध एक मत है । उस देश के निम्न सरमायदारों की श्रेणियों के बीच भी बड़ी पूंजी द्वारा किये गये अत्याचार के खिलाफ़ प्रतिरोध मौजूद है ।

वर्ग संघर्ष से इनकार करके, "तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त, विदेशी आधिपत्य से अपने आपको मुक्त करने, और लोकतन्त्रीय अधिकारों व स्वतन्त्रताओं को जीतने के लिये लोगों के संघर्ष से इनकार करता है, समाजवाद के लिये उनके संघर्ष से इनकार करता है । यह प्रतिक्रान्तिकारी व विज्ञान-विरोधी सिद्धान्त लोगों के दुश्मनों - साम्राज्यवाद, सामाजिक-साम्राज्यवाद और सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय बड़े सरमायदारों, के खिलाफ़ लोगों के संघर्ष को अवैध ठहराता है ।

लोगों को "तीन विभागों" में डालना और यह उपदेश देना कि सिर्फ़ "तीसरी दुनिया" ही साम्राज्यवाद से मुक्ति की आकांक्षा रखती है, कि सिर्फ़ यही अभिकथित रूप से "साम्राज्यवाद के खिलाफ़ मुख्य प्रेरक शक्ति है" एक धोखा है और मार्क्सवाद-लेनिनवाद से स्पष्ट विचलन है । अगर साम्राज्यवादियों और पूंजीपतियों को "पहली दुनिया" और "दूसरी दुनिया" में शामिल किया जाना है, तो यह सवाल उठता है : इन "दो दुनियाओं" के लोगों को, जो "तीसरी दुनिया" पर अत्याचार करने वाले इन्हीं अत्याचारियों के खिलाफ़ अपनी मुक्ति के लिये लड़ रहे हैं, कहां पर रखा जाये ? दुनिया को तीन में बांटने वाले, और उनके समर्थक इस सवाल का जवाब नहीं दे सकते हैं, क्योंकि उनकी मार्क्सवाद-विरोधी और लेनिनवाद-विरोधी धारणा के अनुसार, वे साम्राज्यवादियों, शासकों व लोगों को एक ही साथ मिला देते हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सोवियट लोगों को, उन पर शासन करने वाले मार्क्सवाद-विरोधी, सामाजिक-साम्राज्यवादी, पाखण्डियों व नये पूंजीपतियों के साथ नहीं मिला सकते हैं। इसी प्रकार, वे अमरीकी लोगों को अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ मिला व सम्मिश्रित नहीं कर सकते हैं। अगर वे चीनी संशोधनवादियों की ही तरह बर्ताव करें, तो क्रान्तिकारी लोग एक बहुत बड़ी सैद्धान्तिक गलती करेंगे, और अपने आपको क्रान्ति के विरुद्ध कर लेंगे, वे ठीक साम्राज्यवाद, सामाजिक-साम्राज्यवाद, व पूंजी की शक्तियों के समर्थन में हो जायेंगे, जिनके खिलाफ़ सर्वहारा, और दुश्मनों के बाड़े में रहने वाले लोग भी लड़ रहे हैं।

चीनियों की इस मांग में क्या बुद्धिमत्ता है कि "तीसरी दुनिया" को "पहली दुनिया" के आधे हिस्से से लड़ने के लिये "दूसरी दुनिया" के साथ सहयोगी-संघ में एक होना चाहिये, जब कि दुनिया का ऐसा विभाजन उन लोगों के व्यक्तित्व, आकांक्षाओं और विकास को द्विविधा में डालता है, जो लोग उनपर अत्याचार करने वाले अल्पजनाधिपत्य का विरोध करते हैं और उनके खिलाफ़ संघर्ष करते हैं। इसी प्रकार लोगों के प्रतिरोध व क्रान्तिकारी संघर्ष का स्तर अलग-अलग है, लेकिन उनका अन्तिम उद्देश्य, कम्यूनिज़्म, एक ही है। ऐसी हालतों में, हम मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को प्रचार-सम्बन्धी काम करना चाहिये और अपने आपको गतिमान करना चाहिये, ताकि साम्राज्यवाद, सामाजिक-साम्राज्यवाद, पूंजीवाद और उनकी कपटी विचारधाराओं के खिलाफ़ निरन्तर वर्ग संघर्ष के जरिये इस अन्तिम उद्देश्य को प्राप्त कर सकें।

चीनी संशोधनवादी सिर्फ़ पूंजीवादी देशों के लोगों व शासकों को मिलाते व एक ही नहीं करते हैं, बल्कि वे, अपने

इस प्रचार से कि समाजवादी देशों को भी "तीसरी दुनिया" में शामिल किया जाना चाहिये, इन देशों के अभिज्ञान का ध्वंस करना भी चाहते हैं ।

एक समाजवादी देश कैसे "तीसरी दुनिया" के साथ मिलाया जा सकता है जिस दुनिया में शत्रु वर्ग, अत्याचार व शोषण मौजूद है, और उसे कैसे "राजाओं व शहज़ादों" के साथ रखा जा सकता है, जैसा कि चीनी नेता दावा करते हैं ? चीनी संशोधनवादी जो अपने देश को समाजवादी कहते हैं, यह दलील पेश करते हैं कि वे अपने को "तीसरी दुनिया" में इसलिये शामिल करते हैं ताकि इस "दुनिया" के लोगों की मदद कर सकें । यह एक कपट है जिसके जरिये वे अपने प्रसारवादी उद्देश्य को छिपाना चाहते हैं । लोगों के संघर्ष को मदद देने और उसका समर्थन करने में, एक सच्चे समाजवादी देश को, दुनिया को तीन में बाँटने या अपने को "तीसरी दुनिया" में शामिल करने की कोई ज़रूरत नहीं है ।

अपनी विचारपद्धतियों से, और वर्ग कसौटी से मार्गप्रदर्शित होकर, हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी, लोगों, सर्वहारा, सच्चे लोकतन्त्र, सर्वसत्ताधिकार और स्वतन्त्रता की मदद करते हैं, उस राज्य की नहीं जहाँ राजा, शाह व प्रतिक्रियावादी गुट शासन करते हैं । हम उन लोगों व लोकतन्त्रीय राज्यों की मदद करते हैं जो अपने आपको महाशक्तियों की दासता से मुक्त करना चाहते हैं, लेकिन हम जोर देते हैं कि यह तब तक, उचित तौर से, ठीक रास्ते पर व वर्ग कसौटी के अनुसार नहीं किया जा सकता है, जब तक ये लोग व राज्य उन राजाओं व अन्तर्राष्ट्रीय एकाधिकारों के खिलाफ़ भी न लड़ें, जो महा-शक्तियों के साथ मिले हुये हैं । चीनी नेता दावा करते हैं कि उन्होंने अपने आपको इस काल्पनिक "तीसरी दुनिया"

में "मिलाकर" इस जटिल वर्ग समस्या को सुलझा लिया है। लेकिन यह एक मार्क्सवाद-विरोधी समाधान है। चीनी नेताओं के दावों के विपरीत, "तीसरी दुनिया" के अधिकांश राज्य व सरकारें "पहली दुनिया" के खिलाफ़, या अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, या "दूसरी दुनिया" के खिलाफ़ संघर्ष के पक्ष में नहीं हैं।

दुनिया के लोगों के बीच प्रवृत्ति, मुक्ति के लिये, क्रान्ति के लिये, व समाजवाद के लिये संघर्ष की ओर है, लेकिन "तीसरी दुनिया" की राजाओं, अमीरों, व मोबूटू व पिनोशे जैसे प्रतिक्रियावादी गुटों की सरकारें, जिनमें चीन ने अपने आपको शामिल कर लिया है, इस प्रवृत्ति में शामिल नहीं हैं।

तथाकथित तीसरी दुनिया के राज्यों के विषय में, चीनी नेता, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद व विश्व क्रान्ति के हितों के सिद्धान्तों के अनुसार किया जाने वाला कोई भी वर्ग भेद-भाव नहीं करते हैं। वे इस तथ्य पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते हैं कि ये राष्ट्रीय राज्य, जिनमें से अधिकांश पर सरमायदारों की उच्च श्रेणियों का शासन है, अमरीकी साम्राज्यवाद, और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के भी, अधीन हैं और अनेक प्रकार से उनके साथ घनिष्ठता के साथ जुड़े हुये हैं।

इन राज्यों में, एक ओर तो सर्वहारा, गरीब व उत्पीड़ित किसानों, व दूसरी ओर सरमायदारों व सभी गुलाम बनाने वालों के बीच गहरे आन्तरिक अन्तर्विरोध हैं। एक समाजवादी देश द्वारा इन राज्यों के लोगों को दी गई सहायता ऐसी होनी चाहिये जिससे, सर्वहारा क्रान्ति की विजय और सर्वहारा द्वारा सत्ता पर कब्ज़ा करने के दृष्टिकोण को धूमिल किये बिना और उसके सवाल पर असर डाले बिना, एक सच्चे लोकतन्त्रीय राज्य के निर्माण की ओर, उनकी प्रगति की ओर

भारी प्रोत्साहन मिले। क्रान्ति का आयात नहीं किया जा सकता है। यह हर एक देश के सर्वहारा व लोगों द्वारा की जायेगी। निस्सन्देह, सत्ता पर कब्ज़ा रातोंरात नहीं किया जा सकता है, लेकिन, जैसा लेनिन हमें सिखाते हैं, उन स्थितियों को पैदा किया जाना चाहिये ताकि इतिहास के हर मोड़ पर, तानाशाहियों व प्रतिक्रियावादी सरमायदारों की पतित राज सत्ता का अन्तर्ध्वंस करने और लोगों के शासन को स्थापित करने के संघर्ष में सर्वहारा सबसे आगे हो।

हम कम्यूनिस्ट, लेनिनवादी वर्ग कसौटी के आधार पर, दुनिया का जो विभाजन करते हैं, वह हमें, महाशक्तियों से लड़ने और उन सभी लोगों व राज्यों को मदद देने से नहीं रोकता है, जो मुक्ति की कामना रखते हैं, और जिनमें महाशक्तियों के साथ अन्तर्विरोध हैं। समाजवादी अल्बेनिया ने, एशिया, अफ़्रीका व लैटिन अमरीका के लोगों के संघर्ष को खुले दिल से व सशस्त्र सहायता दी है, क्योंकि यह संघर्ष उनके अपने ही हित में है और साम्राज्यवाद व विदेशी उपनिवेशिक आधिपत्य के खिलाफ़ निर्दिष्ट है। लेकिन मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों और सर्वहारा की पार्टी की विचारधारा व नीति को छिपाना व विकृत करना, जैसा कि चीनी नेता करते हैं, मार्क्सवाद-विरोधी है, एक कपट व धोखा है। पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने ऐसा नहीं किया है और न ही कभी करेगी, क्योंकि यह अपने ही लोगों के खिलाफ़, दूसरे लोगों के खिलाफ़, अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा व विश्व क्रान्ति के खिलाफ़ अक्षम्य अपराध होगा।

दुनिया का तीन भागों में विभाजन करके, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी वर्ग समझौते की हिमायत कर रही है ।

सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादी लेनिन की शिक्षाओं को कभी भी नहीं भूलते हैं, जिन्होंने जोर दिया है कि मौकापरस्त व संशोधनवादी, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त को इसके क्रान्तिकारी सार से वंचित करते हुये वर्ग संघर्ष को कम करने, व मज़दूर वर्ग व उत्पीड़ित लोगों को "क्रान्तिकारी" उक्तियों से धोखा देने के लिये सभी कपटी तरीकों से कोशिश करते हैं । ठीक यही चीनी संशोधनवादी नेतृत्व कर रहा है, जबकि वह मज़दूर वर्ग व सरमायदारों के बीच समझौते व शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का उपदेश देता है ।

जैसा कि एंगेल्स व लेनिन हमें सिखाते हैं, विरोधी मूल हितों को रखने वाले वर्गों व सामाजिक शक्तियों के बीच अन्तर्विरोधों में समझौता नहीं हो सकता है, बल्कि इसके विपरीत, वे और भी अधिक से अधिक तीव्र होते जाते हैं और सामाजिक-राजनीतिक लड़ाइयों तक पहुंच जाते हैं । राज का मौजूद होना ही यह सिद्ध करता है कि वर्गों के बीच शत्रुताओं में समझौता नहीं किया जा सकता है । इसलिये, इन वर्ग शत्रुताओं, जो "तीसरी", "दूसरी", या "पहली दुनिया" के विभिन्न सरमायदारी व संशोधनवादी देशों में मौजूद हैं, को सिद्धान्तहीन एकता का उपदेश देकर कम करने की कोशिश का मतलब है अन्तर्विरोधों की मौजूदगी के वस्तुगत स्वभाव को इनकार करना और इस समस्या को मार्क्सवाद-विरोधी तरीके से देखना ।

चीनी "सिद्धान्तवादी" उन वर्गों के बीच समझौता करने की कोशिश करते हैं, जिनके बीच समझौता कभी भी नहीं हो सकता है, और इसका मतलब है कि उनकी विचारनीतियाँ

संशोधनवादी व मौकापरस्त हैं। चीनी संशोधनवादियों द्वारा मार्क्स के सिद्धान्त की विकृति एकदम स्पष्ट है जब वे "तीसरी दुनिया" में उनके द्वारा शामिल किये गये देशों को ऐसे देश समझते हैं जहाँ वर्ग शान्ति है, और जब वे उन देशों के राज को वर्ग समझौते का एक संस्थान समझते हैं ।

"तीसरी दुनिया" की धारणा, जिसका कि चीनी नेता विज्ञापन करते हैं, को स्वीकार कर लेने का मतलब है एक ऐसे मत को पैदा करने के लिये काम करना जो कि उन राज संस्थानों की रक्षा करने के काम आयेगा जिनकी, मज़दूर वर्ग व लोगों के जनसमुदाय को उत्पीड़ित करने के लिये सरमायदारों को ज़रूरत होती है । जैसा कि लेनिन ने संशोधनवादियों पर हमला करते समय बताया था, वर्ग संघर्ष को कम करने का दावा इस अत्याचार को उचित ठहराता है और उसका अनुमोदन करता है । "तीसरी दुनिया" में एकता की इच्छा रखने का, वास्तव में, मतलब है उत्पीड़ित वर्ग की अत्याचारी वर्ग के साथ एकता की इच्छा रखना, यानि कि मेहनतकश जनसमुदाय और सरमायदारों के बीच, और लोगों व विदेशी अत्याचारियों के बीच शत्रुताओं को कम करने की कोशिश करना । चीनी संशोधनवादियों के ये उपदेश, लोगों की राष्ट्रीय व सामाजिक मुक्ति के हितों के, स्वतन्त्रता, आज़ादी व सामाजिक न्याय के लिये उनकी आकांक्षाओं के विपरीत है ।

वे अधिकांश राज्य जो कि अभिकथित रूप से "तीसरी" या "तटस्थ दुनिया" हैं, विदेशी वित्त पूंजी पर निर्भर हैं, जो कि इतनी मज़बूत और इतनी व्यापक है कि इन देशों में जीवन के हर पहलू पर इसका निश्चयात्मक प्रभाव है । ये राज्य पूरी तरह से स्वतन्त्र नहीं हैं । इसके विपरीत, ये इस

बड़ी वित्त पूँजी पर निर्भर हैं,जो कि उस नीति का विकास करती है और उस विचारधारा को फैलाती है जो लोगों के शोषण को उचित ठहराती है ।

सरमायदार और साम्राज्यवाद इस वास्तविकता को छिपाने के लिये पूरी कोशिश करते हैं, और जब उनका पर्दाफ़ाश हो जाता है,तो वे राज्यों की स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार के खिलाफ़ विभिन्न "सिद्धान्तों" को गढ़ते हैं । स्वतन्त्रता, आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार के लिये लोगों की आकांक्षाओं को कुचलने के लिये, सरमायदार और संशोधनवादी सिद्धान्तकार इन आकांक्षाओं को "असामयिक" बताते हैं,उनको विभिन्न अभौतिकवादी भावार्थ देते हैं,और "विश्व अन्तर-निर्भरता" के नारे से,जो अभिकथित रूप से मानव समाज के विकास की वर्तमान प्रवृत्ति को अभिव्यक्त करता है, या "सीमित सर्व-सत्ताधिकार" के नारे से,जो अभिकथित रूप से तथाकथित समाजवादी सम्प्रदाय इत्यादि के महानतम हितों को अभि-व्यक्त करता है,आदि से इन आकांक्षाओं का विरोध करते हैं ।

राष्ट्रों और राज्यों की स्वतन्त्रता,आज़ादी व सर्वसत्ता-धिकार के सभी रूपों व सभी तरह से उल्लंघन की सरमाय-दारी-संशोधनवादी वास्तविकता पूँजीवादी प्रणाली के पतन को दिखाती है । हम ऐसे युग में रह रहे हैं जब सरमायदार, शासक वर्ग का अपना स्थान खो रहे हैं,जब कि विश्व सर्वहारा एक महान शक्ति बन गया है, और अपना शोषण करने वाले वर्ग का ध्वंस करने के लिये इसने अनवरत व कठोर संघर्ष शुरू कर दिया है । लोगों के प्रहारों व सर्वहारा के वर्ग संघर्ष के कारण, सरमायदारों को उपनिवेशवाद को विधितः रूप से त्यागने के लिये,व अनेक देशों,जिनपर ये बहुत लम्बे समय से

कब्ज़ा किये हुये थे व उनका अत्यधिक शोषण कर रहे थे,की स्वतन्त्रता, आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार को औपचारिक रूप से मानने के लिये बाध्य होना पड़ा ।

लेकिन,पूंजीवादी राज्यों द्वारा उनके भूतपूर्व उपनिवेशों को वैधानिक रूप से स्वीकार की हुई स्वतन्त्रता,आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार,अनेक देशों के लिये इस समय तक सिर्फ़ औपचारिक ही रही है,क्योंकि पूंजीपति व साम्राज्यवादी अभी भी नये रूपों में वहां शासन कर रहे हैं । लोगों के आर्थिक, राजनीतिक व विचारधारात्मक पिछड़ेपन,और क्रान्तिकारी शक्तियों के संगठन की कमी से फ़ायदा उठाते हुये,भूतपूर्व उपनिवेशों पर अपने आधिपत्य को जारी रखने के लिये,हमारे समय की ये प्रतिगामी शक्तियां, लोगों को विभाजित करने व उनपर शासन करने के लिये साजिशों व षडयन्त्रों का अत्यधिक इस्तेमाल करते हैं,जिनके लिये इन देशों में उपयुक्त स्थितियां अभी भी पायी जा सकती हैं ।

इन समस्याओं पर विचार करते समय यह नहीं सोचना चाहिये कि,क्योंकि भूतपूर्व उपनिवेशित देशों ने सम्पूर्ण आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार अभी तक नहीं जीता है,इसलिये उनके संघर्ष व्यर्थ रहे हैं । किसी भी तरह नहीं । महाशक्तिशाली साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद की अधीनता व परिरक्षण से अपने छोटे देशों का उद्धार करने के लिये लोगों के संघर्ष का अल्पानुमान नहीं किया जाना चाहिये । इसके विपरीत,पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया और अल्बेनिया के राज ने इस उचित क्रान्तिकारी व मुक्ति संघर्ष को पूरा समर्थन दिया है और देना जारी रखेंगे,और इन्होंने इस संघर्ष को अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रता को मज़बूत करने,और उपनिवेशिक व अर्ध-उपनिवेशिक आधिपत्य से अपने को मुक्त करने की लोगों की

एक विजय समझा है। लेकिन हम उन संशोधनवादी सिद्धान्तकारों के खिलाफ़ हैं जो सामाजिक मुक्ति के लिये संघर्ष से इनकार करते हुये यह उपदेश देते हैं कि अब सम्पूर्ण क्रान्तिकारी संघर्ष को राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष तक ही,व साम्राज्यवादी शक्ति के हमलों से इस स्वतन्त्रता को जीतने व इसकी रक्षा करने तक ही सीमित कर देना चाहिये। सिर्फ़ सामाजिक मुक्ति के लिये संघर्ष में विजय सच्ची व सम्पूर्ण राष्ट्रीय स्वतन्त्रता,आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार की गारण्टी देती है। शोषणकारी पद्धति के ये हिमायती "भूल जाते" हैं कि,एक ओर तो,सर्वहारा व उसके सहयोगियों,और दूसरी ओर,स्थानीय सरमायदार व उसके विदेशी सहयोगियों,के बीच वर्ग संघर्ष हर समय तीव्रता से जारी है,और किसी दिन ये,जैसा कि लेनिन बताते हैं,उन छणों व उन क्रान्तिकारी स्थितियों में पहुँच जायेगा,जब कि क्रान्ति फूट पड़ती है। साम्राज्यवाद-विरोधी व लोकतन्त्रीय क्रान्तियों के बड़े पैमाने पर विकास के लिये और सर्वहारा द्वारा उनके नेतृत्व के लिये पैदा की जाने वाली ज़्यादा से ज़्यादा अनुकूल परिस्थितियों का,राष्ट्रीय स्वतन्त्रता संघर्ष को दूसरी और भी ऊँची कार्यविस्था,समाजवाद के लिये किये जाने वाले संघर्ष तक ले जाने के लिये इस्तेमाल किया जाना चाहिये। लेनिन हमें सिखाते हैं कि क्रान्ति को,सरमायदारों व उनकी राज सत्ता का अन्तर्ध्वंस करके, अन्त तक ले जाना चाहिये। सिर्फ़ इसी आधार पर सच्ची स्वतन्त्रता,आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार की बात की जा सकती है।

हमारी मार्क्सवादी-लेनिनवादी धारणा के अनुसार,लोग एक ऐसे समाज में स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार नहीं पा सकते हैं जिसमें शत्रुतापूर्ण वर्ग मौजूद हैं और जहाँ सामन्तिक या

सरमायदार वर्ग शासन करता है । स्वतन्त्रता, आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार का एक यथार्थ सामाजिक-राजनीतिक सार होता है । सच्ची व सम्पूर्ण स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार, सर्वहारा अधिनायकत्व के होने पर ही प्राप्त किये जाते हैं, जबकि,जहाँ राज सत्ता शोषणकारी वर्ग के हाथों में है,शोषकों व शोषितों के बीच और देशों के बीच आर्थिक व राजनीतिक असमानता के सम्बन्धों के परिणामस्वरूप लोगों की स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार या तो खत्म हो जाते हैं या उन्हें सीमित कर दिया जाता है । इस प्रकार,"तटस्थ" या "तीसरी दुनिया" में शामिल किये गये देशों में सच्ची राष्ट्रीय स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार के बारे में,और,लोगों के सर्वसत्ताधिकार के बारे में तो बिल्कुल भी बात नहीं की जा सकती है । सिर्फ़ मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त पर आधारित वैज्ञानिक विश्लेषण से ही यह ठीक से निश्चित करना सम्भव है कि कौन से लोग वास्तव में स्वतन्त्र हैं और कौन से गुलाम,कौन सा राज्य स्वतन्त्र व सर्वसत्ताधिकारी है और कौनसा निर्भर व उत्पीड़ित । मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त स्पष्ट रूप से बताता है कि लोगों पर अत्याचार करने व उनका शोषण करने वाले कौन हैं,और स्वतन्त्र,आज़ाद व सर्वसत्ताधिकारी बनने के लिये लोगों के लिये कौनसा रास्ता है । हम अल्बेनिया के कम्यूनिस्ट, राज्यों व लोगों की स्वतन्त्रता, आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार को सिर्फ़ इसी तरीके से,मार्क्सवाद-लेनिनवाद के आधार पर,समझते हैं ।

अन्तर्विरोधों के प्रति चीनी संशोधनवादियों का रुख एक अध्यात्मवादी, संशोधनवादी, व आत्मसमर्पणवादी रुख है

मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षाओं पर आधारित सही क्रान्तिकारी नीति की कार्यान्विति के लिये सिर्फ, विश्व क्रान्तिकारी और मुक्ति प्रवृत्ति की प्रेरक शक्तियों के सभी तरफा द्वन्द्ववादी विश्लेषण और मूल्यांकन, और दुश्मन शक्तियों के मज़बूत व कमज़ोर पहलूओं के सही मूल्यांकन, की ही नहीं, बल्कि हमारे समय के विशेष अन्तर्विरोधों की सही और वैज्ञानिक समझ की भी ज़रूरत होती है ।

अगर हम अन्तर्विरोधों के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त की शिक्षाओं के अनुसार, और यथार्थ तथ्यों और परिस्थितियों के वास्तविक विकास के संसर्ग में व्याख्या करें, तो हम गल्ती नहीं करेंगे ।

अन्तर्विरोधों के बारे में चीनी नेता "सिद्धान्त बनाते हैं", "व्याख्या करते हैं", "दार्शनिकता के रंग में रंगते हैं", और उन अनेक दावों का भावानुवाद करते हैं व उनके बारे में द्विविधा पैदा करते हैं जिनकी मार्क्सवाद-लेनिनवाद की क्लासिकी रचनाओं में इतने स्पष्ट रूप में शब्दरचना की गई है । अन्तर्विरोधों की असलियत से भिन्न व्याख्या करके, वे मुक्ति संघर्षों, लोगों, क्रान्ति व समाजवाद के निर्माण के पक्ष में नहीं बल्कि सरमायदारों व साम्राज्यवाद के पक्ष में सन्धि व समझौते करते हैं । मार्क्सवादी-लेनिनवादी दर्शनशास्त्रियों का दिखावा करने वाले इन नेताओं, की दो नकाबें हैं : एक अपने आपको इस रूप में पेश करने के लिये कि वे मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के अनुकूल हैं, और दूसरी इसको अभ्यास में विकृत करने के लिये ।

अन्तर्विरोधों,सहयोगी-संघों व समझौतों के बारे में उनकी विचारपद्धति उस विकृत व उपयोगितावादी विश्लेषण पर आधारित है,जो विश्लेषण वे अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति,और दुनिया में मौजूद अन्तर्विरोधों,साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच,विभिन्न पूंजीवादी राज्यों के बीच,सर्वहारा व सरमायदारों के बीच, अन्तर्विरोधों आदि का करते हैं । इस विचारपद्धति की जड़ें उनके अध्यात्मवादी व संशोधनवादी विश्व दृष्टिकोण में है ।

लेकिन,चीनी नेताओं का, अन्तर्विरोधों,सहयोगी-संघों, और समझौतों की समस्या को वादानुवाद के लिये सामने रख देना आकस्मिक नहीं है । चीनी नेतृत्व ने अब अपना भेष उतार फैंका है और अब वह खुले आम क्रान्ति के विरुद्ध हो गया है । वह दायेंपक्षी मौकापरस्ती व संशोधनवाद का पताकावाहक बन गया है । दूसरे सभी संशोधनवादियों की तरह,चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता भी,मार्क्स,एंगेल्स,लेनिन व स्टालिन के उद्धरणों का इस्तेमाल करके,मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त से अपने विचलन व अपने संशोधनवादी दिशाज्ञान को "उचित ठहराने" की कोशिश कर रहे हैं । निस्सन्देह : वे इन उद्धरणों को संक्षिप्त करते हैं, उनकी काट-छांट करते हैं,उनका बिना किसी संदर्भ के इस्तेमाल करते हैं, और इस तरह इन उद्धरणों को अंग-भंग करके,उनका,अपनी प्रतिक्रियावादी विचारपद्धति व दावों को मार्क्सवादी-लेनिनवादी दावों की तरह चलाने के लिये इस्तेमाल करते हैं । लेकिन हमारे सही सिद्धान्त को विकृत करने,उसमें उद्देश्यमूलक कमी करने व उसकी व्याख्या करने में चीनी संशोधनवादी न तो सबसे पहले हैं और न आखरी हैं । उनसे बहुत पहले,सामाजिक-लोकतन्त्र के मुखियों,टीटोवादियों,सोवियट,इटालियन,फ्रांसीसी व दुसरे संशोधनवादियों ने ऐसा ही किया था और अभी भी कर रहे हैं ।

सबसे पहले, अन्तर्विरोधों में उलट-फेर करके, चीनी नेता, अमरीकी साम्राज्यवाद के प्रति अपनी विचारपद्धति को उचित ठहराने, और इसके साथ अपने वैरशमन व सहयोग के लिये रास्ता बनाने की कोशिश कर रहे हैं ।

चीनी संशोधनवादी दावा करते हैं कि इस समय दुनिया में सिर्फ़ एक ही अन्तर्विरोध है, और यह कि, यह अन्तर्विरोध "तीसरी दुनिया", "दूसरी दुनिया" और "पहली दुनिया" के आधे को सोवियट संघ के खिलाफ़ कर देता है । इस दावे से शुरू होकर, जो कि लोगों को साम्राज्यवादियों के एक गुट के साथ मिला देता है, वे यह हिमायत करते हैं कि सभी वर्ग अन्तर्विरोधों को भुला देना चाहिये, और सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ ही संघर्ष किया जाना चाहिये ।

लेकिन आइये हम विश्लेषण करें कि लोगों व महाशक्तियों के बीच अन्तर्विरोधों, और स्वयं महाशक्तियों के बीच अन्तर्विरोधों के सवाल पर स्थिति क्या है ।

वर्तमान स्थितियों में, दृढ़ क्रान्तिकारी नीति व युक्तियों की व्याख्या करने में, दोनों साम्राज्यवादी महाशक्तियों, संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ, जो कि अत्याचार व शोषण करने वाली पूंजीवादी प्रणाली की रक्षा में सबसे बड़ी शक्ति हैं, व विश्व प्रतिक्रिया की मुख्य बुर्ज हैं, के प्रति सिद्धान्ती रुख सबसे प्रथम महत्व रखता है । वे कट्टर दुश्मन हैं, क्रान्ति, समाजवाद, व सम्पूर्ण दुनिया के लोगों के सबसे खतरनाक दुश्मन हैं; उन्होंने, हर एक क्रान्तिकारी व मुक्ति आन्दोलन के खिलाफ़ अन्तर्राष्ट्रीय सशस्त्र-पुलिस के घृणित कार्यभाग का बीड़ा उठा लिया है, और वे सबसे आक्रमणकारी युद्ध-लिप्सु शक्तियां हैं, जो अपनी क्रियाओं से दुनिया को एक तबाह करने वाले युद्ध की ओर ले जा रही हैं ।

कोई भी, और पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया तो बिल्कुल भी, हमारे समय की दो सबसे बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों – अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद – के बीच गम्भीर अन्तर्विरोधों की मौजूदगी से इनकार नहीं कर सकती है। हमने हमेशा ही ज़ोर दिया है कि दोनों महाशक्तियों के बीच अन्तर्विरोध सिर्फ़ मौजूद ही नहीं, बल्कि गहरे भी होते जा रहे हैं। इसके साथ-साथ, अपनी ओर से महाशक्तियां कुछ विषयों पर समझौता करने की कोशिश कर रही हैं। लेनिन इस घटना को पूंजी की दो प्रवृत्तियों से स्पष्ट करते हैं। उन्होंने बताया कि

"...दो प्रवृत्तियां मौजूद हैं – एक सभी साम्राज्यवादियों के बीच सहयोगी-संघ को अवश्यम्भावी बनाती है, और दूसरी, कुछ साम्राज्यवादियों को दूसरों के मुकाबले में खड़ा कर देती है..."•

लेकिन दोनों महाशक्तियों के बीच कट्टर अन्तर्विरोध व शत्रुतायें क्यों हैं? इसलिये, क्योंकि वे बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियां हैं, और उनमें से हर एक लोगों को गुलाम बनाने व उनका शोषण करने के लिये, नये प्रभाव क्षेत्र बनाने के लिये, और विश्व में आधिपत्य जमाने के लिये लड़ रही है। उनमें हर एक की भूख व लोभ ही उनके बीच झगड़ों व जबरदस्त टक्करों का कारण है। ये टक्करें ही उनके बीच आपसी युद्ध, और यहां तक कि खूनी विश्व युद्ध भी बन सकती हैं।

• वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २७, पृष्ठ ४१८ (अल्बेनिया संस्करण)

हम मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को, महाशक्तियों के बीच मौजूद अन्तर्विरोधों का, क्रान्ति और लोगों के मुक्ति संघर्षों के हितों में इस्तेमाल करना चाहिये ।

दुश्मन कैम्प में मौजूद अन्तर्विरोधों को काम में लाना क्रान्तिकारी नीति व युक्तियों का एक अंशभूत भाग है । स्टालिन ने, देश के अन्दर, या अन्तर्राष्ट्रीय अखाड़े में साम्राज्य-वादी राज्यों के बीच, मज़दूर वर्ग के दुश्मनों की श्रेणियों में मौजूद अन्तर्विरोधों व झगड़ों के काम में लाये जाने को सर्वहारा क्रान्ति की अप्रत्यक्ष संचिति बताया था । यह एक अच्छी प्रकार जाना गया ऐतिहासिक तथ्य है कि, लेनिन व स्टालिन के नेतृत्व में, सोवियट समाजवादी राज ने, अक्टूबर क्रान्ति के बाद के समय में, या दूसरे विश्व युद्ध के दौरान, अन्तर-साम्राज्य-वादी अन्तर्विरोधों पर ध्यान दिया व उनका इस्तेमाल किया था ।

लेकिन हर बार, क्रान्तिकारी शक्तियों व समाजवादी देशों द्वारा दुश्मनों के बीच अन्तर्विरोधों का मूल्यांकन व उनका इस्तेमाल, यह व्याख्या करने के लिये कि इन अन्तर्विरोधों और उनकी तीव्रता के स्तर को, और किसी एक अवधि या समय में शक्तियों के बीच अनुपात को किस तरह, किस रूप में व किस तरीके से काम में लाया जाये, एक यथार्थ मार्क्सवादी-लेनिनवादी विश्लेषण का नतीजा है । सिद्धान्त यह है कि इन अन्तर्विरोधों को हमेशा क्रान्ति, लोगों व उनकी स्वतन्त्रता के पक्ष में, व समाजवाद के उद्देश्य के पक्ष में, काम में लाया जाना चाहिये । दुश्मनों के बीच अन्तर्विरोधों को इस तरह काम में लाया जाना चाहिये जिससे क्रान्तिकारी व मुक्ति आन्दोलन का विकास हो और यह मज़बूत हो, कमज़ोर व मन्द नहीं, और जिससे लोगों के बीच, दुश्मनों व खासतौर से

मुख्य दुश्मनों के बारे में कोई भी भ्रम फैलाये बिना, इन दुश्मनों के खिलाफ़ संघर्ष में क्रान्तिकारी शक्तियां ज़्यादा से ज़्यादा सक्रिय रूप से गतिमान हों ।

दोनों महाशक्तियों, संयुक्त राज्य अमरीका व संशोधनवादी सोवियट संघ, के कार्यक्रम में सबसे पहले है क्रान्ति व समाजवाद का दमन । सिर्फ़ यही नहीं कि चीनी नेता इस तथ्य पर जोर नहीं देते हैं, जो तथ्य समाजवाद और पूंजीवाद के बीच कट्टर अन्तर्विरोध की अभिव्यक्ति है, बल्कि अभ्यास में वे इससे इनकार भी करते हैं । निस्सन्देह, मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के लिये यह भूलना अस्वीकार्य है कि महाशक्तियां, आधिपत्य के लिये उनके बीच संघर्ष के बावजूद भी, उनके बीच मौजूद अन्तर्विरोधों के बावजूद भी, स्वतन्त्रता मांगने वाले लोगों का दमन करने, और क्रान्ति का ध्वंस करने के अपने सामान्य उद्देश्य को कभी नहीं भूलती हैं, और यह कि इसके कारण भी आम व स्थानीय लड़ाइयां होती हैं । इस सवाल पर भी, चीनी संशोधनवादी सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ लड़ाई करने की अपनी जानी-पहचानी विचारपद्धति पर अड़े हुये हैं, जो कि उनके अनुसार ज़्यादा खतरनाक, ज़्यादा आक्रमणशील और ज़्यादा लड़ाकू है । वे संयुक्त राज्य अमरीका को दूसरा स्थान देते हैं, और जोर देते हैं कि संयुक्त राज्य अमरीका "यथापूर्व स्थिति चाहता है, और यह अवनति में है" । इससे चीनी संशोधनवादी इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ सहयोगी-संघ बनाया जा सकता है और बनाया जाना चाहिये ।

अमरीकी साम्राज्यवाद जरा भी कमज़ोर या दब्बू नहीं हुआ है, जैसा कि चीनी नेता दावा करते हैं । इसके विपरीत,

यह सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की तरह आक्रमणकारी, खूंख्वार व शक्तिशाली है । इस तथ्य से ज़रा भी फ़र्क नहीं पड़ता है कि अमरीकी साम्राज्यवाद की अब वह आधिपत्य रखने वाली स्थिति नहीं है, जो पहले थी । यह पूंजीवाद के विकास का द्वन्द्ववाद है और यह लेनिन के इस दावे की पुष्टि करता है कि साम्राज्यवाद, अवनति व पतन होता हुआ पूंजीवाद है । लेकिन, इससे शुरू होकर, एक या दूसरी महाशक्ति की वास्तविक आक्रमणकारी आर्थिक व सैनिक शक्ति का अल्पानुमान करने तक पहुँच जाना अस्वीकार्य है । इसी प्रकार, साम्राज्यवादियों की शक्ति के वास्तविक रूप से कमज़ोर होने व पतन से यह कहना कि एक साम्राज्यवाद कम खतरनाक व दूसरा ज़्यादा खतरनाक बन गया है, भी अस्वीकार्य है । दोनों साम्राज्यवादी महाशक्तियाँ खतरनाक हैं, क्योंकि इनमें से कोई भी उनके खिलाफ़ लड़ना कभी नहीं भूलता है जो कि इनकी कब्र खोदना चाहते हैं, और लोग ही महाशक्तियों की कब्र खोदना चाहते हैं ।

सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष की और अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़ लड़ाई को बन्द कर देने की हिमायत करने, जैसा कि चीनी नेता कर रहे हैं, का वास्तव में मतलब है मार्क्सवाद-लेनिनवाद के मूलभूत दावों को स्वीकार न करना । इस बात में कोई शक नहीं है कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ अन्त तक लड़ना पड़ेगा । लेकिन, अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़ भी इतनी ही कठोरता से न लड़ना अस्वीकार्य है, यह क्रान्ति के प्रति विश्वासघात है । अगर चीनी रास्ते का अनुसरण किया जाये, तो यह स्पष्ट नहीं होगा कि अमरीकी साम्राज्यवाद क्या है, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद क्या है, इन दोनों

महाशक्तियों के बीच अन्तर्विरोध क्यों हैं, और इन अन्तर्विरोधों का सार क्या है, उनके बीच हो रहे संघर्ष, जिसे हमें गहरा करना चाहिये, का आधार क्या है, हमें इन दोनों महाशक्तियों को विश्व युद्ध शुरू करने से रोकने के लिये क्या करना चाहिये, इत्यादि ।

अगर हम इन सवालों को सिद्धान्त में उचित तौर पर समझें, और अगर हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के आधार पर उन पर सही तौर से काम करें, तो दोनों महाशक्तियों और शासन करने वाले सरमायदार पूंजीवादी गुटों के खिलाफ़ लड़ने वाले लोगों की मदद करने व उनको समर्थन देने की नितान्त आवश्यकता हमें और भी स्पष्ट हो जाती है । पूंजीवादी दुनिया इस समय एक गम्भीर संकट से गुजर रही है । लेकिन इस संकट का इसकी पूरी गहराई में मूल्यांकन किया जाना चाहिये, और इसी प्रकार, पूंजीवादी दुनिया में मौजूद अन्तर्विरोधों का भी उनकी पूरी गम्भीरता में मूल्यांकन किया जाना चाहिये ।

चीनी संशोधनवादियों का उपयोगितावादी व मार्क्सवाद-विरोधी तर्क उन्हें सोवियट संघ को बिना किसी अन्तर्विरोध के विकसित हो रहे एक देश के रूप में, व बिना किसी कठिनाई के दूसरे संशोधनवादी देशों, जैसे कि पोलेण्ड, पूर्वी जर्मनी, हँगरी, चेकोस्लोवाकिया, रूमेनिया और बुलगेरिया पर शासन करने वाले एक साम्राज्यवाद के रूप में बताने के लिये बाध्य कर रहा है । वे सोवियट मण्डल को एक बढ़ते हुये मण्डल की तरह, और सोवियट संघ को सभी जगह अपने आधिपत्य को स्थापित करने पर तुला हुआ दुनिया में बाकी बचा एकमात्र साम्राज्यवाद बताते हैं ।

अगर हम पूर्वी यूरोप के संशोधनवादी देशों पर सोवियट

संघ के आधिपत्य की बात करते हैं, तो यह सबसे पहले इन देशों पर सोवियट सशस्त्र सेनाओं द्वारा सैनिक कब्ज़ा किये जाने में, और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद द्वारा उनकी सम्पत्ति की क्रूर निस्संकोच लूट में अभिव्यक्त है, जो कि इन देशों को सोवियट गणतन्त्रों की प्रणाली में मिलाने की कोशिश कर रहा है। स्वभावतः संशोधनवादी सोवियट संघ को अपनी इन कोशिशों में विरोध का सामना करना पड़ रहा है। वह समय अवश्य आयेगा जब यह विरोध और ये अन्तर्विरोध, जो कि संशोधनवादी पोटली में छिपे रूप में मौजूद हैं, और भी तीव्र हो जायेंगे व फूट पड़ेंगे।

हमने सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद को हमलावर बताया है, क्योंकि इसने चेकोस्लोवाकिया पर हमला व कब्ज़ा किया, इसने अफ्रीका व दूसरी जगहों पर दखल दिया, और इसने हमलों की दूसरी क्रियाओं की योजनायें बनाई हैं व उनके लिये तैयारी कर रहा है। लेकिन क्या यह कहा जा सकता है कि अमरीकी साम्राज्यवाद ने हमले की कम कार्यवाहियां की हैं, या वह सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद से कम हमलावर है?

चीनी नेतृत्व कोरिया पर संयुक्त राज्य अमरीका के हमले को भूल गया है, यह वियतनाम, कम्बोडिया व लाओस के खिलाफ़ लम्बी व खूंख्वार लड़ाई को भूल गया है, यह मिडिल ईस्ट में इसके द्वारा शुरू की गई लड़ाई को, व मध्य अमरीका के गण-तन्त्रों में इसके दखल, इत्यादि को भूल गया है। इसने बही-खाते से इन सबको मिटा दिया है, और यह निष्कर्ष निकाला है कि अमरीकी साम्राज्यवाद अभिकथित रूप से दब्बू बन गया है। वह भूल जाता है कि अमरीकी साम्राज्यवाद ने अपने पंजों को विश्व भर में फैला दिया है, सभी जगह अपने सैनिक आस्थानों को स्थापित कर लिया है, और उनका विकास व

उन्हें मजबूत कर रहा है। माओ त्से-तुङ और चाऊ एन-लाई यह भूल गये थे,व चीनी संशोधनवादी नेतृत्व इसे भूल जाता है जब वह हमसे कहता है कि अमरीकी साम्राज्यवाद को अभि-कथित रूप से कमज़ोर कर दिया गया है व दब्बू बना दिया गया है,और,इस कारण,उसके साथ सहयोगी-संघ बनाया जा सकता है। इस तरह काम करने का मतलब है आम तौर पर साम्राज्यवाद के खिलाफ़ और खास तौर से अमरीकी साम्राज्य-वाद के खिलाफ़,और यही नहीं,सोवियट सामाजिक-साम्राज्य-वाद के खिलाफ़ भी,जिसके खिलाफ़ कठोरता से लड़ने का चीन दावा करता है,संघर्ष को मिटा देने की कोशिश करना।

यह सच है कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद प्रसार के लिये बहुत भूखा है। अंगोला और इथोपिया में इसके दखल, भूमध्य सागर और अनेक अरब देशों में आस्थान स्थापित करने, लाल समुद्र के सकरे भागों पर कब्ज़ा करने या हिन्द महा-सागर में सैनिक आस्थानों को स्थापित करने की इसकी कोशिशें,यह सभी स्पष्ट साम्राज्यवादी क्रियायें हैं। लेकिन सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की ये स्थितियां उस हद तक दृढ़ नहीं हो पायी हैं जिस हद तक अमरीकी साम्राज्यवाद ने अपनी नव-उपनिवेशवादी आर्थिक, सामरिक व सैनिक स्थितियों को दूसरे देशों में दृढ़ कर लिया है। ऐसा दिखाई देता है कि ठीक इसी स्थिति का चीनी नेतृत्व अल्पानुमान करता है,लेकिन वास्तव में वह इसे मानता है व इसका समर्थन करता है।

इसके साथ-साथ,चीनी संशोधनवादी यह देखे बिना नहीं रह सकते हैं कि, पश्चिमी यूरोप के पूंजीवादी राज्यों और अमरीकी साम्राज्यवाद के बीच अन्तर्विरोधों के बावजूद भी, उनके बीच निकट सम्बन्ध हैं,और वे राजनीतिक, सैनिक व

आर्थिक सहयोगी-संघों, जैसे कि नेटो, यूरोपीयन कामन मार्केट इत्यादि के जरिये जुड़े हुये हैं । चीनी नेतृत्व के लिये यह न जानना नामुमकिन है कि अमरीकी पूंजी, पश्चिम यूरोप के देशों की अर्थव्यवस्थाओं में ही नहीं, बल्कि पूर्वी यूरोप व सोवियट संघ में भी, गहरी तौर पर प्रवेश कर चुकी है । चीनी नेतृत्व अच्छी तरह से जानता है कि संयुक्त राज्य अमरीका ने दुनिया के विभिन्न देशों में बीसियों अरबों डालर का विनि-योजन किया है और विनियोजन करना जारी रख रहा है । तब उसे क्या उम्मीद है ? क्या वह उम्मीद कर रहा है कि पश्चिमी पूंजीवादी देश, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ अपने सभी अन्तर्विरोधों के कारण, अपने ही मण्डल को कमजोर करने के लिये, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ में उनकी जो सशस्त्र शक्ति है, जो आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध हैं, उनको त्याग देने के लिये, और अपने आपको सोवि-यट सामाजिक-साम्राज्यवाद के सामने खुले छोड़ देने के लिये चीन के हित में संयुक्त राज्य अमरीका के साथ अपने सम्बन्ध तोड़ देगा ? यह चीनी विदेशी नीति का बेतुकापन है ।

जैसा कि हमने ज़ोर दिया है, इसमें कोई शक नहीं है कि क्रान्तिकारी व मुक्ति शक्तियों को दोनों महाशक्तियों और दूसरे साम्राज्यवादी व पूंजीवादी-संशोधनवादी देशों के बीच मौजूद अन्तर्विरोधों का इस्तेमाल करना चाहिये । लेकिन यह ज़रूरी है कि इस विषय को ठीक से समझा जाये, और इसे हमेशा ही क्रान्ति के हित में होने के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिये, और इन हितों को प्राथमिकता देनी चाहिये, साम्राज्य-वादी शक्तियों व दलों, पूंजीवादी-संशोधनवादी राज्यों आदि, के बीच अन्तर्विरोधों को काम में लाना कभी भी, स्वयं अपने में ही, मज़दूर वर्ग व मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्रान्ति-

कारियों के लिये उद्देश्य नहीं हो सकता है ।

साम्राज्यवादी देशों और दोनों महाशक्तियों के बीच अन्तर्विरोधों को काम में लाने का मतलब है उनके बीच दरार को गहरा करना, इन देशों की क्रान्तिकारी व देशभक्त शक्तियों को अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का विरोध करने के लिये बढ़ावा देना, जो इन लोगों को आर्थिक, राजनीतिक व सैनिक तौर पर अधीन करना, और इसका शोषण करना व इनका राष्ट्रीय अभिज्ञान इनकार करना, आदि, चाहते हैं ।

लेकिन चीन क्या कर रहा है ?

चीनी नीति पश्चिमी पूंजीवादी देशों और संयुक्त राज्य अमरीका के बीच "पुण्य सहबंध" की हिमायत करती है । वास्तव में यह इससे भी आगे जाती है । यह पश्चिमी यूरोप के देशों के सर्वहारा और इन देशों के प्रतिक्रियावादी सरमायदारों के बीच सहयोगी-संघ की हिमायत करती है । इसमें क्रान्तिकारी मार्क्सवादी-लेनिनवादी कार्यदिशा कहां है ? अन्तर्विरोधों को काम में लाने की कार्यदिशा कहां है ? क्या चीनी नेता सोचते हैं कि वे ऐसी नीति से, अपनी ही इच्छा के अनुसार, इस मण्डल को सोवियट संघ के खिलाफ़ मजबूत कर सकेंगे ? यह कल्पनालोक है जिसका वे स्वप्न देख रहे हैं, लेकिन यह उनका एक अभौतिकवादी दृष्टिकोण है ।

संयुक्त राज्य अमरीका, पश्चिमी पूंजीवादी देश, और इनके साथ-साथ, जापान व कनाडा भी, इतने पागल नहीं हैं जितना चीनी नेता उन्हें समझते हैं, उनकी नीति इतनी सरल नहीं है जितनी चीनी नीति है । अपनी ओर से वे बहुत अच्छी तरह से जानते हैं कि चीन व सोवियट संघ के बीच मौजूद अन्तर-

विरोधों को कैसे काम में लाया जाये। वे जानते हैं कि बड़ी हमलावर शक्ति, सोवियट संघ, को कमज़ोर करने के लिये इन अन्तर्विरोधों को कैसे काम में लाया जाये। इसके लिये वे काफ़ी समय से लड़ रहे हैं, और यह नहीं कहा जा सकता है कि उन्होंने इसमें कोई सफलता प्राप्त नहीं की हैं। संयुक्त राज्य अमरीका और दूसरे सभी पूंजीवादी राज्य, पूर्वी यूरोप के संशोधनवादी देशों और क्रेमलिन के बीच अन्तर्विरोधों को उकसा रहे हैं।

अब चीन ने भी, अमरीका की इस पुरानी नीति को अभ्यास में लाना शुरू कर दिया है। हुआ कुआ-फ़ेंग की रुमानिया व युगोस्लाविया की यात्रा इसी मतलब के लिये थी। लेकिन यूरोप में चीन का प्रवेश, उसके द्वारा अन्तर्विरोधों को भड़काना, और खास तौर पर, इसका बाल्कन में अपने लिये एक अनुकूल क्रियाछेत्र बनाने की कोशिश करना, यह सभी लोगों और क्रान्ति के हित में नहीं किया गया है। ये, युद्ध भड़काने की चीनी नीति का भाग है जिसका उद्देश्य है कि यूरोप के लोग एक दूसरे को मार डालें और साम्राज्यवादी युद्ध के लिये युद्ध-बलि बन जायें।

बहुत समय से "प्रावदा", बिना किसी परिणाम के, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ, वाग्युद्ध में लगा हुआ है, और इस पर तेज़ी के साथ शस्त्रों को इकट्ठा करने का आरोप लगा रहा है। उसका सारोकार संयुक्त राज्य अमरीका की इस क्रिया की आलोचना करने से नहीं है, क्योंकि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी भी यही कर रहे हैं। समस्या यह है कि अमरीकी सैनिक छमता में बढ़ोत्तरी सोवियट लड़ाकू शक्ति को अपेक्षाकृत कमज़ोर कर देती है और सोवियट संघ को अपनी सैनिक छमता और हमलावर शक्ति का संतुलन बनाये रखने के

लिये क्रमशः संयुक्त राज्य अमरीका का अनुसरण करने के लिये बाध्य करती है। लेकिन शस्त्रों की होड़ में अमरीकी साम्राज्यवाद की बराबरी करना सोवियट संघ की अर्थव्यवस्था को कमज़ोर कर देता है, क्योंकि ऐसा करने का मतलब है अधिक मात्रा में सामान,धन व लोगों को अर्थव्यवस्था से निकालकर सेना में लगाना । यही ब्रेज़नेव व उसके गुट की चिन्ता है ।

लेकिन आश्चर्यजनक बात यह है कि,अपने अखबार "रेंन्मिन रिबाओ" के जरिये,चीनी संशोधनवादी निसंकोच अमरीकी साम्राज्यवाद का पक्ष लेते हैं,और संयुक्त राज्य अमरीका से यह आग्रह करने के लिये लेख पर लेख छाप रहे हैं कि इसे शस्त्रों की होड़ में अपने प्रथम स्थान को नहीं खोना चाहिये,बल्कि अपनी सैनिक छमता को निरन्तर बढ़ाना चाहिये। इस तरह, "रेंन्मिन रिबाओ" के अनुसार, संयुक्त राज्य अमरीका नहीं बल्कि सिर्फ़ सोवियट संघ ही अपने आप को सशस्त्र कर रहा है । अमरीकी साम्राज्यवादियों का ऐसा हिमायती, जैसा कि चीनी संशोधनवादी नेतृत्व बनता जा रहा है, किसी दूसरे देश में नहीं मिलेगा । सरमायदार कम से कम, निस्सन्देह अपने मतलब के लिये, विकसित हो रही परिस्थितियों का अनुमान लगाने के लिये, वास्तविकताओं की आलोचना व व्याख्या करते समय किसी प्रकार के अनुपात को बनाये रखने की कोशिश तो करते हैं । लेकिन चीनी नेता की तरह काम करना बिल्कुल अभूतपूर्व बात है ।

तेंग सियाओ-पिंग के साथ अपनी मीटिंग में अमरीकी राज विभाग के सचीव,वेन्स,ने उससे कहा कि "संयुक्त राज्य अमरीका की सैनिक छमता सोवियट संघ से ज़्यादा है" । लेकिन उस समय चीन की यात्रा करने वाले अमरीकी सम्वाददाताओं के एक बड़े दल को तेंग सियाओ-पिंग ने यह कहा कि वेन्स के

ब्यान पर "पीकिंग विश्वास नहीं करता है", और, "सोवियट संघ, संयुक्त राज्य अमरीका से कहीं आगे है" । "जो सुनना न चाहे उससे ज़्यादा कोई बहरा नहीं है", जैसा कि कहा जाता है ।

अभिकथित रूप से मार्क्सवादी दावे की तरह पेश किये गये इस चीनी दावे को स्वीकार नहीं किया जा सकता है, जो इस तथ्य पर शक पैदा करता है कि सिर्फ़ एक ही नहीं बल्कि दोनों साम्राज्यवादी महाशक्तियां दुनिया का पुनः विभाजन करने, नये उपनिवेशों को बनाने, लोगों पर अत्याचार करने व अपने बाज़ारों का विस्तार करने की कोशिश कर रही है ।

इस सवाल का उठाना ही कि एक साम्राज्यवाद ताकतवर है व दूसरा कमज़ोर, एक हमलावर है व दूसरा दब्बू, मार्क्सवाद-लेनिनवाद-विरोधी है । सवाल को इस तरीके से पेश करना एक ऐसे प्रतिक्रियावादी विचार को प्रकट करता है जो चीनी संशोधनवादियों को, संयुक्त राज्य अमरीका, नेटो, यूरोपियन कामन मार्केट, स्पेन के राजा, ईरान के शाह, चिली के पिनोशे, व सभी तानाशाहों के साथ सहयोगी संघ बनाने की ओर ले जाता है । चीनी नीति, जो कि अमरीकी साम्राज्यवाद के लिये हानिकारक नहीं है, बैंकों व हमारे समय के सबसे बड़े पूंजीपतियों के लिये हानिकारक नहीं है, एक दम सरमायदारी सुधारवादी निराशजनक नीति है, और बहुत ही मूर्खतापूर्ण है ।

चीनी नेता ये देखे बिना नहीं रह सकते हैं कि अमरीकी वित्त पूंजी, ट्रस्ट व एकाधिकार किसी भी तरह से विदेश में अपने विनियोजनों को कम नहीं कर रहे हैं, कि वे शोषण करने व गुलाम बनाने की अपनी महत्वाकांक्षाओं को त्याग नहीं रहे हैं, बल्कि इसके विपरीत, वे मज़बूत होते जा रहे हैं और विश्व शक्तियों के अनुपात को अपने ही पक्ष में बदलने की

कोशिश कर रहे हैं ।

सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी भी यही कर रहे हैं । उनकी, सोवियट संघ में मौजूद बड़े ट्रस्टों की, आर्थिक नीति का उद्देश्य सभी तरीकों से उपाश्रित देशों व दूसरे देशों का खून चूसना है । उन्होंने एक नया भेष धारण कर लिया है और अपने आपको एक नये नाम से पेश करते हैं, जबकि, वे भी, शक्तियों के अनुपात को, पहले अभिकथित रूप से समझौतों व समझौता-वार्ताओं के जरिये, लेकिन, समय आने पर, ताकत, यानि कि युद्ध के जरिये, अपने पक्ष में बदलने की कोशिश करते हैं ।

अपने इस तर्क से कि संयुक्त राज्य अमरीका "यथापूर्व स्थिति" बनाये रखना चाहता है, कि यह "अवनति में है", और यह कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद "ज्यादा खतरनाक, ज्यादा हमलावर, ज्यादा झगड़ालू" आदि है, चीनी संशोधनवादी यह सिद्ध करना चाहते हैं कि संयुक्त राज्य अमरीका सोवियट संघ के खिलाफ़ चीन का सहयोगी हो सकता है और इसे ऐसा होना चाहिये । जिन विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों को वे बढ़ा रहे हैं, और संयुक्त राज्य अमरीका के युद्ध बजट व और ज्यादा से ज्यादा शस्त्रीकरण को वे जो खुला आम समर्थन दे रहे हैं, ये सब इसकी पुष्टि करते हैं ।

चीनी संशोधनवादी यह उपदेश देते हैं कि वर्तमान परिस्थिति ऐसी है जिसमें मार्क्सवादी-लेनिनवादी, क्रान्तिकारी व लोग, अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ समझौता कर सकते हैं व उस पर निर्भर कर सकते हैं । हमारी पार्टी खूंख्वार अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ किसी भी तरह के समझौते के खिलाफ़ है, क्योंकि ऐसा समझौता क्रान्ति और लोगों की मुक्ति के हित में नहीं होगा । हम अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष में रहे हैं, अभी भी, और आगे भी रहेंगे जब तक इसका पूर्ण सर्वनाश नहीं हो जायेगा । इसी प्रकार, हम सोवियट सामा-

जिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष में रहे हैं, और इसके अन्त तक रहेंगे ।

अमरीकी साम्राज्यवाद को जो समर्थन चीन दे रहा है, वह क्रान्ति और लोगों के पक्ष में बिल्कुल भी नहीं है, बल्कि प्रतिक्रान्ति के पक्ष में है । अपनी प्रतिक्रियावादी राजनीतिक व विचारधारात्मक कार्यदिशा से चीनी नेतृत्व दुनिया के लोगों को अमरीकी साम्राज्यवाद की जकड़ में छोड़ देता है । वह चाहता है कि लोग विद्रोह न करें, विनीत बने रहें, और यहाँ तक कि दूसरी महाशक्ति के खिलाफ़ अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ एक हो जायें, जो महाशक्ति संयुक्त राज्य अमरीका से लोगों के मेहनत व पसीने की कीमत पर बनाई गई सम्पत्ति छीन लेना चाहती है । चीनी नेतृत्व यूरोपियन कामन मार्केट में शामिल यूरोप के पूंजीवादी देशों को एक होने की सलाह देता है । यह यूरोप के पूंजीवादी संघ में लोगों को भी शामिल करता है । इस विचारनीति का मतलब है : चुप रहो, क्रान्ति के बारे में और बात न करो, सर्वहारा अधिनायकत्व के बारे में और बात न करो, बल्कि अपने आपको ट्रस्टों, पूंजीपतियों की सेवा में रख दो, और उनके साथ मिलकर सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का सामना करने के लिये एक और बड़ी आर्थिक व सैनिक शक्ति को बनाओ ।

यूरोपियन कामन मार्केट, जिसे चीन समर्थन देता है और जिसे वह आर्थिक तौर पर मज़बूत कर रहा है, और कुछ नहीं, बल्कि पश्चिमी यूरोप के एकाधिकारी ट्रस्टों के अधिकतम मुनाफ़ों की रक्षा करने और विकसित औद्योगिकृत राज्यों का गुट बनाने का एक साधन है, जिसके जरिये अमीर वर्ग, जैसा कि लेनिन ने बताया है, अफ्रीका, एशिया, आदि से भारी मात्रा में कर वसूल करते हैं । इन पूंजीवादी राज्यों को सम-

र्थन देकर, चीनी नेतृत्व, वास्तव में, मुट्ठीभर पूंजीपतियों की पराजीविता को समर्थन दे रहा है, जिसकी कीमत इन राज्यों के लोग, और इसके साथ-साथ इनकी जकड़ में फंसे लोग चुकाते हैं ।

चीनी संशोधनवादियों का "तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त, जिसके जरिये वे अपनी प्रतिक्रान्तिकारी विचारपद्धतियों को उचित ठहराने की कोशिश करते हैं, और कुछ नहीं बल्कि मज़दूर आन्दोलन के बीच मौकापरस्ती का एक रूप है, जो साम्राज्यवाद को लोगों की कीमत पर बाज़ार बनाने और मुनाफ़े चूसने के लिये मदद देता है, ताकि मौकापरस्तों को भी पूंजीवादियों द्वारा फेंके गये कुछ टुकड़े मिलें ।

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि चीनी नेतृत्व पूंजीवादी शक्तियों व राज्यों की रक्षा कर रहा है, और क्रान्तिकारी शक्तियों व सर्वहारा के उठ खड़े होने, और अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, "संयुक्त यूरोप", यूरोपियन कामन मार्केट और कामीकान, एक शब्द में, साम्राज्यवादी प्रणाली के सभी सहारों, जो कि एक विशाल दानव की तरह लोगों का खून चूसते हैं, का ध्वंस करने का समर्थन नहीं कर रहा है ।

हालांकि यह विकसित पूंजीवादी राज्यों, जैसे कि पश्चिमी जर्मनी, बर्तानिया, जापान, फ्रांस, इटली, आदि, को "दूसरी दुनिया" में शामिल करता है, और इसके बावजूद भी कि सैद्धान्तिक स्तर पर उनके "द्वैध" स्वभाव के बारे में बातें करता है, चीनी संशोधनवादी नेतृत्व इन राज्यों को क्रान्ति का दुश्मन नहीं समझता है । इसके विपरीत, चीनी संशोधनवादियों ने इस तथ्य की उपेक्षा करना, अभिकथित रूप से सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ इन राज्यों का इस्तेमाल करने के लिये, इनके साथ खुले समझौते करना सुविधाजनक समझा ।

चीनी नेतृत्व, जिसकी आँखों पर उसकी उपयोगितावादी व मार्क्सवाद--विरोधी नीति के परिणामस्वरूप पर्दा पड़ गया है, यह "भूल जाता" है कि पश्चिमी जर्मनी, बर्तानिया, जापान, फ्रांस, इटली, और इनकी तरह के दूसरे राज्य साम्राज्यवादी राज्य रहे हैं और अभी भी हैं, और यह कि गुलाम बनाने वाली व उपनिवेशवादी प्रवृत्तियाँ, जो कि परम्परागत रूप से इनकी विशेषतायें रही हैं, खत्म नहीं की गई हैं, और वैसे खत्म भी नहीं की जा सकती हैं । यह सच है कि दूसरे विश्वयुद्ध के बाद ये साम्राज्यवादी शक्तियाँ कमज़ोर हो गई हैं, और अत्यधिक कमज़ोर हो गई हैं, और उनकी पहले की स्थितियाँ अमरीकी साम्राज्यवाद के पक्ष में बदल चुकी हैं । इस पर भी, न तो फ्रांस ने, न बर्तानिया ने और न ही उनमें से किसी ने भी एशिया, अफ्रीका व लेटिन अमरीका के देशों में अपने बाज़ारों की रक्षा करने या दूसरे नये बाज़ारों को प्राप्त करने के अपने संघर्ष को छोड़ा है ।

इन पूंजीवादी व साम्राज्यवादी राज्यों, जो कि अमरीकी साम्राज्यवाद के जितना शक्तिशाली नहीं हैं, के बीच अन्तर-विरोध हैं, लेकिन इसी के साथ उनमें एक दूसरे से समझौता करने की प्रवृत्ति भी है ।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद, अमरीकी साम्राज्यवाद ने यूरोप के अपने पुराने, भूतपूर्व सहयोगियों को पुरानी स्थिति में आने के लिये मदद दी, और अमरीकी एकाधिकारों ने अपने आपको इन भूतपूर्व सहयोगियों के एकाधिकारों के साथ सामान्य हितों के जाल में जोड़ दिया । लेकिन उनके बीच अन्तर्विरोध हमेशा ही रहे हैं, क्योंकि उनमें से हर एक बाज़ारों पर एकाधिपत्य जमाने, कच्चे पदार्थों का आयात करने व औद्योगिकृत माल का निर्यात करने के लिये खुली छुट पाने की कोशिश करता है ।

इस विषय में भी, अन्तर्राष्ट्रीय वास्तविकता पूंजी की दो वस्तुगत प्रवृत्तियों के बारे में लेनिन के दावे की सत्यता की पुष्टि करती है ।

इसी प्रकार यह भी सच है कि इन पूंजीवादी राज्यों के सिर्फ़ अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ ही नहीं बल्कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के साथ भी अन्तर्विरोध हैं । सवाल उठता है : इन अन्तर्विरोधों को कैसे काम में लाया जाये ? अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधों को कभी भी उस तरीके से काम में नहीं लाया जा सकता है जिसकी चीनी संशोधनवादी हिमायत करते हैं । हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी विभिन्न प्रतिक्रियावादियों, जर्मनी में स्ट्रास या श्मिट के गुट, व बर्तानवी कनज़रवेटिव या लेबराइट नेताओं की रक्षा सिर्फ़ इसलिये नहीं कर सकते हैं कि उनके और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के बीच अन्तर्विरोध हैं । अगर हम ऐसा करें और चीनी संशोधनवादियों के इन उपदेशों, कि "यूरोप के पूंजीवादी राज्यों को कामन मार्केट में शामिल हो जाना चाहिये", और "संयुक्त यूरोप" को मज़बूत किया जाना चाहिये, जिससे कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का सामना किया जा सके, का समर्थन करें, तो उसका मतलब होगा कि हमें यह स्वीकार है कि इन देशों के सर्वहारा की गुलामी की जंजीरों को तोड़ने के लिये संघर्ष व कोशिशों को त्याग दिया जाये, व इन देशों में क्रान्ति के भविष्य का अन्तर्ध्वंस कर दिया जाये ।

अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ सिद्धान्तहीन समझौता करके, चीनी संशोधनवादियों ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद व क्रान्ति के प्रति विश्वासघात किया है । <u>मार्क्सवादी-लेनिनवादी</u>

अन्तर्विरोधों और समझौतों पर मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के दावे की सही अर्थ में व्याख्या करते हैं । चीनी संशोधनवादी इस दावे की इस तरह व्याख्या करते हैं जो सच से बिल्कुल विपरीत है ।

लेनिनवादी रास्ते का अनुसरण करते हुये, हमारी पार्टी हर किस्म के समझौते के खिलाफ़ नहीं है, लेकिन विश्वासघाती समझौतों के खिलाफ़ है । एक समझौता किया जा सकता है अगर यह ज़रूरी हो व वर्ग व क्रान्ति के हितों में हो, लेकिन हमेशा यह ध्यान में रखा जाना चाहिये कि इससे मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर आधारित नीति व इसके प्रति वफ़ादारी बनी रहे और वर्ग व क्रान्ति के हितों को नुकसान न पहुँचे ।

समझौतों के प्रति रुख के बारे में, अन्य बातों के अलावा लेनिन ने बताया है :

"क्या सर्वहारा क्रान्ति के हिमायती के लिये पूँजीपतियों या पूँजीपति वर्ग के साथ समझौता करना स्वीकार्य है ?... इस आम सवाल का नकारात्मक तरीके से जवाब देना स्पष्टतया गलत होगा । निस्सन्देह, सर्वहारा क्रान्ति के हिमायती पूँजीपतियों के साथ समझौते या सन्धि कर सकते हैं । हर बात इस पर निर्भर करती है कि किस किस्म का समझौता है और यह किन परिस्थितियों में किया गया है । ठीक यहीं और इसी बात में अन्तर किया जा सकता है व किया जाना चाहिये कि सर्वहारा क्रान्ति के दृष्टिकोण से कौन सा समझौता उचित है व कौन सा समझौता (इसी दृष्टिकोण से) विश्वासघात व धोखा है ।"*

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३०, पृष्ठ ५६२-५६३ (अल्बेनिया संस्करण)

लेनिन ने आगे बताया :

"निष्कर्ष स्पष्ट है : लुटेरों के साथ किसी भी तरह से समझौते या सन्धि को पूरी तरह से असंगत बताना उतना ही बेतुका है जितना कि लूट में भाग लेने को इस अमूर्त दावे के साथ उचित ठहराना कि, आम तौर पर बात करते हुये चोरों के साथ समझौते कभी-कभी स्वीकार्य व ज़रूरी होते हैं ।"**

लेनिन ने यह भी बताया :

"एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी का कार्य यह घोषित करना नहीं है कि हर किस्म के समझौते से इनकार करना नामुमकिन है, बल्कि इसका कार्य यह जानना है कि, इन समझौतों के बावजूद भी, क्योंकि ये अनिवार्य हैं, अपने सिद्धान्तों के प्रति, अपने वर्ग के प्रति, अपने क्रान्तिकारी कार्य के प्रति, क्रान्ति के लिये तैयारी करने और क्रान्ति में विजय प्राप्त करने के लिये लोगों के जनसमुदाय को शिक्षित करने के काम के प्रति वफ़ादार कैसे बना रहा जाये ।"***

लेनिन की इन शिक्षाओं का अनुसरण करके ही समझौते स्वीकार्य हो सकते हैं । लेकिन अमरीकी साम्राज्यवाद या सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के साथ समझौता किस तरह समाजवाद व विश्व क्रान्ति के हित में हो सकता है, जब कि यह जाना जाता है कि ये दोनों महाशक्तियां लोगों व क्रान्ति के सबसे खूंख्वार दुश्मन हैं ? यह समझौता सिर्फ़ अनावश्यक ही

** वही, पृष्ठ ५६५

*** वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २५, पृष्ठ ३५९-३६० (अल्बेनिया संस्करण)

नहीं,बल्कि,इसके विपरीत,यह क्रान्ति के हितों को खतरे में भी डालता है । ऐसे महत्वपूर्ण सवालों पर समझौता करने, या सिद्धान्तों का उल्लंघन करने का मतलब है मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति विश्वासघात करना ।

अगर माओ त्से-तुङ व दूसरे चीनी नेताओं को,अन्तर्विरोधों के बारे में "सिद्धान्त में" बहुत कुछ कहना था और अभी भी कहना है, तो उन्हें सिर्फ अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधों को काम में लाने व साम्राज्यवादियों के साथ समझौतों के बारे में ही नहीं बोलना चाहिये,बल्कि सबसे पहले,उन्हें हमारे युग के मूल अन्तर्विरोधों, सर्वहारा और सरमायदारों के बीच अन्तर्विरोधों,एक ओर उत्पीड़ित लोगों व देशों,और दूसरी ओर दोनों महाशक्तियां व सम्पूर्ण साम्राज्यवाद के बीच अन्तर्विरोधों,और समाजवाद व पूंजीवाद के बीच अन्तर्विरोधों की बात करनी चाहिये । लेकिन चीनी नेता इन अन्तर्विरोधों के बारे में चुप हैं,जो कि वस्तुगत रूप से मौजूद हैं और यों ही मिटाये नहीं जा सकते । वे सिर्फ एक ही अन्तर्विरोध की बात करते हैं,जो कि,उनके अनुसार सम्पूर्ण दुनिया और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के बीच है,और इस प्रकार वे अमरीकी साम्राज्यवाद व सभी विश्व पूंजीवाद के साथ अपने सिद्धान्तहीन समझौते को उचित ठहराने की कोशिश कर रहे हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी वर्ग विश्लेषण व तथ्य यह दिखाते हैं कि साम्राज्यवादी शक्तियों व दलों के बीच अन्तर्विरोधों और मतभेदों की मौजूदगी, किसी भी तरह, पूंजीवादी व साम्राज्यवादी देशों में श्रम व पूंजी के बीच अन्तर्विरोधों,या उत्पीड़ित लोगों और उनके साम्राज्यवादी अत्याचारियों के बीच अन्तर्विरोधों को लांघती नहीं है या इन्हें कम महत्व के

स्थान पर नहीं रखती है । ठीक यही अन्तर्विरोध, सर्वहारा और सरमायदारों के बीच, उत्पीड़ित लोगों और साम्राज्यवाद के बीच, व समाजवाद और पूंजीवाद के बीच अन्तर्विरोध सबसे गहरे हैं, और ये स्थायी, व कट्टर अन्तर्विरोध हैं । इसलिये, अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधों या पूंजीवादी व संशोधनवादी राज्यों के बीच अन्तर्विरोधों से फ़ायदा उठाना तभी अर्थपूर्ण है जब इससे सरमायदारी, साम्राज्यवाद व प्रतिक्रिया के खिलाफ़ क्रान्तिकारी व मुक्ति आन्दोलन में शक्तिशाली विकास के लिये सबसे अनुकूल स्थितियां बनती हैं । इसलिये, साम्राज्यवाद और सरमायदारों के प्रति सर्वहारा व लोगों के बीच कोई भ्रम पैदा किये बिना इन अन्तर्विरोधों से फ़ायदा उठाना चाहिये । यह ज़रूरी है कि लेनिन की शिक्षायें मज़दूरों व लोगों को स्पष्ट की जायें, उन्हें इसके प्रति जागरूक बनाया जाये कि अत्याचारियों व शोषकों के प्रति एक कट्टर रुख ही, साम्राज्यवाद व सरमायदारों के खिलाफ़ उनका दृढ़ संघर्ष ही, क्रान्ति ही, उन्हें सच्ची सामाजिक व राष्ट्रीय स्वतन्त्रता सुनिश्चित करेगी ।

दुश्मनों के बीच अन्तर्विरोधों को काम में लाना क्रान्ति का मूल कार्य नहीं हो सकता है, और इसे सरमायदारों, प्रतिक्रियावादी व तानाशाही अधिनायकत्व, व साम्राज्यवादी अत्याचारियों का अन्तर्ध्वंस करने के संघर्ष के विरोध में नहीं रखा जा सकता है ।

इस सवाल पर मार्क्सवादी-लेनिनवादियों की विचारनीति स्पष्ट है । वे लोगों, सर्वहारा, व जनसमुदाय से, अमरीकी साम्राज्यवादियों व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादियों की आधिपत्य जमाने की, और अत्याचारी, हमलावर, व युद्धोत्तेजक योजनाओं को चकनाचूर करने, और पश्चिम व पूर्व दोनों में

ही प्रतिक्रियावादी सरमायदारों व उनके अधिनायकत्व का अन्तर्ध्वंस करने के लिये उठ खड़े होने की माँग करते हैं ।

जहाँ तक हमारे समाजवादी राज्य का सवाल है, इसने हमेशा ही दुश्मन कैम्प के बीच अन्तर्विरोधों का इस्तेमाल किया है । इनका इस्तेमाल करने में हमारी पार्टी, एक समाजवादी देश और साम्राज्यवादी व संशोधनवादी देशों के बीच मौजूद अन्तर्विरोधों के सही मूल्यांकन, और अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधों के सही मूल्यांकन से आगे बढ़ती है ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद हमें सिखाता है कि एक समाजवादी देश और पूंजीवादी व संशोधनवादी देशों के बीच अन्तर्विरोध, जो कि पूर्णतया विरोधी हितों वाले दो वर्गों, मज़दूर वर्ग और सरमायदार, के बीच अन्तर्विरोधों को प्रकट करते हैं, स्थायी, मूल व कट्टर अन्तर्विरोध हैं । वे, विश्व स्तर पर पूंजीवाद से समाजवाद में अवस्थापरिवर्तन के सम्पूर्ण ऐतिहासिक युग के दौरान हमेशा मौजूद रहते हैं । दूसरी ओर, साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच अन्तर्विरोध, शोषकों के बीच, सामान्य मूल हितों वाले वर्गों के बीच अन्तर्विरोधों को प्रकट करते हैं । इसलिये, साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच अन्तर्विरोध व मतभेद कितने भी तीव्र क्यों न हों, विश्व साम्राज्यवाद या इसके विभिन्न भागों द्वारा समाजवादी देश के खिलाफ़ हमलावर क्रियाओं का खतरा, हर समय स्थायी व सच्चा खतरा बना रहता है । साम्राज्यवादियों के बीच मतभेद, अन्तर-साम्राज्यवादी झगड़े व टक्करें, अधिक से अधिक, समाजवादी देश के खिलाफ़ साम्राज्यवाद की क्रियाओं के खतरे को कम या अस्थायी रूप से स्थगित कर देते हैं, इसलिये जब कि दुश्मन की श्रेणियों में इन अन्तर्विरोधों का इस्तेमाल करना इस देश के हित में है, ये अन्तर्विरोध इस खतरे को मिटा नहीं सकते हैं । इस विषय

पर लेनिन ने बहुत ही दृढ़तापूर्वक ज़ोर देते हुये बताया :

"...सोवियट गणतन्त्र का साम्राज्यवादी राज्यों के साथ-साथ बहुत समय तक बना रहना सोचा भी नहीं जा सकता है । एक या दूसरा आखिर में विजयी होगा । और इस अन्त के आ पड़ने से पहले, सोवियट गणतन्त्र और सरमायदारी राज्यों के बीच अनेक भीषण टक्करें अविश्यम्भावी होंगी ।"*

लेनिन की ये शिक्षायें आज भी पूरी तरह सत्य हैं । अनेकों ऐतिहासिक घटनाओं, जैसे कि दूसरे विश्व युद्ध के सालों के दौरान सोवियट संघ के खिलाफ़ तानाशाही हमला, कोरिया व बाद में वियतनाम में अमरीकी साम्राज्यवाद का हमला, अल्बेनिया के खिलाफ़ साम्राज्यवादी व सामाजिक-साम्राज्यवादी दुश्मनी कार्यवाहियों व विभिन्न षडयन्त्र, आदि, ने इनकी पुष्टि की है । इसलिये हमारी पार्टी ने ज़ोर दिया है और जोर देती है कि समाजवादी राज्य और साम्राज्यवादी शक्तियों व पूंजीवादी-संशोधनवादी राज्यों के बीच अन्तर्विरोधों का कोई भी अल्पानुमान, इनके द्वारा समाजवादी अल्बेनिया के खिलाफ़ हमलावर क्रियाओं का कोई भी अल्पानुमान, और इस विचार के परिणामस्वरूप कि साम्राज्यवादी शक्तियों के अपने बीच अन्तर्विरोध बहुत शत्रुतापूर्ण हैं, और इस कारण वे हमारी जन्मभूमि के खिलाफ़ ऐसी कार्यवाहियां शुरू नहीं कर पायेंगे, सतर्कता में कोई भी ढील खतर-

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ २९, पृष्ठ १६० (अल्बेनिया संस्करण)

नाक परिणामों से भरपूर होगी ।

पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया इस तथ्य से आगे बढ़ती है कि सिर्फ़ क्रान्तिकारी, मुक्ति व स्वतन्त्रता -प्रेमी, और प्रगतिशील शक्तियां ही हमारे देश के सच्चे व विश्वस्त सहयोगी हो सकती हैं, क्योंकि यह एक समाजवादी देश है । हमारा देश सरमायदारी-संशोधनवादी दुनिया के विभिन्न देशों के साथ राजकीय सम्बन्ध रखता है, साम्राज्यवादी, पूंजीवादी और संशोधनवादी राज्यों के बीच अन्तर्विरोधों का इस्तेमाल करता है, और, इसके साथ-साथ, हर एक देश के मज़दूर वर्ग, मेहनतकश जनसमुदाय, व लोगों के क्रान्तिकारी व मुक्ति संघर्ष को, जहां भी ये संघर्ष किये जा रहे हैं, दृढ़ता से समर्थन देता है, और इस समर्थन को अपना उच्च अन्तरर्राष्ट्रीयतावादी कर्त्तव्य समझता है । पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने हमेशा ही इस दृष्टिकोण का दृढ़ता से अनुमोदन किया है; अपनी ७वीं कांग्रेस के समय इसने एक बार फिर ज़ोर दिया था कि यह सर्वहारा व लोगों, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों, क्रान्तिकारियों व प्रगतिशील लोगों को समर्थन देगी, जो कि सामाजिक व राष्ट्रीय मुक्ति के लिये, महाशक्तियों, पूंजीवादी व संशोधनवादी सरमायदारों व विश्व प्रतिक्रिया के खिलाफ़ लड़ते हैं ।

पिछले समय में, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने भी अन्तरविरोधों के विषय पर अच्छी तरह जाने गये मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों व दावों के उद्धरण दिये थे । उदाहरण के लिये, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा १९६३ में प्रकाशित जाने-पहचाने दस्तावेज़ "अन्तरर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन की आम कार्यदिशा से सम्बन्धित एक प्रस्ताव" में चीनी नेताओं ने लिखा था :"समाजवादी और

साम्राज्यवादी देशों के बीच इन या उन ज़रूरी समझौतों के लिये यह ज़रूरी नहीं है कि उत्पीड़ित लोग व राष्ट्र भी साम्राज्यवाद व उसके चाटुकारों के साथ समझौता करें।" उन्होंने आगे कहा : "शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के बहाने किसी को भी कभी भी यह माँग नहीं करनी चाहिये कि उत्पीड़ित लोग व राष्ट्र क्रान्तिकारी संघर्ष को त्याग दें।" उस समय चीनी नेतृत्व इस प्रकार बात कर रहा था, क्योंकि उस समय क्रुश्चेववादी नेतृत्व चाहता था कि लोग और कम्यूनिस्ट पार्टियाँ यह स्वीकार करें कि अमरीकी साम्राज्यवाद व इसके मुखिये शान्तिपूर्ण बन गये हैं, और वे अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ वैरशमन की सोवियट नीति के सामने झुक जायें। अब यह चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का नेतृत्व है जो कि लोगों, क्रान्तिकारियों, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों व सम्पूर्ण दुनिया के सर्वहारा को उपदेश दे रहा है कि वे साम्राज्यवादी या पूंजीवादी देशों के साथ सहयोगी संघ बनायें और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ सरमायदारों व सभी प्रतिक्रान्तिकारियों के साथ एक हो जायें। और चीनी नेता इन विचारों को छिपे वाक्यांशों में नहीं, बल्कि खुले आम व्यक्त करते हैं। ऐसी दोलायमानताओं व पूरी तरह से उलट जाने, और सिद्धान्ती मार्क्सवादी-लेनिनवादी नीति के बीच कोई सामान्यता नहीं है। यह उपयोगितावादी नीति की विशेषतायें हैं, जिसे सभी संशोधनवादी अपनाते हैं, जो सिद्धान्तों को अपने सरमायदारी व साम्राज्यवादी हितों के अधीन कर देते हैं।

अमरीकी साम्राज्यवाद और अन्तर्राष्ट्रीय सरमायदारों के साथ अपने सिद्धान्तहीन समझौतों को उचित ठहराने के लिये, चीनी नेता और "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त के सभी

हिमायती, १९३९ की सोवियट-जर्मनी अनाक्रमण सन्धि और दूसरे विश्व युद्ध के दौरान एंगलो-सोवियट-अमरीकी सहयोगी संघ के बारे में ऐतिहासिक सच्चाई की जान बूझ कर गलत व्याख्या करते हैं ।

सोवियट-जर्मनी अनाक्रमण सन्धि स्टालिन द्वारा अन्तर-साम्राज्यवादी अन्तर्विरोधों का युक्तिपूर्ण इस्तेमाल था । उस समय सोवियट संघ के खिलाफ़ हिटलरवादी हमला निकट था । यह वह समय था जब नात्ज़ी जर्मनी ने आस्ट्रीया व चेकोस्लोवाकिया पर हमला कर दिया था, तानाशाही इटली ने अल्बेनिया पर हमला कर दिया था, जब कि म्यूनिक सम-झौता किया जा चुका था और जर्मनी की युद्ध की विनाश-कारी शक्तियाँ पूर्व की ओर दौड़ रहीं थीं । सोवियट संघ ने जर्मनी के साथ एक सहयोगी-संघ नहीं बनाया था बल्कि एक अनाक्रमण-सन्धि की थी, और यह उस समय किया गया था जब पश्चिमी शक्तियों ने नात्ज़ी तानाशाही हमलावरों को रोकने के लिये सोवियट राज्य के साथ संयुक्त क्रियायें करने की स्टालिन की मांग का जवाब देने से इनकार कर दिया था, और जब यह स्पष्ट हो गया था कि ये शक्तियाँ हिटलर को सोवियट देश पर हमला करने के लिये उकसा रहीं थीं । सोवियट-जर्मनी सन्धि ने उनकी इन योजनाओं को असफल कर दिया और सोवियट संघ को नात्ज़ी हमले का सामना करने की तैयारी के लिये समय दिया ।

एंगलो-सोवियट-अमरीकी सहयोगी-संघ के विषय में, यह आम जानकारी है कि यह संघ उस समय बनाया गया था जब, फ्रांस पर कब्ज़ा करने के बाद और बर्तानिया के खिलाफ़ लड़ाई शुरू करके, हिटलरवादी जर्मनी ने सोवियट संघ के खिलाफ़ अपना ख़ूंख्वार हमला शुरू कर दिया था, और जब कि सन्धिबद्ध

तानाशाही शक्तियों के खिलाफ़ युद्ध ने स्पष्ट व निश्चित तानाशाही-विरोधी व मुक्ति युद्ध की विशेषता अपना ली थी। यह बता देना चाहिये कि किसी भी समय व किसी भी हालत में स्टालिन और सोवियट संघ ने उस समय सर्वहारा और कम्यूनिस्ट पार्टियों से क्रान्ति का त्याग करने और प्रतिक्रियावादी सरमायदारों के साथ एकता बनाने की हिमायत या माँग नहीं की थी। यही नहीं, जब ब्राउडर ने वर्ग संघर्ष को त्यागा और वर्ग समझौते की हिमायत की, क्योंकि एंग्लो-सोवियट-अमरीकी सहयोगी-संघ के हितों को अभिकथित रूप से इसकी ज़रूरत थी, तो स्टालिन और कम्यूनिस्ट आन्दोलन ने उसे संशोधनवादी व क्रान्ति से पथभ्रष्ट घोषित किया।

जैसा कि देखा जा सकता है, अमरीकी साम्राज्यवाद और विभिन्न प्रतिक्रियावादी दलों के साथ चीनी संशोधनवादियों के सिद्धान्तहीन सहयोगी संघ व समझौते किसी प्रकार भी उचित नहीं ठहराये जा सकते हैं। चीनी संशोधनवादी जो ऐतिहासिक मिसाल देने की कोशिश कर रहे हैं वह बेबुनियाद है।

अपने प्रचार में, चीनी नेता यह मत बनाने की कोशिश करते हैं कि हम अल्बेनिया के मार्क्सवादी-लेनिनवादी अभिकथित रूप से किसी भी तरह के समझौते के खिलाफ़ हैं और अन्तर-विरोधों का इस्तेमाल करने की कोशिश नहीं करते हैं, जैसा कि हमें करना चाहिये। स्वभावतः, वे जानते हैं कि हम इन सवालों पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर आधारित विचारनीति अपनाते हैं, लेकिन वे वैज्ञानिक मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त और क्रान्ति के रास्ते से अपने विचलन को छुपाने के लिये इस कपटी कार्यदिशा का प्रचार करना जारी रखते हैं। वे सर्वहारा पार्टी और राज की सही नीति व विचारपद्धति

को बदनाम करने के लिये इस तरह के काम करते हैं । उनके द्वारा लगाये गये आरोप बेबुनियाद हैं । आइये हम तथ्यों को देखें ।

हमारी पार्टी ने हमेशा ही,हर हालत में,अरब लोगों के उचित उद्देश्य का जोश के साथ समर्थन किया है, और अन्त तक करती रहेगी । हम इज़राईल, जो कि बहुत पहले ही, मिडिल ईस्ट में अमरीकी साम्राज्यवाद का साधन व एक सशस्त्र चौकी बन गया था,के खिलाफ़ फिलस्तीनी लोगों के संघर्ष का समर्थन करते हैं । इज़राईल को संयुक्त राज्य अमरीका की बड़ी एकाधिकारी कम्पनियों के साथ सम्पन्न अरब तेल छेत्रों की रक्षा करने,और यथापूर्व स्थिति को बनाये रखने,जैसा कि चीनी संशोधनवादी इसे कहते हैं,का काम सौंपा गया है ।

इसके बावजूद भी कि राष्ट्रपति सदात और उसकी सरकार पिछले समय में सोवियट संघ के साथ सहयोगी-संघ बनाये हुये थे,हमने इज़राईल द्वारा कब्ज़ा किये हुये छेत्रों को वापस पाने के लिये किये जा रहे ईजिप्ट के लोगों के संघर्ष को समर्थन दिया था । लेकिन,हमने ईजिप्ट के खिलाफ़ सोवियट संघ के उद्देश्यों,और आम तौर पर उसकी मिडिल ईस्ट में चालों का पर्दाफ़ाश किया । हम एक छण के लिये भी ईजिप्ट के प्रति सोवियट संघ के उपनिवेशवादी उद्देश्यों के बारे में चुप नहीं रहे हैं । हमने अमरीकी साम्राज्यवाद और इज़राईल के खिलाफ़ ईजिप्ट के लोगों की लड़ाई को उसी दृढ़ता से समर्थन दिया है ।

ईजिप्ट के लोगों व दूसरे अरब लोगों के हितों की रक्षा करने के साथ-साथ,हमारी पार्टी व लोग उन चालों का भी पर्दाफ़ाश करते हैं जिन्हें कि अमरीकी साम्राज्यवाद इज़राईल के साथ मिलकर इस समय चल रहा है । हम हमलावर इज़राईल

के साथ समझौते के किसी भी रास्ते व किसी भी कार्यदिशा को,इस बहाने से कि यह अभिकथित रूप से यह ईजिप्ट के लोगों के हित में है,स्वीकार नहीं कर सकते हैं ।

लेकिन,चीनी नेतृत्व अमरीकी साम्राज्यवाद का पर्दाफ़ाश नहीं करता है । यह इज़राईल-ईजिप्ट समझौतों की प्रशंसा करता है और अरब के लोगों से उनके मुख्य दुश्मन,अमरीकी साम्राज्यवाद और इज़राईल के साथ सुलह व समझौता करने की मांग करता है । ऐसी विचारनीति मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं है । चीनी संशोधनवादियों द्वारा बताये गये ये समझौते लोगों के हित में नहीं है । यह चीनी बकवास कि एक साम्राज्यवाद से सम्बन्ध तोड़कर अपने आपको दूसरे साम्राज्यवाद की जकड़ में फंसा लेना "लोगों की स्वतन्त्रता के हित में काम करना है" पूरी तरह से अस्वीकार्य है । ये प्रारूपिक सरमायदारी चालों व षडयन्त्र किसी भी तरह से ऐसी मार्क्सवादी-लेनिनवादी कार्यवाहियां, नहीं कही जा सकती हैं,जो दो साम्राज्यवादी महाशक्तियों के बीच अन्तर्विरोधों को गहरा करने में मदद देती हैं ।

अल्बेनिया की पार्टी व लोग लुटेरी साम्राज्यवादी लड़ाइयों के खिलाफ़ हैं, और उन उचित राष्ट्रीय मुक्ति लड़ाइयों का दृढ़तापूर्वक समर्थन करते हैं जो कि लोगों के हित और क्रान्ति के पक्ष में हैं और जिन्हें हमेशा ऐसा होना चाहिये । वे एक सरमायदारी राज्य का समर्थन करने के भी खिलाफ़ नहीं हैं, जब कि वे देखते हैं कि इस राज्य पर शासन करने वाले लोग प्रगतिशील हैं और साम्राज्यवादी आधिपत्य से अपने लोगों की मुक्ति पाने के हितों में लड़ते हैं । लेकिन हमारा देश एक ऐसे राज्य का पक्ष नहीं ले सकता है,या उसके साथ समझौता नहीं कर सकता है,जैसा कि चीनी संशोधनवादी कहते हैं,जिस

राज्य पर एक प्रतिक्रियावादी गुट शासन करता है,जो गुट अपने ही वर्ग हितों में और लोगों के हितों को हानि पहुंचाने के लिये,एक या दूसरी महाशक्ति के साथ सहयोगी-संघ बनाते हैं ।

इसी प्रकार,समाजवादी अल्बेनिया "तीसरी दुनिया" या "दूसरी दुनिया" के राज्यों के साथ स्वाभाविक राजनयिक सम्बन्ध कायम रखने के खिलाफ़ नहीं है । यह सिर्फ़ दोनों महाशक्तियों और तानाशाही राज्यों से ही ऐसे सम्बन्ध बनाने के खिलाफ़ है । लेकिन,अपने व्यापारिक,सांस्कृतिक व दूसरे सम्बन्धों की ही तरह,अपने राजनयिक सम्बन्धों को बनाने में भी हम सिद्धान्तों के अनुसार काम करते हैं,सबसे पहले,हम हमारे देश व क्रान्ति के हितों को ध्यान में रखते हैं,जिनके विपरीत हमने कभी भी काम नहीं किया है और न करेंगे ।

सत्ता में आने वाले हम,मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को सरमायदारी-पूंजीपति राज्यों के साथ राजनयिक सम्बन्ध स्थापित करने पड़ते हैं,क्योंकि ये सम्बन्ध हमारे और उनके भी हित में हैं । ये हित पारस्परिक हैं ।

मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को हमेशा सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिये । एक या दूसरे समय में पैदा हुई परिस्थितियों के कारण उन्हें सिद्धान्तों को कुचलना नहीं चाहिये । हमें यह ध्यान में रखना चाहिये कि उन देशों में, जहां सरमायदारों की उच्च श्रेणियां शासन कर रही हैं,ये उच्च श्रेणियां निरन्तर ही लोगों,सर्वहारा,गरीब किसान व शहरों के निम्न सरमायदारों के खिलाफ़ संघर्ष करती हैं । इसलिये, जब समाजवादी देश सरमायदार देशों के साथ राजकीय सम्बन्ध बनाता है या नहीं बनाता है,इन दोनों स्थितियों में, इसे लोगों को यह

स्पष्ट कर देना चाहिये कि यह उनके संघर्ष का समर्थन करता है,और उनके शासकों की प्रतिक्रियावादी व लोक-विरोधी कार्यवाहियों को स्वीकार नहीं करता है ।

हम मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को सिर्फ़ उत्पीड़ित वर्ग व उनके अत्याचारियों के बीच मौजूद अन्तर्विरोधों को ही समझना व ध्यान में रखना नहीं चाहिये,बल्कि उन अन्तर्विरोधों को भी जो इन राज्यों के बीच पैदा होते हैं,यानि कि इन देशों की सरकारों,और अमरीकी साम्राज्यवाद,सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद,दूसरे पूंजीवादी देशों,आदि के बीच । हमें हमेशा ऐसी नीति का पालन करना चाहिये जिससे कि हम एक प्रतिक्रियावादी सरकार की सिर्फ़ इसलिये ही रक्षा न करें कि उसने अपने ही हित और सत्ता में होने वाले वर्ग के हित में किसी दूसरे साम्राज्यवाद,उदाहरण के लिये बर्तानवी, सोवियट या अन्य साम्राज्यवाद, के साथ मिल जाने के लिये अस्थायी रूप से अमरीकी साम्राज्यवाद से नाता तोड़ लिया है । हमें इस उद्देश्य से उनके बीच के अन्तर्विरोधों का इस्तेमाल करना चाहिये कि हमारा यह काम उस देश की प्रतिक्रियावादी सरकार के खिलाफ़ सर्वहारा और उत्पीड़ित जनसमुदाय के संघर्ष को मज़बूत होने में मदद दे । अगर, चीनी संशोधनवादियों द्वारा किये गये दुनिया के विभाजन के अनुसार, "दूसरी" या "तीसरी दुनिया" के एक देश की प्रतिक्रियावादी व अत्याचारी पूंजीवादी सरकार और "पहली दुनिया" के एक देश की सरकार के बीच अन्तर्विरोध पैदा हो गये हैं,तो इससे यह नहीं मान लेना चाहिये कि ये अन्तर्विरोध हमेशा ही, पूंजी की दासता,या इस देश में शासन कर रहे प्रतिक्रियावादी सरमायदारों की दासता से,इस देश के लोगों की मुक्ति के पक्ष में हैं । इस हालत में हमें सरमायदार वर्ग हितों को,व

शोषक वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली सरकारों के हितों पर ध्यान देना चाहिये,और इस सवाल पर कि किन वर्गों को फ़ायदा होगा व किनको नुकसान, कौन उनके सत्ता में होने की सबसे अच्छे तरीके से रक्षा करता है,और कौन अपने ही लोगों को सत्ता में लाने के लिये उन्हें बाहर निकालना चाहता है ।

सर्वहारा के संघर्ष के विषय में,सरमायदारों के प्रति विचार-नीति और उन राजनयिक,व्यापारिक,सांस्कृतिक व वैज्ञानिक सम्बन्धों को एक साथ नहीं मिलाया जाना चाहिये जो एक समाजवादी देश और दूसरी भिन्न सामाजिक प्रणाली के राज्यों के बीच होते हैं । ये अन्तर-राजकीय सम्बन्ध ज़रूरी हैं और उनका विकास किया जाना चाहिये, लेकिन समाजवादी देश को इन सम्बन्धों को स्थापित करने के उद्देश्य के बारे में स्पष्ट होना चाहिये । समाजवादी देश का विचारधारात्मक, राजनीतिक,नैतिक व भौतिक जीवन उन राज्यों के लोगों के लिये उदाहरण होना चाहिये,जिनके साथ यह सम्बन्ध रखता है,और इन्हें ऐसा होना चाहिये कि इन सम्बन्धों के विकास के जरिये,असमाजवादी राज्यों के लोग समाजवादी प्रणाली के सुखों व उसकी अच्छाइयों को देख सकें । स्वाभावतः,वे समाजवादी रास्ते का अनुसरण करते हैं या नहीं, यह उनका अपना मामला है, लेकिन एक अच्छा उदाहरण सामने रखना समाजवादी देश का कर्त्तव्य है ।

इन सभी राजनीतिक,विचारधारात्मक व संगठनात्मक सवालों पर चीनी नेता सिर्फ़ अस्पष्ट ही नहीं है,बल्कि इन सवालों को स्पष्ट करने से तो दूर,वे जान बूझ कर इन्हें और भी धुंधला बनाते हैं,क्योंकि जैसा माओ त्से-तुङ ने कहा है, हमें मामलों को स्पष्ट करने के लिये उन्हें झिझकोरना चाहिये ।

यह दावा ठीक नहीं है । इसके विपरीत, हमें सवालों को स्पष्ट करना चाहिये और क्रान्ति को कार्यान्वित करने के लिये लोगों को विश्वास दिलाना चाहिये, क्योंकि, जहाँ तक गड़बड़ का सवाल है, वह तो अभी भी मौजूद है । अगर सवाल गड़बड़ पैदा करने का ही है, तो हमें मरणासन्न साम्राज्यवाद की मदद करने और उसे आगे जिन्दा रहने के लिये सहारे देने की बजाये, उसके लिये और भी ज्यादा गड़बड़ पैदा करनी चाहिये । हमें पूंजीवाद की ज़िन्दगी को छोटा कर देना चाहिये ताकि लोग व सर्वहारा मुक्त हो जायें और समाजवाद व कम्यूनिज़्म की सम्भावना और भी नज़दीक आ जाये । यही हमारा क्रान्तिकारी रास्ता है, मार्क्सवाद-लेनिनवाद का रास्ता है । इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं है ।

चीनी नेताओं ने पहले अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़ "जैसे को तैसा" संघर्ष करने की कथनी का इस्तेमाल किया था, लेकिन उन्होंने इसका उस समय भी पालन नहीं किया था, और इस समय तो निश्चय ही पालन नहीं कर रहे हैं । वे जैसे को तैसा संघर्ष नहीं कर रहे हैं, क्योंकि वे अमरीकी साम्राज्यवाद के और भी नज़दीक आते जा रहे हैं और संयुक्त राज्य अमरीका के साथ सहयोगी संघ में हैं ।

साम्राज्यवादी राज्यों व दुनिया के दूसरे राज्यों के साथ चीन के राजनयिक, तिजारती व सांस्कृतिक सम्बन्ध पूंजीवादी आधार पर हैं । इन सम्बन्धों में चीन का उद्देश्य, उस मदद के जरिये जो यह शक्तिशाली साम्राज्यवादी राज्यों से पाना चाहता है, अपनी आर्थिक व सैनिक स्थितियों को मज़बूत करना है ताकि यह भी दूसरी दोनों महाशक्तियों से प्रतिस्पर्धा कर सके । रेडियो व दूसरे साधनों के जरिये किया गया चीनी प्रचार दुनिया में सिर्फ़ यह मत बनाने के लिये ही नहीं है कि

चीन एक प्राचीन सभ्यता वाला एक बड़ा शक्तिशाली राज्य है, बल्कि यह भी कि वर्तमान चीनी नीति प्रगतिशील है और मार्क्सवादी-लेनिनवादी भी है। परन्तु, चीनी संशोधनवादियों की यह कार्यवाही दुनिया के लोगों के लिये न तो ऐसा उदाहरण है और न हो सकता है जिसका, दुनिया के लोग, पूंजीवादी व साम्राज्यवादी शक्ति का ध्वंस करने के अपने संघर्ष में, अनुसरण कर सकें।

"तीसरी दुनिया" की एकता के बारे में चीनी धारणा प्रतिक्रियावादी है

चीनी नेतृत्व "तीसरी दुनिया" के सभी देशों के बीच एकता चाहता है, जो देश सभी तरह से असमान हैं : उनके आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में, पायी हुई स्वतन्त्रता व आज़ादी जीतने के लिये उनमें से हर एक ने कितना समय लिया व कौन सा रास्ता अपनाया, आदि में।

लेकिन चीन इस एकता की कल्पना कैसे करता है जिसका वह प्रचार कर रहा है? चीनी नेतृत्व इस एकता को मार्क्सवादी-लेनिनवादी तरीके से बनायी गयी एकता के रूप में, और क्रान्ति व लोगों की मुक्ति के हितों में नहीं देखता है। वह इसे सरमायदारी दृष्टिकोण से देखता है, यानि कि, इन देशों के शासकों द्वारा पक्के किये गये व रद्द किये गये सन्धियों व समझौतों में, जो देश आज एक साम्राज्यवादी शक्ति के साथ जुड़े हैं, लेकिन कल दूसरी साम्राज्यवादी शक्ति के साथ मिल जाने के लिये अपने ही द्वारा बनाये गये समझौतों को तोड़ भी सकते हैं।

चीनी संशोधनवादी नेतृत्व भूल जाता है कि इन राष्ट्रीय

राज्यों के बीच एकता सिर्फ़ हर एक देश के सर्वहारा व मेहनतकश जनसमुदाय के, सबसे पहले, विदेशी साम्राज्यवाद, जो कि इस देश में घुस आया है, और इसके साथ-साथ आन्तरिक पूंजीवाद व प्रतिक्रिया, के खिलाफ़ संघर्ष के जरिये ही सुनिश्चित की जा सकती है । सिर्फ़ इसी आधार पर इन देशों के बीच एकता बनायी जा सकती है । सिर्फ़ इसी आधार पर विदेशी साम्राज्यवाद व इसके साथ-साथ राजाओं, स्थानीय प्रतिक्रियावादी सरमायदारों, सामन्तिक ज़मीन्दारों व तानाशाहों के खिलाफ़ संयुक्त मोर्चा बनाया जा सकता है ।

पूंजीवाद में एकता, सरमायदारों की विजयों की रक्षा करने के लिये और उन्हें क्रान्ति से बचाने के लिये, सिर्फ़ ऊपरी स्तर में की जाती है । जबकि सच्ची एकता, लोगों की एकता, नीचे से होनी चाहिये, और सर्वहारा को इस एकता का नेतृत्व करना चाहिये ।

निस्सन्देह, तथाकथित तीसरी दुनिया के एक देश के सर्वहारा या इन सभी देशों के सर्वहारा द्वारा साम्राज्यवाद के खिलाफ़ दूसरी राजनीतिक शक्तियों से एकता बनाने में इस्तेमाल की गई युक्तियों को बिना सोचे समझे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है । एक ऐसे समय में, जब कि विदेशी साम्राज्यवाद या "तीसरी दुनिया" के देशों में से एक देश के प्रतिक्रियावादी नेतृत्व के साथ गहरे अन्तर्विरोध पैदा हो जाते हैं, एक देश के सरमायदारी नेतृत्व के साथ क्रान्तिकारी शक्तियों की एकता को भी इनकार नहीं किया जा सकता है ।

क्रान्तिकारी शक्तियों को इन सभी मौकों व सम्भावनाओं को देखना व उनसे फ़ायदा उठाना चाहिये । इसीलिये लेनिन ने कहा है कि समाजवादी देश और अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा द्वारा दी गई मदद को विभेदक व सशर्त होना चाहिये ।

लेकिन, चीनी नेता प्रतिक्रियावादी सरकारों के बीच, अभिकथित रूप से साम्राज्यवाद का सामना करने के लिये, एक अशर्त सहयोगी संघ की ही हिमायत करते हैं। और जब वे साम्राज्यवाद के खिलाफ़ बात करते हैं, तो उनका मतलब आम साम्राज्यवाद से नहीं बल्कि सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद से है।

साम्राज्यवाद और पूंजीवाद का कमज़ोर होना इस समय विश्व इतिहास की मुख्य प्रवृत्ति है। साम्राज्यवाद की अधीनता से अपने आपको मुक्त करने की विभिन्न राज्यों की कोशिशें भी एक ऐसी प्रवृत्ति है जो साम्राज्यवाद को कमज़ोर करती है। लेकिन यह दूसरी प्रवृत्ति, जिसे कि चीनी संशोधनवादी नेतृत्व, देशों के बीच कोई भी भेदभाव किये बिना, व आम और विशेष परिस्थितियों का अध्ययन किये बिना, बिना किसी शर्त के सबसे मुख्य स्थान देता है, साम्राज्यवादी दखल और आधिपत्य से अपने आपको मुक्त करने के संघर्ष में लोगों के बीच एकता के सही रास्ते पर नहीं ले जाती है। इसी प्रकार, यूरोप को "दूसरी दुनिया" के देशों का महाद्वीप समझने, और उसे "तीसरी दुनिया" के साथ सहयोगी संघ में रखने की चीनी संशोधनवादियों की धारणा भी सही रास्ते पर नहीं ले जा सकती है। पूंजीवादी राज्यों का यह समूहन कभी भी विश्व पूंजीवाद के आम तौर पर कमज़ोर होने के पक्ष में नहीं हो सकता है। यह कहना कि ऐसा बर्तानिया के अभिजाततन्त्रीय सरमायदारों, पश्चिमी जर्मनी के प्रसारवादी सरमायदारों या फ्रांस के धूर्त सरमायदारों और दूसरे बड़े पूंजीवादी दलों की मदद व सहयोग से किया जा सकता है, शोचनीय भोलापन है।

"तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त के समर्थक यह दावा कर

सकते हैं कि इन पूंजीवादी देशों के बीच एकता की हिमायत करके वे साम्राज्यवाद को कमज़ोर करना चाहते हैं । लेकिन यह एकता कौन से साम्राज्यवाद को कमज़ोर करेगी ? उस साम्राज्यवाद को जिसके साथ "तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संयुक्त मोर्चा बनाने की मांग कर रहा है ? उस साम्राज्यवाद को जिसके साथ यूरोप के पूंजीवादी देश, उनके बीच अन्तर्विरोधों के बावजूद भी, सहयोगी संघ बनाये हुये हैं ? स्पष्टतया, राज्यों के इस गुट को मज़बूत करने की हिमायत करने का मतलब है, अमरीकी साम्राज्यवाद की स्थितियों को मज़बूत करने व पश्चिमी यूरोप के पूंजीवादी राज्यों की स्थितियों को मज़बूत करने की हिमायत करना ।

दूसरी ओर, चीनी नेतृत्व जब "दूसरी दुनिया" के राज्यों और तथाकथित तीसरी दुनिया के राज्यों के बीच सहयोगी संघ बनाने की बात करता है, तो इससे उसका मतलब इन देशों की शासक श्रेणियों के बीच सहयोगी संघ से है । लेकिन यह दावा करना कि ये सहयोगी संघ लोगों की मुक्ति में मदद करेंगे, एक अध्यात्मवादी, अभौतिकवादी व मार्क्सवाद-विरोधी धारणा है । इसलिये, मुक्ति पाने की कोशिश कर रहे लोगों के व्यापक जनसमुदाय को ऐसे संशोधनवादी सिद्धान्तों से धोखा देना लोगों व क्रान्ति के खिलाफ़ एक जुर्म है ।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी सोचती है कि साम्राज्यवाद, उन देशों, जिन्होंने हाल ही में उपनिवेशवाद की दासता से छुटकारा पाया है और नव-उपनिवेशवाद की दासता में पड़ गये हैं, के बीच मौजूद होने वाले अन्तर्विरोधों को नहीं जानता है, नहीं देखता है, नहीं समझता है और उनसे फ़ायदा नहीं उठाता है । तथ्य दिखाते हैं कि साम्राज्यवाद इन अन्तर्विरोधों

का निरन्तर ही, हर दिन, अपने फ़ायदे के लिये इस्तेमाल करता है । यह इन देशों व इनके लोगों पर, ज़ोर डालता है व उन्हें भड़काता है ताकि वे एक दूसरे से लड़ें, अलग हो जायें, झगड़ा करें, और यहां तक कि कुछ खास मुख्य सवालों पर भी एकता बनाने में असफल हों ।

साम्राज्यवाद भी अपने जीवन को लम्बा करने की कोशिश में जीवन-मौत का संघर्ष कर रहा है, और यह जब देखता है कि आम तरीकों के जरिये यह इसे हासिल नहीं कर पायेगा तो अपनी उच्चता और आधिपत्य को फिर से पाने के लिये खुले आम लड़ाई व हमला शुरू कर देता है ।

चीनी नेता "तीसरी दुनिया" के देशों को सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ सिर्फ़ एक दूसरे के साथ ही नहीं बल्कि संयुक्त राज्य अमरीका के साथ भी एक करना चाहते हैं । दूसरे शब्दों में, चीनी संशोधनवादी खुले रूप से "तीसरी दुनिया" के लोगों को यह कह रहे हैं कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद उनका मुख्य दुश्मन है, इसलिये, इस समय, उन्हें अमरीकी साम्राज्यवाद का या उन्हीं के देशों में शासन करने वाले इसके सहयोगी प्रतिक्रियावादी सरमायदारों, का विरोध नहीं करना चाहिये । चीनी "सिद्धान्त" के अनुसार, "तीसरी दुनिया" के राज्यों को अपनी स्वतन्त्रता, आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार को मज़बूत करने के लिये नहीं, सरमायदारों के शासन का ध्वंस करने वाली क्रान्ति के लिये नहीं, बल्कि यथापूर्व स्थिति को बनाये रखने के लिये लड़ना है । यह समझा जा सकता है कि, क्रान्ति के हितों और राष्ट्रीय मुक्ति के उद्देश्यों के विपरीत, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ समझौते की हिमायत करके, चीनी संशोधनवादी इन राज्यों को एक विश्वासघाती समझौता करने के लिये बाध्य कर रहे हैं ।

सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों का यह अन्तर-राष्ट्रीयतावादी कर्त्तव्य है कि वे इन सभी देशों के सर्वहारा व लोगों को, क्रान्ति के लिये और विदेशी व स्थानीय अत्याचार व गुलामी, चाहे वह किसी भी रूप में क्यों न हो, के खिलाफ़ विद्रोह करने के लिये बढ़ावा व प्रेरणा दें । हमारी पार्टी के विचार में यही एकमात्र रास्ता है जिसके जरिये, साम्राज्यवाद व सामाजिक-साम्राज्यवाद, जिनके साथ "तीसरी दुनिया" के अधिकांश देशों के पूंजीवादी सरमायदार अनेक तरीकों से जुड़े हुये हैं, के खिलाफ़ लोगों के संघर्ष के लिये परिस्थितियां बनायी जा सकती हैं ।

लेकिन चीन क्या करता है ? चीन ज़ाईर में मोबूटू व उसके गुट की रक्षा करता है । अपने प्रचार के जरिये चीन यह मत बनाने की कोशिश कर रहा है कि वह, सोवियट संघ द्वारा भेजे गये भृतक सेना के हमलों के खिलाफ़ अभिकथित रूप से उस देश के लोगों की रक्षा कर रहा है, लेकिन वास्तव में वह प्रतिक्रियावादी मोबूटू सत्ता की रक्षा कर रहा है । मोबूटू गुट अमरीकी साम्राज्यवाद की सेवा में लगी एक एजेन्सी है । अपने प्रचार व "ज़ाईर-पक्षी" विचारपद्धति से, चीन अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ और नव-उपनिवेशवाद के साथ मोबूटू के सहयोगी संघ की रक्षा कर रहा है, और उस देश की यथापूर्व स्थिति में किसी भी परिवर्तन को रोकने की कोशिश कर रहा है । सच्चे क्रान्तिकारियों का कर्त्तव्य प्रतिक्रियावादी शासकों, व साम्राज्यवादियों के साधनों की रक्षा करना नहीं, बल्कि अपनी स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार के लिये, मोबूटू, स्थानीय पूंजी व अमरीकी, फ्रेन्च, बेल्जियन, व दूसरे साम्राज्यवादियों के खिलाफ़ लड़ाई के लिये ज़ाईर के लोगों को प्रेरित करने के लिये काम करना है ।

ठीक जिस तरह हम ज़ाईर में मोबूटू के खिलाफ़ हैं, उसी तरह हम अंगोला में नेटो और उसको उकसाने वालों के खिलाफ़ हैं,क्योंकि सोवियट संघ और नेटो अंगोला में वही कर रहे हैं जो संयुक्त राज्य अमरीका व मोबूटू ज़ाईर में कर रहे हैं । इन दोनों राज्यों की परिस्थितियों के विकास के परीक्षण से यह स्पष्ट है कि उपनिवेशों और बाज़ारों के विभाजन के लिये महाशक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा वहां पर कैसे तीव्र हो रही है । हम न तो नेटो और न सोवियट संघ की रक्षा करते हैं, लेकिन उनके खिलाफ़ लड़ते समय,हम अंगोला के लोगों के दुश्मन अमरीकी साम्राज्यवाद, व उसकी भृतक सेना,का समर्थन नहीं कर सकते हैं । किसी भी स्थिति में,किन्हीं भी हालतों में और किसी भी समय हमको क्रान्तिकारी लोगों का समर्थन करना चाहिये,और ज़ाईर व अंगोला के विषय में,हमें इन दोनों देशों के लोगों की उस गुलामी से अपना छुटकारा पाने की कोशिशों का समर्थन करना चाहिये, जो कि महाशक्तियां इन पर थोप रही हैं ।

ज़ाईर के क्रान्तिकारियों को क्या सलाह दी जाये ? मोबूटू के साथ समझौता करने की ताकि साम्राज्यवाद द्वारा इस देश के लोगों पर और भी अत्याचार हों,जैसी कि चीनी संशोधनवादी सलाह दे रहे हैं ? नहीं,मार्क्सवादी-लेनिनवादी ज़ाईर के लोगों या किन्हीं भी लोगों को इस किस्म के समझौते की सलाह नहीं दे सकते हैं ।

उदाहरण के लिये हम पाकिस्तान में चीन की नीति को लेते हैं । खानसाहबों का पाकिस्तान,जहां कि अमीर सरमायदारों,बड़े जागीरदारों ने हमेशा ही शासन किया है,अभिकथित रूप से चीन का सहयोगी है । इस देश को चीन की सहायता एक क्रान्तिकारी दिशा में दी गयी सहायता नहीं

रही है । इसने पाकिस्तान के प्रतिक्रियावादी जागीरदार सरमायदारों के मजबूत होने में मदद दी है जो कि उस देश के लोगों पर ख़ूंख्वार अत्याचार करते हैं, ठीक उसी तरह जैसे कि नेहरू, गांधी और दूसरे प्रतिक्रियावादी अमीरों का गुट हिन्दुस्तानी लोगों पर अत्याचार करता है । ज़ुलफ़िकार अली भुट्टो की सरकार इससे कुछ अलग नहीं थी । सबसे पहले, पूर्वी पाकिस्तान पश्चिमी पाकिस्तान से अलग हो गया । हिन्दुस्तान जानता था कि पूर्वी पाकिस्तान के लोगों और पश्चिमी पाकिस्तान में शासन कर रहे प्रतिक्रियावादी सरमायदारों के बीच मौजूद भारी अन्तर्विरोधों का कैसे इस्तेमाल किया जाये । इसने इन अन्तर्विरोधों को इस हद तक उकसाया कि पूर्वी पाकिस्तान के लोगों ने अली भुट्टो के पाकिस्तान के खिलाफ़ विद्रोह कर दिया । उस समय पूर्वी पाकिस्तान में, जिसको बंगलादेश का नाम दिया गया, मुजीबुर रहमान की सरकार कायम की गई, जिसने अभिकथित रूप से लोकतन्त्र और लोगों के हितों के लिये लड़ाई की थी । लेकिन एक दिन, अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ निकट सम्बन्ध रखने वाले गुट ने मुजीबुर रहमान का कत्ल कर दिया । अब, अली भुट्टो का भी तख्त पलट दिया गया है । इस प्रकार चीन के दोस्त व सहयोगी, पाकिस्तान के सबसे बड़े व सबसे अमीर ज़मीन्दार को दूसरे प्रतिक्रियावादियों ने एक बलात् राज्यपरिवर्तन द्वारा निकाल बाहर फेंका ।

लेकिन कौनसा विरोधी गुट सत्ता में आया है, और कौनसे लोग इसमें भाग ले रहे हैं ? यह भी एक प्रतिक्रियावादी शक्ति है, जिसमें सेना के अधिकारी, पूंजीपति व बड़े ज़मीन्दार शामिल हैं । अपने वर्ग हितों, और संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियट संघ या चीन के साथ वे भी जो सम्बन्ध रखते हैं, से बढ़ावा पाकर, वे प्रतिक्रियावादी सत्ता को अपने हाथों में रखने की

कोशिश कर रहे हैं । ऐसी हालतों में, पाकिस्तान के लोगों से, एक या दूसरी सरमायदार राजनीतिक शक्ति के साथ निकट सहयोग बनाने व उसका समर्थन करने, और शासकों के एक गुट को दूसरे गुट से बदलने की बातें करना, जैसा कि चीनी नेता कर रहे हैं, उन्हें क्रान्ति का सही रास्ता दिखाना नहीं है । सही रास्ता है भुट्टो और उसके विरोधियों, इन दोनों आगों के बीच धँसे लोगों से क्रान्ति की शक्तिशाली आग को जलाने, और दोनों पुरानी आग को बुझाने, और पाकिस्तान में मौजूद एक ही साँचे के दोनों गुटों का अन्तर्ध्वंस करने की माँग करना । दो मोर्चों पर इस लड़ाई में पाकिस्तान के लोगों को खुद यह समझना पड़ेगा कि अन्तर्विरोधों का कैसे इस्तेमाल किया जाये ।

तथाकथित तीसरी दुनिया, या तटस्थ दुनिया के अनेक देशों में भी यही बात लागू है ।

इस प्रकार चीनी नेतृत्व को, सिर्फ़ मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के साथ सहयोगी संघों व मित्रता बनाने में ही नहीं, बल्कि सरमायदारी-पूँजीवादी राज्यों के साथ सहयोगी संघ बनाने में भी सफलता नहीं मिली है । इसका इतना दुर्भाग्य क्यों है ? क्योंकि उसकी नीति मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं है, क्योंकि यह जो विश्लेषण करता है और उनसे जो निष्कर्ष निकालता है वे गलत हैं । ऐसी हालतों में, "तीसरी दुनिया" के लोग चीन में क्या विश्वास रख सकते हैं, जो कि उन्हें अपने आधिपत्य में करने का उद्देश्य रखता है ?

सिर्फ़ सर्वहारा अधिनायकत्व, सिर्फ़ मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा, सिर्फ़ समाजवाद ही लोगों के बीच फूट डालने वाली व उनको विभाजित करने वाली हर चीज़ को खत्म करके हार्दिक प्रेम, घनिष्ठ मित्रता व फौलाद-जैसी एकता को पैदा करते हैं । लोगों के बीच एकता व मित्रता बनाने और समस्याओं

का इस प्रकार हल करने, जो कि उनके हितों के लिये सबसे अच्छा व सबसे उपयुक्त है, मोबूटू, भुट्टो, गांधी व दूसरों जैसे पतित सरमायदारों को, अभिकथित रूप से एक ऐसे राजनीतिक संतुलन को बनाने के लिये, जो कि "संतुलन" के विज्ञान-विरोधी, लोक-विरोधी और मौकापरस्त सिद्धान्त की अभिव्यक्ति है, और जिससे यथापूर्व स्थिति व गुलामी को बनाया रखा जाता है, किसी भी तरह से मदद व रियायतें नहीं दी जानी चाहिये ।

हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी, नव-उपनिवेशवाद के खिलाफ़, और किसी भी देश के अत्याचारी पूंजीवादी सरमायदारों के खिलाफ़, यानि कि, लोगों पर अत्याचार करने वालों के खिलाफ़, लड़ते हैं । यह संघर्ष तभी किया जा सकता है जब कि सच्ची कम्यूनिस्ट पार्टियां सर्वहारा व मेहनतकश जनसमुदाय को प्रेरित करें, संगठित करें व उनका नेतृत्व करें । सर्वहारा व जनसमुदाय का पार्टी द्वारा नेतृत्व सफलतापूर्वक तभी होता है, जब कि पार्टी मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्रान्तिकारी प्रेरणा देती है, एक सैकड़ों मायने व सैकड़ों झण्डे वाली अनिश्चित प्रेरणा नहीं । अपनी क्रियाओं में एक सच्चे समाजवादी देश की मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी सिर्फ़ अपने ही राज्य के हितों में काम नहीं करती है, बल्कि विश्व क्रान्ति के हितों का भी हमेशा ध्यान रखती है ।

"तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त और "तटस्थ दुनिया" का युगोस्लाव सिद्धान्त लोगों के क्रान्तिकारी संघर्ष का अन्तर्ध्वंस करते हैं

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति विश्वासघात करने वाले सोवियट, टीटोवादी, चीनी, व दूसरे आधुनिक संशोधनवादी,

सर्वहारा के विजयी सिद्धान्त मार्क्सवाद-लेनिनवाद के खिलाफ़ लड़ने के लिये सभी कुछ कर रहे हैं। हमारी पार्टी द्वारा किये गये "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त के पर्दाफाश ने चीनी संशोधनवादियों को कठिन परिस्थिति में डाल दिया है, क्योंकि वे हमारे विरोध और पर्दाफाश का सैद्धान्तिक तरीके से जवाब नहीं दे सकते हैं, और ऐसा इसलिये नहीं है कि वे हमसे डरते हैं, बल्कि इसलिये कि वे अपने तर्कों के अभाव से डरते हैं।

माओ त्से-तुङ और तेंग सियाओ-पिङ, जिन्होंने "तीन दुनिया" के मत को या तो शुरू किया था या अपनाया था, इस सिद्धान्त का सैद्धान्तिक तर्कों से समर्थन नहीं करना चाहते थे, क्योंकि वे ऐसा कर ही नहीं सकते थे, और उनका ऐसा न करना बिना मतलब के नहीं था। उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया ? उनकी यह "चूक" एक चाल है, और इसका उद्देश्य लोगों को धोखा देना, और सिर्फ़ इसलिये कि माओ त्से-तुङ ने इसे बनाया है, लोगों से इस गलत सिद्धान्त को बिना किसी वादानुवाद के स्वीकार करा लेना है। माओ त्से-तुङ इस "दार्शनिक" या "राजनीतिक" मत के सैद्धान्तिक आधार को स्पष्ट नहीं कर पाया, क्योंकि इसको किसी तरह से भी स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। वह और उसके चेले दुनिया को तीन में विभाजित करने की अपनी धारणा का प्रचार, तर्कों से इसका बचाव किये बिना, सिर्फ़ इसकी घोषणा करके ही, करते हैं, क्योंकि वे स्वयं जानते हैं कि इस दावे का बचाव नहीं किया जा सकता है।

चीनी "तीन दुनिया" और युगोस्लाव "तटस्थ दुनिया" लगभग एक ही हैं। इन दोनों "दुनियाओं" का उद्देश्य सर्वहारा और सरमायदारों के बीच वर्ग संघर्ष के मिटाने को सैद्धान्तिक तौर से उचित ठहराना है और बड़ी साम्राज्यवादी

व पूंजीवादी शक्तियों को अत्याचार व शोषण की सरमायदारी प्रणाली की रक्षा करने में व इसे जारी रखने में मदद देना है ।

एक झूठे, मार्क्सवाद-विरोधी सिद्धान्त होने के नाते, जिसका कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं है, "तीन दुनिया" के सिद्धान्त, और इसके बारे में चीनी संशोधनवादियों द्वारा बनाई गयी कल्पित कथा ने, न तो "तीसरी दुनिया" के देशों के सर्वहारा व उत्पीड़ित लोगों के जनसमुदाय पर और न इन देशों के नेताओं पर कोई असर डाला है । इन नेताओं, जिनको कि चीनी नेतृत्व अपनी छत्र-छाया में ले लेने की कोशिश कर रहा है, के गहरे तौर पर जमे हुये अपने ही विचार हैं, इनकी अपनी ही विचारधारा और निश्चित दिशाज्ञान हैं, इसलिये चीनी बातों का उन पर कोई असर नहीं होता है । तैंग सियाओ-पिङ व उसका गुट सोचते हैं कि चीन अपनी विशाल सीमा व जनसंख्या के कारण इन देशों पर अपने विचार थोप सकेगा । किसी हद तक, और जब तक कि ये इसकी योजनाओं में विघ्न न डालें, "तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त अमरीकी साम्राज्यवाद के लिये उपयुक्त है । यह सिद्धान्त दुनिया में द्विविधापूर्ण परिस्थितियों के पैदा होने को बढ़ावा देता है, जिन परिस्थितियों का अमरीकी साम्राज्यवाद व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद दोनों ही, अपने आधिपत्य को बढ़ाने, और तथाकथित तीसरी दुनिया के देशों के पूंजीवादी व सरमायदार ज़मीन्दार नेताओं के साथ मिलकर सहयोगी-संघ बनाने और समझौते करने और इन को और भी मज़बूत बनाने के लिये इस्तेमाल करते हैं । यह परिस्थिति चीनी संशोधनवादियों के सामाजिक-साम्राज्यवादी उद्देश्यों के भी काम आती है ।

जहा तक "तटस्थ दुनिया" के सिद्धान्त का सवाल है, युगोस्लाव संशोधनवादी इसे विश्वव्यापक सिद्धान्त बताते हैं, जिसने उनके अनुसार मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त की जगह ले ली है, क्योंकि उनके विचार में मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त "अप्रचलित" हो गया है, व अब "प्रासंगिक" नहीं है, क्योंकि लोग व दुनिया अभिकथित रूप से बदल गये हैं । वे खुले तौर पर मार्क्सवाद-लेनिनवाद का तिरस्कार नहीं करते हैं, जैसा कि करिल्लो करता है, लेकिन वे इसका विरोध "तटस्थ दुनिया" के अपने सिद्धान्त की रक्षा करके करते हैं, जबकि, युगोस्लाव संशोधनवादियों के अनुसार, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा करने वाले हमेशा एक ही "गलती" दोहराते हैं, क्योंकि उनके अनुसार वे यह नहीं मानते हैं कि इस क्रान्तिकारी वाद के सिद्धान्त और आदर्शों को ठीक किया जाना चाहिये, और इसलिये वे "प्रत्यावर्ती" हैं । उनके अनुसार, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया (जो कि उनके हमले का निशाना है) एक "प्रत्यावर्ती" पार्टी है, क्योंकि यह मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्टालिन के वाद, वैज्ञानिक सिद्धान्तों व तरीकों को "उनके समय से बिल्कुल भिन्न दुनिया" में इस्तेमाल करना चाहती है ।

टीटोवादी विचार पूरी तरह से मार्क्सवाद-विरोधी है । और वर्तमान विश्व विकास की क्रियाविधि का जो विश्लेषण वे करते हैं वह इन्हीं स्थितियों पर आधारित है । आम तौर पर आधुनिक संशोधनवाद व विशेषकर युगोस्लाव व चीनी संशोधनवाद क्रान्ति के खिलाफ़ हैं । युगोस्लाव व चीनी संशोधनवादी अमरीकी साम्राज्यवाद को एक शक्तिशाली ताकत समझते हैं जो कि एक ज़्यादा तर्क-सम्पत रास्ता अपना सकता है, वर्तमान दुनिया की "मदद" कर सकता है, जो दुनिया, उनके

अनुसार, विकसित हो रही है और श्रेणीबद्ध होना नहीं चाहती है। लेकिन युगोस्लाव सिद्धान्त "तटस्थ" शब्द की ही उचित व्याख्या नहीं कर पाता है। जिस दुनिया की यह हिमायत करता है, उसमें शामिल देश किस दृष्टिकोण से राजनीतिक, विचारधारात्मक, आर्थिक व सैनिक तौर पर तटस्थ हैं ? छद्मवेशी-मार्क्सवादी युगोस्लाव सिद्धान्त इस सवाल को छूता भी नहीं है और उसका ज़िक्र भी नहीं करता है, क्योंकि ये सभी देश, जिनको कि यह एक नयी दुनिया के बहाने कब्ज़े में करने की कोशिश कर रहा है, अनेक व विभिन्न रूपों से अमरीकी साम्राज्यवाद या सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद पर निर्भर हैं और अपने आपको मुक्त नहीं कर सकते हैं।

युगोस्लाव "सिद्धान्त" इस तथ्य के बारे में बहुत हल्ला मचाता है कि पुराने किस्म का उपनिवेशवाद आम तौर पर मिटा दिया गया है, लेकिन यह इसके बारे में कुछ भी नहीं कहता है कि अनेक लोग नव-उपनिवेशवाद की जकड़ में फंस गये हैं। हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी इस तथ्य से इनकार नहीं करते हैं कि पुराने रूपों में उपनिवेशवाद ख़त्म हो गया है, लेकिन हम जोर देते हैं कि इसकी जगह नव-उपनिवेशवाद ने ले ली है। पहले के वही उपनिवेशवादी, आज भी, अपनी आर्थिक व सैनिक छमता के जरिये लोगों पर अत्याचार कर रहे हैं, और उन पर अपने भ्रष्ट रहन-सहन के तरीके को थोप कर उनको राजनीतिक व विचारधारात्मक तौर पर विघटित कर रहे हैं। टीटोवादी ऐसी परिस्थिति को दुनिया का एक महान अवस्थापरिवर्तन बताते हैं, और कहते हैं कि स्टालिन की तो बात ही छोड़िये, जिनको वे पूर्णरूप से अस्वीकार करते हैं, मार्क्स या लेनिन ने भी ऐसी सम्भावना सोची नहीं थी। उनके अनुसार, लोग अब स्वतन्त्र व आज़ाद हैं और सिर्फ़ तट-

स्थता की आकांक्षा रखते हैं,और दुनिया की सम्पत्ति को एक ज़्यादा युक्तिपूर्ण व उचित तरीकों से बाँटा जाना चाहिये ।

इस "आकांक्षा" को पूरा करने के लिये,युगोस्लाव "सिद्धान्तकार",अमरीकी साम्राज्यवाद,सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद और विकसित पूंजीवादी देशों से,अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों,वादविवादों और एक दूसरे को दी गयी रियायतों के जरिये,वर्तमान दुनिया,जो उनके अनुसार "जागरूकता के ऐसे स्तर पर पहुंच गयी है कि अब समाजवाद की ओर जा सकती है", के रूपपरिवर्तन में अपने सहृदय दिल से योगदान देने की माँग कर रहे हैं ।

इसी "समाजवाद" का टीटो-अनुयायी संशोधनवादी उपदेश देते हैं, जिसको कि वे लोगों को वास्तविकता से ज़्यादा से ज़्यादा दूर हटाने के लिये बढ़ावा देते हैं । क्रान्ति के विरुद्ध होने के नाते,वे सामाजिक शान्ति को बनाये रखने के पक्ष में हैं ताकि सरमायदार व सर्वहारा "निचले वर्गों के जीवन स्तर में सुधार" के बारे में समझौता कर सकें । यानि कि,वे उच्च वर्गों से "दयालू" बन जाने और अपने मुनाफ़ों में से कुछ "धरती के अभागों" को दे देने की गिड़गिड़ा कर भीख माँगते हैं ।

टीटो "तटस्थ दुनिया" के सिद्धान्त को "एक विश्वव्यापी सिद्धान्त" में बदलना चाहता है,जो कि,जैसा कि ऊपर बताया गया है,अभिकथित रूप से "वर्तमान दुनिया की परिस्थिति" के उपयुक्त है । दुनिया के लोग जाग गये हैं और स्वतन्त्रतापूर्वक रहना चाहते हैं,लेकिन टीटो के सिद्धान्त के अनुसार,ये "स्वतन्त्रता" नेटो मण्डल,व वारसा मण्डल की मौजूदगी के कारण इस समय "सम्पूर्ण" नहीं है ।

टीटो अपने आपको मण्डल-विरोधी नीति का नेता व

पताकावाहक बताता है। यह सच है कि उसका देश नेटो या वारसा ट्रीटी का सदस्य नहीं है, लेकिन यह इन सैनिक संगठनों के साथ अनेक तरीकों से जुड़ा हुआ है। युगोस्लाव अर्थव्यवस्था व नीति स्वतन्त्र नहीं हैं, ये उन कर्ज़ों, सहायता रकम, व उधारों के अनुसार बनाई जाती हैं जो कि उन्हें पूंजीवादी देशों से, और उनमें सबसे पहले अमरीकी साम्राज्यवाद से मिलते हैं। इसीलिये वह इस साम्राज्यवाद पर सबसे ज़्यादा निर्भर है। लेकिन टीटो सोवियट साम्राज्यवाद व सभी दूसरी बड़ी पूंजीवादी शक्तियों पर भी निर्भर करता है। इस प्रकार युगोस्लाविया जो कि तटस्थ होने का दावा करता है, अगर विधितः नहीं तो वस्तुतः, महाशक्तियों की हमलावर शक्तियों के साथ श्रेणीबद्ध है।

दुनिया के विभिन्न देशों में टीटो जैसे अनेक नेता हैं जिन्हें कि वह तथाकथित तटस्थ दुनिया में इकट्ठा करना चाहता है। ये व्यक्ति, आम तौर पर, सरमायदार, पूंजीपति व मार्क्स-वाद-विरोधी हैं, और उनमें से अनेक क्रान्ति के खिलाफ़ लड़ रहे हैं। समाजवादी, लोकतन्त्रीय, सामाजिक-लोकतन्त्रीय, रिपब्लिकन, स्वतन्त्र-रिपब्लिकन, आदि, जैसे नामों, जिनको कि इनमें से कुछ व्यक्ति अपनाते हैं, ज़्यादातर हालतों में सर्वहारा व उत्पीड़ित लोगों को, गुलामी में रखने, व उनके साथ राजनीतिक चालें चलने के लिये, जिसकी कीमत लोग चुकाते हैं, धोखा देने के काम आते हैं।

"तटस्थ" राज्यों में मार्क्सवाद-विरोधी पूंजीवादी विचारधारा व्याप्त है। इनमें से कई राज्य महाशक्तियों और दुनिया के सभी विकसित पूंजीवादी राज्यों के साथ टीटोवादी युगोस्लाविया की ही तरह जुड़े व फंसे हुये हैं। टीटो के नेतृत्व में, "तटस्थ दुनिया" में देशों के समूहन, जिसकी

वह दुनिया के सभी देशों के लिये हिमायत करता है, का एकमात्र आधार है, क्रान्ति का दमन करने का, और लोगों को पुराने पूंजीवादी समाज का अन्तर्ध्वंस करने और नये समाज, समाजवाद, की स्थापना करने के लिये विद्रोह में उठ खड़े होने से रोकने का उद्देश्य और उसके लिये काम ।

यही विचार और मुख्य सिद्धान्त इन देशों को एक साथ लाने में टीटो का मार्गप्रदर्शन करते हैं । वह बहाना करता है कि वह इन देशों को एक साथ ला सकता है और उनका नेतृत्व कर रहा है, लेकिन, वास्तव में, ऐसी कोई चीज़ नहीं है, क्योंकि कोई भी "तटस्थ दुनिया" के टीटोवादी सिद्धान्त, या "तीन दुनियाओं" के चीनी सिद्धान्त को उतना महत्व नहीं देता है जितनी कि उनके पताकावाहक इच्छा रखते हैं और उसके लिये कोशिश करते हैं । हर एक अपने ही उस रास्ते पर चलता है जिससे उसे सबसे अधिक और सबसे तुरन्त लाभ हो ।

सभी संकेत यह दिखाते हैं कि अमरीकी साम्राज्यवाद और विश्व पूंजीवाद चीनी "तीसरी दुनिया" की बजाय टीटो की "तटस्थ दुनिया" के पक्ष में हैं । हालांकि वे "तीन दुनियाओं" के चीनी सिद्धान्त का समर्थन करते हैं, विकसित पूंजीवादी देश और अमरीकी साम्राज्यवाद, फ़िर भी, ज़रा चौकस व अनिश्चित हैं, क्योंकि चीन के मज़बूत होने से अनुचित परिस्थितियां पैदा हो सकती हैं और अन्त में यह स्वयं अमरीका के लिये ही खतरा बन सकता है । जबकि टीटो की "तटस्थ दुनिया" से संयुक्त राज्य अमरीका को कोई भी खतरा नहीं है । इसी कारण, टीटो की संयुक्त राज्य अमरीका की पिछली यात्रा के दौरान, कार्टर ने, "तटस्थ दुनिया" बनाने के टीटो के कार्यभाग की बेहद प्रशंसा की, और "तटस्थ देशों" के आन्दोलन को "वर्तमान दुनिया की मुख्य समस्याओं के समाधान में एक बहुत ज़रूरी साधन" बताया ।

"तटस्थ देशों", जिनमें से अधिकांश पूँजीवादी देश हैं, ने पांसा फैंक दिया है । वे राजनीतिक चालें चलना जानते हैं, और वे उन साम्राज्यवादी व पूँजीवादी शक्तियों का पक्ष लेते हैं जो उन्हें सबसे अधिक मदद देती हैं । सरमायदारी व पूँजीवादी विचार के अनुसार, राजनीति में काम करने का मतलब है धोखा देना, चालें चलना, और जितना भी जोर से व जितनी भी बार हो सके दूसरों को चालों में मात कर देना । यह नीति वेश्या-वृत्ति की नीति है, जिसका उद्देश्य, खास समय व मौजूद परिस्थितियों में, अपने वर्ग के हित में व इस वर्ग के मालिकों के हित में, एक ज्यादा शक्तिशाली राज्य से कम से कम थोड़ी नकद रकम पाना है ।

टीटोवाद, अपने "तटस्थ दुनिया" के सिद्धान्त से ठीक इसी नीति का प्रचार करता है । लेकिन इसके सभी जगह एक से ही उद्देश्य नहीं होते हैं, जैसा कि टीटो बताता है । "तटस्थ राज्य" टीटो से सलाह नहीं लेते हैं कि उन्हें क्या करना व कैसे करना चाहिये । कुछ राज्यों में से कुछ को छोड़ कर बाकी के शासक अपनी पूँजीवादी शक्ति का दृढ़ीकरण करने की, लोगों का शोषण करने की, एक बड़े साम्राज्यवादी देश से मित्रता बनाने की, और लोगों के किसी भी विद्रोह व विप्लव, किसी भी क्रान्ति, को रोकने व कुचलने की कोशिश करते हैं । टीटो-वादी "तटस्थ दुनिया" की यही सम्पूर्ण नीति है ।

"तीन दुनियाओं" का चीनी सिद्धान्त भी यथापूर्व स्थिति के पक्ष में है । टीटोवादी "तटस्थ दुनिया" का उद्देश्य, सरमायदारी वर्ग को अमीर बनाने व उनको सत्ता में रखने के लिये, अमरीकी साम्राज्यवाद व दूसरे पूँजीवादी देशों से उधारों की भीख मांगना है । अपने "तीन दुनिया" के सिद्धान्त से चीन भी, एक महाशक्ति बनने के लिये व दुनिया पर अपना

आधिपत्य जमाने के लिये, अपने आपको अमीर बनाना व आर्थिक व सैनिक तौर पर मज़बूत करना चाहता है । इन दोनों "दुनियाओं" के उद्देश्य मार्क्सवाद-विरोधी हैं । वे पूंजी-पक्षीय व अमरीकी साम्राज्यवाद-पक्षीय हैं ।

जैसा कि टीटो की चीन की यात्रा, और हुआ कुआ-फेंग की युगोस्लाविया की यात्रा ने दिखाया है, युगोस्लाव संशोधनवादी चीन की अत्यधिक प्रशंसा व कपटी चापलूसी कर रहे हैं, जो कि चीनी संशोधनवादियों के स्वभाव के अनुकूल की गई है और जिसका उद्देश्य उन्हें युगोस्लाव स्थितियों की ओर आकर्षित करना है, ताकि "तटस्थ देशों" के सिद्धान्त को चीनी संशोधनवादी सिर्फ़ समझें ही नहीं, बल्कि पूरी तरह से अपना लें । हालांकि वे "तीन दुनिया" के अपने सिद्धान्त को नहीं त्यागते हैं, हुआ कुआ-फेंग और तेंग सियाओ-पिङ के नेतृत्व में चीनी संशोधनवादी नेता "तटस्थ दुनिया" के टीटोवादी सिद्धान्त को खुले रूप से समर्थन दे रहे हैं । उन्होंने यह दिखा दिया है कि वे युगोस्लाव संशोधनवादियों के साथ, "तीसरी दुनिया" के लोगों को धोखा देने के सामान्य मार्क्सवाद-विरोधी उद्देश्य से एक ही दिशा में, समानान्तर पटरियों पर निकटता के साथ काम करना चाहते हैं । युगोस्लाव नेता चीन की रक्षा करने के लिये अपने इन विचारों का विस्तार कर रहे हैं । लेकिन इसकी रक्षा करने में, उन्होंने कुछ "तर्क" पेश किये हैं, जो कि चीन को पसन्द नहीं है, क्योंकि वह महत्तोन्मादी राज्य है । टीटोवादी चीन का समर्थन करते हैं, और वे हमारी पार्टी द्वारा किये गये चीनी नेतृत्व के पर्दाफ़ाश के खिलाफ़, यह कहकर कि चीन की वर्तमान नीति अभिकथित रूप से यथार्थवादी है, इसकी रक्षा करते हैं ।

युगोस्लाव नेता कहते हैं कि चीन एक बड़ा देश है जिसका

कि विकास किया जाना है, क्योंकि वह अभी भी एक पिछड़ा हुआ, एक विकसित हो रहा देश है। टीटोवादी दावा करते हैं कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां, जैसे कि पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया, गलत हैं जब कि वे चीन पर उसकी विकास व तटस्थता की उचित आकांक्षाओं के लिये, व राष्ट्रीय मुक्ति लड़ाइयों को इसके द्वारा दी गयी सहायता, इत्यादि, इत्यादि के लिये हमला करती हैं। युगोस्लाविया चीन को अपने उपाश्रित देशों में से एक बनाना चाहता है। युगोस्लाव संशोधनवादियों के लिये महत्वपूर्ण बात यह है कि चीन बिना किसी झिझक के उनके मार्क्सवाद-विरोधी विचारों को अपना ले।

"तटस्थ दुनिया" के अपने सिद्धान्त से, और टीटो के नेतृत्व में युगोस्लाविया ने हमेशा ही अमरीकी साम्राज्यवाद की वफ़ादारी के साथ सेवा की है। टीटो व उसका दल इस समय भी, चीन को संयुक्त राज्य अमरीका के साथ वैरशमन और उसके साथ सहयोगी-संघ बनाने के लिये प्रेरित करने की कोशिश करके वही सेवा कर रहा है। टीटो की पीकिंग की यात्रा और वहां पर उसकी बातचीत का यही मुख्य उद्देश्य था, जिसके परिणामस्वरूप घनिष्ठ मित्रता बनी, जिस मित्रता ने, हुआ कुआ-फेंग की युगोस्लाविया की यात्रा के बाद, सिर्फ़ दोनों राज्यों के बीच ही नहीं, बल्कि दोनों पार्टियों के बीच भी, विस्तृत सहयोग का रूप ले लिया है। टीटो की पीकिंग की यात्रा के दौरान, चीनी नेताओं ने आधी तौर पर यह स्वीकार कर लिया कि लीग आफ़ कम्यूनिस्ट्स आफ़ युगोस्लाविया एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी है, और युगोस्लाविया में सच्चे समाजवाद का निर्माण किया जा रहा है। हुआ कुआ-फेंग की बेल्ग्रेड की यात्रा के समय उन्होंने

पूरी तरह से व सरकारी तौर पर ऐसा कहा ।

दूसरे शब्दों में,माओवादियों ने वैसा ही किया है,जैसा कि अपने समय में मिकोयान व क्रुश्चेव ने किया था, जब कि उन्होंने टीटो को पूरी तरह से एक "मार्क्सवादी" माना और घोषित किया कि "युगोस्लाविया में समाजवाद का निर्माण किया जा रहा है" और "युगोस्लाविया की कम्यूनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी है" ।

संयुक्त राज्य अमरीका,अपनी इच्छा के अनुसार, या तो टीटो की ओर,या हुआ कुआ-फ़ैंग व तेंग सियाओ-पिङ की, डोर खेंचते हैं। ये जोड़ी कठपुथली की तरह है,जो कि बच्चों के थियेटर के मंच पर खुले रूप से नहीं,बल्कि भेष भर कर आते हैं,और जब उनके सिद्धान्तों पर हमला किया जाता है और उन्हें अपने तर्कों के बचाव में कोई तथ्य नहीं मिलते हैं,तो वे घोषित करते हैं कि वे "वाग्युद्ध करना नहीं चाहते हैं" । वे समाजवादी अल्बेनिया के साथ वाग्युद्ध करना क्यों नहीं चाहते हैं,जबकि यह और मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी आफ़ लेबर विश्व मत के सामने उनका बुरी तरह पर्दाफ़ाश करते हैं ? वे किस लिये इन्तज़ार कर रहे हैं ? वे वाग्युद्ध करना नहीं चाहते हैं क्योंकि उनको डर है कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद व क्रान्ति के प्रति उनके विश्वासघाती खेलों का पर्दाफ़ाश हो जायेगा । जब चीनी नेता,युगोस्लाव व दूसरे लोगों के जरिये यह कहते हैं कि वे अल्बेनिया के वाग्युद्ध का जवाब नहीं देंगे,तो इससे उनका अभिप्राय सच्चाई को छिपाना है ।

संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियट संघ,व दूसरे पूंजीवादी देश,निरन्तर ही विभिन्न द्विपक्षीय या बहुपक्षीय मीटिंग, सभी प्रकार के सम्मेलन व कांग्रेस आदि आयोजित कर रहे हैं, संकल्पों को ले रहे हैं,भाषण दे रहे हैं,प्रेस सम्मेलन आयोजित

कर रहे हैं,अनेक झूठ बोल रहे हैं और झूठी आशायें फैला रहे हैं,धमकी दे रहे हैं,और यहाँ तक कि ब्लैकमेल कर रहे हैं। ये सभी बातें उनको दबा रहे संकट से बच निकलने के लिये,कष्ट पा रहे उत्पीड़ित लोगों की बदले की भावना का दमन करने के लिये,व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय व सर्वहारा से चालें चलने के लिये व प्रगतिशील लोकतन्त्रवादियों को धोखा देने के लिये की जाती है । युगोस्लाव व चीनी संशोधनवादी भी, इस कपटी व घृणित खेल में भाग ले रहे हैं ।

"विकासशील दुनिया" का सिद्धान्त भी इसी खेल की एक चाल है, जिसके भी लोगों के मन में द्विविधा पैदा करने के वही मार्क्सवाद-विरोधी उद्देश्य हैं। यह सिद्धान्त राजनीतिक समस्याओं का जिक्र नहीं करता है क्योंकि इसके लिये ऐसा करना व्यर्थ होगा । इस सिद्धान्त के लिये सिर्फ "आर्थिक समस्यायें" और आम तौर पर "विकास की समस्यायें" ही मौजूद हैं । लेकिन "विकासशील दुनिया" का सिद्धान्त कैसा विकास चाहता है, इसकी व्याख्या कोई नहीं करता है । स्वाभावतः,दुनिया के विभिन्न देश, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक व दूसरे सभी छेत्रों में विकास चाहते हैं। सर्वहारा के नेतृत्व में,दुनिया के लोग पुरानी,सड़ी-गली, सरमायदार पूंजीवादी दुनिया का अन्तर्ध्वंस करना,और इसकी जगह नयी दुनिया, समाजवाद, का निर्माण करना चाहते हैं । लेकिन "तटस्थ दुनिया" और "विकासशील दुनिया" के सिद्धान्त इस दुनिया का जिक्र भी नहीं करते हैं ।

जब हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी विभिन्न देशों की बात करते हैं,तो हम उनके बारे में अपनी राय भी देते हैं,और हर देश के विकास के स्तर का,और हर एक राज्य के इस दिशा

में विकास की सम्भावनाओं का मूल्यांकन भी करते हैं । हम कहते हैं कि हर एक देश के लोगों को, अपनी ही शक्ति पर निर्भर करके,क्रान्ति को कार्यान्वित करना व नये समाज का निर्माण करना चाहिये । हम कहते हैं कि स्वतन्त्र,आज़ाद व सर्वसत्ताधिकारी होने के लिये,हर एक राज्य को नये समाज का निर्माण करना चाहिये, अपने अत्याचारियों के खिलाफ़ लड़ना व उनका अन्तर्ध्वंस करना चाहिये,उसको गुलाम बनाने वाले हर साम्राज्यवाद के खिलाफ़ लड़ना चाहिये,अपने राज-नीतिक,आर्थिक व सांस्कृतिक अधिकारों को हासिल करना व उनकी रक्षा करनी चाहिये, और एक सम्पूर्णतया स्वतन्त्र, सम्पूर्णतया आज़ाद जन्मभूमि का निर्माण करना चाहिये जहाँ पर सभी मेहनतकश जनसमुदाय के साथ सहयोगी संघ में मज़दूर वर्ग का शासन हो । हम यही सब कहते हैं और हम दो दुनियाओं के बारे में लेनिनवादी दावे के दृढ़ रक्षक हैं । हम नयी समाजवादी दुनिया के सदस्य हैं और पुरानी पूंजीवादी दुनिया से उसकी मौत तक मुकाबला करते रहेंगे ।

दूसरे सभी "सिद्धान्त",जो दुनिया को "पहली दुनिया", "दूसरी दुनिया", "तीसरी दुनिया", "तटस्थ दुनिया", "विकासशील दुनिया" या भविष्य में गढ़ी जाने वाली किसी अन्य "दुनिया" में विभाजित करते हैं पूंजीवाद की सेवा करते हैं, बड़ी शक्तियों की सेवा करते हैं, और लोगों को गुलामी में रखने के उनके उद्देश्य की सेवा करते हैं । यही कारण है कि हम इन प्रतिक्रियावादी मार्क्सवाद-विरोधी सिद्धान्तों का अपनी पूरी ताकत से मुकाबिला करते हैं ।

सम्पूर्ण दुनिया,और विशेषकर तथाकथित तीसरी दुनिया, तटस्थ दुनिया या विकासशील दुनिया के देश हमारी पार्टी के संघर्ष को सहभावना के साथ देख रहे हैं । हमारे मार्क्स-

वादी-लेनिनवादी विचारों में, हमारी पार्टी की विचार-धारात्मक व राजनीतिक विचारपद्धति में, इन देशों के लोग, जिन्हें कि चीनी, टीटोवादी, व सोवियट संशोधनवादी सिद्धान्त, अमरीकी साम्राज्यवाद के सिद्धान्त, आदि, धोखा देना चाहते हैं, एक सही विचारपद्धति को देखते हैं, जो कि अत्याचार व शोषण से हमेशा के लिये उनकी मुक्ति पाने के सही रास्ते के अनुकूल है।

ठीक इन्हीं कारणों की वजह से, मार्क्सवाद-लेनिनवाद व हमारी पार्टी के दुश्मन हम पर यह आरोप लगाने की कोशिश करते हैं कि हम पंथवादी, चरम वामपक्षी, व ब्लैंक्विस्ट हैं, कि हम अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का सही विश्लेषण नहीं करते हैं बल्कि किसी असामयिक पुरानी धारणा, आदि, पर डटे रहते हैं। यह स्पष्ट है कि वे हमारे क्रान्तिकारी सिद्धान्त की बात कर रहे हैं, जिसको वे "मार्क्सवादी-लेनिनवादी धारणा", "स्टालिनवादी धारणा" आदि कहते हैं।

वे हम पर आरोप लगाते हैं कि हम उन देशों से, जो पुराने उपनिवेशवाद के शोषण के तरीकों से बच निकले हैं और जो नव-उपनिवेशवाद के शोषण के तरीकों में फंस गये हैं, अभिकथित रूप से तुरन्त समाजवाद की कार्यावस्था में जाने, व तुरन्त सर्वहारा क्रान्ति को कार्यान्वित करने की मांग कर रहे हैं। वे सोचते हैं कि वे, इस तरह, हमको जोखिमवादी बताकर हम पर प्रहार कर रहे हैं। लेकिन हमारी पार्टी मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के प्रति वफ़ादार है, जिस सिद्धान्त ने, क्रान्ति के रास्ते की, उन कार्यवाहियों की, जिनमें से इसे गुजरना है, और उन शर्तों की सही तौर पर व्याख्या की है, जिनका इस क्रान्ति को सफलतापूर्वक कार्यान्वित करने के लिये पूरा करना ज़रूरी है, चाहे यह क्रान्ति राष्ट्रीय-लोकतन्त्रीय

व साम्राज्यवाद-विरोधी या समाजवादी हो । हम अपने तानाशाही-विरोधी राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के दौरान इस सिद्धान्त के प्रति वफ़ादार बने रहे, हम इस समय, समाजवाद के निर्माण में इसके प्रति वफ़ादार हैं, और हम अपने विचार-धारात्मक संघर्ष और विदेश नीति में इसके प्रति वफ़ादार रहते हैं । हमारा विश्लेषण सही है, और इसलिये कोई भी मिथ्या अभियोग इसे हिला नहीं सकता है ।

२

चीन की एक महाशक्ति बनने की योजना

शुरू में, विश्व आधिपत्य के लिये अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की विश्वव्यापी नीति का विश्लेषण करते हुये, आधुनिक संशोधनवाद की सभी विभिन्नताओं के उभर आने व उनके विकास, और इसके साथ-साथ मार्क्सवाद-लेनिनवाद व क्रान्ति के खिलाफ़ इन सभी दुश्मनों के संघर्ष का विश्लेषण करते हुये, हमने चीनी संशोधनवाद के स्थान और नीति का भी वर्णन किया था ।

चीन अपनी राजनीतिक कार्यदिशा को मार्क्सवादी-लेनिनवादी बताता है, लेकिन वास्तविकता इसका उल्टा ही दिखाती है । इस कार्यदिशा के सच्चे स्वभाव का ही हम मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को पर्दाफाश करना चाहिये । हमें यह निश्चित करना चाहिये कि चीनी संशोधनवादी सिद्धान्तों को मार्क्सवादी सिद्धान्तों की तरह न बताया जाये, और चीन अपने द्वारा अपनाये गये रास्ते को क्रान्ति के लिये लड़ रहे रास्ते के रूप में न बता पाये, क्योंकि असलियत में यह इसके खिलाफ़ है ।

जिस नीति का चीन अनुसरण कर रहा है, उससे यह और भी अधिक स्पष्ट हो रहा है कि यह देश के अन्दर पूंजीवाद

की स्थितियों को मजबूत करने, दुनिया में अपने आधिपत्य को जमाने, और एक बड़ी साम्राज्यवादी शक्ति बनने की कोशिश कर रहा है, ताकि यह भी "अपना यथायोग्य स्थान" पा सके।

इतिहास दिखाता है कि हर बड़ा पूँजीवादी देश एक बड़ी विश्व शक्ति बनने, दूसरी बड़ी शक्तियों को पार करने व उनसे आगे बढ़ जाने, और उनके साथ विश्व आधिपत्य के लिये प्रतिस्पर्धा करने का लक्ष्य रखता है। साम्राज्यवादी शक्तियां बनने के लिये बड़े सरमायदार राज्यों ने भिन्न रास्तों का अनुसरण किया है, इन रास्तों के भिन्न होने का कारण ऐतिहासिक व भूगौलिक परिस्थितियां, उत्पादक शक्तियों का विकास, आदि, रहे हैं। संयुक्त राज्य अमरीका का रास्ता, पुरानी यूरोपीय शक्तियों, जैसे कि बर्तानिया, फ्रांस, जर्मनी, के रास्तों, जो उपनिवेशवादी कब्ज़ों के आधार पर बनाये गये थे से भिन्न है।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद, संयुक्त राज्य अमरीका ही सबसे बड़ी पूँजीवादी शक्ति रह गयी थी। अपनी बड़ी आर्थिक व सैनिक छमता के आधार पर, और नव-उपनिवेशवाद के विकास के जरिये यह एक साम्राज्यवादी महाशक्ति में बदल गयी। लेकिन कुछ ही समय के अन्दर एक और साम्राज्यवादी शक्ति, सोवियट संघ, भी सामने आयी, जिसे स्टालिन की मृत्यु और क्रुश्चेववादी नेतृत्व द्वारा मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति विश्वासघात के बाद एक साम्राज्यवादी महाशक्ति में बदल दिया गया था। इस मतलब के लिये इसने समाजवाद द्वारा बनायी गयी बड़ी आर्थिक, तकनीकी व सैनिक छमता का इस्तेमाल किया।

इस समय हम एक और बड़े राज्य, वर्तमान चीन, के साम्राज्यवादी महाशक्ति बनने के प्रयत्न देख रहे हैं, क्योंकि यह भी

तेज़ी के साथ पूंजीवाद के रास्ते पर बढ़ रहा है। लेकिन चीन के पास उपनिवेश नहीं हैं, बड़े स्तर पर विकसित उद्योग नहीं है, आम तौर पर एक मज़बूत अर्थव्यवस्था और दूसरी दोनों साम्राज्यवादी महाशक्तियों के स्तर वाली बड़ी तापनाभिकीय छमता नहीं है ।

एक महाशक्ति बनने के लिये, एक विकसित अर्थव्यवस्था, व अणु बम्ब से सशस्त्र सेना का होना, बाज़ारों, प्रभाव छेत्रों, विदेशों में पूंजी के विनियोजन को सुनिश्चित करना, आदि, नितान्त आवश्यक है । चीन इन शर्तों को जल्दी से जल्दी पूरा करने पर तुला हुआ है। यह १९७५ में पीपल्स असेम्बली में दिये गये चाउ इन-लाई के भाषण से व्यक्त था, और इसे चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की ११वीं कांग्रेस के समय फिर से व्यक्त किया गया था, जब कि यह घोषित किया गया था कि, इस शताब्दी के अन्त से पहले, चीन एक शक्तिशाली आधुनिक देश बन जायेगा, जिसका उद्देश्य होगा संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ के बराबर होना । अब इस सम्पूर्ण योजना का विस्तार किया गया है और "चार आधुनिकिकरण" कही जाने वाली नीति में उसको पूरी तरह से पक्का किया गया है ।

लेकिन चीन ने कौन सा रास्ता चुना है, ताकि यह भी एक महाशक्ति बन जाये ? इस समय दुनिया में उपनिवेशों व बाज़ारों पर दूसरों का कब्ज़ा है। बीस साल के अन्दर, अपनी ही शक्तियों के बल पर, अमरीकी व सोवियट संघ की आर्थिक व सैनिक छमता के बराबर छमता बनाना, जैसा करने की चीनी नेता दावा करते हैं, नामुमकिन है ।

इन परिस्थितियों में, एक महाशक्ति बनने के लिये चीन को दो मुख्य प्रावस्थाओं से गुजरना पड़ेगा : पहले, इसको

अपनी स्थानीय सम्पत्ति से फ़ायदा उठाने के लिये अमरीकी साम्राज्यवाद व दूसरे विकसित पूंजीवादी देशों से उधार व नयी तकनालाजी खरीदनी पड़ेगी, जिस सम्पत्ति का एक बड़ा भाग लाभांश के रूप में उधार देने वालों को दिया जायेगा। दूसरे, यह चीनी लोगों द्वारा चुकाई गयी कीमत पर बनाये गये अधिशेष मूल्य को विभिन्न महाद्वीपों में विनियोजन करेगा, ठीक वैसे ही जैसा अमरीकी साम्राज्यवादी व सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादी इस समय कर रहे हैं।

एक महाशक्ति बनने की चीन की कोशिशें, सबसे पहले, इसके द्वारा चुने गये सहयोगियों व सहयोगी-संघ बनाने पर आधारित हैं। इस समय दुनिया में दो महाशक्तियाँ, अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद मौजूद हैं। चीनी नेताओं ने यह निश्चित किया है कि उन्हें अमरीकी साम्राज्यवाद पर निर्भर करना चाहिये, जिस पर अर्थ-व्यवस्था, वित्त, तकनालाजी व संगठन-सम्बन्धी छेत्रों में, व इसके साथ-साथ सैनिक छेत्र में मदद पाने के लिये उन्होंने बड़ी उम्मीदें लगा रखी हैं। वास्तव में, संयुक्त राज्य अमरीका की आर्थिक-सैनिक छमता सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद की छमता से ज़्यादा है। इसे चीनी संशोधनवादी भी अच्छी तरह से जानते हैं, हालांकि वे कहते हैं कि अमरीका अवनति में है। जिस रास्ते पर वे चल रहे हैं, उसके लिये वे एक ऐसे कमज़ोर साझेदार पर निर्भर नहीं कर सकते हैं, जिससे कि उन्हें अधिक कुछ मिल नहीं सकता है। ठीक इसीलिये कि संयुक्त राज्य अमरीका शक्तिशाली है, उन्होंने इसे अपना सहयोगी चुना है।

संयुक्त राज्य अमरीका के साथ सहयोगी संघ बनाने और चीनी नीति को अमरीकी साम्राज्यवाद की नीति के अनुकूल

बनाने के और भी उद्देश्य हैं । इसमें सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के लिये खतरा है,जो कि उन बहरा करने वाले प्रचारों और व्यग्र कार्यवाहियों से स्पष्ट है जो चीनी नेता सोवियट संघ के खिलाफ़ कर रहे हैं । अपनी इस नीति से चीन,संशोधनवादी सोवियट संघ को यह बता दे रहा है कि, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ उसके सम्बन्ध,एक साम्राज्यवादी युद्ध के फूट पड़ने की हालत में,सोवियट संघ के खिलाफ़ एक बहुत ही शक्तिशाली ताकत है ।

वर्तमान चीनी नीति का लक्ष्य दूसरे सभी विकसित पूंजीवादी देशों के साथ मित्रता व सहयोगी संघ स्थापित करना भी है,जिन देशों से यह राजनीतिक व आर्थिक फ़ायदे उठाना चाहता है । चीन,अमरीका और "दूसरी दुनिया",जैसा कि यह इन्हें कहता है,के देशों के बीच सहयोगी-संघ चाहता है, और इसे मज़बूत करने की कोशिश कर रहा है। यह अमरीकी साम्राज्यवाद जिसे कि यह अपना बड़ा साझेदार समझता है, के साथ इनकी एकता,या सही तौर पर उनकी अधीनता,को बढ़ावा दे रहा है ।

यही उन सब निकट सम्बन्धों का स्पष्टीकरण है जिनको सभी सम्पन्न पूंजीवादी राज्यों,जापान,पश्चिम जर्मनी,बर्तानिया,फ्रांस,आदि,के साथ स्थापित करने के लिये चीनी सरकार तुली हुई है,यही संयुक्त राज्य अमरीका व दूसरे सभी विकसित पूंजीवादी देशों,चाहे गणतन्त्र हों या राजतन्त्र,के सरकारी आर्थिक,सांस्कृतिक व वैज्ञानिक प्रतिनिधिमण्डलों की बार-बार चीनी यात्रा, और इसके साथ-साथ इन देशों का चीनी प्रतिनिधि-मण्डलों की यात्रा का स्पष्टीकरण है । संयुक्त राज्य अमरीका,व दूसरे औद्योगिकृत पूंजीवादी राज्यों में सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ लिखी,कही,

व की गई हर बात को सामने लाने की कोशिश करके इन देशों के पक्ष में अपनी विचारनीति का हर मौके पर सबूत देने के लिये की गई चीन की नियमित क्रियाओं का यह स्पष्टीकरण है ।

चीनी नेताओं की यह नीति संयुक्त राज्य अमरीका का ध्यान आकर्षित किये बिना व उसका यथायोग्य समर्थन पाये बिना नहीं रह सकती है । जैसा कि जाना जाता है, दूसरे विश्व युद्ध के समय अमरीकी राज्य विभाग में चीन के विषय पर दो मत थे : एक चियांग काई-शेक पक्षीय व दूसरा माओ त्से-तुङ पक्षीय । लेकिन, उस समय चियांग काई-शेक मत अमरीकी राज्य विभाग व सिनेट में विजयी हुआ, जबकि माओ त्से-तुङ मत की, चीन में विजय हुई । इस मत को बढ़ावा देने वालों में से थे मार्शल, वेन्डीमायर, एडगर स्नो व दूसरे, जो कि चीन के नेताओं के मित्र व सलाहकार, व नये चीन में सभी प्रकार के संगठनों को भड़काने व उकसाने वाले बन गये । इस समय इन सभी पुराने सम्बन्धों को पुनरुज्जीवित, मज़बूत, तीव्र किया जा रहा है व साकार रूप दिया जा रहा है । अब सभी देख सकते हैं कि चीन व संयुक्त राज्य अमरीका एक दूसरे के और भी करीब आते जा रहे हैं । कुछ समय पहले, सबसे-जानकार अमरीकी अखबारों में से एक अखबार "वाशिंगटन पोस्ट" ने लिखा था :"इस समय अमरीका में एक ऐसा एकमत है जिसे दायेंपक्षी लोगों का भी, और पीकिंग से कम सहानुभूति रखने वाले लोगों का भी समर्थन प्राप्त है । इस एकमत के अनुसार, पहले जो कुछ भी हुआ हो, लेकिन अब चीन को संयुक्त राज्य अमरीका के लिये खतरा समझने का कोई कारण नहीं है । दोनों सरकारों के बीच, ताइवान को छोड़ कर, थोड़े ही मामले हैं जिन पर उनमें समझौता नहीं है । वास्तव में, दोनों के बीच

ताइवान के सवाल को अलग रखने का समझौता हो गया है ताकि दूसरे क्षेत्रों में बातें आगे बढ़ सकें ।"

ताइवान का विषय, जिसे कि चीन और संयुक्त राज्य अमरीका के बीच सम्बन्धों में उठाया जाता है, एक औपचारिक विषय ही रहा है । चीन अब इस विषय पर जोर नहीं दे रहा है । इसे हाँग-काँग की चिन्ता नहीं है, और इसकी ज़रा सी भी चिन्ता नहीं है कि मकाओ अभी भी पुर्तगाल के अधीन है । चीनी सरकार यह कह कर कि "भेंट वापस नहीं ली जाती है", इस उपनिवेश को चीन को वापस देने के पुर्तगाल की नयी सरकार के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करती है । उपनिवेशों का समय गुजर चुका है, लेकिन फिर भी, इन उपनिवेशों की मौजूदगी चीनी नेताओं की उपयोगितावादी नीति में ज़रा भी असर नहीं डालती है । जब तक हाँग-काँग व मकाओ उपनिवेश हैं, तो ताइवान भी उपनिवेश क्यों न रहे ? स्पष्टतया चीन चाहता है कि ताइवान भविष्य में भी ऐसा ही बना रहे जैसा कि इस समय है । दिन दहाड़े किये जाने वाले अपने खुले आम सम्बन्धों के अलावा, यह इन तीन उपनिवेशों के जरिये अमरीकी साम्राज्यवाद, बर्तानवी, जापानी, व दूसरे साम्राज्यवादियों के साथ छिपा व्यापार करना चाहता है । इसलिये, तेंग सियाओ-पिङ और ली स्यिन-नीन की यह बकवास, कि चीनी-अमरीकी सम्बन्ध अभिकथित रूप से ताइवान के प्रति अमरीका के रुख पर निर्भर करते हैं, उस रास्ते को छिपाने के लिये पर्दा है, जिस पर, एक महाशक्ति बनने के लिये, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ वैरशमन करने के लिये चीन चल पड़ा है ।

कार्टर ने घोषित किया है कि संयुक्त राज्य अमरीका चीन के साथ राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित करेगा । जहाँ तक

ताइवान का सवाल है, यह जापान वाली विचारनीति अपनायेगा, यानि कि, वह इस द्वीप के साथ आर्थिक व सांस्कृतिक सम्बन्धों को तोड़े बिना, व इस बहाने सैनिक सम्बन्धों को तोड़े बिना, राजनयिक सम्बन्धों को औपचारिक तौर पर तोड़ लेगा। वास्तव में, चीन ताइवान और संयुक्त राज्य अमरीका के बीच सैनिक सम्बन्ध चाहता है। यह चाहता है कि संयुक्त राज्य अमरीका, ताइवान, जापान, दक्षिण कोरिया और हिन्द महासागर में अपनी शक्तियां बनाये रखे, क्योंकि यह सोचता है कि यह चीन के फ़ायदे में होगा, क्योंकि इससे सोवियट संघ का मुकाबला करने की एक ताकत बनती है।

यह सभी विचारनीतियां उस रास्ते से सम्बन्धित हैं जिसे कि चीनी नेतृत्व ने, संयुक्त राज्य अमरीका व दूसरे बड़े पूंजीवादी देशों से उधार विनियोजनों के जरिये अपनी अर्थव्यवस्था में विकास और सैनिक छमता में बढ़ोत्तरी करके एक महाशक्ति बनने के लिये चुना है। इस रास्ते को उचित ठहराने के लिये यह दावा करता है कि यह अभिकथित रूप से एक सही नीति, माओत्से-तुङ की "मार्क्सवादी" कार्यदिशा पर चल रहा है, जिसके अनुसार "चीन को दुनिया की महान सफलताओं, नये पेटेण्ट व तकनालाजी से फ़ायदा उठाना चाहिये, विदेशी चीज़ों को चीन के आन्तरिक विकास के काम में लाना चाहिये", आदि। रेन्मिन रिबाओ के लेख और चीनी नेताओं के भाषण ऐसे नारों से भरे हुये हैं। चीनी धारणा के अनुसार, दूसरे राज्यों के आविष्कारों व औद्योगिक सफलताओं से फ़ायदा उठाने का मतलब है, संयुक्त राज्य अमरीका, जापान, पश्चिम जर्मनी, फ़्रांस, बर्तानिया व सभी दूसरे पूंजीवादी देशों से उधार लेना व उनके विनियोजनों को स्वीकार करना, जिस धारणा की यह बेहद प्रशंसा करता है।

चीनी नेताओं द्वारा अपनाये गये संशोधनवादी सिद्धान्तों

के अनुसार, बड़ी परिसम्पत्ति वाले चीन जैसे बड़े देश अमरीकी साम्राज्यवाद या किसी भी शक्तिशाली पूंजीवादी राज्य, ट्रस्ट या बैंक से उधार ले सकते हैं, क्योंकि अभिकथित रूप से उनके पास उधार चुकाने की सम्भावनायें हैं। युगोस्लाव संशोधनवादी इस धारणा की रक्षा करते हैं। विश्व वित्तीय अल्पजनाधिपत्य और खास तौर से अमरीकी पूंजी की सहायता से "विशेष समाजवाद के निर्माण" के अपने अनुभव का विज्ञापन करके, वे उदाहरण सामने रख रहे हैं और चीन को बिना किसी संकोच के इस रास्ते पर चलने के लिये बढ़ावा दे रहे हैं।

बड़े देश लिये हुये कर्ज़े को चुका सकते हैं, लेकिन इन बड़े देशों में, जैसे कि संशोधनवादी सोवियट संघ, चीन, या किसी भी दूसरी जगह, किये गये साम्राज्यवादी विनियोजन अवश्य ही गम्भीर नव-उपनिवेशवादी परिणाम छोड़ेंगे। लोगों की सम्पत्ति व मेहनत का विदेशी पूंजीवादी व्यापार-संस्थाओं व एकाधिकारों के हित में भी शोषण किया जाता है। अमरीकी साम्राज्यवादी, और इसके साथ-साथ पश्चिमी यूरोप के विकसित पूंजीवादी राज्य या जापान, जो कि चीन और संशोधनवादी देशों में विनियोजन कर रहे हैं, इन देशों के ट्रस्टों व मुख्य उद्योगों की शाखाओं के साथ अपने देशों की व्यापार-संस्थाओं को गहरे सहयोग में अन्तर्ग्रथित करने के लिये इन देशों में पक्की तरह से जम जाना चाहते हैं।

चीन में साम्राज्यवादी राज्यों द्वारा पूंजी विनियोजन का सवाल इतना साधारण नहीं है, जितना कि संशोधनवादी उसे यह कहकर बनाने की कोशिश करते हैं, कि उनके देशों में पूंजी का यह प्रवेश हानिकारक नहीं है, क्योंकि, अभिकथित रूप से यह पूंजी अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों के जरिये नहीं आ रही है (हालांकि उच्च चीनी नेताओं ने हाल ही में घोषित किया है

कि वे विदेश से सरकारी उधार भी स्वीकार करेंगे), बल्कि निजी बैंकों व कम्पनियों के जरिये आ रही है जिसके कोई भी राजनीतिक मतलब व स्वार्थ नहीं हैं। किसी भी देश द्वारा, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, एक या दूसरे साम्राज्य-वाद से भारी कर्ज़ लेना इस रास्ते पर चलने वाले देश की स्वतन्त्रता, आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार के लिये हमेशा ही भारी अविश्यम्भावी खतरों से भरा है, विशेषकर चीन जैसे आर्थिक रूप से गरीब देशों के लिये। एक सच्चे समाजवादी देश को ऐसे कर्ज़ लेने की ज़रूरत नहीं होती है। यह अपने आर्थिक विकास की ज़रूरतों को देश के अन्दर ही, अपनी सम्पत्ति में, अपने आन्तरिक संचय और लोगों की सृजनात्मक शक्ति में पाता है। एक छोटे देश, अल्बेनिया, का उदाहरण स्पष्ट रूप से दिखाता है कि एक समाजवादी देश अपने विकास के लिये कितने अपार साधन, तरीके, व छमतायें रखता है। और एक बड़े देश के साधन व तरीके और भी ज़्यादा होंगे, अगर यह दृढ़तापूर्वक मार्क्सवाद-लेनिनवाद के रास्ते पर चले।

अमरीकी साम्राज्यवाद और बड़ी अमरीकी व दूसरे पश्चिमी देशों की कम्पनियों के लिये चीनी बाज़ार के खोल दिये जाने का संयुक्त राज्य अमरीका के साम्राज्यवादियों और सभी अन्तर्राष्ट्रीय सरमायदारों ने अत्यन्त खुशी के साथ स्वागत किया है। संयुक्त राज्य अमरीका की बहुराष्ट्रीक कम्पनियों व उद्योगपतियों को चीनी अर्थव्यवस्था व उसकी बड़ी परिसम्पत्ति के बारे में अच्छी जानकारी है, इसीलिये वे वहाँ पर अपने आर्थिक राज को फैलाने, और संयुक्त कम्पनियों की स्थापना करने व भारी मुनाफ़ा बनाने, के लिये जी-जान से कोशिश कर रहे हैं। सिर्फ़ बड़ी अमरीकी कम्पनियाँ ही नहीं, बल्कि जापान, जर्मनी व दूसरे विकसित पूंजीवादी देशों

की कम्पनियां भी चीन में इसी तरह काम कर रहीं हैं ।

चीन ने जापान के साथ प्रतिसाल एक करोड़ टन तेल देने की संविदा पक्की है। इटली के ई०एन०आई० के प्रतिनिधियों की एक बड़ी टीम, तेल खोजने के उपकरणों का लाइसेंस देने के लिये चीन गई, लेकिन उनके आने से पहले ही अमरीकी तेल कम्पनियां वहां पहुंच चुकी थीं, जिन्होंने तेल के संयुक्त निष्कासन व इस्तेमाल के लिये चीन के साथ समझौते कर लिये थे। दूसरे खनन क्षेत्रों, जैसे कि लोहा व अन्य खनिज पदार्थों, में भी चीन ऐसा ही कर रहा है, जिन पदार्थों के बड़े स्रोत या तो अभी से मालूम हैं या मालूम किये जायेंगे । जर्मनी के कोयले के बड़े उद्योगपति इस समय चीन में हैं और उसके साथ अरबों मार्क के संविदा पक्के कर चुके हैं । चीनी मंत्री, उधार लेने, आधुनिक तकनीकी उपकरणों के लिये संविदा पर हस्ताक्षर करने, तक-नीकी-वैज्ञानिक समझौते पक्के करने, आदि, के लिये बार-बार जापान, अमरीका व यूरोप जा रहे हैं। सभी चीनी संस्थाओं व कारोबारों के दरवाज़े टोक्यो, वाल स्ट्रीट व यूरोपियन कामन मार्केट के व्यापारियों के लिये खोल दिये गये हैं, जो कि जल्दी से जल्दी पीकिंग की ओर दौड़ रहे हैं, और चीनी सरकार की बड़ी "आधुनिकीकरण" परियोजनाओं के ठेके पाने के लिये एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं । इस प्रकार चीन भी, साम्राज्यवादी लोभ, खनिज व कच्चे पदार्थों, और चीनी श्रम शक्ति के शोषण की बड़ी साम्राज्यवादी भूख के जाल में फंस रहा है ।

हर कोई जानता है कि पूंजीवादी अपने आर्थिक, राज-नीतिक व विचारधारात्मक हितों को ध्यान में रखे बिना किसी को भी मदद नहीं देते हैं। यह सिर्फ़ उसके द्वारा बनाये गये मुनाफ़े की प्रतिशतता का सवाल नहीं है । अपने द्वारा

दिये गये उधार के साथ-साथ, पूंजीवादी देश,इसकी "सहा-यता" पाने वाले देश में,अपने रहन-सहन के तरीके,और सोचने के पूंजीवादी तरीके को प्रचलित करते हैं,अपने आस्थानों को स्थापित करके अपने प्रभाव का कपटी तौर पर विस्तार करते हैं,अपने मकड़ी के जाल को फैलाते हैं,जिसमें मकड़ी हमेशा बीच में होती है और इसके जाल में फंस जाने वाली सभी मक्खियों के खून को चूसने के लिये तैयार रहती है,जैसा कि युगोस्लाविया में हुआ था और इस समय सोवियट संघ में हो रहा है। चीन में भी,ऐसा ही होगा ।

इसके परिणामस्वरूप, चीन को राजनीतिक व विचार-धारात्मक सवालों पर पीछे हटना पड़ेगा,जैसा कि वह अभी भी कर रहा है,और चीनी बाज़ार अमरीकी साम्राज्यवाद व दूसरी औद्योगिकृत पूंजीवादी शक्तियों के लिये ज़रूरी डीबाउच* (बाहर निकलने का साधन ... अनुवादक) बन जायेगा ।

चीन को दिये जा रहे अमरीकी,पश्चिम जर्मनी,जापानी व दूसरे उधार व विनियोजन अवश्य ही उसकी स्वतन्त्रता व सर्वसत्ताधिकार पर किसी न किसी हद तक असर डालेगा। ऐसे उधार, उधार पाने वाले हर राज्य को निर्भर बना देते हैं,क्योंकि उधार देने वाला देश इस पर अपनी नीति थोपता है । इसलिये साम्राज्यवाद की क्रियाविधि में फंस जाने वाले किसी भी,बड़े या छोटे राज्य की राजनीतिक स्वतन्त्रता,आज़ादी व सर्वसत्ताधिकार में कमी हो जाती है या यह इन्हें पूरी तरह से खो बैठता है । सोवियट संघ भी एक कम सर्वसत्ता-धिकार वाला देश बन गया है,हालांकि जब वह पूंजीवाद की पुनःस्थापना के रास्ते पर चल पड़ा था तो वह आर्थिक व

---

* मूलप्रति में फ्रैंच शब्द

सैनिक स्तर पर वर्तमान चीन से कहीं ज़्यादा शक्तिशाली था, जो कि इसी रास्ते पर चल पड़ा है ।

स्वभावत: जब छोटे देश स्वयं साम्राज्यवाद की क्रियाविधि में फंस जाते हैं, तो वे अपनी स्वतन्त्रता व आज़ादी को चीन व सोवियट संघ जैसे बड़े देशों से ज़्यादा जल्दी खो बैठते हैं, जब कि बड़े देश अपनी स्वतन्त्रता व आजादी को धीरे-धीरे खोते हैं, सिर्फ़ इसलिये ही नहीं कि उनके पास आर्थिक व सैनिक छमता ज़्यादा है, बल्कि इसलिये भी कि, इस छमता पर निर्भर करके, वे अपने बाज़ारों की रक्षा करने व नये बाज़ारों को पाने, और एक दूसरे पर दबाव डालने के लिये अपने प्रभाव छेत्र बनाने व उनका विस्तार करने के लिये संघर्ष करते हैं, और अगर बच निकलने का कोई रास्ता न मिले तो युद्ध भी शुरू करते हैं । लेकिन यह भी उन्हें उधार व विनियोजन की जंजीरों से नहीं बचा पाते हैं, जिनसे वे पूरी तरह बंधे होते हैं । उधारों को ब्याज समेत चुकाना पड़ता है । निस्सन्देह अगर आप इन्हें चुका नहीं पायेंगे, तो नये उधार लेने पड़ेंगे । उधार बढ़ते जाते हैं, और पूंजीपति अपनी रकम का तकाज़ा करता है, और जब आप दे नहीं पाते हैं तो वह आप पर दबाव डालता है । उदाहरण के तौर पर, अमरीकी एकाधिकारी कम्पनियां, जो कि अपनी नीति को सरकार पर थोपती हैं, हर तरीके से अपनी पूंजी की रक्षा करने के लिये, और अगर ज़रूरत पड़े तो, उनकी रक्षा करने के लिये, युद्ध भी शुरू करने के लिये बाध्य करती हैं ।

अपने देश की अर्थव्यवस्था के विकास के लिये, अमरीकी साम्राज्यवाद, व संयुक्त राज्य अमरीका के पूंजीपतियों पर अपने आपको आधारित करने की अपनी कोशिशों में, चीनी नेता जो उत्साह दिखा रहे हैं, उसको देखकर, इस साम्राज्यवाद

के कमज़ोर हो जाने के बारे में उनकी बकवास प्रभावहीन हो जाती है । अमरीकी साम्राज्यवाद के कमज़ोर हो जाने जाने के बारे में उनके दावे सिर्फ़ एक झूठ हैं, ठीक उसी तरह जैसे कि अपनी ही शक्तियों पर निर्भर होने की उनकी घोषणा । चीनी संशोधनवादी जो कहते हैं, उससे ठीक उल्टा सोचते हैं, जैसा कि हर कोई उनके अभ्यास से देख सकता है ।

सरकारी चीनी अखबार अकसर उन उधारों के बारे में चिन्ता जाहिर करते हैं जिन्हें सामाजिक-साम्राज्यवादी सोवियट संघ अमरीकी, पश्चिम जर्मन, जापानी व दूसरे बैंकों से लेता है । वे संयुक्त राज्य अमरीका व दूसरे विकसित पूंजीवादी देशों को सावधान रहने की चेतावनी देता है, क्योंकि सोवियट संघ उनके द्वारा दी गयी तकनीकी सहायता व उधारों का अपनी आर्थिक व सैनिक छमता का विकास करने व उन्हें मज़बूत करने के लिये इस्तेमाल करता है, और यह कि, यह सहायता व उधार सामाजिक-साम्राज्यवाद की ओर से उनके खतरे को बढ़ा देते हैं, जिसने, चीनी नेताओं के अनुसार, थर्ड राइख की जगह ले ली है । इसलिये, वे इन उधारों को जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी रोकने की मांग कर रहे हैं । चीनी प्रेस माध्यम उसी तरह बात करता जैसे कि कुख्यात पश्चिम-जर्मन नाट्ज़ी और प्रसारवादी स्ट्रास ।

सोवियट संघ को दिये जाने वाले उधारों के बारे में चीनी नेता जो "चिन्ता" दिखा रहे हैं उसका असली मतलब समझना कठिन नहीं है । स्वभावतः वे न तो इन उधारों के पूंजीवादी स्वभाव के बारे में, और न ही सोवियट राज्य के सर्वसत्ताधिकार को इन उधारों से पैदा हुये खतरे के बारे में चिन्तित हैं । लेकिन वे अमरीकी पूंजी के अमीरों व संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार को, और दूसरे साम्राज्यवादी देशों के पूंजी-

पतियों व सरकारों को यह कहना चाहते हैं कि उन्हें ये उधार और सहायता सोवियट संघ की जगह चीन को देनी चाहिये, जो कि उनके लिये खतरे का नहीं, बल्कि मुनाफ़े बनाने का एक जरिया है ।

एक महाशक्ति बनने की चीनी योजना का यह एक पहलू है । दूसरा पहलू है दुनिया के कम विकसित देशों पर आधिपत्य जमाने, और जिसे चीन "तीसरी दुनिया" कहता है उसका लीडर• बनने की कोशिशें ।

इस समय चीन में शासन करने वाला गुट "तीसरी दुनिया" के बारे में बहुत ज़ोर देता है, जिसमें वे न तो आकस्मिक तौर पर और न बेमतलब से चीन को भी शामिल करते हैं । चीनी संशोधनवादियों की "तीसरी दुनिया" का एक निश्चित राजनीतिक उद्देश्य है । यह उस नीति का भाग है जिसका उद्देश्य चीन को जल्दी से जल्दी एक महाशक्ति में बदलना है । एक बड़ी शक्ति बनने के लिये चीन "तीसरी दुनिया" के सभी देशों या "तटस्थ" देशों या "विकासशील देशों" को अपने साथ करना चाहता है, जो कि सिर्फ़ चीन की कुल छमता को ही नहीं बढ़ायेगी, बल्कि, दूसरी दोनों महाशक्तियों, संयुक्त राज्य अमरीका व सोवियट संघ का मुकाबला करने, बाज़ारों व प्रभाव छेत्रों के बंटवारे के सौदे में अधिक दबाव रखने, और एक साम्राज्यवादी महाशक्ति के सच्चे पद को पाने के लिये चीन की मदद भी करेगी । चीन दुनिया के ज़्यादा से ज़्यादा राज्यों को अपने साथ करने के उद्देश्य को पूरा करने के लिये इस नारे का इस्तेमाल कर रहा कि वह अभिकथित रूप से नव-

---

• मूलप्रति में अंग्रेज़ी में

उपनिवेशवाद से लोगों की मुक्ति और साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष के जरिये समाजवाद में उनकी अवस्थापरिवर्तन के पक्ष में है । चीन इस साम्राज्यवाद के बारे में कुछ परोक्ष रूप से बात करता है, लेकिन यह ज़ोर देता है कि सोवियट साम्राज्यवाद खतरनाक है ।

चीन ने इस बाज़ारू नारे को, जिसमें बिल्कुल भी सैद्धान्तिक सार नहीं है, अपने आधिपत्यवादी उद्देश्यों को पूरा करने के साधन के रूप में इस्तेमाल करने की उम्मीद से शुरू किया है । शुरू में, वह तथाकथित तीसरी दुनिया पर आधिपत्य जमाना चाहता है, और फ़िर इस "दुनिया" का अपने साम्राज्यवादी हितों के लिये इस्तेमाल करना चाहता है । इस समय, वह एक समाजवादी देश होने की अपनी प्रतिष्ठा से इसे छिपाने की कोशिश कर रहा है । वह इस धारणा से फ़ायदा उठाने की कोशिश कर रहा है कि एक समाजवादी देश, दूसरों को गुलाम बनाने, या दूसरों पर नेतृत्व जमाने, उनका ब्लैकमेल करने, उनसे लड़ने, उन पर अत्याचार करने और उनका शोषण करने के इरादे नहीं रख सकता है । यह इस नारे का इस्तेमाल कर रहा है, और इसके लिये इस प्रतिष्ठा से फ़ायदा उठा रहा है कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी, "महान" माओ त्से-तुङ द्वारा बनाई गई, अभिकथित रूप से एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी है, जो मार्क्स और लेनिन के सिद्धान्त, पर वफ़ादारी के साथ अटल रहती है, एक ऐसे सिद्धान्त पर जो पूंजीवादी प्रणाली, उपनिवेशवादी शोषण, आदि, की सभी बुराइयों के खिलाफ़ है ।

एक ऐसा भेष भरके जो वास्तव में यह नहीं है, "तीसरी दुनिया" के वाक्यांश की ओट में, और बिना किसी कसौटी या वर्ग व्याख्या के अपने आपको इस "दुनिया" में शामिल करके, चीन सोचता है कि वह इस दुनिया पर अपने आधिपत्य

जमाने के अपने नीतियुक्त लक्ष्य को ज़्यादा आसानी से पूरा कर पायेगा । सोवियट संघ ने भी दूसरे देशों के साथ इसी तरह के धोखे का अभ्यास किया था । सभी क्रुश्चेव-अनुयायी संशोधनवादी दिन रात चिल्लाते हैं कि वे "कम्यूनिस्ट" हैं, और उनकी पार्टियां "सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां" हैं । सोवियट संशोधनवादी भी, इसी भेष के जरिये दुनिया पर अपना आधिपत्य जमाने की कोशिश कर रहे हैं । इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि चीनी संशोधनवादियों और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवादियों की क्रियाओं के बीच कोई खास अन्तर नहीं है ।

चीनी नीति और क्रियाओं का यह सब विकास मार्क्स-वाद-लेनिनवाद के इस विवरण की पूरी तरह से पुष्टि करता है कि साम्राज्यवाद वित्तीय अल्पजनाधिपत्य का आधिपत्य है जो कि बाज़ारों पर कब्ज़ा करने, दुनिया को अधीन बनाने, व सभी जगह अपने आधिपत्य को स्थापित करने पर तुला हुआ है । इस रास्ते पर चल कर, चीन भी "तीसरी दुनिया" के देशों में प्रवेश करने और वहां अपने "पांव जमाने" की कोशिश कर रहा है । लेकिन यह "पांव जमाना" बड़ी कुर्बानियों के जरिये ही हो सकता है ।

"तीसरी दुनिया" में प्रवेश करने व बाज़ारों पर कब्ज़ा करने के लिये पूंजी की ज़रूरत होती है । "तीसरी दुनिया" के देशों में सत्ता में होने वाले शासक वर्ग विनियोजन, उधार व "सहायता" चाहते हैं । परन्तु चीन उन्हें बड़ी मात्रा में "सहायता" देने की स्थिति में नहीं है, क्योंकि इसके पास आवश्यक आर्थिक छमता नहीं है । ठीक इसी छमता को यह इस समय अमरीकी साम्राज्यवाद की सहायता से बनाने की कोशिश कर रहा है । इन हालतों में, "तीसरी दुनिया" के

देशों में शासन करने वाले सरमायदार अच्छी तरह जानते हैं कि वे,कुछ समय के लिये,चीन से आर्थिक,तकनीकी,या सैनिक तौर पर ज़्यादा फ़ायदा उठा नहीं सकेंगे । उन्हें अमरीकी साम्राज्यवाद और सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद से ज़्यादा मदद मिल सकती है,जिनकी आर्थिक,तकनीकी व सैनिक छमता ज़्यादा है ।

लेकिन, साम्राज्यवादी उद्देश्यों वाले किसी भी देश की तरह,चीन दुनिया के बाज़ारों के लिये लड़ रहा है, व आगे और भी सख्ती से लड़ेगा । वह अपने प्रभाव को फैलाने व अपने आधिपत्य का विस्तार करने की कोशिश कर रहा है व आगे और भी सख्ती से कोशिश करेगा । ये योजनायें इस समय भी स्पष्ट हैं । चीन अपने बैंकों को सिर्फ़ हांग-कांग में ही नहीं, जहां इसके बैंक बहुत समय से हैं,बल्कि यूरोप व दूसरी जगहों पर भी खोल रहा है । वह खास तौर से "तीसरी दुनिया" के देशों में बैंक खोलने व उनको पूंजी का निर्यात करने की कोशिश करेगा । इस समय यह इस छेत्र में बहुत कम काम कर रहा है । चीन की कुल "सहायता" से कुछ सिमेण्ट फ़ैक्टरी, रेलवे,या अस्पताल ही बने हैं,क्योंकि इसकी "सहायता" देने की छमता सीमित है । जब चीन में अमरीकी, जापानी व दूसरे विनियोजनों के वे परिणाम होंगे,जो यह चाहता है, यानि कि ,जब इसकी अर्थव्यवस्था,व्यापार व सैनिक तकनालाजी विकसित हो जायेगी,सिर्फ़ तभी चीन असल में बड़े-पैमाने पर आर्थिक व सैनिक प्रसार के काम शुरू करने के योग्य होगा । लेकिन ऐसा होने के लिये समय की ज़रूरत है ।

उस समय तक,इसको, जैसा कि यह अभी से ही कर रहा है,"सहायता",और उधार को,एक ऐसे समय जब कि सोवियट व अमरीकी बहुत ज़्यादा ब्याज की दर मांग रहे हैं,या तो

बिना ब्याज के या कम ब्याज की दर पर देने की नीति से काम करना होगा । जब तक कि चीन अपने देश से पूंजी का निर्यात करने के योग्य नहीं हो जाता है,संशोधनवादी चीनी नेतृत्व "विकासशील देशों" को दी गई छोटी रकम की "सहा-यता" व उधार के "अन्तर्राष्ट्रीय स्वभाव" और "स्वार्थहीन उद्देश्य" की बेहद प्रशंसा करके,और हर एक देश की मुक्ति और निर्माण के "आत्म-निर्भरता" के आदर्श को इसके साथ जोड़ कर,अपना ध्यान इस "सहायता" व उधार के प्रसारसम्बन्धी पहलू पर केन्द्रित करेगा ।

चीन जितना भी ज़्यादा आर्थिक व सैनिक तौर पर विकसित होगा, उतना ही ज़्यादा यह पूंजी के निर्यात के जरिये छोटे और कम विकसित देशों में प्रवेश करना व उन पर आधिपत्य जमाना चाहेगा,और तब यह अपने उधारों पर १-२ प्रतिशत ब्याज वसूल नहीं करेगा, बल्कि दूसरों की ही तरह बर्ताव करेगा ।

लेकिन यह सभी योजनायें व कोशिशें आसानी से कार्यान्वित नहीं की जा सकती हैं । विकसित साम्राज्यवादी व पूंजीवादी देश,जिनका कि तथाकथित तीसरी दुनिया के देशों पर प्रभाव है,बहुत समय पहले लुटेरी लड़ाइयों के जरिये जीते गये बाज़ारों पर चीन को आसानी से कब्ज़ा नहीं करने देंगे । सिर्फ़ यही नहीं कि वे अपनी पुरानी स्थितियों की मज़बूती के साथ रक्षा कर रहे हैं,बल्कि नयी स्थितियों पर कब्ज़ा करने की भी पूरी तरह से कोशिश कर रहे हैं,और चीन को इन देशों पर हाथ धरने नहीं दे रहे हैं ।

साम्राज्यवाद अपनी कठिनाइयों की, या फलने-फूलने की हालत,इन दोनों में ही,अपने सभी साझेदारों के प्रति बेरहम रहता है । यह कभी-कभी,आवश्यकता के कारण व और भी

ज़्यादा मुनाफ़ा बनाने के लिये कुछ रियायत दे सकता है,लेकिन ज़्यादातर यह,सिर्फ़ कमज़ोर देशों के खिलाफ़ ही नहीं,बल्कि विकसित देशों,जैसे कि औद्योगिकृत पूंजीवादी राज्य,के खिलाफ़ भी अपनी जंजीरें मज़बूत करने की कोशिश करता है। उदाहरण के लिये,संयुक्त राज्य अमरीका ने अपने पूंजीवादी सहयोगियों की ओर,हमेशा ही,जब कभी भी उन्होंने अपने बीच शुरू हो जाने वाले साम्राज्यवादी युद्ध के कारण अपने आपको कठिनाइयों में पाया है ऐसी नीति का अनुसरण किया है। लेकिन इन युद्धों के खत्म हो जाने के बाद भी,जब कि वे पूर्वावस्था पाने की कोशिश कर रहे थे,अमरीकी साम्राज्यवाद ने इन देशों को दुनिया के दूसरे देशों में, जहां इसने अपना आधिपत्य जमा लिया था,प्रवेश करने से रोकने के लिये पूरी कोशिश की है। इस प्रकार,दूसरे विश्व युद्ध के बाद,संयुक्त राज्य अमरीका ने, यह बहाना करते हुये कि वह बर्तानिया और फ़्रांस, जो कि युद्ध के कारण कमज़ोर हो गये थे,की मदद कर रहा है,स्टर्लिंग, फ़्रैंक व दूसरे छेत्रों के बाज़ारों में गहरी तौर पर प्रवेश किया। धातुकर्मी,रसायनिक,यातायात व पूंजीवाद के विकास के लिये अनेक दूसरी नितान्त आवश्यक शाखाओं के अमरीकी एका-धिकारों व उत्पादक-संघों ने अत्यधिक मात्रा में बर्तानिया, फ़्रांस,आदि,के एकाधिकारों व उत्पादक संघों में प्रवेश किया और इन देशों को अमरीकी साम्राज्यवाद के अधीन बनाया। दूसरे किसी भी साम्राज्यवाद की तरह,यह खूंख्वार व अतृप्य साम्राज्यवाद चीन के साथ भी किसी भिन्न तरीके से बर्ताव नहीं करेगा।

"तीसरी दुनिया" के देशों में आर्थिक व सैनिक प्रवेश की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुये, चीन सोचता है कि उन

पर इसका आधिपत्य राजनीतिक व विचारधारात्मक प्रभाव को स्थापित करके जमाया जा सकता है। यह सोचता है कि तीन दिशाओं में काम करने से यह प्राप्त किया जा सकता है: अमरीकी साम्राज्यवाद और पूंजीवादी देशों में शासक गुटों के खिलाफ़ न लड़ कर, बल्कि इसकी बजाय इस साम्राज्यवाद और इन गुटों के साथ सहयोगी-संघ बनाकर; सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, जो कि इसकी अपनी सीमाओं पर ही मौजूद है, के एशिया, अफ्रीका व लैटिन अमरीका में होने वाले आस्थानों को कमज़ोर करने व नष्ट करने के लिये इसके खिलाफ़ लड़ कर; किसी भी क्रान्तिकारी मुक्ति आन्दोलन का अन्तर्ध्वंस करने के साथ-साथ, छद्मवेषी-क्रान्तिकारी व छद्मवेषी-समाजवादी बाज़ारूपन व चालों से इन महाद्वीपों के सर्वहारा व लम्बे-अरसे से कष्ट पा रहे लोगों को धोखा देकर ।

अमरीकी साम्राज्यवाद और दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियां व सामाजिक-साम्राज्यवाद चीन के इन उद्देश्यों को अच्छी तरह जानते हैं । "तीसरी दुनिया" के देश भी इन्हें समझते हैं, और इसलिये वे चीन पर शक करते हैं, और वे देख रहे हैं कि यह उन्हें धोखा दे रहा है, कि इसका उद्देश्य उनको समर्थन व सहायता देने का नहीं बल्कि स्वयं एक महाशक्ति बनने का है । तथाकथित तीसरी दुनिया के देशों में शासन करने वाले अधिकांश नेतृत्व अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ, या विकसित पूंजीवादी शक्तियों, जैसे कि बर्तानिया, फ्रांस, जर्मनी, बेल्जियम, जापान, आदि, के साथ बहुत समय से निकटता से जुड़े हुये हैं । इसलिये "तीसरी दुनिया" के साथ चीन की प्रेमलीला विकसित साम्राज्यवादी और पूंजीवादी राज्यों को ज़रा भी चिन्तित नहीं करती है ।

अपनी नीति व अपनी विचारधारा, तथाकथित माओ

त्से-तुङ विचारधारा,के जरिये "तीसरी दुनिया" में शामिल होने की चीन की कोशिशें भी सफल नहीं हो सकती हैं,क्योंकि इसकी विचारधारा व राजनीतिक कार्यदिशा अव्यवस्थित है। चीन की राजनीतिक कार्यदिशा द्विविधापूर्ण है,और यह एक उपयोगितावादी कार्यदिशा है जो कि बदलती हुई परिस्थि-तियों और छणिक हितों के अनुसार दोलायमान होती व बदलती है। "तीसरी दुनिया" के राज्यों के शासक वर्ग इस विचारधारा से डरते नहीं हैं क्योंकि वे समझते हैं कि यह कार्यदिशा क्रान्ति और लोगों की सच्ची राष्ट्रीय मुक्ति के पक्ष में नहीं है। इन लोगों पर अपने अत्याचार व उनके शोषण को और भी आसानी से करने के लिये,इन देशों के सरमायदारों ने सभी तरह के नामों की अपनी पार्टियां बनाई हैं। इन पार्टियों को,जो कि तथाकथित तीसरी दुनिया के राज्यों में लगाई गयी विदेशी पूंजी के साथ निकटता से जुड़ी हुई हैं, चीनी कार्यदिशा का मुकाबला करने व उसका पर्दाफ़ाश करने में कोई भी कठिनाई नहीं होती है। इसलिये,चीनी संशो-धनवादी नेताओं ने इन देशों की पार्टियों की ओर मुस्कराते रहने का रास्ता चुना है और उनके प्रति "शहद की तरह मीठे" बनने की सब तरह से और हर मौके पर कोशिश करते हैं।

"तीसरी दुनिया" पर आधिपत्य जमाने की अपनी योजना के साथ ,चीन इस "दुनिया" के मेहनतकश जनसमुदायों के आन्दो-लनों को अपने हित में मोड़ने के लिये पूरी कोशिश कर रहा है। लेकिन,इस समय,उत्पीड़ित लोग,जिनका नेतृत्व सर्वहारा कर रहा है,उस हालत में नहीं है जिसमें वे १९वीं शताब्दी के आखिर में या २०वीं शताब्दी के शुरू में थे। वे पुरानी या नयी बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा,चाहे वह अमरीकी

हो या सोवियट या चीनी, आधिपत्य व अधीन बनाने की किसी भी नीति का विरोध करते हैं। अब, दुनिया के लोगों के व्यापक जनसमुदाय आम तौर पर जागरूक हो गये हैं, और अपने संघर्षों के जरिये अपने आर्थिक व राजनीतिक अधिकारों की रक्षा करने के बारे में किसी न किसी तरीके से कुछ जागरूकता पा सके हैं। तथाकथित तीसरी दुनिया के लोग ये देखे बिना नहीं रह सकते हैं कि चीन क्रान्ति व राष्ट्रीय मुक्ति के विचारों को उनके देश में लाने के लिये काम नहीं कर रहा है, बल्कि क्रान्ति, जो कि चीनी प्रभाव के प्रवेश के लिये रुकावट है, को बुझाने के लिये काम कर रहा है। संयुक्त राज्य अमरीका व दूसरे नव-उपनिवेशवादी देशों के साथ सहयोगी-संघ बनाने का चीनी रास्ता भी चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद का लोगों के सामने पर्दाफाश करता है।

चीन, "तीसरी दुनिया" के देशों में क्रान्ति के लिये प्रचार इसलिये भी नहीं कर सकता है, क्योंकि इस प्रकार वह उस महाशक्ति के खिलाफ़ हो जायेगा जिससे कि इसे चीन में पूंजी के विनियोजन और उन्नत तकनालाजी मिलने की उम्मीद है। चीन इसलिये भी ऐसा प्रचार नहीं कर सकता है, क्योंकि क्रान्ति, तथाकथित तीसरी दुनिया के अनेक देशों में शासन कर रहे ठीक उन्हीं प्रतिक्रियावादी गुटों का अन्तर्ध्वंस करेगी, जिनका चीन समर्थन कर रहा है, और उन्हें सत्ता में बने रहने के लिये मदद दे रहा है।

<u>अपने देश को जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी एक महाशक्ति में बदलने की, और सभी जगह, खास तौर पर तथाकथित तीसरी दुनिया में, अपने आधिपत्य को जमाने की चीनी नेताओं की भारी महत्वाकांक्षा ने उन्हें, अन्तर-साम्राज्यवादी</u>

युद्ध के उकसाने को अपनी नीति और विदेश नीति का आधार बनाने के लिये बाध्य किया है । उसकी बड़ी इच्छा है कि संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियट संघ के बीच युरोप में एक आमने-सामने की टक्कर हो, जिसमें चीन, उस अणु महाविध्वंस से दूर ही रहेगा, जो कि उसके दोनों मुख्य प्रतिस्पर्धियों को नष्ट कर देगा, और वह दुनिया का सर्वशक्तिशाली एकमात्र शासक रह जायेगा ।

जब तक यह दूसरी महाशक्तियों से प्रतिस्पर्धा करने के लिये अपने आपको काफ़ी मज़बूत नहीं समझता है, जब तक कि यह एक महाशक्ति का "अपना यथायोग्य स्थान" नहीं जीत लेता है, उस समय तक चीन अपने लिये शान्ति व दूसरों के लिये युद्ध चाहेगा । चीनी संशोधनवादियों की शान्ति के लिये वर्तमान ज़रूरत के साथ जुड़ी हुई हैं उनकी संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियट संघ के बीच युद्ध भड़काने की ऐसी स्पष्ट राजनयिक चालें ताकि वे इससे बचे रहें और अपने "आधुनिकिकरणों" को करते रहें । तेंग सियाओ-पिङ की यह घोषणा कि अगले २० सालों के दौरान कोई युद्ध नहीं होगा, आकस्मिक नहीं है । इससे वह महाशक्तियों और दूसरे साम्राज्यवादी देशों को यह बता देना चाहता है कि उन्हें इन २० सालों के दौरान चीन से नहीं डरना चाहिये । इसके साथ-साथ चीनी नेता महाशक्तियों के बीच यूरोप में युद्ध भड़का रहे हैं, जो कि चीन से बहुत दूर है और चीन का इसमें फंस जाने का खतरा भी बहुत कम है । किस हद तक यह मुमकिन होगा, यह अलग ही मामला है, लेकिन चीनी नेता इस दिशा में काम कर रहे हैं, क्योंकि वे उस अवधि के दौरान शान्ति की अनिवार्य ज़रूरत को महसूस करते हैं जिस अवधि की उन्हें चीन को एक महाशक्ति बनाने के अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये ज़रूरत है ।

चीन बहुत जोर-शोर से "यूरोपीय एकता", और "यूरोप के विकसित पूंजीवादी देशों की एकता" की हिमायत कर रहा है । यह इस एकता का हर एक सवाल पर समर्थन करता है, और सोचता है कि यह पुराने भेड़िये और लोमड़ी को सिखायेगा कि सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के भारी खतरे के सामने उन्हें अपनी सैनिक व आर्थिक एकता, राज्य संगठनात्मक एकता, आदि, को कैसे मज़बूत करना चाहिये । लेकिन इन देशों को चीन की इन शिक्षाओं की कोई ज़रूरत नहीं है, क्योंकि वे यह जानने की स्थिति में हैं, और अच्छी तरह जानते भी हैं कि खतरा कहां से आता है ।

पश्चिम के विकसित देश इतने भोले नहीं हैं कि वे चीन की सलाह व इच्छाओं पर "अक्षरशः" काम करेंगे । सोवियट संघ के सम्भावित खतरे का सामना करने के लिये वे अपने आपको मज़बूत कर रहे हैं, लेकिन इसके साथ-साथ, इसकी भी बहुत कोशिश कर रहे हैं कि सोवियट संघ के साथ उनके सम्बन्ध बिगड़ न जायें, और वे इस हद तक न चले जायें कि "रूसी भालू" गुस्सा हो जाये । यह, स्वभावतः, चीन की इच्छा के विपरीत है ।

चीन द्वारा सोवियट संघ के साथ अपने अन्तर्विरोधों को भड़काना यूरोप के पूंजीवादी राज्यों और संयुक्त राज्य अमरीका को रुचिकर है, क्योंकि इससे वे सोवियट संघ को अप्रत्यक्ष रूप में कह सकते हैं कि, "तुम्हारा मुख्य दुश्मन चीन है, जब कि हम, चाहे चीन कुछ भी कहे, तुम्हारे साथ मिलकर डिटाण्ट व शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व की स्थापना करना चाहते हैं ।" दूसरी ओर, ठीक उस समय जब ये राज्य यह विश्वास दिला रहे हैं कि वे शान्ति चाहते हैं, वे अपने मुख्य दुश्मन— क्रान्ति, के खिलाफ़ अपने आधिपत्य और सैनिक एकता को

मज़बूत करने के लिये अपने आपको सशस्त्र कर रहे हैं । सभी मीटिंगों का यही उद्देश्य है,जैसे कि हेलसिनकी और बेल्ग्रेड की मीटिंग,जो कि कभी खत्म नहीं होती हैं,ठीक उसी तरह जैसे कि नेपोलियन की हार के बाद की वीयना कांग्रेस,जिसको कि नाच-गाने व जलसों की कांग्रेस कहा जाता है ।

जैसा कि ए०एफ़०पी० के संचालक को दिये गये अपने इण्टरव्यू में तैंग सियाओ-पिङ ने घोषित किया है,चीनी नेता सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद का मुकाबला करने के लिये "एक व्यापक मोर्चे,जिसमें तीसरी दुनिया,दूसरी दुनिया और संयुक्त राज्य अमरीका शामिल होंगे" को बनाने की मांग कर रहा है ।

सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ युद्ध के लिये अमरीकी साम्राज्यवाद,पश्चिम यूरोप,आदि,को भड़काने की चीन के संशोधनवादी नेतृत्व की नीति, सोवियट संघ और संयुक्त राज्य अमरीका व इसके नेटो के सहयोगियों के बीच युद्ध की बजाय, चीन और सोवियट संघ के बीच युद्ध के खतरे से भरी हुई है ।

दूसरों को लड़ाई के लिये भड़काकर चीन जो कर रहा है, ठीक वही,अमरीकी साम्राज्यवाद,विकसित पूंजीवादी देश और सभी दूसरे देश,जहां पर सरमायदार पूंजीवादी गुट सत्ता में है,चीन और सोवियट संघ को एक दूसरे के खिलाफ़ भड़काकर कर रहे हैं । इसलिये,इसकी ज़्यादा सम्भावना है कि संयुक्त राज्य अमरीका की नीति,और स्वयं चीन की गलत नीति, सोवियट संघ को अपनी सैनिक ताकत को और भी ज़्यादा बढ़ाने के लिये,और एक साम्राज्यवादी ताकत होने के नाते, पहले चीन पर हमला करने के लिये बाध्य कर सकती हैं ।

अपनी ओर से चीन,काफ़ी मज़बूत हो जाने पर सोवियट

संघ पर हमला करने की स्पष्ट प्रवृत्ति रखता है, क्योंकि साइबेरिया व सुदूर पूर्व के दूसरे छेत्रों के प्रति इसकी बड़ी छेत्रीय महत्वाकांक्षायें हैं। इसने बहुत पहले इन छेत्रीय दावों के सवाल को उठाया था, लेकिन तैयार होने पर और सभी प्रकार के शस्त्रों से सज्जित एक सेना बनाने के बाद यह इन दावों को और ज़्यादा जोर से उठायेगा। हुआ कुआ-फेंग द्वारा बर्तानिया के भूतपूर्व कनजरवेटिव प्रधान मंत्री, हीथ, को दिये गये ब्यान का यही अभिप्राय है, जिसमें कि उसने कहा था: "हमें उम्मीद है कि हम एक एकीकृत व शक्तिशाली यूरोप देखेंगे; हमें यकीन है कि अपनी ओर से यूरोप, भी, एक शक्तिशाली चीन को देखने की उम्मीद रखता है।" संक्षेप में, हुआ कुआ-फेंग बड़े यूरोपीय सरमायदारों को कह रहा है :"अपने को मज़बूत करो और सोवियट संघ पर पश्चिम से हमला करो, जबकि हम, चीनी, अपने आप को मज़बूत करेंगे और इस पर पूर्व से हमला करेंगे।"

चीनी नीति ने संयुक्त राज्य अमरीका के लिये एक विस्तृत और बहुत ही लाभदायक रास्ते को खोल दिया है, जिस रास्ते को शुरू में माओ त्से-तुङ, चाउ इन-लाई और निक्सन ने खोला था। संयुक्त राज्य अमरीका और चीन के बीच अनेक पुल बनाये गये थे, झूठे पुल, लेकिन प्रभावकारी व लाभदायक। निक्सन ने प्रचार किया था:"हमें एक इतना लम्बा पुल बनाना चाहिये जो कि सान फ्रांन्सिसको और पीकिंग को जोड़ देगा।" वाटरगेट की घटना के बाद, माओ त्से-तुङ और चाउ इन-लाई द्वारा निक्सन को दिया गया निमन्त्रण, और माओ द्वारा निक्सन का स्वागत बिना किसी कारण व मतलब के नहीं थे। इसका मतलब हुआ कि संयुक्त राज्य अमरीका के साथ मित्रता, दो व्यक्तियों के बीच अस्थायी मित्रता नहीं

थी,बल्कि देशों के बीच,चीन और संयुक्त राज्य अमरीका के बीच मित्रता थी,हालांकि जिस राष्ट्रपति ने इस रास्ते को खोला था,उसे उसके भ्रष्ट अभ्यासों के कारण उसके पद से हटा दिया गया था ।

अब कार्टर के सत्ता में आने पर,चीन और संयुक्त राज्य अमरीका के बीच मित्रता की गाँठें मजबूत की जा रही हैं । चीन की वर्तमान विचारपद्धति में संयुक्त राज्य अमरीका को बहुत ही रुचि है,और इसकी नीति को कार्टर अनेक तरीकों से बढ़ावा दे रहा है ।

सोवियट संघ के खिलाफ़ चीन को भड़काने के लिये संयुक्त राज्य अमरीका इसे हर-तरफ़ा राजनीतिक,सैनिक व आर्थिक सहायता देना चाहता है । इसने चीन को अणुशक्ति के भेद दिये हैं । यह अब स्पष्ट है । संयुक्त राज्य अमरीका ने इसको सबसे आधुनिक कम्प्युटर भी दिये हैं जो अणु युद्ध के काम आते हैं । चीन को पूरे विवरण दे दिये गये हैं ताकि ये अपनी खुद की अणु पनडुब्बियां बना सके । चीन को आधुनिक शस्त्र-सामग्री देने के लिये इस समय वाशिंगटन में खुले तौर पर सरकारी बातें हो रही हैं । संयुक्त राज्य अमरीका चीन को जो यह सब "अनुग्रह" दे रहा है, वे,स्वभावत: इसकी इसलिये मदद करने के लिये नहीं है कि वह एक ऐसी स्थल व नौसैनिक शक्ति बन जाये जिससे संयुक्त राज्य अमरीका को ही खतरा पैदा हो, जैसा कि जापान ने दूसरे विश्व युद्ध के दौरान किया था । नहीं,अमरीकी साम्राज्यवाद दुनिया में किसी को,और खास तौर पर चीन को,दी गयी तथाकथित सहायता की सावधानी के साथ गणना करता है ।

इस प्रकार,एक महाशक्ति बनने के चीन के उद्देश्य और व्यग्र कोशिशें, जो कि संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियट

संघ दोनों का प्रतिसंतुलन करेगी,अवश्य ही नयी टक्करें, खुले आम लड़ाइयाँ व युद्धों को शुरू करेंगे,जिनका एक स्थानीय स्वभाव या एक आम युद्ध का स्वभाव हो सकता है ।

"तीन दुनियाओं" का सम्पूर्ण सिद्धान्त, इसकी सम्पूर्ण नीति,व जिन सहयोगी-संघों व मोर्चों की यह हिमायत करता है, जिन उद्देश्यों को यह पाने की इच्छा रखता है, ये सब साम्राज्यवादी विश्व युद्ध के लिये भड़काव हैं ।

निकिता क्रुश्चेव और आधुनिक संशोधनवादियों ने क्रुश्चेववादी "शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व" के कुख्यात सिद्धान्त का विस्तार किया, जिस सिद्धान्त ने "सामाजिक शान्ति", "शान्तिपूर्ण प्रतिस्पर्धा",क्रान्ति के लिये "शान्तिपूर्ण रास्ते", और "एक शस्त्रहीन व युद्धहीन दुनिया" की हिमायत की थी । इसका उद्देश्य हमारे युग के मूल अन्तर्विरोधों को छिपा कर व शान्त करके वर्ग संघर्ष को कमज़ोर करना था । खास तौर पर,क्रुश्चेव ने सोवियट संघ और अमरीकी साम्राज्यवाद के बीच अन्तर्विरोधों,और आम तौर पर समाजवादी प्रणाली और पूंजीवादी प्रणाली के बीच अन्तर्विरोधों के खत्म होने की हिमायत की । उसने इस धारणा का पोषण किया कि, उस समय दुनिया में हुये परिवर्तनों के बाद, समाजवाद और पूंजीवाद के बीच ऐतिहासिक अन्तर्विरोध,आर्थिक, विचारधारात्मक-राजनीतिक,सांस्कृतिक व दूसरे क्षेत्रों में शान्तिपूर्ण प्रतिस्पर्धा के जरिये हल किये जायेंगे ।

"हमें इसे समय पर छोड़ देना चाहिये,और तब हम देखेंगे कि कौन सही है," क्रुश्चेव के कहा, और इस प्रतिस्पर्धा में, "पवित्र शान्ति में लोग स्वतन्त्रतापूर्वक सबसे उपयुक्त सत्ता को चुनेंगे । निकिता क्रुश्चेव ने लोगों को सलाह दी कि वे

अपनी सम्पत्ति महाशक्तियों को बेच दें, और इस प्रसिद्ध "शान्तिपूर्ण" प्रतिस्पर्धा से होने वाली अपनी स्वतन्त्रता, आज़ादी व ख़ुशहाली को पाने के लिये इन्तज़ार करें। निस्सन्देह, इस मार्क्सवाद-विरोधी नीति का पर्दाफाश किया गया था, और सबसे पहले हमारी पार्टी ने ही इस पर हमला किया था।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी जब माओ त्से-तुङ जिन्दा था उस समय से ही क्रुश्चेव जैसी एक नीति का अनुसरण करती आयी है। यह नीति भी, दोनों पक्षों, सर्वहारा व सरमाय-दार, और लोग व उनके शासकों से वर्ग संघर्ष रोकने की, और सिर्फ़ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ ही एक होने और अमरीकी साम्राज्यवाद के बारे में भूल जाने की माँग करती है।

"तीन दुनियाओं" का सिद्धान्त एक प्रतिक्रियावादी सिद्धान्त है, ठीक उसी तरह जैसे कि क्रुश्चेव का "शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व" का सिद्धान्त था। लेकिन जबकि क्रुश्चेव व उसके अनुयायी, आधुनिक संशोधनवाद के प्रणेता, ऊपर से शान्तिवादी दिखते थे, माओ त्से-तुङ, तैंग सियाओ-पिङ, हुआ कुआ-फैंग आदि अपने आपको खुले रूप से युद्धोत्तेजकों के रूप में पेश करते हैं। वे साम्राज्यवादी-पूँजीवादी गठबंधन को, जिसमें चीन अपने आपको शामिल करता है, क्रान्तिकारी संघर्ष, सर्वहारा की विजय और लोगों की मुक्ति के लिये संघर्ष, के एक संस्थान का भाव व विशेषता देना चाहते हैं। परन्तु, असलियत में, "तीन दुनियाओं" के बारे में माओ त्से-तुङ और चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का "सिद्धान्त" क्रान्ति की नहीं बल्कि साम्राज्यवादी युद्ध की माँग करता है।

साम्राज्यवादी शक्तियों और दलों के बीच अन्तर्विरोधों

व दुश्मनी की तीव्रता, सशस्त्र लड़ाइयों, व गुलाम बनाने की लुटेरी लड़ाइयों के खतरे से भरपूर हैं। यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद का जाना-पहचाना सिद्धान्त है जिसे इतिहास ने पूर्णतया सिद्ध किया है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय विकास भी इसकी सत्यता को सिद्ध करते हैं।

अनेक बार पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने उस बहरा करने वाले शान्तिवादी प्रचार का विरोध करने के लिये अपनी आवाज़ उठाई, जिस प्रचार को महाशक्तियाँ, लोगों और स्वतन्त्रता-प्रेमी देशों को थपकी देकर सुला देने व उनकी सतर्कता को कम कर देने के लिये, और उनको भ्रमों से बुद्धिहीन करने व उन्हें अप्रत्याशित रूप से पकड़ लेने के लिये, फैलाती हैं। अनेकों बार इसने इस तथ्य के बारे में ध्यान आकर्षित किया है कि अमरीकी साम्राज्यवाद और रूसी सामाजिक-साम्रा - ज्यवाद दुनिया को एक नये विश्व युद्ध की ओर ले जा रहे हैं और कि, ऐसे युद्ध के फूट पड़ने का खतरा वास्तविक है और किसी तरह से भी काल्पनिक नहीं। यह खतरा, दुनिया में सभी जगह लोगों, व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय, शान्ति-प्रेमी शक्तियों और देशों, मार्क्सवादी-लेनिनवादियों और प्रगतिशील लोगों के लिये एक स्थायी चिन्ता का विषय बने बिना नहीं रह सकता है, जो कि इस खतरे के सामने निष्क्रिय रूप से, और बिना कुछ किये खड़े नहीं रह सकते हैं। लेकिन साम्राज्यवादी युद्धोत्तेजकों को रोकने के लिये क्या किया जाना चाहिये ?

यह साम्राज्यवादी युद्धोत्तेजकों के सामने आत्मसमर्पण करने व उनकी अधीनता स्वीकार करने, या उनके खिलाफ़ संघर्ष को कम करने के रास्ते के जरिये नहीं किया जा सकता है। तथ्य सिद्ध करते हैं कि क्रुश्चेव-अनुयायी संशोधनवादियों के सिद्धा- न्तहीन समझौतों और रियायतों ने अमरीकी साम्राज्यवाद

को किसी भी तरह से दब्बू, अच्छा बर्ताव करने वाला, या अधिक शान्तिपूर्ण नहीं बनाया, बल्कि इसके विपरीत, उन्होंने इसे और भी अधिक हेकड़ व भुक्खड़ बना दिया। लेकिन मार्क्सवादी-लेनिनवादी एक साम्राज्यवादी राज्य या दल को दूसरे के खिलाफ़ भिड़ाने के पक्ष में नहीं हैं, और न वे साम्राज्यवादी लड़ाइयों की माँग कर रहे हैं, क्योंकि उनमें लोग ही कष्ट पाते हैं। महान लेनिन ने बताया था कि हमारी नीति का लक्ष्य युद्ध भड़काना नहीं, बल्कि साम्राज्यवादियों को समाजवादी देश के खिलाफ़ एक होने से रोकना है।

"...अगर हम वास्तव में मज़दूरों व किसानों को युद्ध की ओर ले जा रहे हैं," उन्होंने कहा, "तो यह एक जुर्म होगा। किन्तु, हमारी सभी राजनीति और प्रचार, किसी भी तरह राष्ट्रों को युद्धों की ओर ले जाने की ओर नहीं, बल्कि युद्धों को खत्म करने की ओर निर्दिष्ट हैं। अनुभव ने स्पष्ट रूप से दिखाया है कि समाजवादी क्रान्ति चिरस्थायी युद्धों से बचने का एकमात्र रास्ता है।"*

इसलिये, एकमात्र सही रास्ता है मज़दूर वर्ग, मेहनतकश लोगों की व्यापक श्रेणियों और लोगों को, उनके ही देशों में साम्राज्यवादी युद्धोत्तेजकों को रोकने के लिये क्रान्तिकारी कार्यों के लिये उत्तेजित करना। मार्क्सवादी-लेनिनवादी इन अनुचित युद्धों के सबसे दृढ़ विरोधी रहे हैं और अभी भी हैं।

लेनिन ने कम्यूनिस्ट क्रान्तिकारियों को सिखाया कि

---

* वी०आई० लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रन्थ ३१, पृष्ठ ५४० (अल्बेनिया संस्करण)

उनका कर्त्तव्य है साम्राज्यवाद की युद्धोत्तेजक योजनाओं को चकनाचूर करना और युद्ध के फूट पड़ने को रोकना । अगर वे ऐसा नहीं कर पायें, तो उन्हें मज़दूर वर्ग व लोगों के जनसमुदाय को गतिमान करना चाहिये, और साम्राज्यवादी युद्ध को एक क्रान्तिकारी मुक्ति युद्ध में बदल देना चाहिये ।

साम्राज्यवादियों और सामाजिक-साम्राज्यवादियों की रगों में हमलावर लड़ाइयां हैं । दुनिया को गुलाम बनाने की उनकी महत्वाकांक्षायें उनको युद्ध की ओर ले जाती हैं । लेकिन हालांकि साम्राज्यवादी ही साम्राजयवादी विश्व युद्ध को शुरू करते हैं, इसकी कीमत सर्वहारा, लोग, क्रान्तिकारी और सभी प्रगतिशील लोगों को अपने खून से चुकानी पड़ती है । इसी कारण, दुनिया के मार्क्सवादी-लेनिनवादी, सर्वहारा व लोग साम्राज्यवादी विश्व युद्ध के खिलाफ़ हैं और वे साम्राज्यवादियों की योजनाओं को निष्फल करने के लिये दृढ़ता से लड़ते हैं ताकि ये दुनिया को एक और कत्लेआम की ओर न ले जा पायें ।

इसलिये साम्राज्यवादी युद्ध की हिमायत नहीं की जानी चाहिये, जैसा कि चीनी संशोधनवादी कर रहे हैं, बल्कि इसका मुकाबला किया जाना चाहिये । मार्क्सवादी-लेनिनवादियों का कर्त्तव्य है दुनिया के सर्वहारा और लोगों को उन पर अत्याचार करने वालों के खिलाफ़, सत्ता व विशेषाधिकारों को छीन लेने के लिये और सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना करने के लिये उत्तेजित करना । चीन यह नहीं कर रहा है, और चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी इसके लिये काम नहीं कर रही है । अपने संशोधनवादी सिद्धान्त से, यह पार्टी क्रान्ति को कमज़ोर कर रही है, उसे स्थगित कर रही है, और सर्वहारा की अग्रगामी शक्तियों, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों, जो

इस क्रान्ति को आयोजित करेंगी व उसका नेतृत्व करेंगी, के बीच फूट डाल रही है ।

चीनी नेतृत्व जिस रास्ते की हिमायत कर रहा है, वह एक फ़रेब है । यह एक ऐसा रास्ता है जो हमारे सिद्धान्त, मार्क्सवाद-लेनिनवाद के समानुरूप नहीं है । इसके विपरीत, चीनी संशोधनवादी कार्यदिशा सर्वहारा व लोगों को कमज़ोर करती है,उनके बीच फूट डालती है,उनको एक ख़ूनी युद्ध, एक साम्राज्यवादी व आपराधिक युद्ध के बोझ को सहने की धमकी देती है,जिस युद्ध से सर्वहारा व लोग इतनी घृणा करते हैं ।

इस कारण भी, "तीन दुनियाओं" के माओ त्से-तुङ के सिद्धान्त और चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी व चीनी राज्य की राजनीतिक कार्यवाही को किसी भी तरह से मार्क्सवादी-लेनिनवादी व क्रान्तिकारी नहीं कहा जा सकता है ।

जब ख्रुश्चेव ने समाजवाद और साम्राज्यवाद के बीच आर्थिक, विचारधारात्मक व राजनीतिक प्रतिस्पर्धा की हिमायत की थी, तो उस समय चीनी नेता अभिकथित रूप से इस दावे के खिलाफ़ थे और उन्होंने कहा था कि सच्चे शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व को पाने के लिये साम्राज्यवाद का मुकाबला किया जाना चाहिये,क्योंकि "सहअस्तित्व" साम्राज्यवाद को नष्ट नहीं कर सकता है,और क्रान्ति की विजय व लोगों की मुक्ति की ओर नहीं ले जा सकता है ।

लेकिन ये घोषणायें सिर्फ़ कागज़ पर लिखे शब्द ही रहे। वास्तव में, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का नेतृत्व ख्रुश्चेव की ही तरह के शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के पक्ष में रहा है और अभी भी है । हमारे द्वारा उद्धरण दिये गये दस्तावेज़, "अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन की कार्यदिशा से सम्बन्धित एक प्रस्ताव" में लिखा था :"एक सिद्धान्ती नीति ही

सही नीति है...एक सिद्धान्ती नीति का क्या अर्थ है ? इसका अर्थ है कि किसी भी प्रकार की नीति को बनाते हुये व उसका विस्तार करते हुये, हमें सर्वहारा विचारपद्धति अपनानी चाहिये, सर्वहारा के मूल हितों से शुरू होना और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त व मूलभूत दावे से मार्गप्रदर्शित होना चाहिये ।" यही चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने कहा था, लेकिन इसने क्या किया है और इस समय क्या कर रही है ? इसने इसके एकदम उल्टा ही किया है और कर रही है ।

ऊपर बताये गये दस्तावेज़ व दूसरे अनेक मौकों पर चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने कहा था, "अमरीकी साम्राज्यवाद का क्रान्ति, समाजवाद और सम्पूर्ण दुनिया के लोगों के सबसे बड़े दुश्मन के रूप में पर्दाफाश किया जाना चाहिये ।" दूसरी बातों के अलावा इसने यह भी कहा, "किसी को भी अमरीकी साम्राज्यवाद, या दूसरे किसी भी साम्राज्यवाद पर निर्भर नहीं करना चाहिये, किसी को भी प्रतिक्रियावादियों पर निर्भर नहीं करना चाहिये ।" लेकिन चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने अपने इन दावों को कार्यान्वित नहीं किया है । पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया, जो कि अपने आपको मार्क्सवाद-लेनिनवाद के मूलभूत सिद्धान्तों पर दृढ़ता के साथ आधारित करती है, साम्राज्यवाद और सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष का दृढ़तापूर्वक अनुमोदन करती है । ठीक इसी सवाल पर समाजवादी अल्बेनिया चीन का विरोध करता है, और पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का विरोध करती है । चीनी नेता हम अल्बेनिया के लोगों पर आरोप लगाते हैं कि हम अभिकथित रूप से "अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और अन्तर्विरोधों का मार्क्सवादी-लेनिनवादी विश्लेषण नहीं करते हैं", और इसके परिणामस्वरूप, "संयुक्त

यूरोप", यूरोपियन कामन मार्केट, व विश्व सर्वहारा से सोवियट संघ के खिलाफ़ अमरीका के साथ एकीकृत हो जाने की माँग करने वाली चीनी कार्यदिशा का अनुसरण नहीं करते हैं। उनका निष्कर्ष है कि क्योंकि हम अमरीकी साम्राज्यवाद, "संयुक्त यूरोप", आदि, का समर्थन नहीं करते हैं, इसलिये हम अभिकथित रूप से सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के पक्ष में हैं।

उनकी यह विचारपद्धति सिर्फ़ "संशोधनवाद-विरोध" के भेष में छिपी हुई संशोधनवादी ही नहीं है, बल्कि यह समाजवादी अल्बेनिया की ओर द्वेषपूर्ण व मिथ्यापवादी भी है। अमरीकी साम्राज्यवाद हमलावर, झगड़ालू व युद्धोत्तेजक है। संयुक्त राज्य अमरीका सिर्फ़ यथापूर्व स्थिति नहीं चाहता है, जैसा कि चीनी संशोधनवादी दावा करते हैं, यह प्रसार चाहता है। नहीं तो, सोवियट संघ के साथ इसके अन्तर्विरोधों का और कोई कारण नहीं है। माओ के उद्धरण, जिसकी वे मिसाल देते हैं, कि "अमरीका एक चूहा बन गया है और सारी दुनिया 'इसको मारो!' 'इसको मारो!' की चिल्लाहट के साथ गली में इसका पीछा कर रही है", का उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि सिर्फ़ सोवियट संघ ही युद्ध चाहता है जब कि अमरीका यह नहीं चाहता है। संयुक्त राज्य अमरीका के प्रति यह नर्मी इस राज्य पर किसी भी प्रकार के हमले को निरुत्साहित करने के लिये है, जिस राज्य को "एक चूहे के समान बना दिया गया है" लेकिन जो चीन का सहयोगी है। "मार्क्सवादी" माओ की यही मार्क्सवाद-विरोधी नीति है!

"तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त पर आधारित उनके विश्लेषण के आधार पर बनायी गयी चीनी "नीति" ने "निश्चय

ही" यह निश्चित किया है कि "दोनों महाशक्तियों के बीच दुश्मनी युरोप में केन्द्रित है ।" अजीब बात है । लेकिन सिर्फ यूरोप में ही क्यों और दुनिया के किन्हीं दूसरे भागों में क्यों नहीं, जैसे कि एशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया या लेटिन अमरीका जहाँ पर कि सोवियट संघ प्रसार की कोशिश कर रहा है ?

चीनी "सिद्धान्तकार" इसको स्पष्ट नहीं करते हैं। अपने दावे में वे इस प्रकार "तर्क" पेश करते हैं : संयुक्त राज्य अमरीका का मुख्य प्रतिस्पर्धी सोवियट संघ है । ये दोनों महाशक्तियाँ, जिनमें से एक यथापूर्व स्थिति चाहता है व दूसरा प्रसार, यूरोप में युद्ध शुरू करेंगी, जैसा कि हिटलर के समय में हुआ था । वह भी, प्रसार व दुनिया पर आधिपत्य, चाहता था, लेकिन इसको पाने के लिये उसे पहले फ्रांस, बर्तानिया और सोवियट संघ को हराना था । इन्हीं कारणों से, हिटलर ने यूरोप में लड़ाई शुरू की, और कहीं नहीं। इसके आगे, चीनी संशोधनवादी यह तर्क पेश करते हैं कि स्टालिन ने बर्तानिया और संयुक्त राज्य अमरीका पर निर्भर किया था । इस पर चीनी यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वे भी संयुक्त राज्य अमरीका पर निर्भर क्यों न करें ? लेकिन, जैसा हमने पहले बताया था, वे भूल जाते हैं कि सोवियट संघ ने उस पर जर्मनी द्वारा किये गये हमले के बाद ही अपने आपको बर्तानिया व संयुक्त राज्य अमरीका के साथ, जोड़ा था, उससे पहले नहीं ।

जब जर्मनी के विल्हेम II ने फ्रांस और बर्तानिया पर हमला किया था, उस समय सेकेण्ड इण्टरनेशनल के मुखियों ने "सरमायदारी जन्मभूमि की रक्षा" की हिमायत की थी । जर्मनी और फ्रांस दोनों के समाजवादियों, ने यही स्थिति

अपना ली । लेनिन ने इसका कैसे तिरस्कार किया था और साम्राज्यवादी युद्ध के विरोध में उन्होंने क्या कहा था, यह आम जानकारी है । इस समय, जब चीन के संशोधनवादी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के नाम पर साम्राज्यवाद के साथ यूरोप के लोगों की एकता का प्रचार कर रहे हैं,तो वे भी सेकेण्ड इण्टरनेशनल के पक्षपातियों की ही तरह बर्ताव कर रहे हैं । लेनिन के दावों के विपरीत,वे भावी अणुयुद्ध को भड़का रहे हैं,जिसे शुरू करने की दोनों महाशक्तियां कोशिश कर रही हैं,और पश्चिम यूरोप के लोगों और सर्वहारा से, सरमायदारों के साथ अपने "तुच्छ" मतभेदों (अत्याचार,भूख, कत्ल, बेरोजगारी के बारे में) को अलग रखने की,सरमायदारों की राज्य सत्ता को धमकी देने से दूर रहने की, और नेटो, "संयुक्त यूरोप", बड़े सरमायदारों का कामन मार्केट, और यूरोपीय व्यापार-संस्थाओं के साथ होने की, और सिर्फ़ सोवियट संघ के ख़िलाफ़ लड़ने की व सरमायदारों के अनुशासित सिपाही बन जाने की "देशभक्तिपूर्ण" मांग कर रहे हैं । सेकेण्ड इण्टरनेशनल भी इससे अच्छा नहीं कर सकता था ।

लेकिन सोवियट संघ और वारसा ट्रीटी व कामीकान के दूसरे संशोधनवादी देशों के लोगों को चीनी नेतृत्व क्या सलाह दे रहा है ? कुछ भी नहीं ! यह इस विषय पर कुछ चुप्पी साधे हुये है और इन लोगों पर ज़रा भी ध्यान नहीं देता है । समय-समय पर वह इन देशों में शासन करने वाले संशोधनवादी गुटों से सोवियट संघ से सम्बन्ध तोड़ लेने और अमरीका के साथ एक हो जाने का आग्रह करता है । वास्तव में यह इन लोगों से कहता है : शान्त रहो,आत्मसमर्पण करो, और ख़ून के प्यासे क्रेमलिन गुट के लिये युद्धबलि बन जाओ । चीनी संशोधनवादी नेतृत्व की यह कार्यदिशा सर्वहारा-

विरोधी और युद्धोत्तेजक है ।

इस सबसे यह स्पष्ट है कि चीनी नेता जानबूझ कर अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को जटिल बना रहे हैं । वे इन परिस्थितियों को क्रान्ति के हितों के अनुसार नहीं बल्कि चीन को एक महाशक्ति बनाने के अपने ही हितों के अनुसार देखते हैं । वे इन्हें लोगों की मुक्ति के दृष्टिकोण से नहीं बल्कि अपने साम्राज्यवादी राज्य के दृष्टिकोण से देखते हैं, दोनों महाशक्तियों और इसके साथ-साथ दूसरे देशों के सरमायदार पूंजीवादी अत्याचारियों के खिलाफ़ सर्वहारा व लोगों के संघर्ष को संगठित व तीव्र करने के दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि अपने ही देश में क्रान्ति व दूसरे देशों में क्रान्तियों को बुझा देने के दृष्टिकोण से देखते हैं, वे इन्हें साम्राज्यवादी विश्व युद्ध का विरोध करने की बजाये इसे भड़काने के दृष्टिकोण से देखते हैं ।

एक महाशक्ति बनने के चीन के रास्ते के सबसे पहले चीन के लिये व चीनी लोगों के लिये गम्भीर परिणाम होंगे ।

चीनी नीति के मार्क्सवादी-लेनिनवादी विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि चीनी नेतृत्व चीन को एक घोर संकट की ओर ले जा रहा है । अमरीकी साम्राज्यवाद और विश्व पूंजी की सेवा करके यह सोचता है कि यह अपने लिये कुछ मुनाफ़े बनायेगा, लेकिन ये मुनाफ़े अनिश्चित हैं और इनके लिये चीन को बहुत कीमत चुकानी पड़ेगी । ये इस देश के लिये तबाही लायेंगे, और निस्सन्देह इससे दूसरे देशों में भी बहुत असर पड़ेगा ।

<u>एक महाशक्ति बनने की चीन की नीति का, जो कि मार्क्सवाद-विरोधी विचारधारा पर आधारित है, लोगों</u>

के सामने, विशेषकर तथाकथित तीसरी दुनिया के लोगों के सामने, पर्दाफाश हो रहा है व आगे और भी अधिक पर्दाफाश होगा । दुनिया के लोग हर राज्य की नीति के उद्देश्यों को समझते हैं, चाहे वह समाजवादी, संशोधनवादी, पूंजीवादी या साम्राज्यवादी हो । वे देखते हैं व समझते हैं कि हालांकि चीन अपने आपको "तीसरी दुनिया" का सदस्य बताता है, उसकी आकांक्षायें व उद्देश्य वे नहीं हैं जो लोगों के हैं । वे देखते हैं कि यह एक सामाजिक-साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण कर रहा है । इसलिये यह समझा जा सकता है कि यह लोक-अप्रिय नीति, जो सामाजिक व राष्ट्रीय अत्याचार को बढ़ावा देती है, लोगों को अस्वीकार्य है । यह नीति सिर्फ़ प्रतिक्रियावादी गुटों के हित में है, जो कि लोगों पर आधिपत्य जमा रहे हैं व उन पर अत्याचार कर रहे हैं ।

चीन सोमालिया का समर्थन करता है व उसे शस्त्र आदि देता है, जो संयुक्त राज्य अमरीका द्वारा भड़काये जाने पर इथोपिया से लड़ रहा है । इसी बीच, सोमालिया को हड़प लेने के लिये इथोपिया को सोवियट संघ द्वारा समर्थन दिया जा रहा है । ठीक ऐसा ही इरिट्रीया में भी हो रहा है । इस प्रकार, चीन एक पक्ष लेता है व सोवियट संघ दूसरा । अगर सोमालिया में से कोई चीन की ओर अच्छी नज़र से देखता है, तो यह देखने वाले इस देश के सत्ताधारी ही हैं, इस देश के लोग नहीं, जिनका कि कत्ल किया जा रहा है । इथोपिया का नेतृत्व, जिसे सोवियट संघ का समर्थन प्राप्त है, या इथोपिया के लोग, जिन्हें सोमालिया, जो कि अभिकथित रूप से इथोपिया पर कब्ज़ा करना चाहता है, के खिलाफ़ भिड़ाया जा रहा है, भी इसे अच्छी नज़र से नहीं देखते हैं । इस प्रकार चीन का न तो इथोपिया और न सोमालिया में

कोई प्रभाव है ।

लेकिन अल्जीरिया में भी इसे अच्छी नज़र से नहीं देखा जाता है । यह "पोलीसारियो" मोर्चे का समर्थन करता है, जबकि चीन मोरितानिया व मोरक्को का पक्ष, यानि कि, अमरीकी साम्राज्यवाद, का पक्ष लेता है ।

अपनी विदेशी नीति में, चीन अभिकथित रूप से अरब-पक्षीय रास्ते का अनुसरण करता है । लेकिन यह नीति सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ अरब लोगों को एक करने के एक विषय तक ही सीमित है । इस प्रकार यह स्वयं स्पष्ट है कि चीन, सबसे पहले, संयुक्त राज्य अमरीका के साथ अरब लोगों के किसी भी प्रकार के वेरशमन को मदद देता है ।

इज़राइल के विषय में, चीनी नेतृत्व इसके खिलाफ़ बहुत कुछ कहता है । लेकिन वास्तव में, इसकी नीति इज़राइल-पक्षीय है । अरब लोगों ने, और विशेषकर फिलस्तीनी लोगों ने यह समझ लिया है ।

एशिया के देशों में हम कह सकते हैं कि चीन का कोई स्पष्ट या स्थायी प्रभाव नहीं है ।

चीन अपने पड़ोसी देशों के साथ भी सद्भाव व निकट मित्रता नहीं रखता है, दूसरे दूर के देशों की तो बात ही छोड़िये । चीन की नीति सही नहीं है और न ही हो सकती है जब तक कि यह एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी नीति नहीं है । ऐसी नीति के आधार पर यह वियतनाम, कोरिया, कम्बोडिया, लाओस, थाइलैंड, आदि, का भी सद्भावी मित्र नहीं हो सकता है । चीन बहाना करता है कि वह इन देशों के साथ मित्रता चाहता है, लेकिन, वास्तव में, इन देशों के साथ राजनीतिक, क्षेत्रीय व आर्थिक सवालों पर झगड़ता है ।

अपनी इसी नीति पर चल कर, चीन अब वियतनाम के

साथ खुले आम झगड़ा कर रहा है । इन दोनों देशों के बीच सीमा पर गम्भीर घटनायें हो रही हैं । चीनी सामाजिक-साम्राज्यवादी, अपने प्रसारवादी उद्देश्यों के लिये, वियतनाम के आन्तरिक मामलों में गम्भीर दखल दे रहे हैं, और कम्बोडिया और वियतनाम, आदि, के बीच लड़ाई उकसा रहे हैं । जब चीनी नेतृत्व वियतनाम के प्रति जिसे कल तक ये अपने भाईचारे का देश व निकट मित्र समझता था, ऐसा बर्ताव कर रहा है तो एशिया के देश चीनी नीति के बारे में क्या सोचेंगे ? क्या वे इस पर विश्वास कर सकते हैं ?

लेटिन अमरीका के देशों में चीन के प्रभाव के बारे में बात करना समय व्यर्थ करना होगा। इसका वहाँ ज़रा भी, राजनीतिक, विचारधारात्मक या आर्थिक प्रभाव नहीं है । चीन का कुल प्रभाव एक पिनोशे के साथ इसकी मित्रता पर निर्भर है, जो कि एक कट्टर तानाशाही जल्लाद है । चीन की इस विचारनीति ने सिर्फ़ लेटिन अमरीका के लोगों को ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण विश्व मत को क्रोधित किया है । वे देखते हैं कि चीनी नेतृत्व अत्याचारी शासकों के पक्ष में है, इन लोगों पर शासन करने वाले तानाशाहियों व जनरलों के पक्ष में है, और अमरीकी साम्राज्यवाद के पक्ष में है जिसने इस महाद्वीप के लोगों को जकड़ रखा है । इस लिये हम कह सकते हैं कि लेटिन अमरीका के देशों में चीन का प्रभाव महत्वहीन है, जिसमें कोई भी ताकत व सार नहीं है ।

चीनी नेताओं की नीति लोगों की सहानुभूति व उनका समर्थन नहीं पाती है, बल्कि इसके विपरीत, यह चीन को प्रगतिशील राज्यों व विश्व सर्वहारा से और भी अलग कर देगी । कोई भी लोग, कोई भी सर्वहारा या क्रान्तिकारी, चीनी नीति का समर्थन नहीं कर सकते हैं, जब कि वे भूतपूर्व

जर्मन नाट्ज़ी जनरलों, भूतपूर्व जापानी सैनिकवादी जेनरलों व एडमिरलों, पुर्तगाल के तानाशाही जनरलों, इत्यादि, इत्यादि, को तियन स्न मिन चौक पर चीनी नेताओं के साथ खड़ा देखते हैं, जैसा कि राष्ट्रीय दिवस, १ अक्टूबर, १९७७ को हुआ था ।

चीन, अपने देश के व्यापक मेहनतकश जनसमुदाय पर किये गये शोषण को तीव्र किये बिना अपने को एक महाशक्ति में बदलने के रास्ते पर आगे नहीं बढ़ सकेगा । संयुक्त राज्य अमरीका व दूसरे पूंजीवादी राज्य चीन में किये गये अपने विनियोजनों से अत्यधिक मुनाफ़ा बनाने की कोशिश करेंगे, वे पूंजीवादी दिशा में चीनी समाज के आधार व उपरि-संरचना के तेज़ी के साथ व मूलभूत परिवर्तनों के लिये भी दबाव डालेंगे । चीनी सरमायदारों व उनके विशाल नौकरशाही उपकरण को बनाये रखने के लिये, और विदेशी पूंजीपतियों से लिये गये उधारों व ब्याज को चुकाने के लिये करोड़ों जन-समुदाय पर किये गये शोषण का तीव्रीकरण, निस्सन्देह, एक ओर तो चीनी सर्वहारा व किसान, और दूसरी ओर सरमाय-दारी-संशोधनवादी शासकों के बीच गहरे अन्तर्विरोधों को पैदा करेगा । इसके कारण इन शासकों व उनके ही देश के मेहनतकश जनसमुदाय के बीच मुठभेड़े होंगी, जिसके परिणाम-स्वरूप चीन में तीव्र लड़ाइयां व क्रान्तिकारी विद्रोह अवश्य ही होंगे ।

३

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" – एक मार्क्सवाद - विरोधी सिद्धान्त

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की वर्तमान परिस्थिति, उसके अनेक घुमाव-फिराव व दोलायमानतायें, मौकापरस्त विचार-नीतियां, उसकी नीति में बारम्बार तबदीलियां, और चीन को एक महाशक्ति बनाने के लिये चीनी नेतृत्व द्वारा अनुसरण की गयी व की जा रही नीति, ये सब स्वभावतः, चीनी क्रान्ति में माओ त्से-तुङ व उसके विचारों, तथाकथित माओ त्से-तुङ विचारधारा, के स्थान व कार्यभाग के सवाल को उठाती हैं ।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" एक ऐसा "सिद्धान्त" है, जिसमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद की कोई विशेषतायें नहीं हैं । सभी चीनी नेताओं ने, जो पहले सत्ता में थे और जिन्होंने अब सत्ता पर कब्ज़ा कर लिया है, दोनों ही ने, अपनी प्रति-क्रान्तिकारी योजनाओं को अभ्यास में लगाने के लिये, संगठन के अपने रूपों व काम करने के तरीकों में, अपने नीतियुक्त व युक्तियुक्त उद्देश्यों में, हमेशा "माओ त्से-तुङ विचारधारा" का भारी इस्तेमाल किया है ।

उनकी संदेहजनक क्रियाओं, दोलायमान व अन्तर्विरोधी विचारनीतियों, चीन की आन्तरिक व विदेशी नीति की

सिद्धान्तहीनता व उपयोगितावाद, मार्क्सवाद-लेनिनवाद से उसके विचलन और इसको छिपाने के लिये वामपक्षी वाक्यांशों के इस्तेमाल को देखकर, हम अल्बेनिया के कम्यूनिस्टों ने, "माओ त्से-तुङ विचारधारा" द्वारा पैदा किये गये खतरे के बारे में क्रमशः अपने मत व धारणा को बना लिया है। राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के दौरान जब हमारी पार्टी की स्थापना हुई थी, और मुक्ति के बाद भी, हमारे लोगों को चीन के बारे में बहुत कम जानकारी थी। लेकिन दुनिया के सभी अन्य क्रान्तिकारियों के समान हमने भी इसके बारे में यह मत बनाया कि यह प्रगतिशील था :"चीन एक बड़ा महाद्वीप है। चीन लड़ रहा है, और विदेशी साम्राज्यवाद के खिलाफ़, रियायतों के खिलाफ़ चीन में क्रान्ति उबल रही है", आदि, आदि। सुन यात-सेन की क्रियाओं के बारे में, सोवियट संघ व लेनिन के साथ उसके सम्बन्धों व मित्रता के बारे में हमें कुछ आम जानकारी थी; हम कोमिण्टांग के बारे में, जापानियों के खिलाफ़ चीनी लोगों के युद्ध के बारे में और एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी, माओ त्से-तुङ के नेतृत्व में, एक महान पार्टी समझी जाने वाली, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की मौजूदगी के बारे में थोड़ा कुछ जानते थे। बस इतनी ही जानकारी थी।

सिर्फ़ १९५६ के बाद ही चीनी पार्टी के साथ हमारी पार्टी के नज़दीकी सम्बन्ध शुरू हुये। ये सम्बन्ध, हमारी पार्टी द्वारा क्रुश्चेववादी आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ किये जा रहे संघर्ष के कारण निरन्तर बढ़ते गये। उस समय चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के साथ, या और भी यथार्थ रूप से, उसके नेतृत्वदायी कार्यकर्ताओं के साथ हमारे सम्बन्ध और भी बहुशः व घनिष्ठ हुये, विशेषकर उस समय जब चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने भी क्रुश्चेव-अनुयायी संशोधनवादियों के खिलाफ़ खुला संघर्ष शुरू कर

दिया । लेकिन हमें यह मानना पड़ेगा, कि चीनी नेताओं के साथ हमारी मीटिंगों में, हालांकि ये अच्छी व साथीपन के साथ हुई मीटिंगें थीं, किसी कारणवश, चीन, माओ त्से-तुङ व चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी हमारे लिये एक बड़ी पहेली बने रहे ।

लेकिन चीन, उसकी कम्यूनिस्ट पार्टी व माओ त्से-तुङ, हमारे लिये एक पहेली क्यों बने रहे ? वे एक पहेली बने रहे क्योंकि कई मुख्य राजनीतिक, विचारधारात्मक, सैनिक व संगठनात्मक समस्याओं पर चीनी नेताओं के अनेक रुख, चाहे वे आम या निजी रुख हों, कभी दांयपक्ष की ओर तो कभी वामपक्ष की ओर दोलायमान होते थे। कभी वे दृढ़ रहते थे तो कभी दोलायमान, ऐसे समय भी थे जब उन्होंने सही विचार-नीतियों को अपनाया, लेकिन ज़्यादातर उनकी मौकापरस्त विचारनीतियां ही देखने में आती थीं । माओ के सम्पूर्ण जीवनकाल के दौरान, चीनी नीति आम तौर से दोलायमान नीति थी, परिस्थितियों के साथ-साथ बदलती हुई एक नीति थी, जिसमें एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी मेरुदंड की कमी थी । किसी महत्वपूर्ण राजनीतिक समस्या के बारे में वे एक दिन जो कहते थे अगले ही दिन उसका उल्टा कहते थे । चीनी नीति में एक दृढ़ चिरस्थायी क्रान्तिकारी निरन्तरता कहीं भी नहीं थी ।

स्वभावतः, इन सभी रुखों ने हमारा ध्यान आकर्षित किया, और हमने इनका समर्थन नहीं किया, लेकिन फिर भी, माओ त्से-तुङ की क्रियाओं के बारे में हमें जो जानकारी थी, उसके आधार पर हम इस आम विचार से चले कि वह एक मार्क्स-वादी-लेनिनवादी था । माओ त्से-तुङ के अनेक दावों, जैसे कि सर्वहारा व सरमायदारों के बीच के अन्तर्विरोधों को

अशत्रुतापूर्ण अन्तर्विरोध बताने के दावे, समाजवाद की सम्पूर्ण अवधि के दौरान दुश्मनीपूर्ण वर्गों की मौजूदगी के बारे में उसके दावे, उसके दावे "गाँवों को शहर पर घेरा डालना चाहिये", जो क्रान्ति में किसान वर्ग के कार्यभाग को सर्वोच्च महत्व देता है, आदि, को हम ठीक नहीं मानते थे और इनके बारे में हमारे खुद के मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचार थे, जिन्हें हमने, जब कभी भी हो सका, चीनी नेताओं के सामने प्रकट किया। इसके साथ-साथ, माओ त्से-तुङ व चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के कुछ अन्य राजनीतिक विचारों व विचारनीतियों को, जो हमारी पार्टी के मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारों व विचारनीतियों के साथ संगत में नहीं थे, हमने विशेष परिस्थि-तियों के कारण बनायी गयी, एक बड़े राज्य की अस्थायी युक्तियों के रूप में समझा। लेकिन, समय गुजरने के साथ-साथ, यह और भी ज्यादा स्पष्ट होता गया, कि चीन की कम्यू-निस्ट पार्टी द्वारा अपनायी गयी विचारनीतियाँ, सिर्फ़ युक्तियाँ ही नहीं थीं।

तथ्यों का विश्लेषण करके हमारी पार्टी कुछ आम और विशेष निष्कर्षों पर पहुंची, जिन्होंने उसे सतर्क कर दिया, लेकिन उसने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी व चीनी नेताओं के साथ वाग्युद्ध नहीं किया, इसलिये नहीं कि वह उनके साथ वागयुद्ध करने से डरती थी, बल्कि इसलिये कि इस पार्टी व स्वयं माओ त्से-तुङ के गलत, मार्क्सवाद-विरोधी रास्ते के बारे में उसके पास जो तथ्य थे, वे पूरे नहीं थे, और उनसे उस समय एक अंतिम निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता था। दूसरी ओर, कुछ समय के लिये, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने अमरीकी साम्राज्यवाद व प्रतिक्रिया का विरोध भी किया था। उसने सोवियट क्रुश्चेववादी संशोधनवाद के खिलाफ़ भी एक विचारनीति

अपनायी थी,हालाँकि यह अब स्पष्ट है,कि सोवियट संशोधनवाद के खिलाफ़ उसका संघर्ष सही व सैद्धान्तिक मार्क्सवादी-लेनिनवादी स्थितियों से नहीं किया गया था ।

इसके अलावा,हमें चीन के आन्तरिक राजनीतिक,आर्थिक, सांस्कृतिक,सामाजिक जीवन,आदि के बारे में पूरी जानकारी नहीं थी । चीनी पार्टी व राज का संगठन हमारे लिये हमेशा एक बन्द किताब बना रहा । चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने हमें चीनी पार्टी व राज के संगठन के रूपों का अध्ययन करने का कोई भी मौका नहीं दिया । हम अल्बेनिया के कम्यूनिस्ट, चीन के राज संगठन की सिर्फ़ आम रूपरेखायें ही जानते थे, और इससे ज़्यादा कुछ नहीं;हमें चीन की पार्टी के अनुभव को समझने का,और यह देखने का कोई भी मौका नहीं दिया गया, कि वह कैसे काम करती थी, उसका संगठन कैसा था, विभिन्न क्षेत्रों में किन दिशाओं में विकास हो रहा था,और यथार्थ रूप में ये दिशायें क्या थीं ।

चीनी नेताओं ने धूर्तता के साथ काम किया है । उन्होंने उनकी पार्टी व राज की क्रियाओं को जानने के लिये आवश्यक अनेक दस्तावेज़ों को सार्वजनिक रूप से सामने नहीं रखा है । वे अपने दस्तावेज़ों को प्रकाशित करने में बहुत सतर्क थे और अभी भी हैं । हमारे पास उनके जो थोड़े प्रकाशित दस्तावेज़ हैं वे भी अधूरे हैं । माओ की रचनाओं के चार ग्रंथों में,जिन्हें सरकारी समझा जा सकता है,१९४९ से पहले लिखे गये लेख ही शामिल हैं,लेकिन इसके साथ-साथ, उनको सावधानीपूर्वक एक ऐसे तरीके से व्यवस्थित किया है कि वे चीन में विकसित हुई वास्तविक परिस्थितियों का एक सही चित्र नहीं पेश करते हैं ।

चीनी प्रेस में समस्यायों के राजनीतिक व सैद्धान्तिक प्रस्तु-

तीकरण का सिर्फ़ एक प्रचार-स्वभाव ही था, साहित्य की तो बात ही छोड़िये, जिसमें बेहद गड़बड़ फैली हुई थी । प्रकाशित लेख, प्रारूपिक चीनी घिसे-पिटे फ़ार्मूलों से भरे हुये थे जिन्हें अंकगणितीय ढंग से अभिव्यक्त किया जाता था, जैसे कि "तीन अच्छाइयाँ व पाँच बुराइयाँ", "चार पुराने व चार नये", "दो चेतावनी व पाँच आत्म-नियंत्रण", "तीन सच्च व सात झूठ", आदि, आदि । हम इन अंकगणितीय संख्याओं में से कुछ भी "सैद्धान्तिक" अर्थ निकाल नहीं पाये, क्योंकि हम पारम्परिक मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त व संस्कृति के अनुसार ही सोचने, काम करने व लिखने के आदी हैं ।

चीनी नेताओं ने हमारी पार्टी के किसी भी प्रतिनिधि-मण्डल को उनके अनुभव का अध्ययन करने के लिये आमन्त्रित नहीं किया । और जब कभी भी हमारी पार्टी के अनुरोध पर कोई प्रतिनिधि-मण्डल वहाँ गया तब उसको पार्टी के काम के बारे में कुछ व्याख्या या अनुभव देने के बजाय चीनी सिर्फ़ प्रचार में ही लगे रहे और कम्यूनों या कारखानों की यात्रा कराने के लिये उसे इधर-उधर ले गये । और उनका यह अजीब रुख किसके प्रति था ? हम अल्बेनिया के लोगों, उनके मित्रों के प्रति, जिन्होंने सबसे कठिन परिस्थितियों में भी उनकी रक्षा की थी । ये सभी क्रियायें हमारी समझ के बाहर थीं, लेकिन ये इस बात का एक संकेत भी था, कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी अपनी परिस्थिति का एक स्पष्ट चित्र हमें देना नहीं चाहती थी ।

लेकिन जिस बात ने हमारी पार्टी का ध्यान सबसे ज़्यादा आकर्षित किया, वह सांस्कृतिक क्रान्ति थी, जिसने हमारे दिमाग में अनेक मुख्य सवालों को उठाया । माओ त्से-तुङ द्वारा शुरू की गयी, सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान चीन की कम्यूनिस्ट

पार्टी व चीनी राज की क्रियाओं में, आश्चर्यजनक राजनीतिक, विचारधारात्मक व संगठनात्मक विचार व कार्य प्रकाश में आये, जो मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन की शिक्षाओं पर आधारित नहीं थे । उनकी पहले की संदेहास्पद क्रियाओं, और इसके साथ-साथ सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान देखी गयी क्रियाओं को आंकते हुये, और विशेषकर इस क्रान्ति से लेकर अब तक होने वाली घटनाओं, इस या उस गुट का नेतृत्व में उभर आना व गिर जाना, आज लिन पियाओ का गुट, तो कल तेंग सियाओ-पिङ या हुआ कुओ-फेंग आदि का, जिनमें से हरेक गुट की दूसरे गुट के विरोध में अपनी ही विचारनीति थी, इन सभी बातों ने हमारी पार्टी को माओ त्से-तुङ व चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के विचारों व कार्यों का और भी गहरा अध्ययन करने के लिये, और "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की एक और भी ज़्यादा गहरी जानकारी हासिल करने के लिये बाध्य किया । जब हमने यह देखा कि इस सांस्कृतिक क्रान्ति का नेतृत्व पार्टी द्वारा नहीं किया गया था, बल्कि यह माओ त्से-तुङ द्वारा की गयी मांग के बाद एक अव्यवस्थित विस्फोट था, तो हम इसे एक क्रान्तिकारी विचारनीति नहीं कह सकते थे । चीन में यह माओ की प्रतिष्ठा ही थी जिसके कारण करोड़ों असंगठित युवक-युवतीगण, विद्यार्थी व शिष्य उठ खड़े हुये और उन्होंने पीकिंग में, पार्टी व राज कमेटियों पर हमला किया और उनको नष्ट कर दिया । यह कहा गया कि ये युवक-युवतीगण ही उस समय चीन में "सर्वहारा विचारधारा" का प्रतिनिधित्व कर रहे थे और कि ये ही पार्टी व सर्वहारा को "सही" रास्ता दिखायेंगे !

ऐसी एक क्रान्ति, जिसका एक बहुत ही स्पष्ट राजनीतिक स्वभाव था, को एक सांस्कृतिक क्रान्ति कहा गया । हमारी

पार्टी के मत में, यह नाम ठीक नहीं था, क्योंकि वास्तव में चीन में जो आन्दोलन फूट पड़ा था, वह एक राजनीतिक आन्दोलन था, सांस्कृतिक नहीं । लेकिन मुख्य बात यह तथ्य थी कि यह "महान सर्वहारा क्रान्ति" न तो पार्टी और न ही सर्वहारा के नेतृत्व में थी । यह गम्भरि परिस्थिति, क्रान्ति में सर्वहारा के नेतृत्वदायी कार्यभाग का अल्पानुमान करने और युवक-युवतीगण का अत्यानुमान करने की माओ त्से-तुङ की पुरानी मार्क्सवाद-विरोधी धारणाओं का परिणाम थी । माओ ने लिखा कि :" '४ मई के आन्दोलन' के बाद से चीनी युवक-युवतीगण ने कौन सा कार्यभाग अदा करना शुरू किया ? एक तरह से उन्होंने एक अग्रगामी कार्यभाग अदा करना शुरू किया - एक ऐसा तथ्य, जिसे चरम-प्रतिक्रियावादियों को छोड़कर हमारे देश में सभी लोग स्वीकार करते हैं । एक अग्रगामी कार्यभाग क्या है ? इसका मतलब है नेतृत्व करना ..." •

इस प्रकार मज़दूर वर्ग की अवहेलना की गयी, और अनेक अवसरों पर मज़दूर वर्ग ने लाल रक्षकों का विरोध किया और यहाँ तक कि उनके खिलाफ़ लड़ाई भी की । हमारे साथियों ने, जो उस समय चीन में थे, स्वयं अपनी आँखों से फ़ैक्टरी मज़दूरों को युवक-युवतीगण के खिलाफ़ लड़ते हुये देखा । पार्टी का विघटन कर दिया गया । उसको नष्ट कर दिया गया, और कम्यूनिस्टों व सर्वहारा की पूरी तरह से अवहेलना की गयी । यह एक बहुत गम्भीर परिस्थिति थी ।

हमारी पार्टी ने सांस्कृतिक क्रान्ति का समर्थन किया,

• माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ३, पृष्ठ १९ (अल्बेनिया संस्करण)

क्योंकि चीन में क्रान्ति की विजयें खतरे में थीं । माओ त्से-तुङ ने स्वयं हमें बताया कि वहाँ पार्टी व राज में लियू शाओ-ची व तैंग सियाओ-पिङ के पथभ्रष्ट दल ने सत्ता पर कब्ज़ा कर लिया था, और कि,चीनी क्रान्ति की विजयें खतरे में थीं । इन हालतों में,मामले के इस हद तक पहुँच जाने के लिये चाहे जो भी जिम्मेवार हो, हमारी पार्टी ने सांस्कृतिक क्रान्ति का समर्थन किया । हमारी पार्टी ने भाईचारे के चीनी लोगों की,चीन की क्रान्ति व समाजवाद के उद्देश्य की रक्षा की,और मार्क्सवाद-विरोधी गुटों के बीच गुटबन्दी वाले झगड़ों की नहीं,जो गुट सत्ता पर कब्ज़ा करने के लिये आपस में,यहाँ तक कि बन्दूकों के जरिये भी,टक्कर ले रहे व लड़ रहे थे ।

घटनाओं के सिलसिले ने यह दिखाया कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति न तो एक क्रान्ति थी, न महान,न ही सांस्कृतिक,और खास तौर से सर्वहारा तो बिल्कुल भी नहीं थी । यह सत्ता पर कब्ज़ा करने वाले मुट्ठीभर प्रतिक्रियावादियों को नष्ट करने के लिये सम्पूर्ण-चीन के स्तर पर किया गया एक बादशाही पुश था ।

निस्सन्देह,यह सांस्कृतिक क्रान्ति एक फ़रेब थी । इसने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी व जनसामुदायिक संगठनों दोनों ही को नष्ट कर दिया और चीन को एक नयी अव्यवस्था में डुबो दिया । इस क्रान्ति का नेतृत्व मार्क्सवाद-विरोधी लोगों ने किया था जिनको दूसरे मार्क्सवाद-विरोधी व तानाशाही लोगों ने एक सैनिक पुश के जरिये नष्ट कर दिया है ।

हमारे प्रकाशनों में माओ त्से-तुङ को एक महान मार्क्सवादी-लेनिनवादी बताया गया था,लेकिन हमने चीनी प्रचार

की परिभाषाओं का कभी भी इस्तेमाल नहीं किया व कभी भी इनका समर्थन नहीं किया, जिस प्रचार ने माओ को मार्क्सवाद-लेनिनवाद का एक क्लासिकी बताया और "माओ त्से-तुङ विचारधारा" को उसकी तीसरी व उच्चतम कार्यावस्था बताया । हमारी पार्टी ने चीन में माओ त्से-तुङ की व्यक्ति-पूजा की वृद्धि को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विपरीत समझा है ।

सांस्कृतिक क्रान्ति के अव्यवस्थित विकास और उसके परिणामों ने इस मत को, जो अभी भी पूरी तरह से स्पष्ट नहीं हुआ था, और भी पक्का कर दिया कि चीन में मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बारे में कोई जानकारी नहीं थी और इसका इस्तेमाल नहीं किया जा रहा था, कि मूलरूप से, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी व माओ त्से-तुङ, "सर्वहारा, उसका अधिनायकत्व, और गरीब किसानों के साथ उसके सहयोगी संघ", और ऐसे ही दिखावे के कई दूसरे शब्दों के बारे में उनके द्वारा इस्तेमाल किये गये नारों व दिखावों के बावजूद भी, मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचार नहीं रखते थे ।

इन घटनाओं के बाद, हमारी पार्टी ने उन दोलायमानताओं के कारणों की और भी गहरे तौर से जाँच करना शुरू किया, जो दोलायमानतायें क्रुश्चेववादी संशोधनवाद के प्रति चीनी नेतृत्व की विचारनीतियों में देखी गयी थीं, जैसे कि १९६२ की घटना में, जब उसने अभिकथित रूप से अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ़ एक सामान्य मोर्चे के नाम पर सोवियट संशोधनवादियों के साथ पुनर्मिलन व एकता की कोशिश की थी, या जैसे कि १९६४ में जब सोवियट संघ के साथ पुनर्मिलन की कोशिशों को जारी रखते हुये, चोउ एन-लाई, ब्रेज़नेव गुट के सत्ता में आने का अभिवादन करने के लिये मास्को गया था । ये दोलायमानतायें आकस्मिक नहीं थीं । ये क्रान्तिकारी सिद्धान्तों

व दृढ़ता के अभाव को दिखातीहैं ।

जब निक्सन को चीन में आमंत्रित किया गया और माओ त्से-तुङ की अध्यक्षता में चीनी नेतृत्व ने अमरीकी साम्राज्यवाद के साथ वैरशमन व एकता की नीति की घोषणा की,तब यह स्पष्ट हो गया कि चीनी कार्यदिशा व नीति मार्क्सवाद-लेनिनवाद व सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के पूरी तरह से विरोध में थीं । इसके बाद,चीन की शोवींवादी व आधिपत्यवादी महत्वाकांक्षायें और भी स्पष्ट होने लगीं । चीनी नेतृत्व ने लोगों के क्रान्तिकारी व मुक्ति संघर्षों,विश्व सर्वहारा और सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन का और भी खुलकर विरोध करना शुरू किया । इसने तथा-कथित "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त की घोषणा की, जिसे यह सम्पूर्ण मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन पर उसकी आम कार्यदिशा के रूप में थोपने की कोशिश कर रहा था ।

क्रान्ति व समाजवाद के हितों के लिये,और यह सोचकर कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की कार्यदिशा में देखी गयी गलतियां परिस्थितियों के गलत मूल्यांकन व विभिन्न कठिनाइयों के कारण हुई थीं,पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने चीनी नेतृत्व को इन गलतियों को सुधारने व उन पर विजय पाने के लिये, कई बार मदद देने की कोशिश की । हमारी पार्टी ने माओ त्से-तुङ व अन्य चीनी नेताओं के सामने,एक सच्चे व साथीपन के ढंग से, खुलकर अपने विचारों को प्रकट किया,और मार्क्सवादी-लेनिनवादी आन्दोलन की आम कार्यदिशा और लोगों व क्रान्ति के हितों पर सीधी तरह से असर डालने वाले चीन के कई कामों पर उसने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी को अपनी आलोचनाओं व मतभेद सरकारी तौर से व लिखित रूप में विदित किये ।

लेकिन चीनी नेतृत्व ने कभी भी हमारी पार्टी की सही व सैद्धान्तिक आलोचनाओं का स्वागत नहीं किया । उसने कभी भी उनका जवाब नहीं दिया और यहां तक कि उनपर वादविवाद करना भी कभी स्वीकार नहीं किया ।

इसी दौरान, देश व विदेश में चीनी नेतृत्व की मार्क्स-वाद-विरोधी क्रियायें और भी खुली व और भी स्पष्ट हो गयी । इन सब बातों ने हमारी पार्टी को, और सभी अन्य मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की कार्यदिशा, उसका मार्गप्रदर्शन करने वाली राजनीतिक व विचार-धारात्मक धारणाओं, उसकी यथार्थ क्रियाओं व उसके परिणामों का पुनःमूल्यांकन करने के लिये बाध्य किया । इसके परि-णामस्वरूप हमने देखा कि "माओ त्से-तुङ विचारधारा", जो चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का मार्गप्रदर्शन करती रही है और कर रही है, आधुनिक संशोधनवाद का एक खतरनाक रूप है, जिसके खिलाफ़ सैद्धान्तिक व राजनीतिक स्तर पर एक हर-तरफ़ा संघर्ष किया जाना चाहिये ।

<u>"माओ त्से-तुङ विचारधारा" संशोधनवाद का एक भिन्न रूप है, जिसने दूसरे विश्व युद्ध से भी पहले, खास तौर से १९३५, जब माओ त्से-तुङ सत्ता में आया था, के बाद से निश्चित रूप धारण करना शुरू किया था</u> । इस अवधि में माओ त्से-तुङ और उसके समर्थकों ने "हठवाद", "तैयार नमूनों", "विदेशी रूढ़धारणाओं", आदि, के खिलाफ़ संघर्ष के नारे की ओट में एक "सैद्धान्तिक" अभियान शुरू किया और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विश्वव्यापी स्वभाव को इनकार करते हुये, एक राष्ट्रीय मार्क्सवाद को गढ़ने की समस्या को उठाया । मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बजाय उसने समस्याओं को "चीनी तरीके" से

हल करने, और "...सजीव व ताज़े, चीनी लोगों के कानों व आँखों के लिये आनन्द-प्रद"• चीनी तरीके का उपदेश दिया, और इस तरह उसने इस संशोधनवादी दावे का प्रचार किया कि हरेक देश में मार्क्सवाद का अपना निजी व खास सार होना चाहिये ।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" को वर्तमान युग में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की उच्चतम कार्यावस्था घोषित किया गया। चीनी नेताओं ने घोषणा की कि "माओ त्से-तुङ ने मार्क्स, एंगेल्स व लेनिन ... से भी ज़्यादा हासिल किया है"। चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का संविधान, जिसे माओ त्से-तुङ के नेतृत्व में आयोजित की गई ९वीं कांग्रेस में स्वीकृत किया गया था, कहता है कि "माओ त्से-तुङ विचारधारा इस युग का मार्क्सवाद-लेनिनवाद है", कि माओ त्से-तुङ ने "...मार्क्सवाद-लेनिनवाद को विरासत में पाया, उसकी रक्षा की व उसका विकास किया और उसको एक नयी व और भी ऊंची कार्यावस्था पर पहुंचा दिया।"••

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों व आदर्शों के बजाय "माओ त्से-तुङ विचारधारा" पर पार्टी की क्रियाओं को आधारित करने से चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की श्रेणियों में मौकापरस्ती व गुटबन्दी के संघर्षों के लिये दरवाज़े और भी खुल गये ।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" विचारों का एक मिश्रण है

• माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ४, पृष्ठ ८४ (अल्बेनिया संस्करण)

•• चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की ९वीं कांग्रेस, दस्तावेज़, पृष्ठ ७९-८०, तिराना १९६९ (अल्बेनिया संस्करण)

जिसमें मार्क्सवाद से लिये गये विचारों व दावों को अन्य दर्शनशास्त्रों के अध्यात्मवादी, उपयोगितावादी व संशोधनवादी सिद्धान्तों से मिलाया गया है । इसकी जड़ें पुराने चीनी दर्शनशास्त्र में और पहले की राजनीति व विचारधारा में, और चीन के राज व सैन्यवादी अभ्यास में है ।

वे चीनी नेता जिन्होंने इस समय सत्ता पर कब्ज़ा कर लिया है और इसके साथ-साथ वे जो सत्ता में थे और अब सत्ता खो बैठे हैं, लेकिन जो अपनी प्रतिक्रान्तिकारी योजनाओं को अभ्यास में ला सके हैं, इन सभी चीनी नेताओं का विचारधारात्मक आधार "माओ त्से-तुङ विचारधारा" रहा है और अभी भी है । माओ त्से-तुङ ने स्वयं यह कबूल किया है कि उसके विचारों का सभी, वामपक्षी व दांयपक्षी, जैसा कि वह चीनी नेतृत्व में मौजूद विभिन्न दलों को नाम देता था, इस्तेमाल कर सकते हैं । ८ जुलाई, १९६६ को चियांङ चिङ को लिखे गये अपने खत में माओ त्से-तुङ ने जोर दिया कि, "सत्ता में होने वाले दांयपक्षी अपने आपको शक्तिशाली बनाने के लिये कुछ समय तक मेरे शब्दों का इस्तेमाल कर सकते हैं, लेकिन वामपक्ष मेरे दूसरे शब्दों का इस्तेमाल कर सकता है और दांयपक्षियों का अन्तर्ध्वंस करने के लिये अपने आपको संगठित कर सकता है ।" • यह स्पष्ट करता है कि माओ त्से-तुङ एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं था, और उसके विचार सारसंग्रही थे । यह माओ की सभी "सैद्धान्तिक रचनाओं" में स्पष्ट है, जो हालांकि "क्रान्तिकारी" शब्दावलियों व नारों से छिपायी गयी हैं, लेकिन फिर भी इस तथ्य को नहीं छिपा पाती हैं कि "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की मार्क्स-

• "ले मोण्ड", दिसम्बर २, १९७२

वाद-लेनिनवाद के साथ कोई भी सामान्यता नहीं है ।

माओ की रचनाओं का, यहाँ तक कि उसकी रचनाओं के एक भाग का, और कम्यूनिस्ट पार्टी के कार्यभाग, क्रान्ति, समाजवाद के निर्माण आदि के सवालों से सम्बन्धित मूलभूत समस्याओं पर विचार करने के उसके तरीके का एक आलोचनात्मक विश्लेषण "माओ त्से-तुङ विचारधारा" और मार्क्स-वाद-लेनिनवाद के बीच की मूलभूत भिन्नता को पूरी तरह से स्पष्ट कर देता है ।

अब हम सबसे पहले पार्टी के संगठन और उसके नेतृत्वदायी कार्यभाग के सवाल पर विचार करेंगे । माओ ने पार्टी के बारे में लेनिनवादी सिद्धान्तों के प्रयोग के पक्ष में होने का दिखावा किया, लेकिन अगर पार्टी पर उसके विचारों और, विशेषकर, चीन की पार्टी के जीवन के अभ्यास का यथार्थ ढंग से विश्लेषण किया जाये, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उसने लेनिन-वादी सिद्धान्तों व आदर्शों के स्थान पर संशोधनवादी दावों को रख दिया है ।

माओ त्से-तुङ ने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का संगठन मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के सिद्धान्तों के आधार पर नहीं किया है । उसने पार्टी को एक लेनिनवादी ढंग की पार्टी, एक बोल्शेविक पार्टी बनाने के लिये काम नहीं किया है । माओ त्से-तुङ एक सर्वहारा वर्ग पार्टी के पक्ष में नहीं, बल्कि बिना वर्ग प्रतिबंधों की एक पार्टी के पक्ष में था । उसने पार्टी व वर्ग के बीच के अन्तर को खत्म करने के लिये, पार्टी को एक जनसामूहिक स्वभाव देने के नारे का इस्तेमाल किया । इसके परिणामस्वरूप, कोई भी, जब भी उसकी मर्ज़ी हो, इस पार्टी में दाखिल हो सकता था, या इससे बाहर निकल

सकता था । इस सवाल पर, "माओ त्से-तुङ विचारधारा" युगोस्लाव संशोधनवादियों व "यूरोकम्यूनिस्टों" के विचारों के साथ पूरी तरह से सहमत है ।

इसके अलावा, माओ त्से-तुङ ने पार्टी के निर्माण, उसके सिद्धान्तों व आदर्शों को हमेशा अपनी विचारनीतियों व हितों, अपनी मौकापरस्त, कभी दांयपक्षी तो कभी वामपक्षी, जोखिमवादी नीति, गुटों के बीच संघर्ष आदि पर निर्भर बनाया है ।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी में कभी भी विचारों व क्रियाओं में सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी एकता नहीं थी और न ही है । गुटों के बीच झगड़े, जो चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना के समय से ही मौजूद रहे हैं, का अर्थ यह है कि इस पार्टी में एक सही मार्क्सवादी-लेनिनवादी कार्यदिशा निर्धारित नहीं की गयी थी, और कि यह मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारों से मार्गप्रदर्शित नहीं हुई थी । पार्टी के मुख्य नेताओं में जो विभिन्न प्रवृत्तियां प्रत्यक्ष हुई, वे प्रवृत्तियां कभी वामपक्षी तो कभी दांयपक्षी मौकापरस्त, कभी सेन्ट्रिस्ट• थीं, और यहां तक कि खुले रूप से अराजकतावादी, शोवींवादी व जातिवादी विचारों वाली भी हो गयीं । उस सम्पूर्ण अवधि में जब कि माओ त्से-तुङ व उसके समर्थकों का दल पार्टी के नेतृत्व में था, ये प्रवृत्तियां चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की खास विशेषताओं में से कुछ विशेषतायें थीं । माओ त्से-तुङ ने स्वयं पार्टी में "दो कार्यदिशाओं" की मौजूदगी की ज़रूरत की हिमायत की थी । उसके अनुसार, दो कार्यदिशाओं की

• वे, जो क्रान्तिकारी निर्णय लेते हैं, लेकिन अभ्यास में कार्यान्वित नहीं करते हैं : अनुवादक

मौजूदगी व उनके बीच संघर्ष स्वाभाविक है, विरोधी पहलुओं की एकता का प्रत्यक्षीकरण है, और एक नम्य नीति है, जो अपने आप में, सिद्धान्तों के प्रति वफ़ादारी व समझौते, दोनों को एकीकृत करती है। "इस तरह", उसने लिखा, ""हमारे पास गलतियाँ करने वाले साथी के साथ सलूक करने के लिये दो हाथ हैं : एक हाथ उसके साथ संघर्ष करने के लिये और दूसरा हाथ उसके साथ एक होने के लिये। इस संघर्ष का लक्ष्य है, मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को ऊँचा उठाये रखना, जिसका अर्थ है सिद्धान्ती होना; यह समस्या का एक पहलू है । दूसरा पहलू है, उसके साथ एक होना । एक होने का लक्ष्य है उसको बच निकलने का रास्ता देना, उसके साथ एक समझौता करना ।" •

ये विचार, कम्यूनिस्ट पार्टी के बारे में दी गयी लेनिनवादी शिक्षाओं के बिल्कुल विपरीत हैं, जिन शिक्षाओं के अनुसार कम्यूनिस्ट पार्टी एक संगठित अग्रगामी टुकड़ी है, जिसमें एक ही कार्यदिशा और विचार व क्रिया में फौलादी एकता होनी चाहिये ।

पार्टी के बाहर होने वाले संघर्ष के प्रतिबिम्ब के रूप में पार्टी की श्रेणियों में वर्ग संघर्ष और माओ त्से-तुङ की "पार्टी में दो कार्यदिशाओं" की धारणाओं के बीच कोई भी सामान्यता नहीं है। पार्टी वर्गों का और शत्रुतापूर्ण वर्गों के बीच संघर्ष का एक अखाड़ा नहीं है, यह अन्तर्विरोधी लक्ष्य रखने वाले लोगों का एक जमाव नहीं है। सच्ची मार्क्सवादी-

---

• माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ ५६०, पीकिंग १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण, चीनियों द्वारा सबसे पहले इस वर्ष प्रकाशित किया गया)

लेनिनवादी पार्टी सिर्फ़ मज़दूर वर्ग की पार्टी है और इस वर्ग के हितों पर ही अपने आप को आधारित करती है। यही, क्रान्ति की विजय व समाजवाद के निर्माण के लिये निश्चयात्मक कारक है। पार्टी के बारे में दिये गये लेनिनवादी सिद्धान्तों, जो कम्यूनिस्ट पार्टी में अनेक कार्यदिशाओं व विरोधी प्रवृत्तियों के होने की इजाज़त नहीं देते हैं, की रक्षा करते हुये, जे०वी० स्टालिन ने जोर दिया कि :

"...कम्यूनिस्ट पार्टी सर्वहारा की एकाश्म पार्टी है, और विभिन्न वर्गों के लोगों की एक मण्डली की पार्टी नहीं है।" •

लेकिन माओ त्से-तुङ पार्टी को अन्तर्विरोधी हितों वाले वर्गों का एक संघ समझता है, एक ऐसा संगठन समझता है, जिसमें दो शक्तियां, सर्वहारा व सरमायदार, "सर्वहारा स्टाफ़" व "सरमायदार स्टाफ़", जिनके प्रतिनिधियों को पार्टी के आधारिक अंगों से लेकर उच्चतम नेतृत्वदायी अंगों तक होना चाहिये, एक दूसरे का मुकाबला करती हैं व संघर्ष करती हैं। इसलिये, १९५६ में, उसने केन्द्रीय कमेटी के लिये दांयपक्षी व वामपक्षी गुटों के नेताओं के चुनाव की कोशिश की, और इसके लिये बेतुके व मूर्खतापूर्ण तर्कों को पेश किया। उसने कहा कि "सारा देश, सारी दुनिया अच्छी तरह जानती है कि उन्होंने कार्य-दिशा से सम्बन्धित गलतियां की हैं, और उनको चुनने का कारण ठीक यही तथ्य है कि वे अच्छी तरह से जाने जाते हैं।

• जे०वी० स्टालिन, रचनायें, ग्रंथ ११, पृष्ठ २८० (अल्बेनिया संस्करण)

तुम इसके बारे में क्या कर सकते हो ? उन्हें अच्छी तरह से जाना जाता है, जब कि तुम जिसने कोई गलतियां नहीं की हैं या सिर्फ छोटी गलतियां की हैं,उनकी जैसी ख्याति नहीं रखते हो । हमारे जैसे देश में,जहां बहुत बड़ी निम्न-सरमायदारी मौजूद है,ये दो मापदण्ड हैं ।"* पार्टी की श्रेणियों में सैद्धान्तिक संघर्ष का त्याग करते हुये, माओ त्से-तुङ ने गुटों का खेल खेला, उनमें से कुछ गुटों के साथ, दूसरे कुछ गुटों का विरोध करने और इस तरह अपनी खुद की स्थितियों को मज़बूत करने के लिये समझौता करने की कोशिश की ।

ऐसी एक संगठनात्मक कार्यदिशा से, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी कभी भी एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी नहीं रही है और न ही कभी हो सकती थी । उसमें लेनिनवादी सिद्धान्तों व आदर्शों की इज़्ज़त नहीं की गयी । पार्टी का उच्चतम सामूहिक अंग,कांग्रेस,नियमित रूप से आयोजित नहीं किया गया । उदाहरण के लिये,७वीं व ८वीं कांग्रेस के बीच की अवधि ११ वर्ष,और युद्ध के बाद ८वीं व ९वीं कांग्रेस के बीच की अवधि १३ वर्ष थी । इसके अलावा,आयोजित की गयीं कांग्रेसें,औपचारिक थीं,काम की मीटिंगों से ज़्यादा सिर्फ परेडें भर थीं । कांग्रेसों के लिये प्रतिनिधियों का चुनाव, पार्टी के जीवन के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों व आदर्शों के अनुसार, नहीं किया जाता था, बल्कि उनकी नियुक्ति नेतृत्वदायी अंगों द्वारा की जाती थी और यह स्थायी प्रतिनिधित्व की प्रणाली के अनुसार किया जाता था ।

हाल में "रेनमिन रिबाओ" में चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी

---

* माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५, पृष्ठ ३४८,पीकिंग १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

की केन्द्रीय कमेटी की "आम निर्देशिका" के एक तथा-कथित सैद्धान्तिक दल द्वारा लिखा गया एक लेख प्रकाशित किया गया था ।* इस लेख में कहा गया है कि "आम निर्देशिका" के नाम पर, माओ ने अपने चारों तरफ़ एक ऐसा विशेष उपकरण स्थापित कर लिया था, जो राजनीतिक ब्यूरो, पार्टी की केन्द्रीय कमेटी, राज के कार्यकर्ताओं, सेना, सुरक्षा सेवाओं, आदि, को अपने निरीक्षण व निर्मंत्रण में रखता था । इस निर्देशिका में प्रवेश व इसके काम की जानकारी सभी के लिये, यहाँ तक कि केन्द्रीय कमेटी व राजनीतिक ब्यूरो के सदस्यों के लिये भी, निषिद्ध थी । इस निर्देशिका में इस या उस गुट-बन्दीवादी दल को गिराने या ऊपर उठाने की योजनायें तैयार की जाती थीं । इस निर्देशिका के आदमी हर जगह उपस्थित रहते थे, वे चोरी-छिपे सुनते, नज़र रखते और पार्टी के नियन्त्रण के बाहर, स्वतन्त्र रूप से रिपोर्ट देते थे । इनके अलावा, इस निर्देशिका के नियन्त्रण में "अध्यक्ष माओ के रक्षक" के नाम की ओट में सम्पूर्ण सशस्त्र टुकड़ियां थीं । यह अंग-रक्षक सेना, जिसकी संख्या ५०,००० से भी ज़्यादा थी, काम पर लग जाती थी, जब भी अध्यक्ष "एक वार से काम करना" चाहता था, जैसा कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के इतिहास में अकसर हुआ है और जैसा कि हाल में, हुआ कुआ-फ़ेंग द्वारा "चार" व उनके समर्थकों की गिरफ़्तारी में हुआ है ।

जनसमुदायों के साथ सम्बन्ध बनाये रखने के बहाने, माओ त्से-तुङ ने जनसंख्या के बीच जासूसों का एक विशेष जाल भी बनाया था, जिसको बिना किसी के जाने, आधार के कार्य-

* "अध्यक्ष माओ की शिक्षाओं को हमेशा ध्यान में रखो", "रेनमिन रिबाओ", सितम्बर ८, १९७७

कर्ताओं को निरीक्षण में रखने और जनसमुदायों की हालतों व मन:स्थिति का पता लगाने का काम सौंपा गया था । वे सिर्फ़ माओ त्से-तुङ को ही सीधे रिपोर्ट देते थे, जिसने जन-समुदायों के साथ अपने सम्पर्क के सभी साधनों को तोड़ दिया था और जो सिर्फ़ "आम निर्देशिका" के अपने जासूसों की रिपोर्टों के जरिये ही दुनिया को देखता था । माओ ने कहा था कि, "अपनी तरफ़ से, मैं एक ऐसा आदमी हूं, जो विदेशी या चीनी रेडियो नहीं सुनता हूं, लेकिन मैं सिर्फ़ प्रसारण ही करता हूं" । उसने यह भी कहा कि, "मैंने यह खुले रूप से बताया है कि मैं अब से अखबार 'रेनमिन रिबाओ' नहीं पढ़ा करूंगा । मैंने उसके मुख्य सम्पादक को कह दिया है कि "मैं तुम्हारा अखबार नहीं पढ़ता हूं" । *

"रेनमिन रिबाओ" के लेख से नयी जानकारी मिलती है जिससे चीनी पार्टी व राज में माओ त्से-तुङ के मार्क्सवाद-विरोधी निर्देशन व व्यक्तिगत सत्ता को और भी स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है । माओ त्से-तुङ केन्द्रीय कमेटी या पार्टी की कांग्रेस की ज़रा भी इज़्ज़त नहीं करता था, सम्पूर्ण पार्टी व आधारिक कमेटियों की तो बात ही छोड़िये । पार्टी कमेटियों, नेतृत्वदायी कार्यकर्ताओं व केन्द्रीय कमेटियों को भी "आम निर्देशिका", यह "विशेष स्टाफ़" जो सिर्फ़ माओ त्से-तुङ के प्रति जिम्मेवार था, हुक्म देती थी । पार्टी गोष्ठियों व उसके निर्वाचित अंगों के कोई भी अधिकार नहीं थे । "रेनमिन रिबाओ" का लेख बताता है कि, "कोई भी

---

* हमारी पार्टी के साथियों के साथ माओ त्से-तुङ की बात-चीत, ३ फ़रवरी, १९६७, से । पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया (सी०पी०ए०) के केन्द्रीय संग्रहालय ।

तार, कोई भी पत्र, कोई भी दस्तावेज़, कोई भी आदेश पहले माओ त्से-तुङ के हाथों से गुजरे बिना और उसकी स्वीकृति पाये बिना किसी के द्वारा भी जारी नहीं किया जा सकता था" । यह पता लगा है कि, १९५३ में ही, माओ त्से-तुङ ने एक स्पष्ट आदेश जारी कर दिया था कि :"अब से केन्द्रीय कमेटी के नाम पर भेजे जाने वाले सभी दस्तावेज़ों व तारों को मेरे पढ़ने के बाद ही भेजा जा सकता है, अन्यथा वे अवैध हैं" । • इन हालतों में, सामूहिक नेतृत्व, पार्टी के अन्दर लोकतन्त्र या लेनिनवादी आदर्शों की कोई भी बात नहीं की जा सकती है ।

माओ त्से-तुङ की असीमित सत्ता की इतनी दूर तक पहुँच थी, कि उसने अपने उत्तराधिकारियों को नियुक्त भी किया । एक समय उसने लियू शाओ-ची को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था । उसके बाद उसने घोषणा की कि उसकी मृत्यु के बाद राज व पार्टी में उसका उत्तराधिकारी लिन पियाओ होगा । यह, जो कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के अभ्यास में एक अभूतपूर्व बात है, पार्टी के संविधान द्वारा भी स्वीकृत की गयी थी । एक बार फिर यह माओ त्से-तुङ ही था जिसने अपनी मृत्यु के बाद पार्टी का अध्यक्ष बनने के लिये हुआ कुआ-फेंग को नियुक्त किया था । सत्ता उसके हाथों में होने के कारण माओ ही पार्टी व राज के उच्च नेताओं की आलोचना करता था, उनके बारे में फैसला करता था, सज़ा देता था और बाद में उन्हें पुनःप्रतिष्ठित करता था । यही बात तेंग सियाओ-पिङ के साथ भी हुई थी, जिसने

• माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ ९६, पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

अक्टूबर २३,१९६६ की अपनी तथा-कथित आत्मालोचना में, कहा था कि :"लियू शाओ-ची और मैं वास्तविक राजतन्त्र-वादी हैं । मेरी गलतियों का सार इस तथ्य में है कि मुझे जनसमुदायों पर कोई भरोसा नहीं है, मैं क्रान्तिकारी जन-समुदायों का समर्थन नहीं करता हूं,बल्कि उनके विरोध में हूं । मैंने क्रान्ति का दमन करने के लिये एक प्रतिक्रियावादी कार्य-दिशा का अनुसरण किया है । वर्ग संघर्ष में मैं सर्वहारा के पक्ष में नहीं बल्कि सरमायदारों के पक्ष में रहा हूं । ...ये सब बातें यह स्पष्ट करती हैं...मैं जिम्मेदारी के पदों पर रहने के काबिल नहीं हूं" ।* और इस संशोधनवादी द्वारा किये गये इन अपराधों के बावजूद भी, उसको उसका भूतपूर्व पद वापस दे दिया गया ।

पार्टी व उसके कार्यभाग पर "माओ त्से-तुङ विचारधारा" का मार्क्सवाद-विरोधी सार,पार्टी व सेना के बीच सम्बन्धों के सिद्धान्त में जिस तरह धारणा की गयी थी और अभ्यास में जिस तरह प्रयोग किया गया था उससे भी स्पष्ट होता है । "पार्टी के सेना से ऊपर होने","राजनीति के बन्दूक से ऊपर होने",आदि,आदि,के बारे में माओ त्से-तुङ के दिखा-वटी शब्दों के बावजूद भी,अभ्यास में, उसने देश के जीवन में मुख्य राजनीतिक कार्यभाग सेना को ही दिया । युद्ध के समय, उसने कहा कि,"सभी सेना कार्यकर्ताओं को मज़दूरों का नेतृत्व करने व मज़दूर-संघों का संगठन करने में कुशल होना चाहिये, युवक-युवतीगण को गतिमान करने व संगठित करने में कुशल, नये मुक्त छेत्रों में कार्यकर्ताओं के साथ एक होने व उनको प्रशि-

* तेंग सियाओ-पिङ की आत्मालोचना से,सी०पी०ए०

क्षण देने में कुशल, उद्योग व व्यवसाय का प्रबन्धन करने में कुशल, स्कूल, अखबार, समाचार माध्यमों व प्रसारण केन्द्रों का संचालन करने में कुशल, विदेशी मामलों पर काम करने में कुशल, लोकतन्त्रीय पार्टियों व लोक संगठनों से सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाने में कुशल, शहरों व गांवों के बीच सम्बन्धों को व्यवस्थित करने व खाद्य, कोयला व अन्य दैनिक ज़रूरतों की समस्याओं को सुलझाने में कुशल और मुद्रा सम्बन्धी व वित्तीय समस्याओं को सुलझाने में कुशल होना चाहिये" ।*

इस तरह सेना पार्टी से ऊपर थी, राजकीय अंगों से ऊपर थी, सभी से ऊपर थी । इससे यह स्पष्ट होता है कि पार्टी के कार्यभाग का क्रान्ति के नेतृत्व व समाजवादी निर्माण के निश्चयात्मक कारक होने के बारे में माओ त्से-तुङ के शब्द सिर्फ़ नारे ही थे । मुक्ति युद्ध के समय और चीन लोक गणतन्त्र के निर्माण के बाद भी, एक या दूसरे गुट द्वारा सत्ता पर कब्ज़ा करने के लिये किये गये, कभी न खत्म होने वाले सभी संघर्षों में, सेना ने निश्चयात्मक कार्यभाग अदा किया है । सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान भी, सेना ने मुख्य कार्यभाग अदा किया था; यह माओ का आखिरी सहारा था । १९६७ में, माओ त्से-तुङ ने कहा, "हम सेना की शक्ति पर निर्भर करते हैं...पीकिंग में, हमारे पास सिर्फ़ दो डिवीज़न ही थे, लेकिन भूतपूर्व पीकिंग पार्टी कमेटी के साथ हिसाब चुकाने के लिये, मई में, हम दो और डिवीज़नों को ले आये" ।**

---

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ४, पृष्ठ ३५५, पीकिंग, १९६२ (फ्रांसीसी संस्करण)

** पी०आर०ए० के मित्रता प्रतिनिधिमण्डल के साथ हुई माओ त्से-तुङ की बातचीत से, दिसम्बर १८, १९६७, सी०पी०ए०

अपने विचारधारात्मक विरोधियों को नष्ट करने के लिये माओ त्से-तुङ ने हमेशा सेना को काम पर लगाया है । उसने सेना को, लिन पियाओ की अध्यक्षता में, लियू शाओ-ची व तेंग सियाओ-पिङ गुट के खिलाफ़ उकसाया । बाद में, उसने चाउ एन-लाई के साथ मिलकर, लिन पियाओ के खिलाफ़ सेना को संगठित किया व काम पर लगाया । "माओ त्से-तुङ विचारधारा" से प्रेरित होकर, सेना ने, माओ की मृत्यु के बाद भी, यही कार्यभाग अदा किया है । चीन में सत्ता पर आने वाले सभी लोगों की तरह, हुआ कुआ-फ़ेंग ने भी सेना पर निर्भर किया और उसके जरिये काम किया । माओ की मृत्यु के फौरन बाद, उसने तुरंत ही सेना को भड़काया, और सेना के अधिकारियों, येह चिएन-यिंग, वांग तुंग-सिन व दूसरों के साथ मिलकर, पुश को आयोजित किया व अपने विरोधियों को गिरफ्तार किया ।

चीन में सत्ता अभी भी सेना के हाथों में है, जब कि पार्टी सेना के पीछे-पीछे चलती है । यह उन देशों की एक आम विशेषता है, जहां संशोधनवाद व्याप्त है । सच्चे समाजवादी देश, समाजवाद के दुश्मनों के उठने पर उनको कुचलने के लिये, और इसके साथ-साथ साम्राज्यवादियों व विदेशी प्रतिक्रिया के संभावित हमले से देश की रक्षा करने के लिये, सेना को सर्वहारा अधिनायकत्व के एक शक्तिशाली हथियार के रूप में मज़बूत करते हैं । लेकिन, जैसा कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद हमें सिखाता है, सेना द्वारा यह कार्यभाग अदा किये जाने के लिये यह ज़रूरी है कि सेना हमेशा पार्टी के निर्देशन में रहे, न कि पार्टी सेना के निर्देशन में ।

इस समय सेना के सबसे शक्तिशाली गुट, सबसे प्रतिक्रिया-वादी गुट, जिसका लक्ष्य चीन को एक सामाजिक-साम्राज्य-

वादी देश में बदलना है,चीन पर हुकूमत कर रहे हैं ।

भविष्य में,चीन के एक साम्राज्यवादी महाशक्ति में बदलने के साथ-साथ, देश के जीवन में सेना का कार्यभाग व उसकी शक्ति निरन्तर बढ़ेगी । एक पूंजीवादी सत्ता व अर्थ-व्यवस्था की रक्षा करने के लिये उसको एक हथियारों से लैस एक अंग-रक्षक-सेना के रूप में मज़बूत किया जायेगा । वह सरमाय-दारी-पूंजीवादी अधिनायकत्व का एक साधन होगा,एक ऐसा अधिनायकत्व,जो,अगर लोगों का प्रतिरोध मज़बूत हो जाये, तो खुले तौर पर तानाशाही रूपों को भी धारण कर सकता है ।

देश के नेतृत्व में अनेक पार्टियों की मौजूदगी,तथा-कथित राजनीतिक बहुवाद की ज़रूरत का उपदेश देकर,"माओ त्से-तुङ विचारधारा" क्रान्ति व समाजवादी निर्माण में कम्यू-निस्ट पार्टी के अविभाज्य कार्यभाग के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के पूरे विरोध में हो जाती है । जैसा कि उसने ई० स्नो को बताया था,माओ त्से-तुङ अमरीकी नमूने के अनुसार कई राजनीतिक पार्टियों द्वारा देश के नेतृत्व को सरकार का सबसे लोकतन्त्रीय रूप समझता था । "अंतिम विश्लेषण में क्या बेहतर है," माओ त्से-तुङ ने पूछा था,"सिर्फ़ एक पार्टी का होना या कई पार्टियों का होना ?" और उसने स्वयं उत्तर दिया,"जैसा कि हम अब देखते हैं, कई पार्टियों का होना शायद बेहतर होगा । यह बात पहले भी सच रही है और भविष्य में भी शायद सच ही रहे,इसका मतलब है दीर्घ-कालीन सह-अस्तित्व व पारस्परिक निरीक्षण" । * माओ,देश की राज

* माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ३१९,पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

सत्ता व सरकार में, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के जैसे ही समान अधिकारों व विशेषाधिकारों के साथ सरमायदारी पार्टियों का भाग लेना आवश्यक समझता था । और सिर्फ़ यही नहीं, बल्कि सरमायदारों की ये पार्टियां, जो उसके अनुसार "ऐतिहासिक थीं", का सिर्फ़ तभी क्रमिक अवसान होना चाहिये जब चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी का भी क्रमिक अवसान होगा, अर्थात वे ठीक कम्यूनिज़्म तक सहअस्तित्व में रहेंगे ।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" के अनुसार, सभी वर्गों व सभी पार्टियों के सहयोग के आधार पर ही एक नयी लोकतन्त्रीय सत्ता मौजूद रह सकती है, और समाजवाद बनाया जा सकता है । समाजवादी लोकतन्त्र की, और समाजवादी राजनीतिक प्रणाली की ऐसी धारणा, जो सभी पार्टियों के "दीर्घ-कालीन सहअस्तित्व व पारस्परिक निरीक्षण" पर आधारित है, और जो इटली, फ्रांस, स्पेन के व अन्य संशोधनवादियों के वर्तमान उपदेशों से बहुत मिलती-जुलती है, क्रान्ति व समाजवाद के निर्माण में मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के नेतृत्वदायी व अविभाज्य कार्यभाग से खुला इनकार है । ऐतिहासिक अनुभव ने अभी से ही यह सिद्ध कर दिया है, कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के अविभाज्य नेतृत्वदायी कार्यभाग के बिना, सर्वहारा अधिनायकत्व कायम नहीं रह सकता है और समाजवाद का निर्माण व उसकी रक्षा नहीं की जा सकती है ।

"... सर्वहारा अधिनायकत्व," स्टालिन ने बताया कि, "सिर्फ़ तभी सम्पूर्ण हो सकता है, जब इसका नेतृत्व एक पार्टी, कम्यूनिस्टों की पार्टी द्वारा किया जाता है, जो पार्टी दूसरी पार्टियों के साथ नेतृत्व का बंटवारा नहीं करती है और न

ही उसे ऐसा करना चाहिये" ।*

माओ त्से-तुङ की संशोधनवादी धारणाओं का आधार सरमायदारों के साथ सहयोग व सहयोगी-संघ बनाने की नीति में है, जिसे चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने हमेशा प्रयोग किया है । यही "१०० फूलों को खिलने व १०० स्कूलों को प्रतिद्वन्द्विता करने देने", जो कि विरोधी विचारधाराओं के सह-अस्तित्व की एक सीधी अभिव्यक्ति है, के मार्क्सवाद-विरोधी व लेनिनवाद-विरोधी रास्ते का भी स्रोत है ।

माओ त्से-तुङ के अनुसार, समाजवादी समाज में, सर्वहारा विचारधारा, भौतिकवाद व नास्तिकता के साथ-साथ, सरमायदारी विचारधारा, अध्यात्मवाद व धर्म को भी रहने, "सुगन्धित फूलों" के साथ-साथ "जहरीले काँटों" को भी बढ़ने, आदि, की इजाज़त दी जानी चाहिये । यह दावा किया जाता है कि ऐसा रास्ता, मार्क्सवाद के विकास के लिये, वाद-विवाद व विचारों की स्वतन्त्रता का मार्ग खोलने के लिये, आवश्यक है, लेकिन वास्तव में, इस रास्ते के जरिये, वह सरमायदारों के साथ सहयोग और सरमायदारी विचारधारा के साथ सहअस्तित्व की नीति के लिये सैद्धान्तिक आधार बनाने की कोशिश कर रहा है । माओ त्से-तुङ कहता है कि, "... लोगों को झूठे, बुरे व हमारे प्रति शत्रुतापूर्ण विचारों के साथ, अध्यात्मवाद व अभौतिकवाद के साथ और कन्फ्यूशियस, लाओ त्ज़े व चियांग काई-शेक के विचारों के साथ सम्पर्क में आने से रोकना एक खतरनाक नीति है । इसका परिणाम होगा,

* जे०वी० स्टालिन, रचनायें, ग्रंथ १०, पृष्ठ ९७ (अल्बेनिया संस्करण)

मानसिक पतन, एक ही दिशा में सोचना और दुनिया का सामना करने के लिये तैयार न होना..." । इससे माओ त्से-तुङ यह निष्कर्ष निकालता है कि अध्यात्मवाद,अभौतिकवाद व सरमायदारी विचारधारा चिरकाल तक मौजूद रहेंगे, इसलिये, यही नहीं कि इनपर पाबंदी नहीं लगायी जानी चाहिये,बल्कि इन्हें फूलने,खुले रूप में सामने आने व प्रतिद्वन्द्विता करने का मौका भी दिया जाना चाहिये । हर प्रतिक्रियावादी चीज़ के प्रति यह समझौते का रुख इस हद तक चला गया कि समाजवादी समाज में अव्यवस्थाओं को अवश्यम्भावी बताया गया, और दुश्मनों की क्रियाओं को रोकना गलत बताया गया । "मेरी राय में," उसने कहा,"जो भी गड़बड़ी पैदा करना चाहता है,वह ऐसा,जब तक उसकी मर्ज़ी हो कर सकता है;और अगर एक महीना काफ़ी नहीं है, तो वह दो महीने तक ऐसा कर सकता है,संक्षेप में,मामले को तब तक नहीं खत्म किया जाना चाहिये जब तक उसका जी न भर जाये । अगर तुम मामले को जल्दी ही खत्म कर दोगे,तो देर-सबेर गड़बड़ी फ़िर से शुरू हो जायेगी" ।**

ये सब एक "वैज्ञानिक" वादविवाद के प्रति शैक्षणिक योगदान नहीं, बल्कि एक प्रतिक्रान्तिकारी मौकापरस्त राजनीतिक कार्यदिशा है, जिसे मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विरोध में बनाया गया है,और जिसने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी को विघटित कर दिया है, जिस पार्टी की श्रेणियों में सैकड़ों

---

* माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ३९७,पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

** माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें, ग्रंथ ५,पृष्ठ ४०५-४०६, पीकिंग,१९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

विचार व धारणायें फैली हुई हैं और इस समय वास्तव में १०० पंथ प्रतिद्वन्द्विता कर रहे हैं । इसके परिणामस्वरूप सरमायदारी ततैये १०० फूलों के बगीचे में आज़ादी से घूमने व अपना ज़हर उगलने में सफल हुये ।

विचारधारात्मक सवालों पर इस मौकापरस्त विचार-पद्धति की जड़ें, अन्य बातों के साथ-साथ, इस तथ्य में भी हैं, कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना से लेकर चीन की मुक्ति हासिल किये जाने तक की सम्पूर्ण अवधि के दौरान और उसके बाद भी, इस पार्टी ने अपने आपको विचारधारात्मक रूप से मज़बूत करने की कोई भी कोशिश नहीं की, अपने सदस्यों के दिलोदिमाग में मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के सिद्धान्त को जमाने के लिये कोई भी काम नहीं किया, और मार्क्स-वादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के मूलभूत सवालों पर निपुणता पाने, और उन्हें, चीन की यथार्थ हालतों में, दृढ़तापूर्वक व क्रमशः प्रयोग में लाने के लिये कोई संघर्ष नहीं किया ।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" क्रान्ति के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के विरोध में है

अपनी रचनाओं में माओ त्से-तुङ समाज के विकास की क्रियाविधि में क्रान्तिओं के कार्यभाग की अकसर चर्चा करता है, लेकिन सार में वह एक अभौतिकवादी, उद्विकासवादी धारणा पर ही जमा रहता है । भौतिकवादी द्वन्द्ववाद, जो एक उत्चक्र के रूप में प्रगतिशील विकास की परिकल्पना करता है, के विपरीत, माओ त्से-तुङ एक चक्र के रूप में, एक वृत्त में चक्कर लगाते हुये, उतार व चढ़ाव की एक क्रियाविधि के रूप में विकास का उपदेश देता है, जो विकास संतुलन से असंतुलन

को और फिर से एक बार वापस संतुलन में,गति से स्थिरता और फिर से वापस गति में, चढ़ाव से उतार और उतार से चढ़ाव, उन्नति से अवनति और फिर से उन्नति की ओर, आदि जाता है । इस प्रकार,अग्नि के शोधक कार्यभाग पर प्राचीन दर्शनशास्त्र की धारणा का अनुमोदन करते हुये, माओ त्से-तुङ लिखता है :"नियमित समयावकाशों में 'एक अग्नि को जलाना' आवश्यक है। यह कितनी देर देर के बाद किया जाना चाहिये ? तुम क्या चाहते हो,प्रतिवर्ष एक बार या हर तीन सालों में एक बार ? मेरे विचार में,हमें ऐसा हर पाँच साल की अवधि में कम से कम दो दफ़े करना चाहिये, ठीक उसी तरह जैसे चान्द्र अधिवर्ष में अधिमास तीन सालों में एक बार, या पाँच सालों में दो बार आता है" । इस प्रकार पुराने जमाने के ज्योतिषियों की तरह, चान्द्र कैलेण्डर के आधार पर, वह आवर्ती रूप से आग को जलाने के नियम , "महान व्यवस्था" से "महान अव्यवस्था" और फिर से वापस "महान व्यवस्था" में जाने वाले विकास के नियम को हासिल करता है, और इस तरह चक्र आवर्ती ढंग से अपने आपको बारम्बार दोहराते हैं। इस तरह,"माओ त्से-तुङ विचार – धारा","बेजान, फीकी व शुष्क" अभौतिकवादी धारणा, से विकास की उस भौतिकवादी द्वन्द्ववादी धारणा का विरोध करती है जिसके बारे में लेनिन ने बताया था कि यह धारणा —

"...हमारे लिये हर मौजूदा वस्तु की 'आत्म-गति' को

---

* माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रन्थ ५,पृष्ठ ४९९,पीकिंग १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

समझने की कुंजी है;...हमारे लिये 'सहसा परिवर्तनों', 'क्रमिकता के टूटने', 'विपरीत में रूपपरिवर्तन', पुराने के नाश व नये के उभरने को समझने की कुंजी है"।*

यह, अन्तर्विरोधों की समस्या का माओ त्से-तुङ ने जिस तरीके से प्रतिपादन किया उससे और भी स्पष्ट हो जाता है, जिसमें चीनी प्रचार के अनुसार माओ ने अभिकथित रूप से "विशेष योगदान" दिया था और इस क्षेत्र में भौतिकवादी द्वन्द्ववाद का और भी विकास किया था। यह सच है कि अपनी कई रचनाओं में, माओ त्से-तुङ विरोधों, अन्तर्विरोधों, व विरोधों के बीच एकता, के बारे में अकसर बात करता है और मार्क्सवादी उद्धरणों व वाक्यांशों का भी इस्तेमाल करता है, लेकिन फिर भी वह इन समस्याओं की द्वन्द्ववादी भौतिकवादी समझ से बहुत दूर था। अन्तर्विरोधों की बात करते समय वह मार्क्सवादी दावों से नहीं, बल्कि प्राचीन चीनी दर्शनशास्त्रियों के दावों से शुरू करता है, विरोधों को एक यांत्रिक तरीके से, बाहरी घटनाओं के रूप में देखता है, और विरोधों के आपसी रूपपरिवर्तन को, उनके बीच स्थानों के एक सहज परिवर्तन के रूप में सोचता है। प्राचीन दर्शनशास्त्र से लिये गये कुछ चिरकालिक विरोधों, जैसे कि ऊपर व नीचे, पीछे व आगे, दांये व बांये, हल्के व भारी इत्यादि, इत्यादि, से काम करते हुये, सार में माओ त्से-तुङ चीज़ों व घटनाओं में निहित आन्तरिक अन्तर्विरोधों से इनकार करता है, और विकास को सहज आवर्तन के रूप में,

* वी०आई० लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रंथ ३८, पृष्ठ ३९६ (अल्बेनिया संस्करण)

अपरिवर्तनीय अवस्थाओं, जिनमें समान विरोध व इन विरोधों के बीच समान सम्बन्ध दिखाई देते हैं, की एक श्रृंखला के रूप में समझता है । विरोधों के एक दूसरे में पारस्परिक रूप-परिवर्तन को, अन्तर्विरोध के निवारण और इन विरोधों को संस्थापित करने वाली घटना के ही एक गुणात्मक परिवर्तन के रूप में नहीं, बल्कि सिर्फ़ स्थानों की अदला-बदली समझकर माओ त्से-तुङ ने इसका एक औपचारिक नमूने के रूप में इस्ते - माल किया जिससे हर चीज़ को आंका गया । इस नमूने के आधार पर, माओ यह घोषणा करने की हद तक पहुंच गया कि, "जब हठवाद का उसके विपरीत में रूपपरिवर्तन होता है तो वह या तो मार्क्सवाद या संशोधनवाद बन जाता है", * अभौतिकवाद द्वन्द्ववाद में रूपपरिवर्तन होता है और द्वन्द्व-वाद अभौतिकवाद में" आदि । विरोधों के साथ इस कुतर्क-पूर्ण खेल व इन बेतुके दावों के पीछे, माओ त्से-तुङ की मौका-परस्त व प्रतिक्रान्तिकारी धारणायें छुपी हैं । इस तरह, वह समाजवादी क्रान्ति को समाज के एक ऐसे गुणात्मक परि-वर्तन के रूप में नहीं देखता है, जिसमें शत्रुतापूर्ण वर्गों को, और मनुष्य द्वारा मनुष्य का उत्पीड़न व शोषण को खत्म कर दिया जाता है, बल्कि वह इस क्रान्ति को सरमायदारों व सर्वहारा के बीच स्थानों के एक सहज परिवर्तन के रूप में समझता है । इस "खोज" की पुष्टि करने के लिये, माओ ने लिखा :"अगर सरमायदार व सर्वहारा अपने आपका एक दूसरे में रूपपरिवर्तन नहीं कर सकते हैं, तो यह कैसे हो सकता है कि क्रान्ति के जरिये, सर्वहारा शासक वर्ग बन जाता है और सरमायदार शासित वर्ग ?... हम चियांग काई-शेक की कोमिंटांग के

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ ४७९, पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

बिल्कुल विरोध में हैं । कोमिंटांग के साथ दो अन्तर्विरोधी पहलुओं के आपसी संघर्ष व अपवर्जन के परिणामस्वरूप हमने स्थानों को अदल-बदल लिया है..." ।• यही तर्क माओ त्से-तुङ को कम्यूनिस्ट समाज की दो प्रावस्थाओं पर दिये गये मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त का संशोधन करने के लिये भी बाध्य करता है। "द्वन्द्ववाद के अनुसार,मनुष्य का मरना जितना निश्चित है उतना ही यह भी निश्चित है कि समाजवादी समाज एक ऐतिहासिक घटना के रूप में किसी दिन खत्म हो जायेगा और उसकी जगह कम्यूनिस्ट प्रणाली आ जायेगी। अगर यह दावा किया जाय कि समाजवादी प्रणाली और समाजवाद के उत्पादन सम्बन्ध व उपरिसंरचना खत्म नहीं होंगे,तो यह किस तरह का मार्क्सवादी दावा होगा ? क्या यह एक धार्मिक पंथ या धर्म जैसा ही नहीं होगा जो एक चिरकालिक भगवान का उपदेश देता है ?" ••

इस तरीके से, समाजवाद व कम्यूनिज़्म, जो सार में एक ही सामाजिक-आर्थिक प्रणाली की,एक ही किस्म की दो प्रावस्थायें हैं,और जिन्हें एक दूसरे से पृथक सिर्फ उनके विकास व परिपक्वता के स्तर से ही किया जा सकता है, की मार्क्सवादी-लेनिनवादी धारणा का खुले रूप से संशोधन करते हुये, माओ त्से-तुङ समाजवाद को,कम्यूनिज़्म के पूर्णतयः विपरीत किसी चीज़ के रूप में पेश करता है ।

ऐसी अभौतिकवादी व मार्क्सवाद-विरोधी धारणाओं के

• माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ३९९-४०० , पीकिंग,१९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

••माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५,पृष्ठ ३९९-४००, पीकिंग,१९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

साथ, माओ त्से-तुङ आम तौर से क्रान्ति के सवाल पर विचार करता है, जिस क्रान्ति को वह पृथ्वी पर मानवजाति की मौजूदगी की सम्पूर्ण अवधि के दौरान आवर्ती रूप से दोहराये जाने वाली एक अन्तहीन क्रियाविधि के रूप में समझता है, एक ऐसी क्रियाविधि के रूप में जो पराजय से विजय को, विजय से पराजय को और ऐसे ही बिना अन्त के चलती रहती है। क्रान्ति के बारे में माओ त्से-तुङ की कभी उद्विकासवादी तो कभी अराजकतावादी, मार्क्सवाद-विरोधी धारणायें और भी स्पष्ट हो जाती हैं, जब वह चीन की क्रान्ति की समस्याओं के बारे में बात करता है।

जैसा कि उसकी रचनाओं से स्पष्ट होता है, माओ त्से-तुङ ने चीनी क्रान्ति की समस्याओं का विश्लेषण करने व उसके कार्यों का निश्चय करने में अपने आपको मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त पर नहीं आधारित किया था। जनवरी १९६२ को, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा आयोजित विस्तृत कार्य सम्मेलन में दिये गये अपने भाषण में उसने स्वयं यह स्वीकार किया कि :"हमारे कई सालों के क्रान्तिकारी काम अंधेपन में किये गये हैं, बिना यह जाने कि क्रान्ति को कैसे कार्यान्वित किया जाना चाहिये, और क्रान्ति का मुख्य आक्रमण किसके खिलाफ़ निर्दिष्ट किया जाना चाहिये, उसकी कार्यविस्थाओं के बारे में बिना किसी भी धारणा के बिना यह जाने कि किसका पहले अन्तर्ध्वंस किया जाना चाहिये और किसका बाद में, आदि।" इसने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी को लोकतन्त्रीय क्रान्ति में सर्वहारा के नेतृत्व को सुनिश्चित करने और लोकतन्त्रीय क्रान्ति को एक समाजवादी क्रान्ति में बदलने के अयोग्य बना दिया। चीनी क्रान्ति का सम्पूर्ण विकास चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के अव्यवस्थित रास्ते

का सबूत है,जो पार्टी मार्क्सवाद-लेनिनवाद द्वारा नहीं,बल्कि क्रान्ति के स्वभाव,उसकी कार्यावस्थाओं,प्रेरक शक्तियों,आदि, के बारे में "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की मार्क्सवाद-विरोधी धारणाओं द्वारा मार्गप्रदर्शित हुई है ।

माओ त्से-तुङ सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति व सर्व-हारा क्रान्ति के बीच के निकट सम्बन्धों को कभी भी सही तौर से नहीं समझ सका, व कभी भी सही तौर से इनकी व्याख्या नहीं कर सका । मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त, जिसने वैज्ञानिक तौर से यह सिद्ध किया है कि सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति व समाजवादी क्रान्ति के बीच कोई भी चीनी दीवार नहीं है,कि इन दोनों क्रान्तियों के बीच एक लम्बे समय की अवधि का होना ज़रूरी नहीं है, के विपरीत माओ त्से-तुङ ने दावा किया :"हमारी क्रान्ति का समाज-वादी क्रान्ति में परिवर्तन भविष्य का एक मामला है...जहाँ तक यह सवाल है कि यह अवस्थापरिवर्तन कब होगा...इसमें एक बहुत लम्बा समय लग सकता है । हमें इस अवस्थापरिवर्तन का तब तक प्रस्ताव नहीं करना चाहिये,जब तक सभी आव-श्यक राजनीतिक व आर्थिक हालतें मौजूद न हों,और जब तक यह हमारे अधिकांश लोगों के लिये हानिकारक होने के बजाय लाभदायक न हो जाय" ।*

माओ त्से-तुङ इस मार्क्सवाद-विरोधी धारणा पर,जो सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति का समाजवादी क्रान्ति में परिवर्तन किये जाने के पक्ष में नहीं है,क्रान्ति की सम्पूर्ण अवधि के दौरान,और यहाँ तक कि मुक्ति के बाद भी डटा

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें,ग्रंथ १,पृष्ठ २१० (अल्बे-निया संस्करण)

रहा । इस प्रकार, १९४० में, माओ त्से-तुङ ने कहा :"चीनी क्रान्ति को अवश्य ही...नये लोकतन्त्र की कार्यावस्था और उसके बाद समाजवाद की कार्यावस्था से होकर गुजरना पड़ेगा । इनमें से पहली कार्यावस्था के लिये एक अपेक्षाकृत लम्बे समय की ज़रूरत होगी..." । * मार्च १९४९ को, पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की परिपूर्ण सभा में माओ त्से-तुङ ने मुक्ति के बाद, चीन के **विकास** के लिये कार्यक्रम पेश करते हुये कहा :"इस अवधि के दौरान, शहरों व गाँवों में, पूँजीवाद के सभी तत्वों को मौजूद रहने दिया जाना चाहिये" । ये विचार व "सिद्धान्त" यह दिखाते हैं कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी व माओ त्से-तुङ ने चीन की क्रान्ति का एक समाजवादी क्रान्ति में परिवर्तन करने के लिये संघर्ष नहीं किया था, बल्कि सरमायदारी व पूँजीवादी सामाजिक सम्बन्धों के विकास के लिये एक खुला मैदान छोड़ दिया था ।

लोकतन्त्रीय क्रान्ति व समाजवादी क्रान्ति के बीच के सम्बन्ध के सवाल पर माओ त्से-तुङ सेकेण्ड इण्टरनेशनल के मुखियों की विचारपद्धति अपनाता है, जिन्होंने क्रान्ति की उन्नति के बारे में दिये गये मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त पर सबसे पहले हमला किया था व इसे विकृत किया था, और यह दावा किया था कि सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति व समाजवादी क्रान्ति के बीच एक लम्बी अवधि होती है जिसमें सरमायदार पूँजीवाद का विकास करते हैं और सर्वहारा क्रान्ति में अवस्थापरिवर्तन किये जाने के लिये हालात पैदा करते हैं । पूँजीवाद को और भी विकास करने का मौका दिये बिना

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ३, पृष्ठ १६९ (अल्बेनिया संस्करण)

सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति के समाजवादी क्रान्ति में बदले जाने को उन्होंने असम्भव व कायविस्थाओं को फलांगना समझा । माओ त्से-तुङ भी इस धारणा का पूरी तरह से अनुमोदन करता है, जब वह कहता है कि :"एक संयुक्त नव-लोकतन्त्रीय राज के बिना...निजी पूंजीपति अर्थ-व्यवस्था के विकास के बिना...उपनिवेशित, अर्ध-उपनिवेशित व अर्ध-सामन्तिक प्रणाली के अवशेषों पर समाजवाद का निर्माण करने की कोशिश करना सिर्फ़ एक काल्पनिक स्वप्न मात्र होगा" ।•

क्रान्ति के बारे में "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की मार्क्सवाद-विरोधी धारणायें, क्रान्ति की प्रेरक शक्तियों के विषय में माओ ने जो बताया है, उससे और भी स्पष्ट हो जाती हैं । माओ त्से-तुङ सर्वहारा के आधिपत्य के कार्यभाग को नहीं मानता था । लेनिन ने बताया था कि साम्राज्य-वाद के युग में,हर क्रान्ति में,और इसलिये लोकतन्त्रीय क्रान्ति, साम्राज्यवाद-विरोधी राष्ट्रीय मुक्ति क्रान्ति और समाज-वादी क्रान्ति में भी नेतृत्व सर्वहारा के हाथों में होना चाहिये । हालांकि माओ त्से-तुङ ने सर्वहारा के कार्यभाग के बारे में बात की थी,लेकिन अभ्यास में उसने क्रान्ति में सर्व-हारा के आधिपत्य का अल्पानुमान किया और किसानों के कार्यभाग को अधिक महत्व दिया । माओ त्से-तुङ ने कहा था कि :"...इस समय जापानी कब्ज़ाधारियों के खिलाफ़ हो रहा प्रतिरोध सार में किसानों का प्रतिरोध है । वस्तुत:, नव लोकतन्त्र की राजनीति का मतलब है किसानों को अधि-

• माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ४,पृष्ठ ३६६ (अल्बे-निया संस्करण)

कार देना" । *

माओ त्से-तुङ ने इस निम्न-सरमायदारी सिद्धान्त को अपने इस आम दावे में अभिव्यक्त किया कि "गाँवों को शहर का घिराव करना चाहिये" । "...क्रान्तिकारी गाँव", उसने लिखा, "शहरों को घेर सकते हैं...चीनी क्रान्तिकारी आन्दोलन में गाँवों के काम को मुख्य कार्यभाग अदा करना चाहिये और शहरों के काम को गौण कार्यभाग" ।** माओ ने इस विचार को उस समय भी अभिव्यक्त किया जब उसने राज में किसानों के कार्यभाग के बारे में लिखा था । उसने कहा था कि सभी अन्य राजनीतिक पार्टियों व शक्तियों को किसानों व उनके विचारों के सामने झुकना चाहिये । "...करोड़ों किसान एक शक्तिशाली तूफ़ान की तरह उठ खड़े होंगे, एक ऐसी तेज़ व हिंसापूर्ण शक्ति, कि इसे कोई भी ताकत, कितनी भी महान क्यों न हो, रोक नहीं सकेगी...," उसने लिखा । "वे हर क्रान्तिकारी पार्टी व दल, हर क्रान्तिकारी की परीक्षा करेंगे, जिससे वे या तो इनके विचारों को स्वीकार करेंगे या अस्वीकार" ।*** यह निष्कर्ष निकलता है कि माओ के अनुसार, क्रान्ति में आधिपत्य का कार्यभाग मज़दूर वर्ग को नहीं बल्कि किसानों को अदा करना चाहिये ।

माओ त्से-तुङ ने क्रान्ति में किसानों के आधिपत्य के

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ३, पृष्ठ १७७-१७८ (अल्बेनिया संस्करण)

** माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ४, पृष्ठ २५७, २५९ (अल्बेनिया संस्करण)

*** माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ १, पृष्ठ २७-२८ (अल्बेनिया संस्करण)

कार्यभाग के दावे का विश्व क्रान्ति के रास्ते के रूप में प्रचार भी किया । यही इस मार्क्सवाद-विरोधी धारणा का स्रोत है, जो धारणा तथा-कथित तीसरी दुनिया को, जिसे चीनी राजनीतिक साहित्य में "दुनिया का देहात" भी कहा जाता है, "वर्तमान समाज के रूपपरिवर्तन के लिये मुख्य प्रेरक शक्ति" समझती है । चीनी विचारों के अनुसार, सर्वहारा दूसरे-स्तर की एक सामाजिक शक्ति है, जो पूँजीवाद के खिलाफ़ संघर्ष और क्रान्ति की विजय में, पूंजी द्वारा उत्पीड़ित सभी शक्तियों के साथ सहयोगी-संघ बनाकर, वह कार्यभाग अदा नहीं कर सकती है, जिसकी मार्क्स व लेनिन ने परिकल्पना की थी ।

चीनी क्रान्ति पर निम्न व मध्य सरमायदारों की प्रमुखता रही है । निम्न-सरमायदारों की इस व्यापक श्रेणी ने चीन के सम्पूर्ण विकास पर प्रभाव डाला है ।

माओ त्से-तुङ ने अपने आपको मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त, जो हमें यह सिखाता है, कि किसान व निम्न-सरमायदार आम तौर से दोलायमान रहते हैं, पर नहीं आधारित किया था । निस्सन्देह, गरीब व मध्य किसान क्रान्ति में एक महत्वपूर्ण कार्यभाग अदा करते हैं और उन्हें सर्वहारा के निकट सहयोगी बनाना चाहिये । लेकिन किसान वर्ग व निम्न सरमायदार क्रान्ति में सर्वहारा का नेतृत्व नहीं कर सकते हैं । इसके विपरीत सोचने व उपदेश देने का मतलब है, मार्क्सवाद-लेनिनवाद का विरोध करना । ठीक इसी में, माओ त्से-तुङ के मार्क्सवाद-विरोधी विचारों का एक मुख्य स्रोत है, जिसने सम्पूर्ण चीनी क्रान्ति पर एक हानिकारक असर डाला है ।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी क्रान्ति में सर्वहारा के आधिपत्य के कार्यभाग के मूलभूत क्रान्तिकारी मार्गप्रदर्शक सिद्धान्त के बारे में सिद्धान्त में स्पष्ट नहीं रही है और इसके परि-

णामस्वरूप उसने इस सिद्धान्त का अभ्यास में उचित ढंग से व दृढ़तापूर्वक प्रयोग नहीं किया । अनुभव यह दिखाता है कि किसान अपना क्रान्तिकारी कार्यभाग सिर्फ़ तभी अदा कर सकते हैं जब वे सर्वहारा के साथ सहयोगी-संघ में व उसके नेतृत्व में काम करते हैं । यह हमारे देश में राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध के दौरान सिद्ध हुआ था । अल्बेनिया के किसान हमारी क्रान्ति की मुख्य शक्ति थे, लेकिन यह मज़दूर वर्ग ही था, जिसने बहुत थोड़ी सी संख्या में होने के बावजूद भी, किसानों का नेतृत्व किया, क्योंकि मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारधारा, सर्वहारा की विचारधारा, जो मज़दूर वर्ग की अग्रगामी, कम्यूनिस्ट पार्टी, इस समय पार्टी आफ़ लेबर, में समाविष्ट है, ने क्रान्ति का नेतृत्व किया था । यही कारण है कि हमने सिर्फ़ राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध में ही नहीं, बल्कि समाजवाद के निर्माण में भी विजय पायी है ।

अनगिनत कठिनाइयों, जिनका हमने अपने रास्ते पर सामना किया, के बावजूद भी हमने एक के बाद एक सफलता हासिल की । हमने ये सफलतायें हासिल कीं, सबसे पहले इसलिये क्योंकि पार्टी ने मार्क्स व लेनिन के सिद्धान्त के सार पर निपुणता हासिल कर ली थी, यह समझ लिया था कि क्रान्ति क्या है, कौन क्रान्ति को कर रहा है और किसे इसका नेतृत्व करना है, और यह समझ लिया था कि मज़दूर वर्ग जो किसानों के साथ सहयोगी-संघ में है, का नेतृत्व करने वाली लेनिनवादी तरीके की एक पार्टी होनी चाहिये । कम्यूनिस्टों ने यह समझ लिया था कि यह पार्टी सिर्फ़ नाम की कम्यूनिस्ट नहीं होनी चाहिये बल्कि यह एक ऐसी पार्टी होनी चाहिये जो क्रान्ति व पार्टी-निर्माण के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त का हमारे देश की यथार्थ हालतों में प्रयोग करेगी, जो लेनिन

व स्टालिन के समय के सोवियट संघ में समाजवाद के निर्माण के उदाहरण का अनुसरण करते हुये, नये समाजवादी समाज के निर्माण के लिये काम शुरू करेगी । इस विचारनीति ने हमारी पार्टी को विजय दिलायी,और देश को वह महान राजनीतिक, आर्थिक व सैनिक शक्ति दी, जो आज उसके पास है । अगर हमने इससे भिन्न काम किया होता,अगर हमने हमारे महान सिद्धान्त के इन नियमों का दृढ़तापूर्वक प्रयोग नहीं किया होता,तो हमारे देश जैसे एक छोटे से देश में, जो दुश्मनों से घिरा है,समाजवाद का निर्माण नहीं किया जा सकता था । अगर हम एक छण के लिये सत्ता पर कब्ज़ा कर भी लेते,तो सरमायदार उसे वापस छीन लेते,जैसा कि ग्रीस में हुआ था, जहाँ संघर्ष को जीतने से पहले ही,ग्रीस की कम्यूनिस्ट पार्टी ने स्थानीय प्रतिक्रियावादी सरमायदारी व बर्तानवी साम्राज्यवाद के सामने अपने हथियार डाल दिये थे ।

इसलिये, क्रान्ति में आधिपत्य का सवाल, एक बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्धान्त का मामला है,क्योंकि क्रान्ति का रास्ता व उसका विकास इस पर निर्भर करता है,कि कौन उसका नेतृत्व कर रहा है ।

"आधिपत्य की धारणा का परित्याग",लेनिन ने जोर दिया था,"सुधारवाद का सबसे अश्लील रूप है" । *

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" द्वारा सर्वहारा के नेतृत्वदायी कार्यभाग से इनकार किया जाना ही, उन कारणों में से एक था,जिसकी वजह से चीनी क्रान्ति एक सरमायदारी-

---

* वी०आई०लेनिन,संगृहीत रचनायें,ग्रंथ १७,पृष्ठ २५२ (अल्बेनिया संस्करण)

लोकतन्त्रीय क्रान्ति ही रह गयी, और एक समाजवादी क्रान्ति में विकसित नहीं हो पायी । अपने लेख "नव लोकतन्त्र" में, माओ त्से-तुङ ने उपदेश दिया था, कि चीन में क्रान्ति की विजय के बाद एक ऐसी सत्ता स्थापित की जायेगी, जो "लोकतन्त्रीय वर्गों", जिनमें किसानों व सर्वहारा के अलावा, उसने शहरी निम्न-सरमायदारों व राष्ट्रीय सरमायदारों को भी शामिल किया था, के सहयोगी-संघ पर आधारित होगी । "ठीक उसी तरह जैसे हरेक को उपलब्ध खाना बाँट कर लेना चाहिये", उसने लिखा, "उसी तरह सत्ता पर एक ही पार्टी, दल या वर्ग का कोई भी एकाधिकार नहीं होना चाहिये" ।* यही विचार चीन लोक गणतन्त्र के राष्ट्रीय झंडे में भी प्रकट है, जिसमें चार सितारें हैं जो चार वर्गों : मज़दूर वर्ग, किसान, शहरी निम्न-सरमायदार व राष्ट्रीय सरमायदार, का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

चीन में क्रान्ति, जिसने देश को मुक्त किया और स्वतन्त्र चीनी राज की स्थापना की, चीनी लोगों के लिये और दुनिया की साम्राज्यवाद-विरोधी व लोकतन्त्रीय शक्तियों के लिये, एक महान विजय थी । मुक्ति के बाद, चीन में सही दिशा में कई परिवर्तन किये गये : विदेशी साम्राज्यवाद व बड़े ज़मींदारों के आधिपत्य को नष्ट कर दिया गया, गरीबी व बेरोज़गारी का मुकाबला किया गया, मेहनतकश जनसमुदायों के पक्ष में कई सामाजिक-आर्थिक सुधार किये गये, शैक्षणिक व सांस्कृतिक पिछड़ेपन के खिलाफ़ लड़ाई की गयी, युद्ध द्वारा तबाह किये गये देश के पुनःनिर्माण के लिये कई उपाय किये

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ३, पृष्ठ २३५ (अल्बेनिया संस्करण)

गये,और एक समाजवादी स्वभाव के कुछ रूपपरिवर्तन भी किये गये । चीन में, जहाँ लोग पहले करोड़ों की तादाद में मरते थे,अब भुखमरी खत्म कर दी गयी,आदि । ये निर्विवाद तथ्य हैं,और चीनी लोगों की महत्वपूर्ण विजयें हैं ।

इन उपायों के किये जाने से और इस तथ्य से,कि कम्यूनिस्ट पार्टी सत्ता में आयी थी,ऐसा प्रतीत हुआ कि चीन समाजवाद की ओर जा रहा था । लेकिन ऐसा नहीं हुआ । "माओ त्से-तुङ विचारधारा" को अपनी क्रियाओं का आधार बनाने के कारण,चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी,जिसे सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति की विजय के बाद वामपक्षी हुये बिना और कायविस्थाओं को फलांगे बिना,सतर्कतापूर्वक आगे बढ़ना चाहिये था,"लोकतन्त्रीय",उदारवादी व मौकापरस्त साबित हुई,और उसने समाजवाद की ओर सही रास्ते पर दृढ़तापूर्वक देश का नेतृत्व नहीं किया ।

माओ त्से-तुङ के मार्क्सवाद-विरोधी,सारसंग्रही,सरमायदारी राजनीतिक व विचारधारात्मक विचारों ने मुक्त हुये चीन को एक अस्थायी उपरिसंरचना दी,राज व अर्थ-व्यवस्था का एक अव्यवस्थित संगठन दिया जो कभी भी स्थायित्व नहीं प्राप्त कर सका । चीन निरंतर अव्यवस्था में रहा,यहाँ तक कि अराजकतापूर्ण अव्यवस्था में, जिसे स्वयं माओ त्से-तुङ ने इस नारे से बढ़ावा दिया था,कि "चीज़ों को स्पष्ट करने के लिये पहले उन्हें विलोड़ना चाहिये" ।

नये चीनी राज में चाउ एन-लाई ने एक विशेष कार्यभाग अदा किया । वह एक योग्य अर्थशास्त्री व संगठनकर्ता था, लेकिन कभी भी एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी राजनीतिज्ञ नहीं था । एक प्रारूपिक उपयोगितावादी होने के नाते,वह जानता था कि उसके मार्क्सवाद-विरोधी विचारों को कैसे कार्यान्वित

किया जाय और उन्हें चीन में सत्ता पर आने वाले हर दल के पूरी तरह अनुकूल कैसे बनाया जाय। वह एक पूस्सा • था, जो हमेशा ही अपने पैरों पर खड़ा रहने के काबिल रहा, हालांकि वह हमेशा ही मध्य से दांयपक्ष तक झूलता रहा लेकिन कभी भी वामपक्ष की ओर नहीं गया।

चाउ एन-लाई सिद्धान्तहीन समझौते करने में पारंगत था। उसने चियांग काई-शेक, काओ गांग, लियू शाओ-ची, तेंग सियाओ-पिङ,माओ त्से-तुङ,लिन पियाओ,"चार" का समर्थन व तिरस्कार किया,लेकिन उसने कभी भी लेनिन व स्टालिन और मार्क्सवाद-लेनिनवाद का समर्थन नहीं किया।

मुक्ति के बाद,माओ त्से-तुङ,चाउ एन-लाई व दूसरों के विचारों व विचारनीतियों के परिणामस्वरूप,पार्टी की राजनीतिक कार्यदिशा में,सभी दिशाओं में,अनेक दोलायमान देखे गये। "माओ त्से-तुङ विचारधारा" द्वारा हिमायत की गयी प्रवृत्ति,कि क्रान्ति की सरमायदारी-लोकतन्त्रीय कार्यावस्था को एक लम्बे समय तक जारी रखना चाहिये, चीन में कायम रखी गयी। माओ त्से-तुङ ने जोर दिया कि इस कार्यावस्था में,पूंजीवाद के विकास,जिसे उसने प्रमुखता दी, के साथ-साथ समाजवाद के लिये ज़रूरी पूर्वस्थितियां भी पैदा की जायेंगी। इसी के साथ जुड़ा हुआ, एक बहुत लम्बे समय तक सरमायदारों के साथ समाजवाद के सहअस्तित्व का उसका दावा भी है,जिसे उसने समाजवाद व सरमायदार दोनों ही के फ़ायदे में बताया। ऐसी नीति का विरोध करने वालों, और अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति के अनुभव को तर्क के रूप में

• मूलप्रति में फ्रांसीसी में (चीनी गुड़ियों की एक प्रचलित किस्म)

प्रस्तुत करने वालों को जवाब देते हुये, माओ त्से-तुङ ने कहा, "रूस में सरमायदार एक प्रतिक्रान्तिकारी वर्ग था, उसने उस समय राज पूंजीवाद को अस्वीकार कर दिया था, काम-मन्दी व ध्वंसात्मक कार्यों को आयोजित किया था, और यहाँ तक कि उसने बन्दूकों का भी सहारा लिया था। रूसी सर्वहारा के पास उसे खत्म करने के अलावा और कोई चारा नहीं था। इसने अन्य देशों के सरमायदारों को क्रोधित कर दिया और वे निन्दा करने पर उतर आये। यहाँ चीन में हम अपने राष्ट्रीय सरमायदारों के प्रति अपेक्षाकृत नरम रहे हैं, जो थोड़ा अधिक आश्वासक महसूस करते हैं और यह विश्वास करते हैं कि वे भी कुछ फ़ायदा उठा सकते हैं"।* माओ त्से-तुङ के अनुसार, ऐसी नीति ने अन्तरर्ष्ट्रीय सरमायदारों की नजरों में चीन की ख्याति को अभिकथित रूप से बढ़ा दिया है, लेकिन वास्तव में इसने चीन में समाजवाद को भारी हानि पहुंचायी है।

माओ त्से-तुङ ने सरमायदारों के प्रति अपनी मौकापरस्त विचारनीति को, नयी आर्थिक नीति (एन०ई०पी०) पर दी गयी लेनिन की शिक्षाओं की एक सृजनात्मक कार्यान्विति के रूप में प्रस्तुत किया है। लेकिन लेनिन की शिक्षाओं के, और समाजवाद में बेरोक पूंजीवादी उत्पादन व सरमायदारी सम्बन्धों को बनाये रखने की इजाज़त देने की माओ त्से-तुङ की धारणा के बीच मौलिक अन्तर है। लेनिन ने स्वीकार किया था, कि एन०ई०पी० पीछे उठाया गया एक कदम थी जिसने कुछ समय के लिये पूंजीवाद के तत्वों के विकास की

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ ३३८, पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

इज़ाज़त दी थी,लेकिन उन्होंने जोर दिया था कि :

"...इसमें सर्वहारा राज के लिये तब तक कोई खतरा नहीं है, जब तक सर्वहारा राजनीतिक सत्ता को अपने हाथों में मज़बूती के साथ रखे हुये हैं,जब तक वह परिवर्तन व बड़े उद्योगों को अपने हाथों में मज़बूती के साथ रखे हुये हैं" ।*

वास्तव में,न तो १९४९ में और न ही १९५६ में,जब कि माओ त्से-तुङ ने इन बातों की हिमायत की थी,चीन में सर्वहारा के हाथों में राजनीतिक सत्ता या बड़े उद्योग थे ।

यही नहीं,लेनिन ने एन०ई०पी० को समाजवादी निर्माण का एक विश्वव्यापी नियम नहीं बल्कि एक अस्थायी उपाय समझा था,जो लम्बे गृह युद्ध से तबाह हुये,उस समय के रूस की यथार्थ हालतों के कारण ज़रूरी था । और तथ्य यह है,कि एन०ई०पी० की घोषणा के एक साल बाद, लेनिन ने जोर दिया,कि पीछे हटने की अब ज़रूरत नहीं है,और उन्होंने अर्थ-व्यवस्था में निजी पूंजी के खिलाफ़ हमला करने की तैयारी का नारा लगाया । जब कि चीन में,पूंजीवादी उत्पादन को लगभग चिरकाल तक बनाये रखने की परिकल्पना की गयी थी । माओ त्से-तुङ के विचार के अनुसार,चीन में मुक्ति के बाद स्थापित की जाने वाली प्रणाली का एक सरमायदारी-लोकतन्त्रीय प्रणाली होना ज़रूरी था,जब कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी को सत्ता में होने का दिखावा करना था । ऐसी है "माओ त्से-तुङ विचारधारा" ।

* वी०आई०लेनिन, संगृहीत रचनायें, ग्रंथ ३२, पृष्ठ ४३४ (अल्बेनिया संस्करण)

सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति से समाजवादी क्रान्ति में अवस्थापरिवर्तन सिर्फ़ तभी किया जा सकता है जब सर्वहारा सरमायदारों को दृढ़तापूर्वक सत्ता से निकाल बाहर करता है व उसकी सम्पत्ति को छीन लेता है । जब तक चीन में मज़दूर वर्ग सरमायदारों के साथ सत्ता बाँटे हुये था, जब तक सरमायदार अपने विशेषाधिकारों को बनाये हुये था, तब तक चीन में स्थापित की गयी राज सत्ता सर्वहारा की राज सत्ता नहीं हो सकती थी, और इसलिये चीनी क्रान्ति एक समाजवादी क्रान्ति में विकसित नहीं हो सकती थी ।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने शोषणकारी वर्गों के प्रति एक उदार मौकापरस्त रुख अपनाये रखा है, और माओ त्से-तुङ ने समाजवाद में पूंजीवादी तत्वों के शान्तिपूर्ण समाकलन की खुले रूप से हिमायत की थी । माओ त्से-तुङ ने कहा था :"वास्तव में दुनिया के सभी चरम-प्रतिक्रियावादी चरम-प्रतिक्रियावादी हैं, वे कल और परसों भी ऐसे ही बने रहेंगे, लेकिन अपनी मौत तक वे ऐसे ही नहीं बने रहेंगे, और अंत में वे बदलेंगे...सार में, चरम-प्रतिक्रियावादी कट्टर होते हैं लेकिन स्थायी नहीं...ऐसा हो सकता है कि चरम-प्रतिक्रियावादी सुधर जायें...वे अपनी गलतियाँ समझते हैं और सुधरते हैं । संक्षेप में, चरम-प्रतिक्रियावादी बदल जाते हैं" ।*

इस मौकापरस्त धारणा को एक सैद्धान्तिक आधार देने की इच्छा से और "विरोधों के रूपपरिवर्तन" के साथ खेलते हुये, माओ त्से-तुङ ने कहा था कि वादविवाद, आलोचना व रूपपरिवर्तन के जरिये शत्रुतापूर्ण अन्तर्विरोधों को अशत्रुतापूर्ण

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ३, पृष्ठ २३९ (अल्बेनिया संस्करण)

अन्तर्विरोधों में बदला जाता है,शोषणकारी वर्ग व सरमाय-दारी बुद्धिजीवि श्रेणी अपने विपरीत में बदल सकते हैं,यानि कि ये क्रान्तिकारी बन सकते हैं" । लेकिन हमारे देश की हालतों में",माओ त्से-तुङ ने १९५६ में लिखा,"अधिकांश प्रति-क्रान्तिकारी अंत में ज़्यादा या कम हद तक बदल जायेंगे । प्रतिक्रान्तिकारियों के प्रति अपनायी गयी हमारी सही नीति के परिणामस्वरूप,उनमें से कई,ऐसे लोगों में बदल गये हैं जो अब क्रान्ति का विरोध नहीं करते हैं,और उनमें से कुछ ने तो इसके लिये कुछ अच्छा भी किया है" ।•

ऐसी मार्क्सवाद-विरोधी धारणाओं,जिसके अनुसार समय गुज़रने के साथ वर्ग दुश्मन सुधर जायेंगे, से चलते हुये उसने वर्ग दुश्मनों के साथ वर्ग समझौते की हिमायत की, और उनको अमीर बनने,शोषण करने और क्रान्ति के खिलाफ़ बोलने व आज़ादी के साथ काम करने की इज़ाज़त दी । वर्ग दुश्मन के प्रति इस आत्मसमर्पणवादी रुख को उचित ठहराने के लिये , माओ त्से-तुङ ने लिखा था :"हमें अभी बहुत कुछ करना है । अगले पचास सालों तक दिन-प्रति-दिन उनपर प्रहार करते रहना असम्भव है । ये ऐसे लोग हैं जो अपनी गलतियों को सुधारने से इनकार करते हैं,ये इन गलतियों को,जब ये यमराज को देखने जायेंगे,अपने शवों के साथ ले जा सकते हैं" ।••दुश्मनों के साथ समझौता करने के इन विचारों के अनुसार अभ्यास में काम करते हुये,चीन के राज प्रशासन को पुराने अधिकारियों

• माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ३२१,पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

•• माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रन्थ ५,पृष्ठ ५१२,पीकिंग १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

के हाथों में छोड़ दिया गया । यहाँ तक कि चियांग-काई शेक के जनरल मंत्री भी बन गये । निस्सन्देह, यहाँ तक कि, मांचूकुओ के राजा, जापानी कब्ज़ाधारियों के कठपुतली राजा, प्यू यी को भी बड़े धयान से सम्भाल कर रखा गया, और इसे एक अजायबघर की चीज़ में बदल दिया गया, ताकि प्रतिनिधि-मण्डल उससे भेंट व बातचीत कर सकें, और यह देखें कि "समाजवादी" चीन में ऐसे लोगों को कैसे पुनः शिक्षित किया जाता है । अन्य बातों के अलावा, इस भूतपूर्व कठपुतली राजा का प्रचार करने का उद्देश्य अन्य देशों के राजाओं, मुखियों व प्रतिक्रियाकी कठपुतलियों के भी डर को दूर करना था, ताकि वे यह सोचें, कि माओ का "समाजवाद" अच्छा है, और इससे डरने की उन्हें कोई ज़रूरत नहीं है ।

चीनी लोगों पर अनगिनत ज़ुर्म करने वाले सामन्तिक जागीरदारों व पूंजीपतियों के प्रति भी चीन में ऐसी विचार-नीतियां अपनायी गयीं जिनमें वर्ग संघर्ष का कोई चिन्ह भी नहीं था । ऐसी विचारनीतियों को सिद्धान्त का स्तर देते हुये, और खुले रूप से प्रतिक्रान्तिकारियों को अपने संरक्षण में लेते हुये, माओ त्से-तुङ ने कहा था :"...हमें किसी को भी मार डालना नहीं चाहिये और बहुत थोड़ों को ही गिरफ्तार करना चाहिये...उन्हें सार्वजनिक सुरक्षा ब्यूरो द्वारा कैद नहीं किया जाना चाहिये, अभिकर्ता अंगों द्वारा सज़ा नहीं दी जानी चाहिये या न्यायालयों द्वारा उनका फैसला नहीं किया जाना चाहिये । इन प्रतिक्रान्तिकारियों के नब्बे प्रतिशत से भी ज़्यादा के साथ इस तरीके से सलूक किया जाना चाहिये" ।• एक कुतर्कवादी की तरह तर्क करते हुये, माओ

• माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ ३२३, पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

त्से-तुङ कहता है कि प्रतिक्रान्तिकारियों को मौत की सज़ा देने से कोई फ़ायदा नहीं है, कि ऐसा काम देश के उत्पादन व वैज्ञानिक स्तर को अभिकथित रूप से बाधा पहुंचाता है, और यह दुनिया में हमें एक बुरा नाम देगा, आदि, कि अगर एक प्रतिक्रान्तिकारी का खात्मा किया जाये, "तो हमें उसके केस की तुलना दूसरे के साथ करनी पड़ेगी, फिर तीसरे के साथ और ऐसा ही चलता रहेगा, और फिर अनेकों सर ज़मीन पर लोटने लगेंगे...अगर एक सर काट दिया जाये तो उसे फिर से जोड़ा नहीं जा सकता है, न ही वह फिर से उग सकता है, जैसे कुकंद काटने के बाद फिर से उग आते हैं" ।*

अन्तर्विरोधों के बारे में, वर्गों व क्रान्ति में उनके कार्यभाग के बारे में, "माओ त्से-तुङ विचारधारा" द्वारा हिमायत की गयी, इन मार्क्सवाद-विरोधी धारणाओं के परिणामस्वरूप, चीन कभी भी समाजवादी निर्माण के सही रास्ते पर नहीं चला । यह पहले के सिर्फ़ राजनीतिक, आर्थिक, विचारधारात्मक व सामाजिक अवशेष ही नहीं है, जो चीनी समाज में बचे हुये हैं और अभी भी मौजूद हैं, बल्कि शोषणकारी वर्ग भी वहां वर्गों के रूप में मौजूद हैं और अभी भी सत्ता में बने हुये हैं । सिर्फ़ यही नहीं कि सरमायदार वहां अभी भी मौजूद हैं, बल्कि वे उस सम्पत्ति से, जो उनके पास थी, मुनाफ़े बनाना भी जारी रखे हुये हैं । चीन में वैधानिक रूप से पूंजीवादी अधिशेष को खत्म नहीं किया गया है, क्योंकि चीनी नेतृत्व, माओ त्से-तुङ द्वारा १९३५ में बतायी गयी सरमायदारी-लोकतन्त्रीय क्रान्ति की नीति पर डटा रहा है, जिस माओ त्से-तङ ने उस समय कहा था कि :लोक गणतन्त्र के श्रम कानून

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ ३२३, पीकिंग, १९७७ (फ़्रांसीसी संस्करण)

...राष्ट्रीय सरमायदारों को मुनाफ़े बनाने से नहीं रोकेंगे. ...." * । "ज़मीन पर समान अधिकार की नीति" के अनुरूप, कुलक श्रेणी ने, जिन रूपों में वह चीन में मौजूद रही है, बड़े विशेषाधिकारों व मुनाफ़ों को बनाये रखा है । स्वयं माओ त्से-तुङ ने आदेश दिया था कि कुलकों को हानि नहीं पहुँचायी जानी चाहिये, क्योंकि इससे राष्ट्रीय सरमायदार क्रोधित हो सकते हैं जिसके साथ चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने राजनीतिक, आर्थिक व संगठनात्मक तौर से एक सामान्य संयुक्त मोर्चा बनाया हुआ था ** ।

ये सब बातें यह दिखाती हैं कि "माओ त्से-तुङ विचार-धारा" ने समाजवाद के सही रास्ते पर चीन का मार्गप्रदर्शन नहीं किया था और न ही वह ऐसा कर सकती थी । निस्सन्देह, जैसा कि चाउ एन-लाई ने १९४९ में, अमरीकी सरकार से चीन को मदद देने के लिये गुप्त रूप से अनुरोध करते समय घोषणा की थी, न तो माओ त्से-तुङ और न ही उसके मुख्य समर्थक समाजवादी रास्ते के पक्ष में थे । "चीन", चाउ एन-लाई ने लिखा था, "अभी तक एक कम्यूनिस्ट देश नहीं है, और अगर माओ त्से-तुङ की नीति को उचित रूप से कार्यान्वित किया जाय, तो वह एक लम्बे समय तक एक कम्यूनिस्ट देश नहीं बनेगा" ।***

---

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ १, पृष्ठ २०९ (अल्बेनिया संस्करण)

** माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ ५, पृष्ठ २२, पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

***"इण्टरनेशनल हेराल्ड ट्रिब्यून", अगस्त १४, १९७८ ।

एक बाज़ारूपन के ढंग से, माओ त्से-तुङ व चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने समाजवादी व कम्यूनिस्ट समाज के बारे में की गयी अपनी सभी घोषणाओं को, अपनी उपयोगितावादी नीति के अधीन रखा । इस प्रकार, तथा-कथित प्रगति-की-और-महान-छलांग के सालों में, जनसमुदायों, जो क्रान्ति से निकल कर समाजवाद की आकांक्षा कर रहे थे, की आँखों में धूल झोंकने के लक्ष्य से, उन्होंने यह घोषणा की कि २-३ पंचवर्षीय अवधियों में ही वे सीधे कम्यूनिज़्म तक पहुंच जायेंगे । लेकिन, बाद में, अपनी असफलताओं को छुपाने के लिये, उन्होंने यह सिद्धान्त बनाना शुरू कर दिया कि समाजवाद के निर्माण व उसकी विजय के लिये दस हज़ार साल की ज़रूरत होगी ।

यह सच है कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी अपने आपको कम्यूनिस्ट बताती थी, लेकिन वह एक दूसरी ही दिशा में, एक अव्यवस्थित उदारवादी रास्ते पर, एक मौकापरस्त रास्ते पर विकसित हुई, और समाजवाद की ओर देश का नेतृत्व करने के योग्य एक शक्ति नहीं हो सकी । जिस रास्ते का उसने अनुसरण किया और जिसे माओ की मृत्यु के बाद और भी ज़्यादा स्पष्टतय: ठोस रूप दिया गया, वह समाजवाद का रास्ता नहीं था, बल्कि एक बड़े सरमायदारी, सामाजिक-साम्राज्यवादी राज को बनाने का रास्ता था ।

<u>एक मार्क्सवाद-विरोधी सिद्धान्त होने के नाते, "माओ त्से-तुङ विचारधारा" ने सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद की जगह महान राज शोवींवाद को अपनाया ।</u>

अपनी क्रियाओं की बिल्कुल शुरूआत से ही, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने खुली राष्ट्रीयतावादी व शोवींवादी प्रवृत्तियों को दिखाया, जिन्हें, जैसा कि तथ्य दिखाते हैं, आगे

के समय में भी खत्म नहीं किया जा सका। चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में से एक, ली ता-चाओ ने कहा था कि, "यूरोपीय लोग यह सोचते हैं कि दुनिया सिर्फ़ गोरे लोगों की ही है और यह कि वे एक श्रेष्ठतर वर्ग हैं, जबकि अगोर लोग नीच वर्ग हैं। चीनी लोगों को", ली ता-चाओ आगे कहता है कि, "दुनिया की अन्य जातियों के खिलाफ़ एक वर्ग संघर्ष करने के लिये तैयार होना चाहिये, जिस संघर्ष में वे एक बार फिर अपने विशेष राष्ट्रीय गुणों को दिखायेंगे।" चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी बिल्कुल शुरू से ही ऐसे विचारों से रंगी हुई थी।

ऐसे जातिवादी व राष्ट्रीयतावादी विचार, लियू और तैंग की तो बात ही छोड़िये, माओ त्से-तुङ की मनोवृत्ति से भी पूरी तरह से नहीं निकल सके। १९३८ में पार्टी की केन्द्रीय कमेटी को दी गयी अपनी रिपोर्ट में, माओ त्से-तुङ ने कहा था कि, "वर्तमान चीन पुराने चीन के विकास से उभरा है।..हमें कन्फ़्यूशियस से लेकर सुन यात-सेन तक के अपने इतिहास के सारांश को जानना चाहिये...और इस बहुमूल्य विरासत को अपनाना चाहिये। इस समय के महान आन्दोलन का मार्गप्रदर्शन करने के लिये यह महत्वपूर्ण है"।*

निस्सन्देह, हर मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी कहती है, कि उसे अपने आप को अपने ही लोगों की पहले से चली आयी विरासत पर आधारित करना चाहिये, लेकिन वह यह भी ध्यान में रखती है कि उसे विरासत में मिली हर चीज़ पर नहीं बल्कि सिर्फ़ प्रगतिशील चीज़ पर ही अपने आपको आधारित

* माओ त्से-तुङ, संकलित रचनायें, ग्रंथ २, पृष्ठ २५०-२५१ (अल्बेनिया संस्करण)

करना चाहिये । कम्यूनिस्ट, विचारों के छेत्र में, और इसके साथ-साथ सभी अन्य छेत्रों में प्रतिक्रियावादी विरासत को अस्वीकार करते हैं । चीनी नेतृत्व अपने पुराने रूपों,सार व विचारों के सम्बन्ध में बहुत रूढ़िवादी, और यहाँ तक कि विदेशी-भीत भी रहा है । उन्होंने पुरानी बातों की, एक बहुमूल्य खजाने के रूप में, रक्षा की । उनके साथ हुई हमारी बातचीत से हमें यह पता लगा कि चीनी नेतृत्व ने विश्व के सभी क्रान्तिकारी अनुभवों को बहुत कम मूल्य दिया था । उनके लिये सिर्फ़ उनकी ही नीति, चियांग काई-शेक के खिलाफ़ उनका संघर्ष,उनका लम्बा मार्च व माओ त्से-तुङ का सिद्धान्त ही मूल्यवान थे । जहाँ तक दूसरे देशों के लोगों के प्रगतिशील अनुभवों का सवाल है,चीनी नेतृत्व इन्हें बहुत ही कम महत्व का या बिना किसी महत्व का समझता था, वस्तुतः उसने इनका अध्ययन करने की कोई ज़रूरत नहीं समझी । माओ त्से-तुङ ने घोषणा की थी कि,"चीनियों को विदेशियों द्वारा बनाये गये फ़ार्मूलों पर ध्यान नहीं देना चाहिये" । लेकिन ठीक-ठीक किन फ़ार्मूलों को,इसकी वह व्याख्या नहीं करता है । उसने "अन्य देशों से ली गयी सभी घिसी-पीटी बातों व रूढ़ियों" का तिरस्कार किया था । यहाँ यह प्रश्न उठता है कि : क्या वैज्ञानिक समाजवाद का सिद्धान्त,जो चीनियों द्वारा नहीं बनाया गया था, भी चीन के लिये इन विदेशी "रूढ़ियों" व "घिसी-पीटी बातों" में शामिल किया गया है ?

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के नेतृत्व ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को सोवियट संघ का एकाधिकार समझा था,जिसके प्रति माओ त्से-तुङ व उसके सहयोगियों ने शोवींवादी विचारों, महान राज विचारों का पोषण किया,और यह कहा जा सकता है

कि उनको एक प्रकार की सरमायदारी ईर्ष्या थी । उन्होंने लेनिन व स्टालिन के समय के सोवियट संघ को विश्व सर्वहारा की महान जन्मभूमि नहीं समझा, जिस पर दुनिया भर के सर्वहारा को, क्रान्ति को कार्यान्वित करने के लिये निर्भर होना था,और जिसकी उन्हें,सरमायदारी व साम्राज्यवाद के खूंख्वार हमले के खिलाफ़,पूरी शक्ति के साथ रक्षा करनी थी।

कुछ दशक पहले, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के दो मुख्य नेता माओ त्से-तुङ व चाउ एन-लाई ने सोवियट संघ,जिसका नेतृत्व स्टालिन के हाथ में था,के विरोध में बात की व काम किया । यहां तक कि उन्होंने,स्वयं स्टालिन के खिलाफ़ भी बातें की । माओ त्से-तुङ ने यह कहते हुये स्टालिन पर आत्मवाद का अभियोग लगाया कि,"वे विरोधों के बीच संघर्ष,और विरोधों के बीच एकता,इन दोनों के बीच के सम्बन्ध नहीं देख पाये"*, कि उन्होंने अभिकथित रूप से,"चीन के सम्बन्ध में अनेक गलतियां की थी । दूसरे क्रान्तिकारी गृह युद्ध के अन्त के समय वांग मिंग द्वारा अनुसरण किये गये "वामपक्षी जोखिमवाद" और जापानियों के खिलाफ़ प्रतिरोध के युद्ध के शुरू के समय में उसकी दांयपक्षी मौकापरस्ती,दोनों ही का स्रोत स्टालिन में पाया जा सकता है" ** ,और कि यूगोस्लाविया व टीटो के प्रति स्टालिन की क्रियायें गलत थीं,इत्यादि ।

हालांकि दिखावे के लिये माओ त्से-तुङ कभी-कभाद यह

* माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ४००,पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

** माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ३२८,पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

कह कर, कि स्टालिन सिर्फ़ ३० प्रतिशत ही गलत थे, स्टालिन की रक्षा में बोलता था, लेकिन वास्तव में उसने सिर्फ़ स्टालिन की गलतियों की ही बात की थी । १९५७ में कम्यूनिस्ट व मज़दूर पार्टियों की मास्को मीटिंग में दिया गया माओ का बयान कोई निरुद्देश्य नहीं था, जब उसने यह कहा था कि, "स्टालिन की मौजूदगी में मैं शिक्षक के सामने खड़े एक शिष्य की तरह महसूस करता था जबकि अब जब हम क्रुश्चेव से मिलते हैं तो हम साथियों की तरह हैं, और हम राहत महसूस करते हैं" । इस बयान से, उसने खुले रूप से, स्टालिन के खिलाफ़, क्रुश्चेव द्वारा किये गये मिथ्यापवादों का अभिवादन किया व उनको स्वीकार किया, और क्रुश्चेववादी कार्यदिशा की रक्षा की ।

दूसरे संशोधनवादियों की ही तरह, माओ त्से-तुङ ने भी मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों, जिनकी स्टालिन ने दृढ़ता-पूर्वक रक्षा की थी व जिन्हें और भी उन्नत किया था, से अपने विचलन को उचित ठहराने के लिये स्टालिन के खिलाफ़ आलोचनाओं का इस्तेमाल किया था । स्टालिन के खिलाफ़ हमला करके चीनी संशोधनवादी उनके काम व अधिकार को घटाना और माओ त्से-तुङ के अधिकार को एक विश्व नेता, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की एक क्लासिकी, जिसने अभिकथित रूप से हमेशा एक सही व अचूक कार्यदिशा का अनुसरण किया था, के स्तर तक उठाना चाहते थे । ये आलोचनायें स्टालिन के खिलाफ़ उनके उस दबे हुये असंतोष को प्रकट करतीं हैं, जो असंतोष चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के नेतृत्व व माओ त्से-तुङ द्वारा क्रान्ति में सर्वहारा के नेतृत्वदायी कार्यभाग, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद, क्रान्तिकारी संघर्ष की नीति व युक्तियों, आदि, पर मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों को दृढ़तापूर्वक

कार्यान्वित न किये जाने पर स्टालिन व कामिण्टर्न द्वारा की गयी भर्त्सना व आलोचनाओं के कारण पैदा हुआ था । माओ त्से-तुङ ने यह कहकर इस असंतोष को खुले रूप से प्रकट किया कि,"स्टालिन को यह सन्देह था कि हमारी विजय टीटो की किस्म की एक विजय थी,और १९४९ व १९५० में हमारे ऊपर उनका दबाव निस्सन्देह बहुत अधिक था"।* इसी तरह,चाउ एन-लाई ने, यहाँ तिराना में हमारे साथ अपनी बातचीत के दौरान कहा था कि,"स्टालिन को हमारे ऊपर यह सन्देह था कि हम अमरीका-पक्षी हैं या कि हम यूगोस्लाव रास्ते पर चल पड़ेंगे" । समय ने यह सिद्ध कर दिया है कि स्टालिन पूरी तरह से सही थे । चीनी क्रान्ति व उसका मार्गप्रदर्शन करने वाले विचारों के बारे में उनकी आशंकायें बिल्कुल ठीक निकलीं।

माओ त्से-तुङ के नेतृत्व में, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी और स्टालिन के नेतृत्व में सोवियट संघ की कम्यूनिस्ट पार्टी के बीच के अन्तर्विरोध और इसके साथ-साथ चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी और कामिण्टर्न के बीच के अन्तर्विरोध, सिद्धान्तों पर, क्रान्तिकारी मार्क्सवादी-लेनिनवादी नीति व युक्तियों के मूलभूत सवालों पर होने वाले अन्तर्विरोध थे । उदाहरण के लिये,चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने, चीन की क्रान्ति के सही व दृढ़तापूर्ण विकास पर दिये गये कामिण्टर्न के दावों, शहरों में मज़दूर वर्ग व मुक्ति सेना के संयुक्त कार्य के बारे में उसके दिशाज्ञान,चीनी क्रान्ति के स्वभाव व कार्यावस्थाओं पर दिये गये कमिण्टर्न के दावों,आदि,की अवहेलना

---

* माओ त्से-तुङ,संकलित रचनायें,ग्रंथ ५,पृष्ठ ३२८,पीकिंग, १९७७ (फ्रांसीसी संस्करण)

की थी । माओ त्से-तुङ· और चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के अन्य नेताओं ने चीन को भेजे गये कामिण्टर्न के प्रतिनिधियों के बारे में हमेशा ही अवज्ञापूर्वक बात की है, और उनको "मूर्ख" व "अज्ञानी" लोग बताया, जो चीनी वास्तविकता को नहीं जानते थे", आदि । हरेक देश को "अपने में ही एक वस्तुगत वास्तविकता", व "दूसरों के लिये बन्द" समझते हुये, माओ त्से-तुङ· ने कामिण्टर्न के प्रतिनिधियों की सहायता को अनावश्यक व बिल्कुल असम्भव समझा । जनवरी १९६२ को चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के विस्तृत कार्य सम्मेलन में दिये गये अपने भाषण में माओ त्से-तुङ· ने कहा था :"चीन को एक वस्तुगत दुनिया के रूप में, चीनी ही जानते थे, चीन के सवाल पर काम कर रहे कामिण्टर्न के साथी नहीं । कामिण्टर्न के ये साथी चीनी समाज, चीनी राष्ट व चीनी क्रान्ति के बारे में बहुत कम या कुछ भी नहीं जानते थे । इसलिये इन विदेशी साथियों के बारे में यहाँ क्यों बात की जाय ?"

अपनी सफलताओं के बारे में बात करते समय, माओ त्से-तुङ· कामिण्टर्न को अलग छोड़ देता है । जबकि, चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की असफलताओं व विचलनों के लिये, चीन में विकसित हुई परिस्थितियों को समझने में और उनसे सही निष्कर्षों को निकालने में उसकी असफलता के लिये, वह कामिण्टर्न को, व चीन में भेजे गये उसके प्रतिनिधियों को दोषी ठहराता है । वह और अन्य चीनी नेता, चीन में सत्ता पर कब्ज़ा करने के लिये व समाजवाद के निर्माण के लिये दृढ़तापूर्वक संघर्ष करने में उनको अभिकथित रूप से बाधा पहुंचाने व उनके लिये मामलों को जटिल बनाने का कामिण्टर्न पर अभियोग लगाते हैं । लेकिन, पहले के तथ्य और विशेषकर वर्तमान चीनी वास्तविकता

इस बात की पुष्टि करती हैं, कि चीन के बारे में कामिण्टर्न के निर्णय व निर्देश आम तौर से सही थे, और यह कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों के आधार पर और इन सिद्धान्तों की भावना से काम नहीं किया था ।

संकुचित राष्ट्रीयतावाद व बड़े राज शौवींवाद, जो "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की विशेषता हैं, और जो चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की क्रियाओं का आधार रही हैं व हैं, के परिणाम अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन में इस पार्टी की क्रियाओं व उसके प्रति इस पार्टी की विचारनीतियों में भी प्रकट होते हैं ।

यह, क्रुश्चेववादियों की गद्दारी के बाद स्थापित की गयी नयी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के प्रति चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के रुख में यथार्थ रूप से स्पष्ट है । बिल्कुल शुरू से ही चीनी नेतृत्व को इन पार्टियों पर कोई भी विश्वास नहीं था । यह विचार चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सदस्य, कैंग प्याओ, जो अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन के साथ सम्बन्धों पर निर्णय लेता है, द्वारा खुले रूप से व्यक्त किया गया था । उसने कहा था कि :"चीन, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों की स्थापना का समर्थन नहीं करता है, और यह नहीं चाहता है कि इन पार्टियों के प्रतिनिधि चीन में आयें । उनका आना हमारे लिये एक परेशानी है, लेकिन," उसने जोर दिया," हम उनके बारे में कुछ भी नहीं कर सकते हैं, क्योंकि हम उन्हें वापस नहीं भेज सकते हैं । हम उनका ठीक उसी तरह से स्वागत करते हैं जैसे हम सरमायदारी पार्टियों के प्रतिनिधियों का स्वागत करते हैं" ।* ऐसी

* अप्रैल १६, १९७३ को पीकिंग में हमारी पार्टी के साथियों से हुई कैंग प्याओ की बातचीत से, सी०पी०ए०

नीति, जिसमें सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के साथ कोई सामान्यता नहीं थी,का अनुसरण माओ त्से-तुङ के जीवनकाल में ही किया गया था,जब वह सोचने व निर्देशन करने के पूरी तरह से काबिल था,इसलिये इस नीति को उसका पूरा समर्थन प्राप्त था ।

जब, चीनी नेताओं की इच्छाओं के विपरीत, ये नयी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियां मज़बूत होने लगी,तब उन्होंने एक दूसरी ही युक्ति अपनायी, जो युक्ति थी, सभी नयी पार्टियों व सभी दलों को बिना किसी अपेक्षा के और बिना किसी विभेद के मान्यता देना,बशर्ते ये पार्टियां या दल अपने आपको "मार्क्सवादी पार्टियां", "क्रान्तिकारी पार्टियां", "लाल रक्षक" आदि कहें । पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी की इस विचारनीति व युक्ति की आलोचना की है । अन्य सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों ने भी ऐसा ही किया है । लेकिन फिर भी,संशोधनवादी चीनी नेतृत्व ने इसी रास्ते पर चलना जारी रखा है ।

बाद में,नयी स्थापित हुई पार्टियों व दलों के प्रति अपनी उपयोगितावादी नीति के अनुरूप,चीनी नेताओं ने विभेदित रुख अपनाया । उन्होंने सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को अपना दुश्मन बताया, जबकि इन पार्टियों का विरोध करने वाली पार्टियां व दल उनके बहुत प्रिय बन गये । इस समय, चीनी संशोधनवादी इन मार्क्सवाद-विरोधी पार्टियों व दलों,जो "माओ त्से-तुङ विचारधारा" को आसमान पर चढ़ाते हैं, के साथ सिर्फ़ सम्बन्धों को ही नहीं बनाये हुये हैं बल्कि एक-एक करके इनके प्रतिनिधियों को पीकिंग में आमंत्रित करते हैं, जहां वे इनको प्रशिक्षित करते हैं, इनको वित्तीय सहायता और राजनीतिक व विचारधारात्मक शिक्षायें देते

हैं, और यह हिदायत देते हैं कि पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया और सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के खिलाफ़ कैसे काम किया जाय । वे इन पार्टियों व दलों से," माओ त्से-तुङ विचारधारा", "तीन दुनियाओं" के सिद्धान्त, और आम तौर से चीन की विदेश नीति का प्रचार करने, और हुआ कुआ-फैंग व तैंग सियाओ-पिङ की व्यक्ति-पूजा को बनाने और "चार" का तिरस्कार करने की माँग करते हैं । चीनी संशोधनवादियों के लिये, जो भी पार्टी इन माँगों को पूरी करती है, वह मार्क्सवादी-लेनिनवादी है, जबकि वे पार्टियाँ, जो इनका विरोध करती हैं, मार्क्सवाद-विरोधी, जोखिमवादी, आदि, घोषित कर दी जाती हैं ।

ये सब बातें यह दिखाती हैं कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के साथ अपने सम्बन्धों में, चीनी संशोधनवादी नेताओं ने सच्ची कम्यूनिस्ट पार्टियों के बीच के सम्बन्धों का विनियमन करने वाले लेनिनवादी सिद्धान्तों व आदर्शों को नहीं कार्यान्वित किया है । क्रुश्चेव-अनुयायी संशोधनवादियों की ही तरह, "माँ पार्टी" की मार्क्सवाद-विरोधी धारणा से चलते हुये, उन्होंने अन्य पार्टियों के आन्तरिक मामलों में हुक्म चलाया है, दबाव डाला है व दखल दिया है, और भाई-चारे की पार्टियों से साथीपन के सलाह व सुझावों को कभी भी स्वीकार नहीं किया है । उन्होंने मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों की बहुपक्षी मीटिंगों, क्रान्ति की तैयारी व विजय, और मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा में आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ लड़ाई की भारी समस्याओं पर वादविवाद करने, अनुभवों का आदान-प्रदान करने व क्रियाओं को समन्वित करने, आदि, के लिये की जाने वाली मीटिंगों का विरोध किया है । ऐसी विचारनीति का कारण, अन्य बातों के साथ-साथ, यह है कि वे बहुपक्षी मीटिंगों में सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवा-

दियों का सामना करने से डरते हैं, क्योंकि विश्व पूंजी की सेवा में लगे उनके मार्क्सवाद-विरोधी व संशोधनवादी सिद्धान्तों व चीन को एक महाशक्ति में बदलने के इरादे से बनायी गयी नीति का पर्दाफाश हो जाता व यह बेनकाब हो जाती ।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" के मार्क्सवाद-विरोधी सार का एक और सबूत वे सम्बन्ध हैं जिन्हें चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने कई भिन्न तानाशाही, संशोधनवादी व अन्य पार्टियों व दलों के साथ बनाया है और वह बनाये हुये हैं । अब वह विभिन्न देशों की पुरानी संशोधनवादी पार्टियों, जैसे कि इटली, फ्रांस, स्पेन, और यूरोप, लैटिन अमरीका, आदि के अन्य देशों की पार्टियों, के भी साथ सम्बन्धों को बनाने व उनमें घुसने के लिये ज़रूरी हालात तैयार करने की कोशिश कर रही है । चीनी संशोधनवादी इन सम्बन्धों को ज़्यादा से ज़्यादा महत्व दे रहे हैं, क्योंकि ये सभी पार्टियाँ, इसके बावजूद भी कि उनकी युक्तियों, जो हर देश में पूंजीवाद के स्वभाव, शक्ति व ताकत पर निर्भर करती हैं, भिन्न हैं, विचारधारात्मक तौर से चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के ही साथ हैं ।

इन परम्परागत रूप से संशोधनवादी पार्टियों के साथ चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के सम्बन्धों का धीरे-धीरे विस्तार किया जायेगा और उनके कामों को समन्वित किया जायेगा, जबकि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी मौजूदा सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों, जो अपनी विचारनीति में अडिग रहती हैं, और इसके साथ-साथ अन्य पार्टियों, जो स्थापित की जा रही हैं और की जायेंगी, के खिलाफ़ लड़ने व उनको विच्छिन्न करने के लिये, उन छोटे दलों का इस्तेमाल करना जारी रखेगी, जो अपने आपको "मार्क्सवादी-लेनिनवादी" कहते हैं, और जो चीनी कार्यदिशा का अनुसरण करते हैं । अपनी इन क्रियाओं

से चीनी संशोधनवादी पूंजीवाद, व सामाजिक-लोकतन्त्रीय व संशोधनवादी पार्टियों को खुले रूप से मदद दे रहें हैं, और क्रान्ति के फूट पड़ने व उसकी विजय का, और विशेषकर, आत्मगत कारकों की तैयारी, यानि कि सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों, जो इस क्रान्ति का नेतृत्व करेंगी, के दृढ़ीकरण का अन्तर्ध्वंस कर रहें हैं ।

चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने तथा-कथित लीग आफ़ कम्यूनिस्ट्स आफ़ यूगोस्लाविया, जिसने अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन में फूट डालने की पूरी शक्ति से कोशिश की है और समाजवाद व मार्क्सवाद-लेनिनवाद के खिलाफ़ निरन्तर लड़ाई की है, के साथ अपने सम्बन्धों में भी इसी युक्ति का इस्तेमाल किया था । वर्तमान चीनी नेता मार्क्सवाद-लेनिनवाद व सभी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के खिलाफ़, क्रान्ति, समाजवाद व कम्यूनिज़्म के खिलाफ़ संघर्ष में यूगोस्लाव संशोधनवादियों के साथ चलना और अपने कामों को उनके साथ समन्वित करना चाहते हैं ।

माओ त्से-तुङ और चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी ने यूगोस्लाव संशोधनवाद के प्रति एक उपयोगितावादी रुख कायम रखा है और टीटो व टीटोवाद के बारे में अपने विचारों में एक भारी उद्विकास किया है । पहले तो, माओ त्से-तुङ ने कहा था, कि टीटो गलत नहीं था, बल्कि स्टालिन टीटो के बारे में गलत थे । उसके बाद इसी माओ त्से-तुङ ने टीटो को हिटलर व चियांग काई-शेक की श्रेणियों में रखा और यह कहा कि "ऐसे लोग ... जैसे कि टीटो, हिटलर, चियांग काई-शेक और ज़ार सुधारे नहीं जा सकते हैं, उन्हें मार दिया जाना चाहिये" । लेकिन, उसने एक बार फिर से अपने रुख को बदल दिया और उसने टीटो से मिलने की अपनी भारी इच्छा प्रकट

की । स्वयं टीटो ने हाल में यह घोषणा की कि :" माओ त्से-तुङ के जीवनकाल में ही मुझे चीन में आमंत्रित किया गया था । संघीय कार्यसंचालक वेचे के अध्यक्ष द्युमेल बियेदिच की चीन यात्रा के दौरान, उस समय माओ त्से-तुङ ने अपनी यह इच्छा उसके सामने व्यक्त की थी कि मैं चीन की यात्रा करूं । अध्यक्ष हुआ कुआ-फैंग ने भी मुझको बताया, कि पांच साल पहले, माओ त्से-तुङ ने कहा था कि उसे मुझको एक यात्रा के लिये आमंत्रित करना चाहिये था, और यह जोर दिया था कि १९४८ में भी यूगोस्लाविया सही रास्ते पर था, जिसकी उसने (माओ त्से-तुङ ने) उस समय भी निकट सहयोगियों के सामने घोषणा की थी । लेकिन चीन व सोवियट संघ के बीच उस समय के सम्बन्धों को ध्यान में रखते हुये, यह बात सार्वजनिक रूप से नहीं कही गयी थी" ।

चीन का संशोधनवादी नेतृत्व माओ त्से-तुङ की इस "इच्छा" को वफ़ादारी के साथ निभा रहा है । हुआ कुआ-फैंग ने टीटो की चीन यात्रा और विशेषकर स्वयं अपनी यूगोस्लाविया यात्रा के अवसर का इस्तेमाल टीटो की प्रशंसा करने, उसे एक "प्रतिष्ठित मार्क्सवादी-लेनिनवादी" और सिर्फ़ यूगोस्लाविया के ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन के भी एक "महान नेता" के रूप में प्रस्तुत करने के लिये किया । इस तरह, चीनी नेतृत्व ने टीटोवादियों द्वारा स्टालिन व बोल्शेविक पार्टी के खिलाफ़, पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया, अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के खिलाफ़ किये गये हमलों का भी खुले रूप से समर्थन किया ।

स्लोवेनिया के एस०आर० के कार्यकर्ताओं की मीटिंग में दिये गये टीटो के भाषण से, सितम्बर ८, १९७८ ।

टीटोवादियों, "यूरोकम्यूनिस्टों", जैसे कि करिल्लो व अन्य दूसरों के साथ चीनी संशोधनवादियों के नज़दीकी राजनीतिक व विचारधारात्मक सम्बन्ध, और उनके द्वारा मार्क्सवाद-विरोधी, ट्रोट्स्कीवादी, अराजकतावादी व सामाजिक-लोकतन्त्रवादी पार्टियों व दलों को दिया गया समर्थन, यह दिखाते हैं, कि "माओ त्से-तुङ विचारधारा" से प्रेरित व मार्गप्रदर्शित, चीनी नेता क्रान्ति के खिलाफ़, लोगों के मुक्ति संघर्ष के खिलाफ़, मार्क्सवाद-लेनिनवाद से पथभ्रष्ट लोगों के साथ एक सामान्य विचारधारात्मक मोर्चा स्थापित कर रहे हैं। यही कारण है कि कम्यूनिज़्म के सभी दुश्मन चीनी "सिद्धान्तों" पर खुशी मना रहे हैं, क्योंकि वे देखते हैं कि "माओ त्से-तुङ विचारधारा", व चीनी नीति क्रान्ति व समाजवाद के खिलाफ़ निर्दिष्ट हैं।

हमने "माओ त्से-तुङ विचारधारा" के मार्क्सवाद-विरोधी व लेनिनवाद-विरोधी सार के सभी सवालों का विश्लेषण नहीं किया है। लेकिन जिन सवालों का हमने विश्लेषण किया है, वे यह निष्कर्ष निकालने के लिये काफ़ी हैं कि माओ त्से-तुङ मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं था, बल्कि एक प्रगतिशील क्रान्तिकारी लोकतन्त्रवादी था, जिसने एक लम्बे समय तक चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी का नेतृत्व किया था और चीनी लोकतन्त्रीय साम्राज्यवाद-विरोधी क्रान्ति की विजय में एक महत्वपूर्ण कार्यभाग अदा किया था। चीन के अन्दर, पार्टी की श्रेणियों में, लोगों के बीच और चीन के बाहर, उसने एक महान मार्क्सवादी-लेनिनवादी के रूप में अपनी प्रतिष्ठा बनायी और उसने स्वयं एक कम्यूनिस्ट, एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी द्वन्द्ववादी होने का दिखावा किया। लेकिन वह ऐसा नहीं था। वह एक सारसंग्रहवादी था, जिसने मार्क्सवादी द्वन्द्ववाद के कुछ

तत्वों को अध्यात्मवाद के साथ,सरमायदारी व संशोधनवादी दर्शनशास्त्र के साथ,और यहाँ तक कि प्राचीन चीनी दर्शनशास्त्र के भी साथ मिलाया था। इसलिये माओ त्से-तुङ के विचारों का अध्ययन सिर्फ उसकी कुछ प्रकाशित रचनाओं के व्यवस्थित वाक्यांशों से नहीं, बल्कि उसकी सम्पूर्ण रचनाओं से,उनके आभ्यासिक प्रयोग से,और इसके साथ-साथ उनके आभ्यासिक नतीजों को ध्यान में रखते हुये करना चाहिये।

"माओ त्से-तुङ विचारधारा" का मूल्यांकन करते समय, जिन यथार्थ ऐतिहासिक हालतों में इसे बनाया गया था, उनको ध्यान में रखना भी आवश्यक है। माओ त्से-तुङ के विचारों का विकास पूँजीवाद के पतन के समय में,यानि कि, एक ऐसे समय में किया गया था, जब सर्वहारा क्रान्तियाँ करणीय काम हैं और जब महान अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति का उदाहरण,और मार्क्स,ऐंगेल्स,लेनिन व स्टालिन की महान शिक्षायें, दुनिया के सर्वहारा व क्रान्तिकारी लोगों के लिये एक अचूक पथप्रदर्शक बन गये हैं। माओ त्से-तुङ का सिद्धान्त, "माओ त्से-तुङ विचारधारा",जो इन नयी हालतों में पैदा किया गया था, को हमारे समय के सबसे क्रान्तिकारी व वैज्ञानिक सिद्धान्त,मार्क्सवाद-लेनिनवाद, के भेस में आने की कोशिश करनी पड़ी,जैसा कि उसने किया भी था,लेकिन सार में वह सर्वहारा क्रान्ति के विरोध में एक "सिद्धान्त" बना रहा,जो संकट व पतन में साम्राज्यवाद की रक्षा करने के लिये सामने आया है। इसलिये, हम कहते हैं कि माओ त्से-तुङ व "माओ त्से-तुङ विचारधारा" मार्क्सवाद-विरोधी हैं।

जब "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की बात की जाती है, तो उसमें एक अकेली स्पष्ट कार्यदिशा देखना कठिन है, क्योंकि जैसे हमने शुरू में बताया था, यह अराजकतावाद,

ट्रौट्स्कीवाद, टीटोवाद, क्रुश्चेववाद,"यूरोकम्यूनिस्ट" जैसे आधुनिक संशोधनवाद से लेकर कुछ मार्क्सवादी वाक्यांशों के इस्तेमाल तक, विचारधाराओं का एक मिश्रज है । इस सारे मिश्रज में,माओ त्से-तुङ के विचारों के बनने,व उसके सांस्कृतिक व सैद्धान्तिक विकास को सीधी तौर से प्रभावित करने वाले, कन्फ्यूशियस,मेन्शियस व अन्य चीनी दर्शनशास्त्रियों के पुराने विचार भी एक आदरणीय स्थान पाते हैं । माओ त्से-तुङ के उन विचारों में भी, जो एक विकृत मार्क्सवाद-लेनिनवाद के रूप में सामने आये हैं, एक खास "एशियोकम्यूनिज़्म",की छाप व विशेषतायें दिखती हैं, जिसमें राष्ट्रीयतावाद, विदेशी-भीति और यहां तक कि बुद्ध धर्म की भी भारी मात्रायें मिली हुई हैं और आखिरकर इन विचारों का मार्क्सवाद-लेनिनवाद के खुले विरोध में सामने आना अनिवार्य ही था ।

हुआ कुआ-फ़ैंग व तेंग सियाओ-पिङ का संशोधनवादी दल, जो इस समय चीन में शासन कर रहा है,अपनी प्रतिक्रियावादी नीति व क्रियाओं के लिये,"माओ त्से-तुङ विचारधारा" को सैद्धान्तिक व विचारधारात्मक आधार बनाये हुये हैं ।

अपनी डांवाडोल स्थितियों को मजबूत करने के लिये , सत्ता में आने वाले, हुआ कुआ-फ़ैंग व येह चियेन-यी के दल ने माओ त्से-तुङ की पताका फहरायी । इस पताका के नीचे इस दल ने त्येन एन मेन प्रदर्शन का तिरस्कार किया और तेंग सियाओ-पिङ के अधिकार को नष्ट किया और उसे संशोधनवादी कहा,जो उसके लिये उचित था । इस पताका के नीचे इस दल ने एक पुश के जरिये सत्ता पर कब्ज़ा किया और "चार" को चकनाचूर किया । लेकिन अव्यवस्था, जो हमेशा चीन की विशेषता रही है, अब और भी ज़्यादा तीव्र हो गई । इस

संकटपूर्ण परिस्थिति में तेंग सियाओ-पिङ फिर से सामने आया व सत्ता में उसकी वापसी अनिवार्य हो गई, और उसने फिर से दायंपक्षी उग्रवाद व तानाशाही तरीकों के अपने रास्ते पर चलना शुरू कर दिया ।

तेंग का उद्देश्य अपने ही गुट की स्थितियों को मजबूत करना, और अमरीकी साम्राज्यवाद व प्रतिक्रियावादी विश्व सरमायदारी के साथ सहयोगी संघ के खुले रास्ते पर चलना था । तेंग सियाओ-पिङ ने "चार आधुनिकीकरण" के कार्यक्रम को सामने रखा, सांस्कृतिक क्रान्ति को खत्म कर दिया, उन सभी कार्यकर्ताओं को हटा दिया, जिन्हें इस क्रान्ति द्वारा राज सत्ता, पार्टी व सेना के अंगों में पदोन्नति दी गयी थी, और उनकी जगह अधिकतम प्रतिक्रिया के आदमियों को स्थान दिया, जिनका पहले पर्दाफाश व तिरस्कार किया गया था ।

अब हम एक ऐसे समय को देख रहे हैं जिसकी विशेषता है माओ त्से-तुङ के खिलाफ़ बड़े इश्तहारों का आना, जिनसे तेंग सियाओ-पिङ के अनुयायी पीकिंग की दीवारों को सजा रहे हैं । यह "प्रतिशोध" की अवधि है, जिसके दो लक्ष्य हैं : पहले, माओ की "प्रतिष्ठा" को नष्ट करना और रास्ते के रोड़े, हुआ कुआ-फ़ेंग को हटाना, और दूसरे, तेंग सियाओ-पिङ को एक सर्व-शक्तिशाली तानाशाह बनाना व लियू शाओ-ची को पुन: प्रतिष्ठित करना ।

इन प्रतिक्रियावादी चालबाज़ियों के होते समय, चीन में, और इसके साथ-साथ विदेश में, ऐसे लोग भी हैं, जो माओ, जो कभी भी एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं था, के खिलाफ़ तेंग सियाओ-पिङ के संघर्ष की तुलना ख्रुश्चेव के जघन्य अपराधों के साथ करते हैं, जिसने स्टालिन, जो एक महान मार्क्सवादी-लेनिनवादी थे व हैं, पर कीचड़ उछाली थी । कोई भी, चाहे

उसका दिमाग कितना भी छोटा क्यों न हो,ऐसी तुलना को स्वीकार नहीं कर सकता है ।

सबसे सही सम्भव तुलना यह है, कि जैसे ब्रेज़नेव व उसके अनुयायी संशोधनवादी गुट ने ख्रुश्चेव का तख्ता पलट दिया था ठीक वैसे ही,इस समय,चीनी ब्रेज़नेव, तेंग सियाओ-पिङ, चीनी ख्रुश्चेव, माओ त्से-तुङ,को उसके उच्च स्थान से गिरा रहा है ।

यह सम्पूर्ण मामला एक संशोधनवादी खेल है, व्यक्तिगत सत्ता के लिये एक संघर्ष है । चीन में ऐसा हमेशा ही रहा है । इसमें कुछ भी मार्क्सवादी नहीं है । सिर्फ़ चीन का मज़दूर वर्ग, और "माओ त्से-तुङ विचारधारा","तेंग सियाओ-पिङ विचारधारा" व ऐसी दूसरी सभी मार्क्सवाद-विरोधी,संशोधनवादी, सरमायदारी विचारधाराओं से मुक्त एक सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी ही,इस परिस्थिति को बदल सकते हैं । मार्क्स,एंगेल्स, लेनिन व स्टालिन के विचार ही, एक सच्ची सर्वहारा क्रान्ति के जरिये,इस परिस्थिति से चीन की रक्षा कर सकते हैं ।

हमें यह पूरा विश्वास है कि एक दिन चीन में मार्क्सवाद-लेनिनवाद व सर्वहारा क्रान्ति की विजय होगी,और चीनी सर्वहारा व लोगों के दुश्मनों को पराजित किया जायेगा । निस्सन्देह, यह बिना लड़ाई के व बिना खून बहाये हासिल नहीं किया जा सकता है,क्योंकि चीन में,गद्दारों पर विजय पाने व समाजवाद की विजय के लिये अनिवार्य नेता,मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्रान्तिकारी पार्टी को बनाने के लिये बहुत कोशिशें करनी पड़ेंगी ।

हमें यह विश्वास है कि भ्रातृसदृश चीनी लोग, व सच्चे चीनी क्रान्तिकारी अपने आपको भ्रमों व काल्पनिककथाओं से

मुक्त कर लेंगे । वे यह राजनीतिक व विचारधारात्मक तौर पर समझ लेंगे कि चीन की कम्यूनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में कोई भी मार्क्सवादी-लेनिनवादी क्रान्तिकारी नहीं है बल्कि सरमायदारी के, पूँजीवाद के आदमी हैं, जो एक ऐसे रास्ते पर चल रहे हैं, जिसका समाजवाद व कम्यूनिज़्म से कोई भी सम्बन्ध नहीं है । लेकिन इसके लिये जनसमुदायों व क्रान्तिकारियों का यह समझना आवश्यक है कि "माओ त्से-तुङ विचारधारा" मार्क्सवाद-लेनिनवाद नहीं है, और कि माओ त्से-तुङ एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी नहीं था । हम मार्क्सवादी-लेनिनवादी "माओ त्से-तुङ विचारधारा" की जो आलोचना कर रहे हैं, उसमें, और सत्ता के लिये संघर्ष करते हुये तेंग सियाओ-पिङ के अनुयायी गुट द्वारा माओ त्से-तुङ के खिलाफ़ किये गये हमलों में कोई समानता नहीं है ।

इन सवालों के बारे में खुले व स्पष्ट रूप से बोल कर, हम अल्बेनिया के कम्यूनिस्ट मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा में अपने कर्तव्य को पूरा कर रहे हैं, और इसके साथ ही साथ, अन्तर्राष्ट्रीयतावादी होने के नाते, चीनी लोगों व क्रान्तिकारियों को, इन कठिन परिस्थितियों में, जिनमें से वे गुज़र रहे हैं, सही रास्ता ढूंढ़ने के लिये मदद दे रहे हैं ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा – सभी सच्चे क्रान्तिकारियों का एक मुख्य कर्तव्य

वर्तमान अन्तरर्ष्ट्रीय परिस्थिति में खलबली मची हुई है, पूंजीवादी-संशोधनवादी देशों में संकट और भी गहरा होता जा रहा है, महाशक्तियों की हमलावर नीति लोगों की स्वतन्त्रता व आज़ादी और आम शान्ति के लिये दिन-प्रति-दिन ज़्यादा से ज़्यादा नये भारी खतरों को पैदा कर रही है। सरमायदारी व क्रुश्चेववादी, टीटोवादी, व "यूरोकम्यूनिस्ट" संशोधनवादी सिद्धान्त, और इसके साथ-साथ, चीनी सिद्धान्त भी समाजवाद को नष्ट करने व क्रान्ति को कुचलने के लिये साम्राज्यवाद व आधुनिक संशोधनवाद की बड़ी नीति-युक्त योजना का अंशभूत भाग है।

इन हालतों में, मार्क्सवाद-लेनिनवाद व सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयतावाद के सिद्धान्तों की रक्षा करना, और मुख्य विश्व समस्याओं के प्रति एक दृढ़ क्रान्तिकारी विचारनीति अपनाना इस समय हमारी पार्टी, और इसके साथ-साथ, सभी सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के लिये एक मूलभूत काम है। हमारे उचित संघर्ष को लोगों व प्रगतिशील मानवजाति के बीच क्रान्ति, समाजवाद व लोगों की मुक्ति के उद्देश्य की विजय में विश्वास बनाना चाहिये। हमारी पार्टी सही रास्ते पर है और उसकी विजय अवश्य होगी, क्योंकि दुनिया के क्रान्तिकारी व लोग, और मार्क्सवादी-लेनिनवादी सत्य उसके पक्ष में है।

दुनिया भर के मार्क्सवादी-लेनिनवादी व क्रान्तिकारी यह देखते हैं कि पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया मार्क्सवाद-लेनिनवाद की रक्षा करती है, जब दूसरे इस पर हमला करते हैं, कि वह सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के सिद्धान्तों की रक्षा करती है, जब विभिन्न संशोधनवादियों ने इन सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया है। वे देखते हैं कि पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया अपनी विचारनीतियों में सिर्फ़ अपने ही देश के हितों का ध्यान नहीं रखती है, बल्कि इनमें महान हितों को जो सम्पूर्ण सर्वहारा को बहुत प्रिय हैं, सच्चे समाजवाद के हितों को, और विश्व के क्रान्तिकारी परिवर्तन के लिये मार्क्सवाद-लेनिनवाद पर अपने आपको आधारित करने व इससे मार्गप्रदर्शित होने वाले सभी लोगों के हितों को भी अभिव्यक्त व इनका प्रतिनिधित्व करती है।

इसी समय, हम यह देखते हैं कि अमरीकी साम्राज्यवाद व इसके साथ-साथ सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद के साथ अपने सम्बन्धों में चीन जिस नीति का अनुसरण कर रहा है, वह सभी जगह और विशेषकर तथा-कथित तीसरी दुनिया के देशों में संदेह, असंतोष व निरन्तर आलोचनाओं को पैदा कर रही है। यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि इन देशों में ईमानदार लोग यह देखते हैं कि चीनी नीति सही नहीं है, कि यह नीति उनपर अत्याचार करने वाले एक साम्राज्यवाद का समर्थन करती है, और यह कि चीनी नेताओं के अधिकांश उपदेश उनके कार्यों व यथार्थ वास्तविकता से भिन्न हैं। लोग देखते हैं कि चीन एक सामाजिक-साम्राज्यवादी नीति का अनुसरण कर रहा है जो उनके हितों के लिये खतरे पैदा करती है।

इस दिशा में भी, हमारी पार्टी अपना विनम्र योगदान दे रही है। लोग उस पर विश्वास करते हैं क्योंकि वह सत्य

बोलती है और यह सत्य मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त, जिसका अल्बेनिया में यथार्थ रूप से प्रयोग किया गया है, से आता है। हमारे देश का विकास, उसके मुक्ति युद्ध, पहले की उसकी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व आध्यात्मिक परिस्थिति दुनिया के उन अनेक देशों के साथ बहुत समानता रखते हैं जिन्होंने आन्तरिक शासकों व विदेशी साम्राज्यवादी शासकों के खूंख्वार अत्याचार से बहुत कष्ट पाया है और जो अभी भी कष्ट पा रहे हैं। लोगों द्वारा सत्ता पर कब्ज़ा करने में, सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना और समाजवाद के निर्माण में हमारी पार्टी द्वारा संचित अनुभव, इन लोगों के लिये एक यथार्थ उदाहरण व सहायता है। अल्बेनिया लोक समाजवादी गणराज्य में हासिल की गयी विजयों व सफलताओं का आधार मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त है, जिससे वह प्रेरित होती है और जिसका पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया अभ्यास में प्रयोग करती है।

चाटुकारों व चरम-प्रतिक्रियावादियों को छोड़कर, और कोई भी "तीन दुनियाओं" के दिवालिये चीनी सिद्धान्त की सीधी तरह से रक्षा नहीं कर रहा है। चीनी संशोधनवादियों व अमरीकी साम्राज्यवाद के बीच वैरशमन की नीति, साम्राज्यवादी युद्धों, जिन्हें कोई भी देखना नहीं चाहता है, के खतरे को फिर से जीवित करती है, उपनिवेशिक व नव-उपनिवेशिक अंधकार, जिसे कोई भी बर्दाश्त नहीं कर सकता है, को गहरा करती है, और पूंजीवादी शोषण, जिससे सभी मुक्त होना चाहते हैं, का समर्थन करती है।

पार्टी आफ़ लेबर आफ़ अल्बेनिया ने मार्क्सवादी-लेनिनवादी विचारों की शुद्धता की रक्षा के लिये लड़ाई की है, वह इसके लिये लड़ाई कर रही है और हमेशा दृढ़तापूर्वक लड़ाई

करेगी । वह उन सभी के खिलाफ़ है और हमेशा रहेगी, जो इन विचारों को विकृत करने और इनकी जगह सरमायदारी, संशोधनवादी, प्रतिक्रान्तिकारी विचारों को स्थान देने की कोशिश करते हैं । हमारी पार्टी एक सर्वहारा पार्टी, एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी है, और विश्व क्रान्ति में, जिसके लिये वह हर कुर्बानी करने के लिये दृढ़संकल्प है, जैसा कि वह अब तक करती आयी है, सक्रिय रूप से भाग लेती है । ऐसी कोई ताकत नहीं है जो हमारी पार्टी को इस पूर्णतया अन्तरराष्ट्रीयतावादी, गौरवशाली व आदरणीय रास्ते से मोड़ सके । ऐसी कोई ताकत नहीं है जो उसे डरा या उसपर विजय प्राप्त कर सके । हमारी पार्टी किसी भी तरह की मौकापरस्ती के साथ, मार्क्सवाद-लेनिनवाद से किसी भी तरह के विचलन के साथ, और उसकी किसी भी विकृति के साथ समझौता नहीं करेगी । वह चीनी संशोधनवाद के खिलाफ़ भी ठीक वैसे ही दृढ़संकल्प के साथ संघर्ष करेगी जैसे कि किसी दूसरी तरह के संशोधनवाद के खिलाफ़ ।

हमारी पार्टी एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी है, और एक ऐसी पार्टी होने के नाते हमें खुले रूप से सत्य को कहने से नहीं डरना चाहिये । हमारी पार्टी, अपनी श्रेणियों में सदस्यों की संख्या के हिसाब से छोटी है, लेकिन यह अनेक युद्धों में परिपक्व हुई एक पार्टी है । उसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शुद्धता, क्रान्ति व समाजवाद की रक्षा में खुल कर अपने विचारों को व्यक्त करने का, हमेशा ही साहस रखा है । तथ्य यह दिखाते हैं कि चीनी संशोधनवाद के खिलाफ़ हमारी लड़ाई सही है, कि यह आवश्यक है, और इसलिये इसे सच्चे मार्क्सवादी-लेनिनवादियों व क्रान्तिकारियों की स्वीकृति व उनका समर्थन प्राप्त है ।

एक सच्ची क्रान्तिकारी पार्टी,जैसी कि हमारी पार्टी है, किसी भी हालत में अपनी सिद्धान्ती विचारनीतियों का परित्याग नहीं करती है । हम सिर्फ़ इसलिये पीछे नहीं हट सकते हैं,कि दूसरे हमारी पार्टी के साहस व सद्गुण को शायद घमण्ड समझें । पार्टी ने अपने सदस्यों को घमण्डी होना नहीं सिखाया है, बल्कि उसने उनको वर्ग दुश्मन के खिलाफ़ हमेशा दृढ़,उचित व कठोर रहने की शिक्षा दी है । इन सवालों पर,यह वादविवाद नहीं किया जा सकता है,कि पार्टी बड़ी है या छोटी ।

कम्यूनिस्टों,सच्चे क्रान्तिकारियों व मार्क्सवादी-लेनिनवादियों को यह अच्छी तरह से समझना चाहिये,कि इस समय दुनिया में परिस्थितियाँ कैसे विकसित हो रहीं हैं । ये एक बने-बनाये फ़ार्मूले के अनुसार नहीं विकसित होती हैं । अगर मार्क्स,एँगेल्स,लेनिन व स्टालिन की शिक्षाओं,विश्व सर्वहारा के क्रान्तिकारी संघर्ष के अनुभव और सभी सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के अनुभव का उचित ढंग से अध्ययन किया जाय,समझा जाय और आत्मसात किया जाय,तो विकसित हो रही इन परिस्थितियों को उचित ढंग से समझा जा सकता है,और इससे क्रान्ति को एक शक्तिशाली प्रवेग मिलेगा ।

हम अल्बेनिया के कम्यूनिस्टों को यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिये कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद में निपुण होना नितान्त आवश्यक है । पूंजीवादी-संशोधनवादी घिराव और हमपर इसके द्वारा डाले गये दबाव का कभी भी अल्पानुमान नहीं करना चाहिये । हमें,इन सवालों के बारे में अपनी समझ का, और हमारे चारों तरफ़ जो दुश्मन हैं उनके खिलाफ़ हमें जो वास्तविक लड़ाई करनी है,उसके लिये अपनी तैयारी का एक मूर्खतापूर्ण अत्यानुमान नहीं करना चाहिये ।

क्रान्ति ने चट्टानों का सामना किया है, व आगे और भी चट्टानें हैं, जिनको विस्फोटकों से उड़ाना होगा। कुछ को सीधी तरह से नष्ट करना चाहिये, कुछ को टुकड़े-टुकड़े करके तोड़ना चाहिये, जबकि कुछ दूसरी चट्टानों को चारों तरफ़ से घेर कर एक आखिरी प्रहार से नष्ट कर देना चाहिये। क्रान्ति की नीति व युक्तियों को समझने का यही मतलब है। क्रान्ति की विजय में विश्वास पैदा करने के लिये लोगों के व्यापक जनसमुदायों को संगठित करना और सर्वहारा को उसकी सच्ची मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी के दृढ़ नेतृत्व के बारे में जागरूक करना ज़रूरी है, क्योंकि अगर ऐसा नहीं किया गया तो सर्वहारा जोखिमवादी क्रियाओं में लग सकता है और क्रान्ति की विजय को खतरे में डाल सकता है। कम्यूनिस्टों व लोगों के उत्पीड़ित जनसमुदायों को यह समझना चाहिये कि साम्राज्यवाद व विश्व पूंजीवाद को, लोगों पर अत्याचार करने में और प्रतिक्रान्तियों को आयोजित करने में, बहुत अनुभव प्राप्त है। इसलिये दुश्मनों की युक्तियों व नीति को भी समझा व उनका मुकाबला किया जाना चाहिये, क्योंकि हमारी विचारधारा, हमारी योजना, हमारी नीति व युक्तियां किसी भी दुश्मन से ज़्यादा शक्तिशाली हैं, क्योंकि ये एक उचित उद्देश्य, कम्यूनिज़्म के उद्देश्य के लिये काम करती हैं।

इस समय हमारी पार्टी को और इसके साथ-साथ दुनिया की सभी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों को, चीनी संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष करने पर, सबसे ज़्यादा ध्यान देना चाहिये। यह एक महत्वपूर्ण सवाल है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है, कि इसके खिलाफ़ संघर्ष करते हुये, हम सोवियट संशोधनवाद, टीटोवादी संशोधनवाद या "यूरोकम्यूनिज़्म", जो

आधुनिक संशोधनवाद के बहुत खतरनाक रूप हैं,को भूल जायें। अपनी युक्तियों व नीति में ये सभी मार्क्सवाद-विरोधी प्रवृत्तियाँ,संघर्ष के इनके रूपों में भिन्नता होने के बावजूद भी, एक ही रास्ते पर हैं,एक ही उद्देश्य रखती हैं,और एक ही संघर्ष कर रही हैं।

इन सभी कारणों से,हमें कभी भी,न तो अमरीकी साम्राज्यवाद व दुनिया के सभी प्रतिक्रियावादी पूँजीवादी सरमायदारों के खिलाफ़ संघर्ष से, और न ही सोवियट,यूगोस्लाव, चीनी व अन्य रंगों के संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष से अपना ध्यान हटाना चाहिये। इनके बीच होने वाले सभी अन्तर-विरोधों के बावजूद भी, ये सभी दुश्मन,क्रान्ति के खिलाफ़, मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों व उनकी एकता के खिलाफ़, और अपने आप को क्रान्ति में लगाने के लिये सर्वहारा व सम्पूर्ण मेहनतकश जनसमुदाय द्वारा बनाये गये आम संगठन के खिलाफ़ लड़ाई के एक ही धागे से जुड़े हुये हैं।

आधुनिक संशोधनवाद,और विशेषकर सोवियट,टीटोवादी व चीनी संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष करना एक आसान बात नहीं है। इसके विपरीत,यह संघर्ष कठोर व लम्बा है और होगा। इस संघर्ष को सफलतापूर्वक किये जाने के लिये, और क्रमशः विजयों को हासिल करने के लिये,हमारे देश के कम्यूनिस्टों,कार्यकर्ताओं,बुद्धिजीवियों व सभी मेहनतकश जनसमुदायों को मार्क्स,एंगेल्स,लेनिन व स्टालिन की विचारधारा से अनुप्राणित होना चाहिये,और आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ़ संघर्ष में हमारी पार्टी के बहुमूल्य अनुभव का भी अध्ययन करना चाहिये। सिर्फ़ इसी तरह हम बाधाओं को पार कर सकेंगे, और काँटों से भरे, अत्यन्त शत्रुतापूर्ण जंगल से, बिना किसी खरोंच के निकल सकेंगे।

हमेशा की तरह, हमारी पार्टी आफ़ लेबर को सही मार्क्स-वादी-लेनिनवादी कार्यदिशा पर स्पष्ट, दृढ़संकल्प व साहसी बने रहना चाहिये । हमारी पार्टी की यह कार्यदिशा और इसके साथ-साथ उसके स्पष्ट रूप से निश्चित उद्देश्य, अमरीकी साम्राज्यवाद, सोवियट सामाजिक-साम्राज्यवाद, और इसके साथ ही चीनी सामाजिक-साम्राज्यवाद का पर्दाफाश करने, और इनके खिलाफ़ सफलतापूर्वक एक कठोर संघर्ष करने में मदद देंगे ।

हमारी पार्टी का, और दुनिया के सभी सच्चे कम्यूनिस्टों का कर्तव्य है मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त की रक्षा करने के लिये जी-जान से लड़ाई करना, और इसमें से सरमायदारों, आधुनिक संशोधनवादियों व सभी मौकापरस्तों और गद्दारों द्वारा की गयी सभी विकृतियों को दूर करना ।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद विजयी विचारधारा है । जो भी इसको अपनाता है, इसकी रक्षा करता है, और इसका विकास करता है, वह दुनिया का रूपपरिवर्तन करने, पूंजीवाद को नष्ट करने और एक नयी दुनिया, समाजवादी दुनिया का निर्माण करने के लिये सर्वहारा व सभी उत्पीड़ितों का नेतृत्व करने वाले सच्चे कम्यूनिस्टों की महान व अजेय सेना का, क्रान्तिकारियों की गौरवपूर्ण सेना का, एक सदस्य है ।

Price: $5.00

THE HINDI EDITION OF
IMPERIALISM AND THE REVOLUTION

Translated and Published by:
NORMAN BETHUNE INSTITUTE
Printed by:
PEOPLE'S CANADA PUBLISHING HOUSE
Distributed by:
NATIONAL PUBLICATIONS CENTRE
Distributors of Progressive Books & Periodicals
Box 727, Adelaide Stn., Toronto, Ontario, Canada
ISBN 0 88803 082 7
NBI-82h